सुसमाचार
की सामर्थ्य
और संदेश

सुसमाचार की पुनःस्थापना

सुसमाचार की सामर्थ्य और संदेश

सुसमाचार की बुलाहट और सच्चा परिवर्तन

सुसमाचार की निश्चयता और चेतावनीयाँ

सुसमाचार की सामर्थ्य और संदेश

पौल वॉशर

ALETHIA Publications

सुसमाचार की सामर्थ्य और संदेश
(Hindi)

The Gospel's Power and Message
By Paul Washer

Copyright ©2012 by Paul Washer under the title *The Gospel's Power and Message*. Originally published by Reformation Heritage Books. Translated and printed by Alethia Publications with permission. All rights reserved.

First Hindi Edition 2016

All rights reserved.
No part of this publication may be reproduced in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopying, recording, or any information storage and retrieval system, without permission in writing from the publisher.

Published by
Alethia Publications
Chandra Niwas Building, Bitco Point, Nashik Road 422101,
Maharashtra
www.alethiabookshop.com

Alethia Publications is the publishing division of
Alethia Publication and Training Pvt. Ltd.
alethiapublications@gmail.com

Printed and bound in India by
....

Translated by Sameer Salve

विषय सूची

श्रृंखला–भूमिका : सुसमाचार की पुनःस्थापना 01

भाग – 1 : प्रेरितीय भूमिका

1. सुसमाचार को जानना और बताना........ 09
2. सुसमाचार ग्रहण करना अपरिहार्य 17
3. सुसमाचार जिसके द्वारा हमारा उद्धार होता है 25
4. सर्वोपरि महत्व का सुसमाचार 33
5. सुसमाचार जो सौंपा और पहुँचाया गया 39

भाग – 2 : उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ

6. सुसमाचार 49
7. विक्षोभकारी सुसमाचार 57
8. एक सामर्थशाली सुसमाचार 65
9. सुसमाचार – हर एक विश्वास करने वाले के लिये 75

भाग – 3 : मसीही विश्वास का शिखर

10. पाप की विस्तृत समिक्षा 85
11. परमेश्वर की विस्तृत समीक्षा 93
12. सबने पाप किया 107
13. पापीजन महिमा से रहित है 119
14. मनुष्य पूर्णतः पापी 127
15. धर्मी क्रोध 143
16. पवित्र युद्ध 153

17. एक मूल्यवान वरदान ... 161
18. ईश्वरीय दुविधा ... 175
19. सुयोग्य उद्धारकर्ता ... 183
20. यीशु मसीह का क्रूस ... 193
21. परमेश्वर की सच्चाई ... 213
22. यीशु मसीह का पुनरुत्थान ... 223
23. पुनरूत्थान में विश्वास की नींव ... 233
24. उसके लोंगो के महायाजक के रूप में मसीह का स्वर्गारोहण ... 253
25. सब के प्रभु के रूप में मसीह का स्वर्गारोहण ... 271
26. सबके न्यायाधीश के रूप में मसीह का स्वर्गारोहण ... 289

श्रृंखला–भूमिका : सुसमाचार की पुनःस्थापना

यीशु मसीह का सुसमाचार, कलीसिया और एक मसीही व्यक्तिविशेष को दिया गया सबसे बड़ा धन है। यह बहुत से सन्देशों में एक सन्देश नहीं है, पर उन सभी से बढ़कर एकमात्र सन्देश है। यह उद्धार के लिये परमेश्वर की सामर्थ और मनुष्यों एवं स्वर्गदूतों को दिय गया परमेश्वर की बहुमुखी बुद्धि का सबसे बड़ा प्रकाशन है।[1] यही कारण है कि प्रेरित पौलुस ने अपने प्रचार में सुसमाचार को प्रथम स्थान दिया, अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर उसकी स्पष्ट घोषणा की, यहाँ तक कि सुसमाचार के सत्य में मिलावट करने वालों के लिये शाप की घोषणा की।[2]

मसीहियों की प्रत्येक पीढ़ी सुसमाचार के सन्देश की भण्डारी है, और पवित्र आत्मा की सामर्थ के द्वारा हमें परमेश्वर की बुलाहट है कि हम सौंपे गये इस धन (धरोहर) की रखवाली करे।[3] यदि हम सुसमाचार के विश्वासयोग्य भण्डारी बनना चाहते हैं, तो अवश्य है कि हम सुसमाचार के अध्ययन में लीन हो जाये, उसके सत्यों को समझने के लिये श्रमसाध्य कष्ट उठाये और उसकी विषय सामग्री की सुरक्षा के लिये स्वयं को प्रतिज्ञाबद्ध करे।[4] ऐसा करने के द्वारा हम न केवल स्वयं के लिये परन्तु हमें सुनने वालों के लिये भी उद्धार को सुनिश्चित करेंगे।[5]

यही भण्डारीपन मुझे इन पुस्तकों के लेखन के लिये विवश करता है। मुझे लेखन के कठिन कार्य में अधिक अभिरूचि नहीं है और वैसे भी मसीही पुस्तकों की यकीनन कोई कमी नहीं है परन्तु मुझे इन उपदेशों का लिखित संकलन बनाना अवश्य था, क्योंकि मैं इसी कारणवश उनका प्रचार करता हूँ अर्थात यह कि मैं उनके बोझ से विमुक्त हो सकूं। यिर्मयाह के समान यदि मैं प्रचार न करूं, तब... ''तब वे मेरे हृदय के भीतर और मेरी हड्डियों में आग के समान, जलते हैं; और मैं उन्हें रोकते–रोकते थक जाता हूँ और रोक नहीं पाता।''[6] जैसा कि प्रेरित पौलुस ने घोषणा की है, ''मुझ पर हाय, यदि मैं सुसमाचार का प्रचार न करूं!''[7]

जैसा कि सभी जानते हैं, शब्द 'सुसमाचार' ग्रीक शब्द इवान्जेलिअन (euangelion) से निकला है जिसका उचित अनुवाद 'शुभ–समाचार' है। एक अर्थ में, पवित्रशास्त्र का प्रत्येक पन्ना सुसमाचार है, परन्तु एक दूसरे अर्थ में, सुसमाचार का सन्दर्भ एक अति विशेष संदेश से है – परमेश्वर के पुत्र, यीशु मसीह के जीवन, मृत्यु, पुनरूत्थान और स्वर्गारोहण के द्वारा पाप में पतित मानवजाति के लिये सम्पन्न उद्धार से है।

पिता की ईच्छा के भले अभिप्राय के अनुसार, सनातन पुत्र ने, जो स्वयं पिता के समतुल्य है

और जो उसके गुणतत्व का प्रतिबिंब है, स्वर्ग की महिमा को स्वेच्छा से त्याग कर, पवित्र आत्मा के द्वारा एक कुँवारी के गर्भ में आया और ईश्वर–मानव होकर नासरत के यीशु के रूप में जन्मा।[8] मनुष्य के रूप में वह पृथ्वी पर जीवन जीते हुए परमेश्वर की व्यवस्था की सिद्ध आज्ञाकारिता में बना रहा।[9] जब समय पूरा हुआ, मनुष्यों ने उसे तिरस्कृत किया और क्रूस पर चढ़ाया। क्रूस पर उसने मानव जाति के पापों को अपने ऊपर लिया और परमेश्वर के क्रोध को सहा और मनुष्यों के बदले में मृत्यु सही।[10] तीसरे दिन, परमेश्वर ने उसे मृतकों में से जिलाया। यह पुनरूत्थान ईश्वरीय घोषणा है कि पिता ने पाप के बलिदान के रूप में अपने पुत्र की मृत्यु को स्वीकार किया है। यीशु ने मनुष्यों की अनाज्ञाकारिता के दण्ड का दाम चुकाया, न्याय की मांग को पूरा किया और परमेश्वर के प्रकोप को शांत किया।[11] पुनरूत्थान के 40 दिन बाद परमेश्वर का पुत्र स्वर्ग पर उठा लिया गया, पिता के दाहिनी ओर जा बैठा, और उसे सब बातों पर महिमा, सम्मान और अधिकार दिया गया।[12] वहाँ परमेश्वर की उपस्थिति में, वह अपने लोगों का प्रतिनिधित्व करता है, और उनके लिए मध्यस्थता करता है।[13] उन सबको जो अपनी पापमय असहाय दशा स्वीकार करते है और मसीह पर निर्भर हो जाते हैं, परमेश्वर पूरी तरह क्षमा करता, धर्मी ठहराता और अपने साथ उनका मेल–मिलाप करता है।[14] यही परमेश्वर और उनके पुत्र यीशु मसीह का सुसमाचार है।

वर्तमान मसीही पीढ़ी के द्वारा सबसे बड़ा अपराध यह किया गया है कि उन्होंने सुसमाचार की उपेक्षा की है और इसी उपेक्षा के फलस्वरूप अन्य सभी बुराईयाँ उभर आयी है। खोया हुआ संसार सुसमाचार के प्रति इतना कठोर नहीं है जितना कि सुसमाचार से अनभिज्ञ लोग है, क्योंकि बहुतेरे जो सुसमाचार का प्रचार करते हैं वे स्वयं इसके बहुत से मूल सत्यों से अवगत नहीं है। वे प्रमुख विचारधाराएं जो सुसमाचार के केन्द्र में है, वे हैं – परमेश्वर का न्याय, मनुष्य की मूल स्वाभाविक सर्वभ्रष्टता, रक्त द्वारा प्रायश्चित, वास्तविक हृदय–परिवर्तन की प्रकृति, और आश्वासन या निश्चय का बाइबल सम्मत आधार – ये सभी बहुत से प्रचार–मंचों (पुलपिट) से लोप है। कलीसियाएँ सुसमाचार के संदेश को विघटित करके कुछ विश्वास के कथनों में बदल देती है, और शिक्षा देती है कि हृदय–परिवर्तन केवल एक मानवीय निर्णय है और जो भी पापियों के द्वारा की जाने वाली प्रार्थना करता है, उसे उद्धार का निश्चय दिलाती है।

सुसमाचार में काँट–छाँट के परिणाम दूरगामी रहे है। सबसे पहले यह हृदय परिवर्तन से वंचित लोगों के हृदयों को और अधिक कठोर करती है। आधुनिक समय में हृदय परिवर्तन करने वाले कुछ लोग कलीसिया के साथ सहभागिता भी रखते हैं, और अकसर ऐसा करने वाले लोग पाप में गिरते जाते हैं या फिर आदतन शरीर की बातों में लिप्त पाए जाते हैं। लाखों–लाखों लोग हमारी सड़कों पर चलते और हमारी सभाओं में यीशु मसीह के सच्चे सुसमाचार के द्वारा बिना हृदय–परिवर्तन बैठते है, परन्तु फिर भी उन्हें उनके उद्धार का निश्चय होता है, क्योंकि जीवन में कभी एक बार उन्होंने सुसमाचारकीय सभा में अपना हाथ उठाया था और एक प्रार्थना दोहराई थी। सुरक्षा की यह गलत समझ एक बड़ी रूकावट उत्पन्न करती है और ऐसे व्यक्तियों को वास्तविक सुसमाचार

सुनने पर भी अकसर प्रभावित नहीं करती।

दूसरी बात, ऐसा सुसमाचार कलीसिया को पुर्नजीवित विश्वासियों के आत्मिक निकाय (देह) से बदलकर विकृत शारीरिक मनुष्यों का एक जमावड़ा बना देता है, जो परमेश्वर को जानने का दावा तो करते है पर अपने कर्मो (आचरण) से परमेश्वर का इन्कार करते है।[15] वास्तविक सुसमाचार का प्रचार करने पर मनुष्य कलीसियाओं में बिना मनोरंजन की आशा, विशेष गतिविधियों या सुसमाचार में वर्णित लाभों से बाहर किसी लाभ की प्रतिज्ञा के बिना भी आते हैं। जो आते है वे मसीह की अभिलाषा करते हुये, बाइबल के सत्य की भूख–प्यास लिये, हार्दिक–आराधना और सेवा के अवसरों को पाने आते है। जब कलीसिया एक कमतर या स्तरहीन सुसमाचार सुनाती है, तब शारीरिक लोग जमा होते हैं जिन्हें परमेश्वर की बातों में अधिक रूचि नहीं होती, और तब ऐसे मनुष्यों का प्रबन्धन कलीसिया को भारी पड़ता है।[16] तब कलीसिया सुसमाचार के तत्व की मांगों से नीचे आकर सुविधाजनक नैतिकता की बात करती है, और मसीह की सच्ची भक्ति–आराधना का स्थान वे गतिविधियाँ ले लेती है जो सदस्यों की आवश्यकताओं या इच्छाओं को ध्यान में रखकर तय की जाती है। कलीसिया तब मसीह में केन्द्रित न होकर गतिविधि–चालित तंत्र बन जाती है और यही बात सावधानी पूर्वक उन सत्यों को पृथक करती या पुनः संगठित करती है जिस से शारीरिकता–बहुल* बहुमत को बुरा न लगे। कलीसिया, पवित्रशास्त्र के महान सत्यों और परम्परागत मसीहत को दरकिनार कर देती है और व्यवहारिक बुद्धि का प्रयोग करती है (ताकि चर्च चलता और बढ़ता रहे)।

तीसरी बात, ऐसा सुसमाचार सुसमाचार–प्रचार और मिशनों को केवल एक मानवीय अभियान बना देता है जिसे सांस्कृतिक आधार पर प्रचलित तौर–तरीकों के सावधानीपूर्वक किये गये अध्ययन पर आधारित बाजारूपन की चतुर रणनीति के अनुसार चलाया जाता है। बहुत वर्षों तक बाइबल से असम्मत सुसमाचार की अनुत्पादकता देखने के बाद बहुत से सुसमाचार–प्रचारक यह मान बैठे है कि सुसमाचार काम नहीं करेगा और यह कि मनुष्य इतना जटिल बन चुका है कि ऐसा सरल और विक्षुब्ध करने वाला संदेश उसका उद्धार करने और जीवन–परिवर्तन करने में सक्षम नहीं है। अब वे मनुष्य की पापमय दशा और संस्कृति एवं उसके विभिन्न पहलुओं को समझने पर अधिक जोर देते हैं बजाय इसके कि केवल उस एकमात्र संदेश को समझें और प्रचार करे जिसमें उद्धार करने की सामर्थ है। परिणाम यह होता है कि सुसमाचार को बार–बार पुनर्गठित और पुनर्रचित किया जाता है ताकि वह समकालीन संस्कृति के साथ अधिकाधिक प्रासंगिक लगे। हम यह भूल चुके हैं कि वास्तविक सुसमाचार सभी संस्कृतियों के लिये सदैव प्रासंगिक है क्योंकि यह प्रत्येक मनुष्य के लिये परमेश्वर का अनंतकालीन वचन है।

चौथी बात, ऐसे सुसमाचार से परमेश्वर की निन्दा होती है। कमतर सुसमाचार के प्रचार के द्वारा शारीरिक और हृदय से अपरिवर्तित लोग कलीसिया की सहभागिता में आते हैं और बाइबल से सम्मत कलीसियाई अनुशासनात्मक प्रक्रियाओं की पूर्ण उपेक्षा या अनदेखी के कारण उन्हें बिना सुधार या फटकार कलीसिया में रहने की अनुमति मिल जाती है। यह कलीसिया की परिशुद्धता और प्रतिष्ठा

को खराब करता है और विश्वास न करने वालों के बीच परमेश्वर के नाम की निन्दा होती है।[17] अंत में, परमेश्वर को महिमा नहीं मिलती, चर्च की उन्नति नहीं होती, हृदय से अपरिवर्तित सदस्य उद्धार नहीं पातें और अविश्वासी संसार के समक्ष कलीसिया की साक्षी विकृत हो जाती है या फिर लोप हो जाती है।

जब 'हमारे धन्य परमेश्वर का महिमामय सुसमाचार' एक कमतर महिमा वाले सुसमाचार से बदल दिया जाता है, तब परमेश्वर के सेवक या आम विश्वासी होने के नाते यह नहीं हो सकता है कि हम इतने पास खड़े हो और कुछ न करे।[18] इस धरोहर के भण्डारी होने के नाते, सच्चे सुसमाचार को पुनः प्राप्त करना और उसे निडरतापूर्वक सबके सामने साफ–साफ प्रचार करना हमारा कर्त्तव्य है। हम भला करेंगे, यदि हम चार्ल्स हैडन स्पर्जन के शब्दों पर ध्यान देः

> इन दिनों में मुझे सुसमाचार के मूल या प्राथमिक सत्यों पर बार–बार विचार करने और प्रचार करने की आवश्यकता महसूस होती है। शांति के समय में हम सत्य के रूचिकर प्रभागों में खुलकर उन क्षेत्रों में प्रवास कर सकते हैं, जो दूर है; परन्तु अब अवश्य है कि हम घर पर रहें और विश्वास के आरंभिक सिद्धान्तों की अभिरक्षा के द्वारा कलीसिया के हृदयों एवं घरों की सुरक्षा करे। इस युग में कलीसिया में ही ऐसे व्यक्ति उठ गये हैं जो विकृत बातें कहते है। बहुत से है जिनकी दार्शनिकता और नया–नया भावार्थ हमें कष्ट पहुँचाता है – जबकि जो वे सिखाते हैं उन धर्मशिक्षाओं का इन्कार करते है और उस विश्वास को कमतर आंकते है जिसे बनाए रखने का उन्होंने संकल्प किया था। यह अच्छी बात है कि हम में से कुछ लोग, जो जानते हैं कि हम क्या विश्वास करते है, और जिनके शब्दों के गुप्त अर्थ नहीं होते, इन बातों के विरूद्ध मोर्चा ले और हमारे विश्वास और जीवन के वचन को थामें रहे और केवल यीशु मसीह के सुसमाचार के आधारभूत सत्यों की सरल सीधी घोषणा करे।[19]

यद्यपि 'सुसमाचार की पुनः प्राप्ति' करने की श्रृंखला सुसमाचार के व्यवस्थित एवं सम्पूर्ण प्रस्तुतीकरण का प्रतिनिधित्व नहीं करती, यह अधिकतर आवश्यक तत्वों पर चर्चा करती है विशेषकर उनकी जो समकालीन मसीहत में सर्वाधिक उपेक्षित है। मुझे आशा है कि ये शब्द आपका मार्गदर्शन करेंगे ताकि आप सुसमाचर को उसके सम्पूर्ण सौन्दर्य, विक्षोभ और उद्धार की सामर्थ में पुनः क्रियान्वित करने में मदद पा सके। मेरी प्रार्थना है कि ऐसे विशुद्ध सुसमाचार की पुनः प्राप्ति आपके जीवन को परिवर्तित करेगी, आपके प्रचार को सामर्थ देगी, और परमेश्वर के लिये बड़ी से बड़ी महिमा लायेगी।

आपका भाई

पौल डेविड वॉशर

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. रोमियों 1:16; इफिसियों 3:10
2. 1 कुरिन्थियों 15:3; कुलुस्सियों 4:4; गलातियों 1:8–9
3. 2 तिमुथि 1:14
4. 1 तिमुथि 4:15
5. 1 तिमुथि 4:16
6. यिर्मयाह 20:9
7. 1 कुरिन्थियों 9:16
8. प्रेरितों के काम 2:23; इब्रानियों 1:3; फिलिप्पियों 2:6–7; लूका 1:35
9. इब्रानियों 4:15
10. 1 पतरस 2:24; 3:18; यशायाह 53:10
11. लूका 24:6; रोमियों 1:4; 4:25
12. इब्रानियों 1:3; मत्ती 28:18; दानिय्यल 7:13–14
13. लूका 24:51; फिलिप्पियों 2:9–11; इब्रानियों 1:3; इब्रानियों 7:25
14. मरकूस 1:15; 10:9; फिलिप्पियों 3:3
15. तितुस1:16
16. 1 कुरिन्थियों 2:14
17. रोमियों 2:24
18. 1 तिमुथि 1:11
19. Charles H. Spurgeon, *The Metropolitan Tabernacle Pulpit* (repr., Pasadena, Tex.: Pilgrim Publications), 32:385.

भाग – 1

प्रेरितीय भूमिका

हे भाईयो, अब मैं तुम्हें वही सुसमाचार बताता हूँ जो पहले सुना चुका हूँ, जिसे तुम ने अंगीकार भी किया था और जिसमें तुम स्थिर भी हो। उसी के द्वारा तुम्हारा उद्धार भी होता है, यदि उस सुसमाचार को जो मैं ने तुम्हें सुनाया था स्मरण रखते हो; नहीं तो तुम्हारा विश्वास करना व्यर्थ हुआ। इसी कारण मैं ने सब से पहले तुम्हें वही बात पहुँचा दी, जो मुझे पहुँची थी कि पवित्रशास्त्र के वचन के अनुसार यीशु मसीह हमारे पपों के लिए मर गया, और गाडा गया, और पवित्रशास्त्र के अनुसार तीसरे दिन जी भी उठा।

1 कुरिन्थियों 15:1–4

अध्याय – 1

सुसमाचार को जानना और बताना

हे भाइयों, अब मैं तुम्हें वही सुसमाचार बताता हूँ जो पहले सुना चुका हूँ।

– 1 कुरिन्थियों 15:1

यीशु मसीह के सुसमाचार का जैसा परिचय प्रेरित पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया को दिया था, उससे बेहतर परिचय देने के लिये एक लेखक या प्रचारक पर बहुत अधिक दबाव बनेगा।[1] इन कुछ पंक्तियों में उन्होंने पर्याप्त सत्य संजो दिया है जो जीवन भर उस पर बने रहने और महिमा में अपने घर पहुँचाने में सक्षम है। किसी मनुष्य को ऐसी सामर्थ केवल पवित्र आत्मा ही दे सकता है जिससे कि वह इतने स्पष्ट रूप में और इतने कम शब्दों में इतना कुछ कहें।

सुसमाचार को जानना

पवित्रशास्त्र के इस छोटे से भाग में, हम एक सत्य पाते हैं और अवश्य है कि हम इस सत्य की पुनः प्राप्ति करे। सुसमाचार केवल मसीहत का परिचय देने वाला एक संदेशमात्र नहीं है – यह मसीहत का संदेश है और एक विश्वासी भला करेगा यदि वह इस सत्य की महिमा को जानने और उस महिमा को बताने में अपना पूरा जीवन लगा दे। इस संसार में जानने योग्य बहुत सी बातें है और मसीहत के संसार में भी खोजने योग्य अनगिनत सत्य है, परन्तु उन सब में हमारे धन्य परमेश्वर एवं उनके पुत्र यीशु मसीह के महिमामय सुसमाचार का स्थान सर्वोपरि है।[2] यह हमारे उद्धार का संदेश है। पवित्रीकरण की ओर हमारी उन्नति का साधन है, यह निर्मल सोता है जिसमें से मसीही जीवन के लिये प्रत्येक परिशुद्ध एवं सही अन्तःप्रेरणा प्रवाहित होती है। विश्वासी जिसने इसकी विषयवस्तु और स्वभावगुण को समझा है, उसे कभी उत्साह या जोश की कमी नहीं होगी और न कभी इतनी निर्बलता का अनुभव करेगा कि वह मनुष्यों के हाथों से बनाए गये टूटे–फूटे और जलहीन हौद के पास सहायता (बल) पाने जाये।[3]

1 कुरिन्थियों 15:1 समझाता है कि प्रेरित पहले ही कुरिन्थ की कलीसिया को सुसमाचार–प्रचार कर चुके थे। वास्तव में वे विश्वास में उनके पिता थे![4] फिर भी उन्हें यह बड़ी

आवश्यकता महसूस हुई कि वे उन्हें सुसमाचार की शिक्षा लगातार देते रहे – केवल इसलिये नहीं कि वे आवश्यक सार–तत्व पुनः स्मरण कराए पर इसलिये भी कि वे सुसमाचार के ज्ञान में बढ़े। उनके हृदयपरिवर्तन के समय पर उन्होंने खोज की यात्रा आरम्भ की थी जो उनके सम्पूर्ण जीवन भर और आगे अन्तहीन अनन्तकाल के युगों तक यीशु मसीह के सुसमाचार में प्रगट परमेश्वर की महिमाओं की खोज में जारी रहेगी।

प्रचारकों एवं मण्डली के रूप में हम बुद्धिमानी करेंगे यदि सुसमाचार को इस प्राचीन प्रेरित की दृष्टि से एक नये रूप में देखेंगे और इसे जीवनभर सावधानीपूर्वक खोजबीन करने के योग्य समझेंगे। भले ही हमने विश्वास के जीवन में बहुत वर्ष बिता लिये है; और हमें एड्वर्डस की बुद्धि और स्पर्जन की अंतर्दृष्टि प्राप्त हो, भले ही हमने सुसमाचार के सन्दर्भ में पवित्रशास्त्र के प्रत्येक पद को कन्ठस्थ कर लिया हो, और आरम्भिक कलीसिया के पितामहों, सुधारवादियों और प्युरिटनवादियों के सभी प्रकाशनों को आत्मसात् कर लिया हो और वर्तमान युग के सभी विद्वानों का अध्ययन भी कर लिया हो तब भी हम यह मान सकते हैं कि हम अब तक एवरेस्ट पर्वत की तलहटी तक भी नहीं पहुँचे है, जिसे हम सुसमाचार कहते है। अनेकों अनन्तकालों के बाद भी यही बात हमारे विषय में कही जा सकती है!

हम एक ऐसे संसार में रहते हैं जिसमें हमारे सामने असीम संभावनाएं और अनगिनत विकल्प है जो हमारा ध्यान पाने प्रतिस्पर्धा करते है। मसीहत के बारे में भी यही बात कही जा सकती है, धर्मविज्ञान की विचारधाराओं के इतने अधिक विकल्प खुले हैं जिनमें एक छात्र अध्ययन कर सकता है। लगभग असीमित संख्या में बाइबल के सत्य है जिनके परिक्षण में एक व्यक्ति अपना सम्पूर्ण जीवन लगा सकता है। किन्तु एक विचारधारा है जो उन सबसे सर्वोपरि है और बाइबल के अन्य सभी सत्यों को समझने के लिये आधारभूत हैः वह है यीशु मसीह का सुसमाचार। इस एकमात्र संदेश के द्वारा कलीसिया में एवं एक विश्वासी के व्यक्तिगत जीवन में परमेश्वर की सामर्थ अधिकांश रूप में स्वयं को प्रगट करती है।

यदि हम मसीही इतिहास के अभिलेखों में देखे, हम ऐसे स्त्री–पुरूषों को पाते हैं जिनमें परमेश्वर और उसके राज्य के लिये असामान्य लगन थी। हम उनके समान बनने की अभिलाषा करते है और हमें आश्चर्य होता है कि कैसे ऐसी सतत् प्रवाहशील अग्नि में बने रहे। उनके जीवनों, धर्मशिक्षा और सेवकाईयों का सावधानीपूर्वक अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि बहुत सी बातों में वे एक समान नहीं थे परन्तु उन सब के बीच एक आम बात अवश्य थीः उन सब ने सुसमाचार की महिमा की एक झलक पा ली थी, और उसके सौन्दर्य ने उन में धुन जगा दी थी और उन्हें विवश कर दिया था कि वे आगे बढ़े। उनके जीवन और विरासत साबित करते हैं कि उनकी वास्तविक एवं बनी रहने वाली धुन का प्रादुर्भाव उस सदैव बढ़नेवाली और गहिरे में जाने वाली समझ से हुआ था जिसका आधार था – परमेश्वर ने यीशु मसीह के व्यक्तित्व एवं कामों के द्वारा उसके लोगों के लिये क्या–क्या किया था। ऐसे ज्ञान का कोई स्थानापन्न या विकल्प नहीं है!

बीते वर्षों में, मसीही सुसमाचार को अकसर 'एवेन्जेल' (evangel) कहा गया, एवेन्जेलियम (evangelium) इस लैटिन शब्द का अर्थ है – सुसमाचार या शुभ–संदेश। यही कारण है कि विश्वास करने वाले को अकसर एवेन्जेलिकल कहा जाता है। हम मसीही है क्योंकि हम अपनी पहिचान जीवन एवं उद्देश्य मसीह में पाते है। हम सुसमाचारकीय है क्योंकि हम सुसमाचार पर विश्वास करते हैं और इसे मनुष्यों पर परमेश्वर के प्रकाशन का महान केन्द्रीय सत्य मानते है। यह कोई प्रस्तावना नहीं है, न गुणवत्ता का दूसरा नाम है और न ही बाद में आने वाला विचार है; यह मसीहत से परिचय कराने वाली कक्षा मात्र नहीं है, यह समूचे अध्ययन का पाठ्यक्रम है। यह हमारे जीवनों की गाथा है, वह अथाह धन है जिसकी हमें खोज करनी है, और वह संदेश है जिसे प्रचार करने हम जीते हैं। यही कारण है कि जब यीशु मसीह का सुसमाचार हमारी आशा, हमारा गर्व, और हमारी एक अद्‌भुत धुन बन जाती है, तब हम सर्वाधिक रूप में मसीही है और सर्वाधिक रूप में प्रचारकीय है।

आज सुसमाचार प्रचार करने वाले बहुत सी सभाओं का आयोजन करते हैं, विशेषकर हमारे युवाओं के लिये, इस उद्देश्य के साथ कि विश्वासियों की धुन को सहभागिता, संगीत, निपुण वक्ताओं, भावुक कहाँनियों और प्रभावपूर्ण अपीलों के द्वारा रोमांचित करे परन्तु जितना भी रोमांच वे उत्पन्न करते है, अतिशीघ्र उसका लोप हो जाता है। अन्त में ये अनुभव कुछेक हृदयों में थोड़ी सी आग प्रज्वलित करते है जो जलती है और कुछ दिनों में बुझ जाती है।

हम यह भुला चुके हैं कि वास्तविक एवं बनी रहने वाली धुन का जन्म सत्य के ज्ञान से विशेषकर सुसमाचार के सत्य से होता है। आप जितना अधिक जानते है और उसकी सुन्दरता को समझते है, उतनी ही अधिकाई से उसकी सामर्थ आपको प्रभावित करती है। सुसमाचार की एक झलक वास्तव में नया जन्म पाए हृदय को क्रियाशील करती है। हर एक बड़ी झलक गति को बढ़ा देगी जब तक कि आप दुस्साहसी होकर प्रतिफल की ओर दौड़ न पड़ते।[5] सच्चा मसीही हृदय सुसमाचार की ऐसी सुन्दरता का प्रतिरोध नहीं कर सकता। आज के दिन इस बात की सबसे अधिक आवश्यकता है! यही वह बात है जिसे हम खो चुके हैं और अवश्य है कि हम इसे पुनः प्राप्त करे – सुसमाचार को जानने की धुन, और उसी के समकक्ष सुसमाचार सुनाने की धुन।

सुसमाचार को बताना

मानव के इतिहास में और छुटकारे की गाथा में प्रेरित पौलुस परमेश्वर के राज्य का सबसे बड़ा मानवीय साधन था। वह समस्त रोमन साम्राज्य में सुसमाचार के प्रचार–प्रसार के लिये जिम्मेवार था, वह भी ऐसे समय में जबकि सताव अपनी पराकाष्ठा पर था, और वह इस बात का उत्कृष्ट उदाहरण है कि मसीही सेवक बनने का क्या अर्थ होता है। फिर भी उसने सबसे अधिक दिक्षुब्धकारी संदेश के सरल प्रचार के द्वारा यह सब सम्पन्न किया, यह संदेश जो पहले कभी मनुष्यों के कानों तक नहीं

पहुँचा था। पौलुस एक असाधारण रूप में दान–वरदान युक्त व्यक्ति था विशेषकर बुद्धी और धुन के सन्दर्भ में। परन्तु फिर भी उसने स्वयं हमें सिखाया है कि उसकी सेवकाई का बल उसके दान–वरदानों में नहीं परन्तु सुसमाचार के विश्वासयोग्य प्रचार में था। कुरिन्थियों को लिखे उसके पहली पत्री में पौलुस ने इस बड़ी अस्वीकृति का उल्लेख किया है, ''क्योंकि मसीह ने मुझे बपतिस्मा देने को नहीं, वरन सुसमाचार सुनाने को भेजा है और यह भी शब्दों के ज्ञान के अनुसार नहीं, ऐसा न हो कि मसीह का क्रूस व्यर्थ ठहरे... यहूदी तो चिन्ह चाहते हैं, और यूनानी ज्ञान की खोज में है, परन्तु हम तो उस क्रूस पर चढ़ाए हुये मसीह का प्रचार करते है जो यहूदियों के लिये ठोकर का कारण और अन्य जातियों के लिये मूर्खता है; परन्तु जो बुलाए हुए है, क्या यहूदी क्या यूनानी उनके निकट मसीह परमेश्वर की सामर्थ और परमेश्वर का ज्ञान है।''[6]

प्रेरित पौलुस अन्य बातों से बढ़कर एक प्रचारक था, जैसे उसके पहले यिर्मयाह था, वह भी प्रचार करने विवश था। सुसमाचार मानों उसकी हड्डियों में धधकती आग जैसा था, जिसे वह रोक नहीं सकता था।[7] कुरिन्थियों को उसने कहा, ''मैंने विश्वास किया और इसीलिये बोला''[8] और यह भी कहा, ''यदि मैं सुसमाचार न सुनाऊं, तो मुझ पर हाय!''[9] सुसमाचार की ऐसी उच्च प्रतिष्ठा और उसका प्रचार यदि प्रचारक के हृदय में बसा न हो, बाहर दर्शाया नहीं जा सकता, और जब वह हृदय में है, छुपाया भी नहीं जा सकता।

परमेश्वर सब प्रकार के मनुष्यों को बुलाहट देता है कि सुसमाचार के संदेश के बोझ को उठाये। उनमें से कुछ अधिक गम्भीर और परिपक्व है जबकि कुछ अन्य खुशमिजाज और विनोदप्रिय है। परन्तु जब भी बातचीत की दिशा सुसमाचार पर मुड़ती है, प्रचारक के मुखमण्डल पर एक परिवर्तन आता है, लगता है एक बिल्कुल ही भिन्न व्यक्ति हमारे सामने खड़ा है। उसके चेहरे पर अनन्तकाल की आभा खिंच जाती है, आवरण हट जाता है और सुसमाचार की महिमा, बिना बनावट की धुन के साथ चमकने लगती है। ऐसे मनुष्य के पास आकर्षक कहाँनियों, नैतिक प्रतिरोधक बातों या स्वयं के हृदय के विचारों के आदान–प्रदान का समय नहीं रहता। वह प्रचार करने आया है और उसे प्रचार अवश्य करना है। वह विश्राम नहीं कर सकता जब तक कि लोग परमेश्वर को न सुन ले। यदि अब्राहम का सेवक अपने स्वामी अब्राहम का संदेश सुनाए बिना भोजन नहीं कर सकता था,[10] तब सुसमाचार–प्रचारक कैसे विश्राम कर सकता है यदि उसने उसे सौंपे गये सुसमाचार के धन को दूसरों को सौंप न दिया हो![11]

यद्यपि कुछ लोग अब तक कहीं बातों से असहमत हो सकते है पर अधिकतर लोग यह मानेंगे कि ऐसी धुन सहित प्रचार करने की शैली अब लुप्तप्राय है। बहुत से लोग कुछ कहेंगे कि इस शैली में उन परिष्कृत और जटिल बातों का अभाव है जो इस आधुनिक युग में प्रभावशाली होने के लिये आवश्यक है। उत्तर – आधुनिक काल का व्यक्ति जो दूसरों के विचारों के प्रति अधिक विनम्रता और खुलेपन को प्राथमिकता देता है वह एक धुनवाले प्रचारक को जो निडरतापूर्वक सत्य का प्रचार

करता और उसके पक्ष में समझौता नहीं करता, उसे एक रूकावट समान मानता है। बहुमत का तर्क है कि हमें अपने प्रचार के तरीके को बदलना चाहिये क्योंकि वह संसार की दृष्टि में मूर्खतापूर्ण है।

प्रचार के प्रति ऐसी अभिवृति इस बात का प्रमाण है कि हमने सुसमाचार प्रचारकीय समुदाय में अपनी पहिचान खो दी है। यह परमेश्वर है जिसने "प्रचार की मूर्खता" को इस संसार को सुसमाचार के उद्धार देने वाले संदेश को सुनाने के लिये साधन के रूप में नियुक्त किया है।[12] इसका अर्थ यह नहीं कि प्रचार मूर्खतापूर्ण हो, तर्क रहित या असामान्य, अजीब हो। फिर भी प्रचार के लिये पवित्रशास्त्र मानक स्तर है न कि पतित और भ्रष्ट संस्कृति का समकालीन अभिमत जो कि स्वयं की दृष्टि में बुद्धिमान है और परमेश्वर के वचन को सुनने की अपेक्षा अपने कानों की खुजली और हृदय में प्रमोद* की अधिक कामना करता है।[13]

प्रेरित पौलुस जहाँ कही भी गये, सुसमाचार का प्रचार किया, और उनके उदाहरण पर अमल करके हम भला ही करेंगे। सुसमाचार बहुत से माध्यमों के द्वारा प्रचार किया जा सकता है, परन्तु कोई अन्य माध्यम परमेश्वर ने नहीं चुना जैसा प्रचार करने का माध्यम चुना है। इसलिये वे जो लगातार नये–नये तरीकों से प्रचार करने की खोज में लगे है, नयी पीढ़ी के जिज्ञासुओं के लिये, बेहतर होगा कि वे अपनी खोज का आरम्भ और अंत पवित्रशास्त्र में ही करे। वे लोग जो हृदय से अपरिवर्तित लोगों के पास हजारों प्रश्नावलियाँ भेजते और पूछते हैं कि वे आराधना सभा में सबसे अधिक क्या पसंद करेंगे, उन्हें समझना चाहिये कि दस हजार शारीरिक मनुष्यों के एक से अभिमत, परमेश्वर के वचन की एक बिन्दु या मात्रा से अधिक महत्व नहीं रखते।[14] हमें यह समझना चाहिये कि परमेश्वर ने पवित्रशास्त्र में जो नियुक्त किया है, उसमें और जो वर्तमान शारीरिक संस्कृति की मांग है, उसमें एक बड़ी खाई, बड़ा अन्तर है जिसमें मेल, संभव नहीं है।

हमें चकित नहीं होना चाहिये कि शारीरिक मनुष्य, कलीसिया (चर्च) के भीतर और बाहर, नाटक, संगीत और मीडिया को सुसमाचार के प्रचार और बाइबल की व्याख्या से अधिक चाहते है। जब तक परमेश्वर किसी मनुष्य के हृदय को पुनर्जीवित न करे, वह सुसमाचार के प्रति वही रूख अपनायेगा जैसा गदरेनियों में दुष्टात्माओं ने प्रभु यीशु मसीह से कहा थाः "हमें तुझ से क्या काम ?"[15] शारीरिक मनुष्य में पवित्र आत्मा के पुनर्जीवन देने के कार्य के बिना सुसमाचार के प्रति न वास्तविक रूचि होती है न सराहना, फिर भी यह आश्चर्यकर्म मनुष्य के हृदय में तब होता है जब वह सुसमाचार–प्रचार सुनता है भले ही प्रथम बार उसे पसंद न करे। इस कारण हमें चाहिये कि हम शारीरिक मनुष्यों को वही सुसमाचार सुनाये जो वे सुनना नहीं चाहते, और पवित्र आत्मा उन में कार्य करे! इसी प्रकार एक पापी व्यक्ति सुसमाचार में सौंदर्य को नहीं देख सकता, जैसे एक सूअर भी मोतियों में सुन्दरता नहीं पाता या एक कुत्ता पवित्र भोजन का आदर नहीं कर सकता, या एक अंधा व्यक्ति रंगों की सराहना नहीं कर सकता।[16] शारीरिक मनुष्यों को उनकी इच्छा के अनुरूप वस्तुएं देकर प्रचारक उनकी सेवा नहीं करते परन्तु वे सेवा तब करते हैं जब उनके सामने वास्तविक भोजन

रखते है, और जब तक कि पवित्र आत्मा के आश्चर्यजनक कार्य के द्वारा वे समझने लगते है कि वह भोजन क्या है, और वे चखते और देखते हैं कि प्रभु कितना भला है।[17]

इसके पहले कि हम सुसमाचार प्रचार पर इस संक्षिप्त चर्चा का समापन करे, हमें एक अंतिम मसले पर चर्चा करनी होगी। कुछ लोग मानते है कि हमारी वर्तमान संस्कृति, जिस प्रकार का प्रचार अतीत के दिनों में बड़ी जागृतियों और आत्मिक आन्दोलनों में बहुत अधिक प्रभावपूर्ण था, उसे सहन नहीं कर सकती। जोनाथन एड्वर्डस, जार्ज व्हाइटफील्ड, चार्ल्स स्पर्जन और उनके जैसे अन्य प्रचारकों को आधुनिक मनुष्य हास्यास्पद समझेंगे व्यंग, कटाक्ष और मखौल करेंगे। यह मान्यता भी सही नहीं ठहरती क्योंकि इन प्रचारकों के दिनों में भी लोगों ने उनका मखौल बनाया और व्यंगपूर्ण कटाक्ष किये थे! वास्तविक सुसमाचार प्रचार सभी संस्कृतियों में सदैव मूर्खतापूर्ण माना जायेगा। रूकावटों को दूर करने के सभी प्रयास करना ताकि प्रचार को यथोचित बनाए, वास्तव में सुसमाचार की सामर्थ को निर्बल करते है। यह उस उद्देश्य को भी बाधित करता है जिसके लिये परमेश्वर ने मनुष्यों के उद्धार के लिये प्रचार को साधन चुना है – अर्थात् मनुष्य की आशा निपुणता कौशल या सांसारिक ज्ञान पर नहीं परन्तु परमेश्वर की सामर्थ पर रहे।[18]

हम ऐसी संस्कृति में रहते है, जिसे पाप ने लोहे की जंजीरों के समान बाँध रखा है। पुलपिट (मंच) से प्रचार करने वाले या आत्मिक जीवन के गुरूओं की नैतिक कहँनियों, आकर्षक युक्तियों और जीवन के उपयोगी सबक इत्यादि में ऐसे अंधकार के विरूद्ध सामना करने की वास्तविक सामर्थ नहीं हैं। हमें यीशु मसीह के सुसमाचार का प्रचार करने वाले ऐसे प्रचारकों की आवश्यकता है जो पवित्रशास्त्र को जानते–समझते हैं, और परमेश्वर के अनुग्रह से किसी भी संस्कृति के सामने उद्घोष कर सकते है – ''यहोवा यों कहता है!''

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. 1 कुरिन्थियों 15:1–4
2. 1 तिमुथि 1:11
3. यिर्मयाह 2:13; 14:3
4. 1 कुरिन्थियों 4:15
5. फिलिप्पियों 3:13–14
6. 1 कुरिन्थियों 1:17, 22–24
7. यिर्मयाह 20:9
8. 2 कुरिन्थियों 4:13 KJV
9. 1 कुरिन्थियों 9:16
10. उत्पत्ति 24:33
11. गलातियों 2:7; 1 थिस्सलुनियों 2:4; 1 तिमुथि 1:11; 6:20; 2 तिमुथि 1:14; तितुस 1:3

12. 1 कुरिन्थियों 1:21
13. रोमियों 1:22; 2 तिमुथि 4:3
14. मत्ती 5:18
15. मत्ती 8:29
16. मत्ती 7:6
17. यशायाह 55:1–2; भजन संहिता 34:8
18. 1 कुरिन्थियों 1:27–30

अध्याय – 2

सुसमाचार ग्रहण करना अपरिहार्य

हे भाइयों, अब मैं तुम्हें वही सुसमाचार बताता हूँ जो पहले सुना चुका हूँ।
– 1 कुरिन्थियों 15:1

सुसमाचार परमेश्वर की ओर से मनुष्यों को दिया गया संदेश है, इसलिए हम मानकर चले कि वह किसी प्रतिक्रिया को जन्म देगा, और किसी प्रत्युत्तर की मांग करेगा। हमारे पद के अनुसार, सुसमाचार सुनने के बाद, कलीसिया ने (कुरिन्थ में) उसके बड़े मूल्य के अनुरूप उचित रीति से ग्रहण किया और उसे वह आधार बनाया जिस पर वे परमेश्वर के समक्ष खड़े हुये। यदि हमें परमेश्वर के साथ सही संबंधों में रहना है, हमें भी यही करना चाहिये।

सुसमचार ग्रहण करना

मनुष्य यदि उद्धार चाहते हैं, परमेश्वर के अनुग्रह से अवश्य है कि वे सुसमाचार को ग्रहण करें। पर इसका अर्थ क्या है ? बाइबल में हिन्दी और ग्रीक भाषा में लिखा 'ग्रहण करना' एक साधारण शब्द है, उसमें कुछ भी असाधारण नहीं है। परन्तु सुसमाचार के सन्दर्भ में यह असाधारण बन जाता है – पवित्रशास्त्र के सबसे अधिक महत्व के शब्दों में एक।

प्रथम, जब दो वस्तुएं विरोध रखती है या नाटकीय रूप में एक दूसरे के विपरीत है, तब एक को ग्रहण करने का अर्थ है दूसरी का तिरस्कार करना। संसार और सुसमाचार के बीच किसी प्रकार का मेल या मित्रता नहीं है इसलिए सुसमाचार ग्रहण करने का अर्थ है, संसार का तिरस्कार करना। यह दर्शाता है कि सुसमाचार को ग्रहण करने का कार्य कितना अधिक महत्वपूर्व हो सकता है। सुसमाचार को ग्रहन करने और उस पर अमल करने का अर्थ है अनदेखी वस्तुओं के लिये उन सभी बातों का इंकार कर देना जिन्हें आँख से देखा जा सकता है और हाथों से स्पर्श किया जा सकता है।[1] इसका अर्थ है स्वयं के स्वामित्व एवं स्व–प्रशासन के व्यक्तिगत अधिकारों को खोकर एक मसीह की आधीनता ग्रहन करना, जो शासन के शत्रु और ईश–निन्दक के रूप में दो हजार वर्ष पूर्व मारा गया था। इसका अर्थ है – बहुमत एवं उसके विचारों, अभिमतों का इंकार करना और सामान्य रूप में

महत्वहीन और कमतर मानी जाने वाली अल्पमत की कलीसिया में शामिल होने का चुनाव करना। इसका अर्थ है इस एकमात्र जीवन में प्राप्त सभी बातों को खो देने का जोखिम उठाना, इस विश्वास के साथ कि छेदा गया भविष्यद्वक्ता, परमेश्वर का पुत्र और संसार का उद्धारकर्त्ता हैं। सुसमाचार को ग्रहन करना मात्र यह प्रार्थना करना नहीं है कि यीशु हृदय में आ, पर यह कि संसार को त्याग देना और मसीह के दावों की भरपूरी या बहुतायत को स्वीकार कर लेना।

दूसरी बात, जो व्यक्ति सुसमाचार ग्रहण करता है वह पूर्ण रीति पर यीशु के व्यक्तित्व एवं कामों पर भरोसा करता है कि वही परमेश्वर के समक्ष सही रूप में खड़े होने का एक मात्र मार्ग है। यह एक आम कहावत है कि किसी एक बात पर पूर्ण रूप से भरोसा करना जोखिमपूर्ण है, अथवा कम से कम बुद्धिमानी की बात नहीं है। हमारे समाज में उस व्यक्ति को लापरवाह माना जाता है जिसके पास कोई सहारा देने वाली योजना या कोई वैकल्पिक छुटकारे का मार्ग नहीं है, यदि उसने अपने निवेशों को विकेन्द्रित नहीं किया है, यदि उसने सभी निवेश एक ही स्थान में रखे हैं या फिर आगे बढ़ते हुये वह पीछे के रास्ते बन्द करता आया है। फिर भी यही वह बात है जो यीशु मसीह को ग्रहण करने वाले व्यक्ति को करनी चाहिये। मसीही विश्वास अपने आप में अनूठा है। मसीह को स्वीकार करने का वास्तव में अर्थ है अन्य बातों, मार्गों या विकल्पों से विमुख होकर केवल मसीह पर आशा रखना। यही कारण है कि प्रेरित पौलुस ने घोषणा की है कि यदि मसीह एक 'छलावा' है तो एक मसीही व्यक्ति संसार में सबसे अधिक अभागा है।[2] यदि मसीह उद्धारकर्त्ता नहीं है तो मसीही व्यक्ति खोया हुआ है क्योंकि उसके पास भरोसे योग्य अन्य कोई योजना नहीं है। विश्वास के द्वारा उसने घोषणा की, "हे मेरे प्रभु, मेरा भरोसा केवल तुझ पर है यदि तू मेरा उद्धार करने में समर्थ नहीं है या मेरा उद्धार करना नहीं चाहता है तो मैं नर्क में जाऊंगा। मैं अपने लिये कोई अन्य तैयारी नहीं करूंगा!"

सुसमाचार को वास्तविक रूप में ग्रहण करना न केवल पाप से फिरना और उसका तिरस्कार करना है पर साथ ही मसीह को छोड़ अन्य सभी साधनों और मार्गों से फिरना और उनका तिरस्कार करना भी है, विशेषकर स्वयं पर भरोसा करने का तिरस्कार करना। इसी कारणवश एक व्यक्ति जो वास्तव में हृदय–परिवर्तन कर चुका है वह इस विचार या सुझाव मात्र से ही बेचैन हो उठता है कि परमेश्वर के सामने उसकी सही स्थिति का कारण उसके स्वयं के गुण या विशेषताएं है। यद्यपि मसीह में उसका नया जीवन भले कामों को उत्पन्न करता है, उसने उद्धार के लिये भले कामों को साधन मानने की सभी आशाएं त्याग दी है और केवल मसीह के व्यक्तित्व एवं सिद्ध कामों पर ही भरोसा रखता है।

तीसरी बात, सुसमाचार को ग्रहण करने का अर्थ है स्वयं के जीवन को यीशु मसीह के प्रभुत्व की आधीनता में देना। आधुनिक काल के सुसमाचार–प्रचारक अकसर सिखाते है कि मनुष्य यीशु को उनके जीवनों का प्रभु मानकर ग्रहण करे। बेहतर शिक्षा यह होगी कि यीशु उनके जीवनों के प्रभु है चाहे वे वर्तमान में प्रेमपूर्वक उसके सामने घुटने टेके या फिर नफरत के साथ उसकी ओर

मुट्ठियाँ ताने। पवित्रशास्त्र यह घोषणा करता है कि परमेश्वर ने इस यीशु को प्रभु और मसीह दोनों ठहरा दिया है, जिसे हमने क्रूस पर चढ़ाया था।[3] उसने यीशु को उसके पवित्र पर्वत पर अपना राजा नियुक्त किया है और वह उसके विरूद्ध बलवा करने वालों को ठठ्ठों में उड़ाता है।[4] परमेश्वर मनुष्यों से नहीं कहता कि वे यीशु को प्रभु बनायें (कि मानो उनमें ऐसी सामर्थ हो) पर यह कहता है कि वे उसके प्रति सम्पूर्ण समर्पण का जीवन जीये, जिसे उसने प्रभु ठहराया है। इस कारण मनुष्य यदि सुसमाचार के लाभों को प्राप्त करने की अभिलाषा रखता है, अवश्य है कि पहले तय कर ले कि क्या वह स्वयं का सम्पूर्ण स्वामित्व और स्व–प्रशासन (का अधिकार) सुसमाचार के प्रभु को सौंपने के लिये तैयार है।

सुसमाचार–प्रचारक के रूप में अवश्य है कि हम बहुत सावधानीपूर्वक इस लेन–देने की सभी शर्तों की स्पष्ट व्याख्या करे, उन्हें कम करके न दिखाये और न कुछ छुपाये, ऐसा न हो कि कुछ बातें आभासी तौर पर समझने योग्य न रहे। हमें यह समझना चाहिये कि हम ईमानदार नहीं रहेंगे यदि जिज्ञासुओं को यह नहीं समझा देते कि मसीह को ग्रहण करने का कार्य सबसे अधिक विवेकपूर्ण किन्तु जोखिम से भरा कार्य भी है। आखिरकार, सी.एस. लेविस के 'द लायन, द विच, एण्ड द वार्ड रोब' के समान वह पालतू शेर नहीं है और वह निश्चित रूप में निरापद नहीं है। उसे अधिकार है कि उसके प्रभुत्व का अंगीकार करने वालों से वह जो चाहे मांगे। वही यीशु जो थके मांदे लोगों को अपने पास आने का संकेत करते है, वे उनसे उनका सबकुछ मांग सकते है, यहाँ तक कि वे उन्हें इस अंधकार और पतन के भरे संसार में भेजकर अपने लिए उनके प्राणों की आहुति भी मांग सकते है।[5] वे जो सुसमाचार की बुलाहट के जोखिम को नहीं समझते, उन्होंने सुसमाचार ठीक–ठीक नहीं सुना है। पर जो सुनते हैं और अनुग्रह के कारण प्रत्युत्तर देते हैं वे जोखिम उठाने के बावजूद एक बहुत ही विवेकपूर्ण कार्य करते हैं। वह परमेश्वर जिसने अपने लोगों से अनन्तकालीन प्रेम के द्वारा प्रेम किया और स्वयं के लोहू से छुटकारा दिया और जो–जो प्रतिज्ञाएं उसने उनसे की उनके प्रति बिना समझौता किये अपनी प्रतिबद्धता प्रदर्शित की है उस सर्वशक्तिमान सृष्टिकर्त्ता और विश्व को संभालने वाले के अनुसरण से अधिक विवेकपूर्ण कार्य और क्या हो सकता है ?[6] फिर भी यदि वह ऐसा न होता, और ये सभी भली बातें उसमें न होती, तब भी उसका अनुसरण करना विवेकपूर्ण होता, क्योंकि कौन है जो उसकी इच्छा का प्रतिरोध कर सकता है ?[7] इन सभी कारणोंवश और अनगिनत अन्य कारणोंवश प्रेरित आग्रह करते हैं – ''अपने शरीरों को जीवित और पवित्र, और परमेश्वर को भावता हुआ बलिदान करके चढ़ाओं'' और इस कार्य को वे हमारी आत्मिक या विवेकपूर्ण सेवा कहते है।[8]

चौथी बात, सुसमाचार को ग्रहण करने का अर्थ है वास्तविकता का एक सम्पूर्ण रूप में अलग विचार करना जिसमें मसीह सभी वस्तुओं का केन्द्र है। यही कारण है कि ईश्वरज्ञानी उद्धार और मसीही जीवन को मसीह में केन्द्रित मानते है। वह हमारे विश्व, हमारे स्त्रोत्, उद्देश्य, लक्ष्य और हमारे व्यक्तित्व एवं कामों से जुड़ी प्रत्येक अन्तः प्रेरणा का केन्द्र बन जाता है। जब कोई व्यक्ति, सुसमाचार को ग्रहण करता है, उसका समग्र जीवन एक अलग सन्दर्भ में जिया जाता है और वह

सन्दर्भ है – मसीह। यद्यपि वास्तविक हृदय–परिवर्तन के समय बाहर से दिखने वाले चिन्ह आकस्मिकता से कम होते है पर उनका क्रमिक प्रभाव काफी बड़ा होता है। झील के पानी में फेंके गए एक कंकड के समान सुसमाचार की लहरें बढ़ते–बढ़ते विश्वासी के पूरे जीवन को घेर लेती है और हरेक पहलू को स्पर्श करती है। सच्चा हृदय परिवर्तित व्यक्ति सुसमाचार को अपने पिछले जीवन के साथ अतिरिक्त रूप में ग्रहण नहीं करता पर पिछले जीवन के बदले ग्रहण करता है। एक को स्वीकार करने का अर्थ दूसरे को खोना है। यही यीशु की सुस्पष्ट शिक्षा है – "जो कोई अपना प्राण बचाना चाहे वह उसे खोएगा पर जो कोई मेरे लिये अपना प्राण खोएगा वह उसे पाएगा।"[9]

अन्त में, सुसमाचार को ग्रहन करने का अर्थ है मसीह को अपने जीवन के मूल स्त्रोत और पोषणकर्ता के रूप में ग्रहन करना। मसीह को जीवन के एक भाग के रूप में या बिना मसीह के जो अन्य भली बातें जीवन में है उनके साथ ही स्वीकार नहीं किया जा सकता। वह कोई छोटी–मोटी सहायक वस्तु नहीं है जो जीवन को संवारती और बेहतर बनाती है। सुसमाचार को स्वीकार करते समय वह हमारा जीवन बन जाता है।[10]

एक प्रचारक जब किसी अविश्वासी को उसके अद्भुत जीवन के लिये शुभ–कामनाएं देता है, जो उसने स्वयं अपने लिये बनाया है, और उसमें जो उपलब्धि हासिल की है, उसकी प्रशंसा करता है और तब कहता है कि उसमें एक बात की घटी है, उसे यीशु की आवश्यकता है कि वह सब बातों में पूर्ण हो जाए, इससे अधिक ईशनिन्दापूर्ण कोई बातें नहीं होगी। यह प्रेरित पौलुस की अभिवृति नहीं थी जिसने अपने पूर्व जीवन की सबसे उत्कृष्ट बातों को मसीह की तुलना में कूड़ा–कर्कट समझ लिया था।[11] हमें अविश्वासी के सामने कभी भी मसीह को पहले से बने अद्भुत जीवन के लिये शिरोमणि के रूप में प्रस्तुत नहीं करना चाहिये। अविश्वासी यह देख सके कि उसके पास जीवन नहीं है, और मसीह को ग्रहण करने से पूर्व, उसकी जो भी व्यक्तिगत उपलब्धियाँ है वे उसकी स्वयं की व्यर्थता के स्मारक है, बालू के बने और शीघ्र ही जाते रहेंगे।

यीशु ने शिक्षा दी थी, "मैं तुम से सच–सच कहता हूँ कि जब तक तुम मनुष्य के पुत्र का मांस न खाओ, और उसका लहू न पियो तुममें जीवन नहीं।"[12] इस कठोर बात का अर्थ यह है कि मसीह को हमारे जीवनों का पोषण बनना चाहिये, न कि 'मसाला' या 'पूरक'।[13]

विश्वास करने वालों के लिये यीशु मन्ना है जो स्वर्ग से उतरा है, वह चट्टान है जो जंगल के बीच जीवन के जल का सोता है और वह दाखलता है जिसमें विश्वासी बना रहता है, जिससे वह जीवन और फलदृपता प्राप्त करता है।[14] मसीह में वास्तव में सहभागी होने वाला विश्वासी उनमें समय नहीं बिताता जो 'रोटी' नहीं है और उसे संतुष्टि नहीं दे सकते, वह लगातार उस रोटी की खोज में लगा रहता है जो स्वर्ग से उतरी है ताकि वह उसे खाए और न मरे।[15]

सुसमाचार–प्रचारक की यह पुकार होनी चाहिये कि मनुष्य न केवल पश्चाताप करे परन्तु वे उसे ग्रहण भी करे। प्रचारक न केवल इस वर्तमान युग की संतुष्टि न देने वाली वस्तुओं (चारा) को

प्रगट करे और उनकी निन्दा करे, अवश्य है कि वह उन्हें उस भण्डार के विषय में भी बताये जहाँ वास्तविक भोजन मिल सकता है। उसे दाऊद के साथ मिलकर लोगों को प्रोत्साहित करना चाहिये – "ओह, चखकर देखो यहोवा कैसा भला है!"[16] इसके अलावा उसे सभी मनुष्यों को चेतावनी भी देना चाहिये कि मसीह को वास्तव में चखने और उद्धार प्राप्त करने वाले मनुष्य का प्रमाण इस बात में मिलता है कि वह आगे भी चखता जाता है, मसीह में संतुष्टि प्राप्त करता चला जाता है और वह मसीह से अलग होने के विचार मात्र को कभी सहन नहीं कर सकता।

सुसमाचार में स्थिर रहना

हमारे पाठ से हम न केवल सुसमाचार को ग्रहण करना सीखते है पर यह भी कि हम उस में बने रहे! पौलुस लिखते है, "मैं तुम्हें वही सुसमाचार बताता हूँ जो पहले सुना चुका हूँ जिसे तुमने अंगीकार भी किया और जिसमें तुम स्थिर भी हो।" यह सरल उद्‌घोषणा दो भिन्न किन्तु आपस में संबंधित सत्यों के बारे में बताती है। प्रथम विश्वासी की सुसमाचार के कारण परमेश्वर के समक्ष स्थिति के बारे में है। और दूसरी का सम्बन्ध सुसमाचार के लिये विश्वासी के अंगीकार या संकल्प से है। इन दोनों ही सत्यों का विश्वासी के जीवन में दूरगामी अनुप्रयोग है। प्रथम बात एक बड़ी आधारशिला है जिस पर मसीही विश्वास आवश्यक रूप से आधारित है: अर्थात् वह मसीह और सुसमाचार में होकर परमेश्वर के सामने खड़े हो सकता है। दूसरी मसीही व्यक्ति के जीवन को आकार देने वाली शक्तिशाली अभिकर्ता है, अर्थात् उसने सुसमाचार में स्थिर रहने का संकल्प किया है और वह उससे डिगेगा नहीं।

बाइबल–सम्मत मसीहत का एक आधारभूत सत्य यह है कि सुसमाचार के कारण विश्वासी को परमेश्वर के समक्ष खड़े होने का अधिकार है – केवल मसीह में। दाऊद के भजनों में हम मनुष्यों के मन की सबसे बड़ी दुविधा को पाते है – "यहोवा के पर्वत पर कौन चढ़ सकता है ?और उसके पवित्रस्थान में कौन खड़ा हो सकता है ?जिसके काम निर्दोष और ह्रदय शुद्ध है, जिसने अपने मन को व्यर्थ बात की ओर नहीं लगाया, और न कपट से शपथ खाई है।"[17] कोई भी मनुष्य जो लेशमात्र भी इस संभावना पर विचार करता है कि एक व्यक्तिगत और नैतिक परमेश्वर है, उसे दाऊद के प्रश्न पर कांपना चाहिये। जब तक कि वह बुद्धिमान नहीं है या फिर उसका विवेक मानों काम करने योग्य नहीं है, उसे यह अवश्य जानना चाहिये कि समस्त पृथ्वी के न्यायी के समक्ष खड़े होने के लिये उसमें कोई आवश्यक अहर्ता नहीं है।[18] पवित्रशास्त्र बताता है कि यदि वह आत्मावलोकन करे तो पायेगा कि उसका ह्रदय सब बातों से अधिक धोकेबाज है और अत्याधिक दुष्टता से भरा है।[19] यदि वह अपने स्वयं के मन का विचार करे, वह पाएगा कि उसमें दुष्टता के विचार भरे है।[20] यदि वह ध्यान देकर अपनी वाणी को सुनें, वह पाएगा कि उसमें धोका, शाप और कड़वाहट भरी है।[21] यदि वह अपने हाथों पर दृष्टि करे तो वह समझ लेगा कि वे अनगिनत बुरे कामों से सने हुये है। यदि तनाव में आकर वह अपनी लज्जा को अपने सर्वाधिक अच्छे धार्मिक कामों से ढ़ांकने का प्रयास करे, तो वह पाएगा कि

उसके काम किसी कोढ़ी की घावभरी गन्दी पट्टियों के जैसे है।[22] वह अपने आप को कितना भी साफ करे, कितना भी साबुन से धोए, उसके अधर्म के दाग नहीं जाते।[23] वह किसी भी ओर मुड़े वह स्वयं को आरोपित, दोषी और आशाविहीन पाता है।

ऐसे सम्पूर्ण निराश और असहाय दशा में प्रकाश पाने वाला, एवं पुनर्जीवन पाने वाला पापी मसीह की ओर देखता है और उसमें अपने लिए आशा प्राप्त करता है। स्व–धार्मिकता से विमुख होकर वह विश्वास करता है और अनुग्रह के द्वारा केवल विश्वास से धर्मी ठहराया जाता है।[24] उस पल के बाद से, वह एक मसीही के दो लक्षण प्रगट करता है – वह यीशु मसीह की महिमा करता है, उस पर गर्व करता है और शरीर पर भरोसा नहीं रखता।[25] वह संतों के महान समूह में शामिल हो चुका है, जिन्होंने परमेश्वर पर विश्वास किया और यह उनके लिये धार्मिकता गिनी गई।[26] वह स्वयं को मसीह पर अवलंबित करता है, उससे लिपटा रहता है और बलपूर्वक मसीह में बना रहता है, उसे भय होता है कि यदि वह मसीह को छोड़कर स्वयं पर आश्रित होगा, तो पता नहीं उसका क्या होगा। वह केवल मसीह पर आधारित हो जाता है और उससे अलग नहीं हटता। वह समझ लेता है कि वह मसीह का व्यक्तित्व एवं गुणों के बल पर प्रभु के पर्वत पर चढ़ सकता है और उसके पवित्र स्थान में खड़ा हो सकता है। एक प्राचीन भजन का आशय है: उसकी आशा, यीशु के लोहू और धार्मिकता को छोड़ किसी और बात पर आधारित नहीं है। वह सबसे मधुरतम बातों पर भी भरोसा नहीं करता, पर पूरी तरह यीशु के नाम पर अवलंबित होता है। उस दृढ़ चट्टान अर्थात् मसीह पर वह खड़ा होता है, बाकी सब भूमि धसकने वाली बालू है, बाकी सब भूमि धसकने वाली बालू है![27]

मसीही विश्वास में मसीह के द्वारा परमेश्वर के सामने सही रूप में खड़े होने की प्रतिज्ञा दी गई है। यह सत्य है इसलिए हमें सुसमाचार को थामे रहने और उस पर बने रहने के लिये संकल्पित होना चाहिये। यह बात जानना सहायता देता है कि खड़े होना (Stand) यह शब्द *histemi* इस ग्रीक शब्द से है जो साधारण तौर पर खड़े होने की शारीरिक क्रिया को दर्शाता है। किन्तु नये नियम में अकसर यह शब्द हमारे निश्चय होने, संकल्प करने, दृढ़ बने रहने, स्थायित्व एवं बिना डगमगाये अटल बने रहने के गुण को प्रगट करता है। आत्मिक युद्ध की चर्चा में पौलुस ने इस शब्द का तीन बार उपयोग विश्वासियों को प्रोत्साहित करने के लिये किया है कि वे "शैतान की युक्तियों के सामने खड़े रहे।"[28] एक अन्य संबंधित क्रियापद से हम जानते है कि विश्वासियों को प्रभु में, विश्वास में, परमेश्वर के अनुग्रह में और प्रेरिताई की परम्परा में "दृढ़तापूर्वक बने रहना" है।[29]

सब बातों से बढ़कर विश्वासी को सुसमाचार में दृढ़ बने रहना चाहिये और उससे टलना नहीं चाहिये। यदि नींव का यह पत्थर हिल गया तो सम्पूर्ण इमारत धराशायी हो जायेगी। यही कारण है कि प्रेरित पौलुस ने गलातिया की कलीसिया को उसकी सबसे अधिक कड़ी डाँट–फटकार में से एक फटकार लगाई: "मुझे आश्चर्य होता है कि जिसने तुम्हें मसीह के अनुग्रह में बुलाया उससे तुम इतनी जल्दी फिर गए और हर प्रकार के सुसमाचार की ओर झुकने लगे। परन्तु वह दूसरा सुसमाचार

है ही नहीं; पर बात यह है कि कितने ऐसे है जो तुम्हें घबरा देते है और मसीह के सुसमाचार को बिगाड़ना चाहते हैं। परन्तु यदि हम, या स्वर्ग के कोई दूत भी उस सुसमाचार को छोड़ जो हमने तुम को सुनाया है, कोई और सुसमाचार तुम्हें सुनाए, तो शापित हो। जैसा हम पहले कह चुके हैं, वैसा ही मैं अब फिर कहता हूँ कि उस सुसमाचार को छोड़ जिसे तुमने ग्रहण किया है, यदि कोई और सुसमाचार सुनाता है तो शापित हो।''[30]

पवित्रशास्त्र का प्रत्येक शब्द और धर्म–शिक्षा महत्वपूर्ण है; हालांकि कुछ धर्मशिक्षाएं अन्यों से अधिक महत्व की है। हमारा अनन्त उद्धार कलीसिया का सिद्धान्त (ecclesiology) या अन्त के दिनों का सिद्धान्त (eschatology) के मतभेद पर आधारित नहीं है पर यह पूरी रीति पर सुसमाचार पर आधारित है।[31] इस पृथ्वी पर बीतने वाले समस्त वर्षों में सर्वाधिक विचारवान और परिपक्व मसीही विश्वास की बहुत सी छोटी बातों को लेकर अपने अभिमतों में परिवर्तन कर सकता है परन्तु उसे सुसमाचार के आवश्यक मूल तत्वों से हटना नहीं चाहिये और न वह हटेगा।[32] पुरूष, स्त्री, युवा, या बच्चे, जिन्होंने सुसमाचार को वास्तव में ग्रहण किया है वे उसमें स्थिर बने रहेंगे और बने रहकर वे साबित करते है कि उन्होंने वास्तव में सुसमाचार को ग्रहण किया है।

हम ऐसे संसार में रहते है जो यीशु के सुसमाचार के प्रति आक्रामक है और अवमानना करके उसे रोकता है। साथ ही यह संसार उस दुष्ट शैतान की सामर्थ के वश में है जो सभी अन्य शिक्षाओं से अधिक बढ़कर सुसमाचार का विरोध करता और यदि उसका बस चले, विश्व से सुसमाचार का नामोनिशान मिटा देना चाहता है।[33] वास्तव में शैतान खुशी–खुशी प्रत्येक मनुष्य के हाथों में बाइबल देगा और उसकी प्रत्येक आज्ञा के पालन की बात करेगा यदि हम बदले में सुसमाचार को हटा दे। परन्तु बिना सुसमाचार, मसीही विश्वास का समूचा तंत्र किसी काम का नहीं है।

विश्वासियों के रूप में हमें चाहिये कि न केवल सुसमाचार ग्रहण करे परन्तु उसमें स्थिर बने भी रहे। हम शैतान की चालों से अनभिज्ञ न रहे कि वह हमें अनजाने में फाँस ले।[34] जब तथाकथित उद्धारकर्त्ता मसीह पर हमारे विश्वास की चोरी करना चाहते हैं, हमें उनकी सहायता नहीं करनी चाहिये कि वे हमें प्रलोभित करे! जब विधिवादी मसीह पर हमारे भरोसे के लिये पूरक लाते है, हमें उनकी बातों में नहीं आना चाहिये। जब स्वनामधन्य भविष्यद्वक्ता सुसमाचार का पुनर्गठन करके उसे संस्कृति के लिये अधिक प्रासंगिक और अनुकूल बनाते है, हमें उनका अनुसरण नहीं करना चाहिये। जब दोष देने वाला हमारे पाप गिनाता और महिमा की हमारी आशा पर हँसता है, हमें सुसमाचार की ओर संकेत करना चाहिये और उसमें स्थीर रहना चाहिये। जब उसका आरोप चाटुकारिता में बदल जाये और वह हमारी धर्मपरायणता को प्रतिफल के योग्य ठहराए तब हमें उसका विरोध (निन्दा) इस संकल्प के साथ करना चाहिये: ''ऐसा न हो कि मैं अन्य किसी बात का घमण्ड करूं, केवल हमारे प्रभु यीशु मसीह के क्रूस का, जिसके द्वारा संसार मेरी दृष्टि में और मैं संसार की दृष्टि में क्रूस पर चढ़ाया गया हूँ।''[35]

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. इब्रानियों 11:1, 7, 27; 1 पतरस 1:8
2. 1 कुरिन्थ 15:19
3. प्रेरितों के काम 2:36
4. भजन संहिता 2:4–6
5. मत्ती 11:28; 10:16, 39
6. कुलुस्सियों 1:15–17; इब्रानियों 1:3; यिर्मयाह 31:3; प्रकाशित वाक्य 5:9; इब्रानियों 13:5; 2 तिमुथि 2:13; 2 कुरिन्थ 1:20; मत्ती 28:20
7. रोमियों 9:19; 2 इतिहास 20:6; अय्यूब 9:12; दानिएल 4:35
8. रोमियों 12:1
9. मत्ती 16:25
10. कुलुस्सियों 3:4
11. फिलिप्पियों 3:7–8
12. यूहन्ना 6:53
13. यूहन्ना 6:60
14. यूहन्ना 6:31–35, 41, 47–51, 58; 1 कुरिन्थ 10:4; यूहन्ना 15:5–6
15. यशायाह 55:2; यूहन्ना 6:50
16. भजन संहिता 34:8
17. भजन संहिता 24:3–4
18. भजन संहिता 14:1; 53:1
19. यिर्मयाह 17:9
20. यिर्मयाह 4:14
21. रोमियों 3:13–14
22. यशायाह 64:6
23. यिर्मयाह 2:22
24. इफिसियों 2:8–9
25. फिलिप्पियों 3:3
26. उत्पत्ति 15:6; गलातियों 3:6
27. Adapted from “The Solid Rock” by Edward Mote.
28. इफिसियों 6:11, 13, 14
29. सम्बंधित क्रियापद Steko विलंबित वर्तमानकाल है, पूर्ण वर्तमानकाल estreka से और histemi से इसका प्रादुर्भाव है। फिलिप्पियों 4:1; 1 थिस्सलुनियों 3:8; 1 कुरिन्थ 16:13; 1 पतरस 5:12; 2 थिस्सलुनियों 2:15।
30. गलातियों 1:6–9
31. Ecclesiology का संदर्भ कलीसिया के अध्ययन से है और Eschatology का संदर्भ युगों की समाप्ति या अन्तिम दिनों की बातों से है।
32. कुलुसियों 1:22–23
33. 1 यूहन्ना 5:19
34. 2 कुरिन्थ 2:11
35. गलातियों 6:14

अध्याय – 3

सुसमाचार जिसके द्वारा हमारा उद्धार होता है

उसी के द्वारा तुम्हारा उद्धार भी होता है, यदि उस सुसमाचार को जो मैं ने तुम्हें सुनाया था स्मरण रखते हो; नहीं तो तुम्हारा विश्वास करना व्यर्थ हुआ।

– 1 कुरिन्थियों 15:2

अवश्य है कि मसीही विश्वास की प्रत्येक धर्मशिक्षा में संतुलन रखा जाये। यदि हम अन्य सत्यों का इन्कार करके या उनकी उपेक्षा कर के किसी एक सत्य को दूसरों से अधिक महत्व देते है, तब हम बड़ी गलती करने के जोखिम में है। किन्तु सुसमाचार की प्राथमिकता को बढ़ा–चढ़ाकर कहना या अति–महत्व देना असम्भव है। सुसमाचार को लेकर हम कभी भी अतिशय चरमवादी नहीं बन सकते। यह सत्य इस तथ्य में दृष्टिगोचर है कि सुसमाचार परमेश्वर की ओर से मनुष्यों को दिया गया सबसे महान्तम प्रकाशन है, और यही वह एकमात्र संदेश है जिसके द्वारा मनुष्य उद्धार पा सकता है। परिणामस्वरूप, यही वह संदेश है जिसे अति दृढ़ता पूर्वक पकड़े रहना चाहिये। यद्यपि बाइबल के छोटे से छोटे सत्य से भटक जाना भी खतरनाक है, फिर भी हम अपनी अनन्त नियति को खतरे में डाले बिना बहुत सी बातों को समझने में गलती कर सकते है। किन्तु सुसमाचार को लेकर गलत होने का अर्थ है सभी बातों में गलत हो जाना! सुसमाचार को प्राथमिकता और महत्व न देने का अर्थ है उसे पूरी तरह गलत रूप में समझना!

सुसमाचार जिससे उद्धार होता है

हमारे सन्दर्भपद में ''तुम्हार उद्धार होता है'' यह वाक्यांश वास्तव में वर्तमानकाल की क्रिया है और यह वर्तमान प्रक्रिया और उसके भविष्य में भी जारी रहने का संकेत करती है।[1] इस प्रकार, अनुवाद यह भी हो सकता है ''जिसके द्वारा तुम्हारा उद्धार हो रहा है।'' यहाँ यह न भूलना महत्वपूर्ण है कि पवित्रशास्त्र उद्धार के लिये तीन कालों का उपयोग करता है – भूतकाल, वर्तमानकाल और भविष्यकाल। इन तीनों कालों या उद्धार के पहलुओं की अनदेखी करने पर हम उद्धार की परिवर्तित या अस्वास्थ समझ प्राप्त करते है। भूतकाल में परमेश्वर ने विश्वासी को पाप के दोष से बचाया। यह

उसके हृदय–परिवर्तन के समय हुआ, जब उसने सुसमाचार के लिये परमेश्वर की साक्षी पर विश्वास किया और यह उसके लिये धार्मिकता गिनी गई।[2] पवित्रशास्त्र में इसे सामान्य तौर पर 'धर्मी ठहराया जाना' कहते है।[3]

वर्तमान में विश्वासी को पाप की सामर्थ से बचाया जा रहा है। यह एक क्रमबद्ध प्रक्रिया है जिसे समुचे नये–नियम में उत्तरोत्तर पवित्रीकरण माना गया है। विश्वासी परमेश्वर द्वारा सृजा गया है और उसका हस्तकार्य है और परमेश्वर अपनी सुईच्छा निमित्त उसके मन में ईच्छा और काम, दानों बातों के करने का प्रभाव डाल रहा है।[4] वचन एवं आत्मा, परिक्षाओं एवं क्लेशों, आशीषों एवं ताड़नाओं के द्वारा परमेश्वर विश्वासी को रूपान्तरित कर रहे हैं और उसके सम्पूर्ण जीवन को यीशु मसीह के प्रतिरूप की समानता में ढ़ाल रहे है।[5]

भविष्य में, विश्वासी पूर्ण रूप से, अनन्तकाल के लिये पाप की सामर्थ और उपस्थिति से उद्धार पाएगा। यह अन्तिम स्थिति आमतौर पर 'महिमाकरण' कही जाती है और यह स्थिति भी अन्य दूसरी स्थितियों के समान निश्चित है क्योंकि वह जिसने यह भला काम आरम्भ किया है, निश्चय उसे पूरा भी करेगा।[6] जैसा कि प्रेरित पौलुस कहते है, यह उद्धार की स्वर्ण श्रृंखला कहा जाता हैः "हम जानते हैं कि जो लोग परमेश्वर से प्रेम रखते हैं, उनके लिये सब बातें मिलकर भलाई ही को उत्पन्न करती हैं; अर्थात् उन्हीं के लिये जो उसकी इच्छा के अनुसार बुलाए हुए है। क्योंकि जिन्हें उसने पहले से जान लिया है, उन्हें पहले से ठहराया भी है कि उसके पुत्र के स्वरूप में हों, ताकि वह बहुत भाईयों में पहिलौठा ठहरे। फिर जिन्हें उसने पहले से ठहराया, उन्हें बुलाया भी, और जिन्हें बुलाया, उन्हें धर्मी भी ठहराया, और जिन्हें धर्मी ठहराया, उन्हें महिमा भी दी है।"[7]

हम ऐसे दिनों में रह रहे हैं जिसमें तात्कालिक और महत्वहीन बातों को प्रमुखता दी जाती है जिन्हें परमेश्वर के लोगों के बीच महत्व नहीं दिया जाना चाहिये। हम इन क्षणिक सुखों की लालसा करते हैं मानों वे वास्तव में प्रेम के इतने योग्य है। किन्तु हमें एक सत्य सदैव स्मरण रखना चाहिये – सुसमाचार की सबसे बड़ी प्रतिज्ञा उद्धार है। बाकी सभी प्रतिज्ञाएं और सभी लाभ इस अकेली बात के सामने क्षिण हैः सुसमाचार उद्धार के लिये परमेश्वर की सामर्थ है, और जो कोई प्रभु का नाम लेगा वह उद्धार पाएगा।[8]

प्रेरित पतरस के अनुसार उद्धार विश्वासी के विश्वास का प्रतिफल या लक्ष्य है।[9] अपने लोगों के लिये मसीह के द्वारा सम्पन्न सभी कामों के पीछे यही उद्देश्य है और अवश्य है कि यही विश्वासी की सबसे बड़ी लालसा और लक्ष्य हो, जिसका वह पीछा करे। परमेश्वर इससे बढ़कर वरदान दे नहीं सकते और विश्वासी के लिये यीशु मसीह के सुसमाचार के द्वारा मिलने वाले अन्तिम उद्धार से बढ़कर कोई आशा या प्रेरणा नहीं हो सकती।

जब हम यह समझ लेते है कि हम पहले मसीह के बिना क्या थे और उस दशा में किस

योग्य थे, तब यह समझ हमारे लिये सुसमाचार के महत्व को और भी अधिक बढ़ा देती है। हम स्वभाव और कामों से पापी थे और हम चारित्रिक पतन की सीमा तक भ्रष्ट थे। हम व्यवस्था का उलंधन करने वाले और अपराधी थे, जो परमेश्वर के न्यायासन के सामने निरूत्तर थे।[10] हम मृत्यु और अनन्त दण्ड के सर्वथा योग्य थे परन्तु अब परमेश्वर के निज पुत्र का लोहू हमारा उद्धार करता है। जब हम असहाय पापी और परमेश्वर के शत्रु ही थे, मसीह अधर्मियों के लिये मरा।[11] उसके द्वारा हम जो परमेश्वर से बहुत दूर थे अब निकट लाये गये है।[12] उसमें हमें उसके अनुग्रह के बड़े धन के अनुसार उसके लोहू के द्वारा छुटकारा और हमारे पाप–अपराधों की क्षमा मिली है।[13] हम हमारे पापों से बचाए गए, परमेश्वर के साथ मेलमिलाप में लाए गये और उसकी सहभागिता में पुत्र के रूप में लाए गये! हमें और क्या चाहिये था, या हमें और किस बात की आवश्यकता थी ?क्या परमेश्वर के निज पुत्र के लोहू के द्वारा प्राप्त उद्धार का वरदान हमारे हृदयों को भरने और अनन्तकाल से अनन्तकाल तक उमण्डने के लिये पर्याप्त नहीं है ? क्या यह हमारे बदले प्राण देने वाले के लिये जीवन जीने की पर्याप्त प्रेरणा नहीं देता ?हमें अन्य प्रतिज्ञाओं की क्या आवश्यकता है ?क्या हम उसके लिये बड़ी धुन और जोश के साथ नहीं जीएंगे जिसने हमें न केवल उद्धार परन्तु चंगाई, जीवन में शांति, समृद्धि और सम्मान देने की भी प्रतिज्ञाएं दी है ?परमेश्वर को जानने और उद्धार के वरदान की तुलना में इन सब बातों का क्या महत्व है ? उन व्यक्तियों से दूर रहें जो यीशु मसीह के अतिरिक्त अन्य बातों की प्रतिज्ञा करके हमें भक्ति के मार्ग से भटकाने का प्रयास करते है। यदि आप जिससे सबसे अधिक प्रेम करते हैं ले लिया जाये, आपकी देह कचरे के ढ़ेर पर पड़ी सड़ती रहे और आपके मित्र और शत्रु दोनों आपके नाम की परिनिन्दा करे, तब भी आप इस एक बात में परमेश्वर से प्रेम, प्रशंसा और सेवा के लिये भक्ति की आवश्यकता महसूस करेंगे कि उसने आपकी आत्मा के लिये अपना निज लोहू बहा दिया। यही पवित्र धुन या लगन एक विशुद्ध और निर्मल धर्म का ईन्धन है।

तब ऐसा क्यों है कि केवल अनन्त उद्धार की प्रतिज्ञा मसीह के लिये मनुष्यों को अब उतनी सामर्थ से आकर्षित क्यों नहीं करती? क्यों आधुनिक मनुष्य की अधिक रूचि इसमें है कि सुसमाचार उसे वर्तमान जीवन में क्या सहायता दे सकता है ?सर्वप्रथम कारण यह है कि प्रचारक अब निश्चित न्याय और नरक के खतरे के बारे में प्रचार नहीं कर रहे है। जब प्रचारक इन बातों को बाइबल–सम्मत तरीके से और साफतौर पर प्रचार करते है, तब मनुष्य अपने अनन्तकालीन दण्ड से बचने की सबसे बड़ी आवश्यकता पर ध्यान देते हैं और इस वर्तमान युग की अधिक व्यवहारिक लगने वाली आवश्यकताएं सापेक्ष रूप में बहुत छोटी या महत्वहीन लगती है। दूसरी बात हमें यह समझना चाहिये कि सड़को पर और दर्शकदीर्घा में बैठने वाले अधिकतर लोग बहुमत में शारीरिक लोग है और शारीरिक लोग आने वाले संसार की तुलना में इसी संसार में अधिक रूचि रखते है। उनमें परमेश्वर और अनन्तकाल की बातों के लिये रूचि नहीं होती।[13] अधिकतर लोग पवित्रीकरण पर, जिसके बिना कोई कदापि प्रभु को न देखेगा, उपदेश सुनने के बदले स्व–मूल्यांकन और आत्मबोध जैसे विषय पर सम्मेलन में जाना पसन्द करेंगे।[15] बहुत से लोग अपने बेहतर जीवन को अभी पाने के लिए देश और

समुद्र पार जाना चाहेंगे, परन्तु वे सड़क के उस पार जाकर मसीह के असीम महत्व या कलवरी पर दुखभोग की सभाओं की श्रृंखला में जाकर सुनना नहीं चाहेंगे।

यद्यपि यह सत्य है कि सुसमाचार बहुधा व्यक्ति के जीवन के पड़ाव और दशा में सुधार लाता है परन्तु हमें सुसमाचार के भंडारी के रूप में सभासदों और सुननेवालों को यीशु मसीह और अनन्तजीवन को छोड़ अन्य प्रतिज्ञाओं या आकर्षणों को प्रस्तुत करने की परीक्षा से बचना चाहिये। यद्यपि ऐसा करना इस आधुनिक सुसमाचार प्रचारकीय युग में अति उग्रवाद जैसा होगा, पर भीड़ को यह संदेश देकर हम भला करेंगे – "यीशु मसीह आप से दो प्रतिज्ञाएँ करते है – एक अनन्त उद्धार, जिसमें आशा करना है, और एक क्रूस जिस पर मृत्यु पाना है।[16] आत्मा और दुल्हिन कहे "आ"।[17]

सुसमाचार को दृढ़ता से थामे रखना

एक विश्वासी जो यह बात समझता है उसके लिये पवित्र लोगों की लगातार दृढ़तापूर्वक बने रहने की धर्मशिक्षा सबसे अधिक बेशकीमती सत्यों में से एक है।[18] यह सबसे बड़ी शांति और प्रोत्साहन देने वाली बात है कि हम जानें कि जिसने हम में अच्छा काम आरम्भ किया है वही उसे पूरा करेगा।[19] किन्तु इस धर्मशिक्षा में व्यापक फेरबदल कर दिया गया है, और यह उन अनगिनत व्यक्तियों के लिये एक झूठे आश्वासन का प्रमुख साधन बन गयी है, जो हृदय–परिवर्तन से वंचित है और अब भी पाप में है। यह एक 'कठोर बात' अवश्य है परन्तु फिर भी सत्य यही है।

इस अध्याय के आरम्भ का सन्दर्भपद जिसमें प्रेरित पौलुस ने लिखा है "तुम उद्धार भी पाते हो इस शर्त पर कि तुम उस वचन को....... दृढता से थामें रहो।"* यहाँ "यदि" यह शब्द एक शर्त रखता है जिस की हम अनदेखी नहीं कर सकते और न हटा सकते हैं। तर्क स्पष्ट है : एक व्यक्ति उद्धार पा लेता है यदि वह सुसमाचार को दृढ़ता से थामे रहता है, परन्तु यदि वह ऐसा नहीं करता, उसने उद्धार नहीं पाया। यह दृढ़ता से बने रहने की धर्मशिक्षा से इन्कार नहीं है परन्तु उसका स्पष्टीकरण है। जो सचमुच उद्धार के निमित्त विश्वास रखते हैं उनमें से कोई भी अनन्त विनाश के लिए नहीं खोया जाएगा। परमेश्वर जिसने उनका उद्धार किया उसकी सामर्थ और अनुग्रह उसे अन्तिम दिन तक बचाकर रखेगी। हालांकि उन्होंने वास्तव में विश्वास किया है इसका प्रमाण उनका परमेश्वर की बातों में बने रहना और परमेश्वर से विमुख न होना है। यद्यपि वे अब भी शरीर के विरूद्ध संघर्ष करेंगे और बहुत सी बातें उन पर बीतेगी, उनके जीवन का सम्पूर्ण–क्रम विश्वास एवं भक्ति में उनकी निश्चित एवं उल्लेखनीय उन्नति को दर्शाएगा। दृढ़तापूर्वक बने रहने के कारण वे उद्धार नहीं पाते या अनुग्रह पाने के अधिकारी नहीं बन जाते, परन्तु यह दर्शाता है कि वे अनुग्रह के पात्र है जो विश्वास के द्वारा वास्तव में उद्धार पाते हैं। सरल शब्दों में कहें तो वास्तविक हृदय–परिवर्तन का प्रमाण है कि जो व्यक्ति मसीह में अपने विश्वास का अंगीकार करता है – वह विश्वास में दृढ़तापूर्वक बना रहता है और उसके सम्पूर्ण जीवन काल में लगातार पवित्रीकरण में बढ़ता रहता है। यदि कोई

व्यक्ति मसीह में विश्वास का अंगीकार करता है और पाप में गिरता है और भक्ति में उन्नति नहीं करता, इसका अर्थ यह नहीं कि उसने अपना उद्धार खो दिया है, परन्तु यह प्रगट करता है कि उसका वास्तव में कभी वास्तविक हृदय–परिवर्तन हुआ ही नहीं था।

यह सत्य उद्धार के विषय पर समस्त पवित्रशास्त्र के सम्पूर्ण शिक्षा में प्रवाहित होता है। यीशु ने सिखाया था कि जो अन्त तक विश्वास में बना रहेगा उसका उद्धार होगा।[20] बीज बोने वाले के दृष्टांत में उसने समझाया कि यद्यपि बहुत से लोग राज्य के सुसमाचार को ग्रहण करेंगे, अधिकतर लोग तकलीफों, सताव और संसार की चिन्ताओं और धन के धोके के कारण पीछे हट जाएगे।[21] प्रेरित यूहन्ना ने इफिसुस की कलीसिया छोड़कर चले जाने वालों के सन्दर्भ में लिखा है, "वे निकले तो हम ही में से, पर हम में के थे नहीं, क्योंकि यदि वे हम में के होते, तो हमारे साथ रहते, पर निकल इसलिये गये कि यह प्रगट हो कि वे सब हम में के नहीं है।"[22]

यह फिर एक बार ध्यान देने योग्य महत्वपूर्ण बात है कि ये सभी पवित्रशास्त्र के वचन मसीह में विश्वासी की सुरक्षा से इन्कार नहीं करते। वास्तव में नया जन्म पायी परमेश्वर की सन्तान उसकी विश्वासयोग्यता और सामर्थ के कारण जिसने उसमें अच्छा काम आरम्भ किया है विश्वास में लगातार अन्त तक बनी रहेगी।[23] तौभी, मसीही विश्वास में इन चेतावनियों का एक महत्वपूर्ण कार्य है और उनकी अनदेखी नहीं करनी चाहिये। वे हमारी सहायता करती है कि सच्चे और झुठें हृदय–परिवर्तन में भेद कर सके, वे विश्वासी के लिये चेतावनी का कार्य करती है कि प्रत्येक विश्वासी अपनी बुलाहट और चुने जाने को सिद्ध करने का भली भाँति यत्न करे।[24]

ये चेतावनियाँ वर्तमान समय में पश्चिम की सुसमाचारकीय स्थिति के प्रकाश में विशेष प्रासंगिक है, और जो मसीह में अपने विश्वास की दावेदारी करते हैं उनके लिये अद्भुत और दूरगामी अनुप्रयोग रखती हैं। बहुत से हैं जो विश्वास करते हैं कि वे उद्धार पा चुके है और पूर्णरूप में मसीही है क्योंकि उन्होंने एक बार कभी प्रार्थना की थी और यीशु को उनके हृदयों में आने के लिये कहा था। किन्तु वे आगे विश्वास में बने नहीं रहे। वे कभी संसार से बाहर नहीं निकले और यदि निकले भी तो शीघ्र लौट गये। वे व्यवहारिक रूप में प्रभु के भय की वास्तविकता नहीं जानते। उनके जीवनों में ईश्वरीय अनुग्रह की सुगंध नहीं है। वे आतंरिक परिवर्तन का बाहरी रूप में दृष्टव्य प्रमाण नहीं रखते। परमेश्वर अपने सभी बच्चों को जो ईश्वरीय ताड़ना देते हैं उनके जीवनों में उसका लेशमात्र भी प्रभाव नहीं दिखता।[25] फिर भी वे अपने उद्धार के प्रति आश्वस्त जान पड़ते है क्योंकि उन्होंने अतीत में एक निर्णय लिया था और उनके विश्वास एवं उनकी प्रार्थनाएँ वास्तव में सही थी। ऐसा विश्वास चाहे कितना भी लोकप्रिय क्यों न हो, इसका बाइबल सम्मत आधार नहीं है।

यह सत्य है कि हृदय–परिवर्तन एक विशेष पल में होता है जब व्यक्ति यीशु मसीह पर विश्वास करने के द्वारा मृत्यु से पार होकर जीवन में प्रवेश करता है।[26] किन्तु व्यक्ति ने मृत्यु से पार होकर जीवन में प्रवेश किया है, इसका बाइबल–सम्मत आधार केवल हृदय–परिवर्तन के उस पल के

परीक्षण पर निर्भर नहीं करता, बल्कि उस पल के बाद के उसके जीवन के परीक्षण पर भी निर्भर करता है। शारीरिकता–बहुल बातों के बीच प्रेरित पौलुस ने कुरिन्थवासियों से अतीत में हुये उनके हृदय–परिवर्तन का पुर्नमूल्यांकन करने के लिये नहीं कहा, परन्तु उन्हें चेतावनी दी कि वे अपनी वर्तमान जीवन शैली की जाँच करे।[27]

हम भला करेंगे यदि हृदय–परिवर्तन करने वालों के सन्दर्भ में पौलुस के अनुदेश या परामर्श का अनुपालन करे। उन्हें जानना चाहिये और हमें यह सिखाना चाहिये कि अतीत में हुये परमेश्वर के वास्तविक उद्धार के कार्य का प्रमाण वर्तमान में और आगे अंतिम दिन तक उसमें बढ़ते जाने या बने रहने से मिलता है। हम उद्धार पाते हैं यदि हम उस वचन में बने रहे जो हमें प्रचार किया गया था। यदि ऐसा नहीं करते तो हमारे पास उद्धार का निश्चय नहीं होगा या शंका होगी। यह सरल बाइबल–सम्मत सत्य यदि निश्चय और तरस के साथ उचित रीति से प्रचार किया जायेगा, तो दर्शक दीर्घा में बैठे अनगिनत लोगों की भीड़ के झूठे आश्वासन को नष्ट करेगा और बहुतों के (वास्तविक) उद्धार का कारण बनेगा।

ओह! परमेश्वर ऐसे मनुष्यों को खड़ा करे जो यह समझते हो कि झूठा आश्वासन इस युग की सबसे बड़ी बीमारियों में से एक है और कलीसिया की साक्षी को तबाह करने वाला अभिशाप है। हम कब समझेंगे कि पश्चिमी देशों के सबसे बड़े मिशन क्षेत्रों में से एक प्रत्येक रविवार की सुबह हमारी कलीसिया में दर्शक दीर्घा में बैठे हुये लोग है ? हम कब यह मानेंगे कि सुसमाचार का हमारा सतही प्रचार, वास्तविक हृदय–परिवर्तन की प्रकृति के प्रति हमारी अनभिज्ञता, और तरस पूर्ण कलीसियाई अनुशासन पर अमल करने की हमारी अस्वीकृति इस बड़े और प्राणघातक धोके की ओर ले जाती है ?

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. David E. Garland, 1 कुरिन्थियों , Baker Exegetical Commentary on the New Testament (Grand Rapids: Baker Academic, 2003), 682.
2. रोमियों 4:20–22
3. रोमियों 5:1
4. इफिसियों 2:10; फिलिप्पियों 2:13
5. रोमियों 8:29
6. फिलिप्पियों 1:6
7. रोमियों 8:28–30
8. रोमियों 1:16; 10:13
9. 1 पतरस 1:9
10. इफिसियों 2:1–3; रोमियों 3:10–19

11. रोमियों 5:6–10
12. इफिसियों 2:13
13. इफिसियों 1:7
14. रोमियों 8:5
15. इब्रानियों 12:14
16. ये शब्द स्वयं लेखक के नहीं है, परन्तु बहुत वर्षों पूर्व जब वे लियोनार्ड रेवेनहिल की सभाओं की एक श्रृंखला में भाग ले रहे थे, तब उन्होंने इन शब्दों को सुना।
17. प्रकाशित वाक्य 22:17
18. बैपस्टिस्ट मतांगिकार में आधिकारिक रूप में मान्य प्रथम अंगीकार सिद्धांतों का सार के अनुसार विश्वास में बने रहने की धर्मशिक्षा यह है : वे जिन्हें परमेश्वर ने अपने प्रिय पुत्र में ग्रहण किया है और अपनी आत्मा के द्वारा पवित्र किया है वे कभी पूर्ण रूप से या अन्तिम स्थिति में अनुग्रह की दशा से नहीं गिरेंगे, परन्तु वे निश्चय अन्त तक बने रहेंगे।
19. फिलिप्पियों 1:6
20. मत्ती 24:13
21. मत्ती 13:21–22
22. 1 यूहन्ना 2:19
23. फिलिप्पियों 1:6
24. 2 पतरस 1:5–10
25. इब्रानियों 12:8
26. यूहन्ना 5:24
27. 2 कुरिन्थियों 13:5

अध्याय – 4

सर्वोपरि महत्व का सुसमाचार

इसी कारण मैं ने सब से पहले तुम्हें वही बात पहुँचा दी, जो मुझे पहुँची थी
– 1 कुरिन्थियों 15:3

यीशु मसीह के सुसमाचार से अधिक बढ़कर महत्वपूर्ण कोई वचन या सत्य नहीं है। पवित्रशास्त्र बहुत से संदेशों से भरा है, उसमें सबसे छोटे से छोटा संदेश भी संसार की कुल सम्पत्ति से अधिक मूल्यवान और मनुष्यों के मन में आये सभी महानतम् विचारों से भी अधिक महत्वपूर्ण है। यहाँ तक कि यदि पवित्रशास्त्र की धूल भी स्वर्ण से अधिक कीमती है तो हम सुसमाचार के मूल्य या महत्व का आंकलन कैसे कर सकते है ?[1] पवित्रशास्त्र के भीतर भी सुसमाचार के संदेशों के समतुल्य कुछ नहीं है। सृष्टि की कहानी यद्यपि भव्यता से भरपूर है, क्रूस के संदेश के समक्ष घुटने टेकती है। मूसा की व्यवस्था और भविष्यद्वक्ताओं के वचन उनके स्वयं से परे हटकर छुटकारे के एकमात्र संदेश की ओर संकेत करते हैं। यहाँ तक कि यीशु का द्वितीय आगमन, यद्यपि आश्चर्यों से भरपूर है, सुसमाचार की छाँव में खड़ा है। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि यीशु मसीह का सुसमाचार एक महान और मूलरूप में आवश्यक संदेश है, मसीही विश्वास का दुर्ग और विश्वासी की आशा का आधार है।[2]

परमेश्वर के राज्य और उसकी महिमा के विस्तार (उन्नयन) के लिये इससे अधिक महत्वपूर्ण इससे अधिक उपयोगी, और इससे अधिक आवश्यक कुछ भी नहीं है। नीतिवचन की भाषा का सहारा लेकर हम सुसमाचार के विषय में यह सही बात कह सकते है – ''क्योंकि उसकी प्राप्ति चाँदी की प्राप्ति से बड़ी, और उसका लाभ चोखे सोने के लाभ से भी उत्तम है। वह मूंगे से अधिक अनमोल है, और जितनी वस्तुओं की तू लालसा करता है उनमें से कोई भी उसके तुल्य न ठहरेगी।''[3] यह बात सत्य है इस कारण सुसमाचार को समझना हमारी सबसे बड़ी धुन होनी चाहिये। यह एक असम्भव कार्य है फिर भी हमारे प्रयत्नों के प्रत्येक अंश के योग्य है – क्योंकि उसमें हम परमेश्वर का समस्त धन और विश्वासी के लिये प्रत्येक सच्चे आनन्द को पाते हैं। यह इस योग्य है कि हम सभी कमतर अभियानों और क्षुद्र सुखों की अव्हेलना करे ताकि हम परमेश्वर के इस संदेश में उसके अनुग्रह की गहराई को माप सके। अय्यूब 28:1–9 में इस धुन का एक सुन्दर उदाहरण दिया गया है:

> चाँदी की खानि तो होती है, और सोने के लिये भी स्थान होता है, जहाँ लोग ताते हैं। लोहा मिट्टी में से निकाला जाता और पत्थर पिघलाकर पीतल बनाया जाता है। मनुष्य अंधियारे को दूर कर दूर–दूर तक खोद खोद कर, अंधियारे और घोर अंधकार में पत्थर ढूँढ़ते हैं। जहाँ लोग रहते हैं वहाँ से दूर वे खानि खोदते हैं, वहाँ पृथ्वी पर चलने वालों के पाँव भी नहीं पड़ते। वे मनुष्यों से दूर लटके हुये झूलते रहते हैं। यह भूमि जो है इससे रोटी तो मिलती है परन्तु उसके नीचे के स्थान मानो आग से उलट दिये जाते हैं। उसके पत्थर नीलमणि के स्थान है और उसी में सोने की धूल भी है। उसका मार्ग कोई मांसाहारी पक्षी नहीं जानता और किसी गिद्ध की दृष्टि उस पर नहीं पड़ी। उस पर हिंसक पशुओं ने पाँव नहीं रखा, और न उससे होकर कोई सिंह कभी गया है। मनुष्य चकमक के पत्थर पर हाथ लगाता और पहाड़ों को जड़ ही से उलट देता है।

यहाँ तक कि अय्यूब के प्राचीन जगत में ऐसे लोग थे जो दूर–दूर तक जाने तैयार थे, वे सतह के जीवन से वंचित रहने के लिये तैयार थे, वे ठोस चट्टानों में बिल बनाने और अंधेरे और गहिरे स्थानों में जाने, जीवन और देह का जोखिम उठाने और पृथ्वी के खजाने को पाने के लिये कोई कसर न छोड़ने के लिये तैयार थे। हम जिन्हें पवित्र आत्मा से प्रकाश मिला है और जिन्होंने परमेश्वर के भले वचन और आने वाले युगों की सामर्थ का स्वाद चख लिया है हमें उनसे कितना अधिक तैयार रहना चाहिये कि कमतर महिमा की बातों को छोड़कर यीशु मसीह के सुसमाचार में परमेश्वर की महिमा और अधिक महिमा का पीछा करे ?[4] फिर क्यों परमेश्वर के लोगों के बीच सुसमाचार के प्रति सच्ची लगन या धुन की इतनी कमी है ?

मिलावटी सुसमाचार

सर्वप्रथम, हमें समझना चाहिये कि सुसमाचार "जो एक ही बार पवित्र लोगों को सौंपा गया था", हाल ही की पीढ़ियों में बहुत से संशोधनों और परिवर्तनों से गुजरा है।[5] जब हम पवित्रशास्त्र पर विचार करते है हम तुरन्त ही प्रेरितों के सुसमाचार और हमारे समकालीन संस्करणों में विषय वस्तु और गुणवत्ता के विषय में बड़ा भारी अन्तर पाते है। यहाँ तक कि जब हम सुधारवादियों, प्युरिटन्स, एड्वर्ड्स, व्हाइटफील्ड, स्पर्जन और उनके बाद के मार्टिन लॉयड–जोन्स इत्यादि के सुसमाचार प्रचार के बारे में पढ़ते हैं, हम बड़ी शीघ्रता से समझ लेते है कि हमारे पास उनके द्वारा प्रचारित और व्याख्या किये गये सुन्दर सुसमाचार की उद्घोषणा करने का दमखम नहीं है, और हमने उसे कुछ आत्मिक नियमों एवं 'रोमन्सरोड' में परिवर्तित कर दिया है।[6] हमने उसे सरल और आसानी से समझ में आने वाले विश्वास वचनों या कथनों में ढ़ालकर उसके मूल सौंदर्य में काँट–छाँट की है और उसमें सराहनायोग्य या आगे खोजनेयोग्य महिमा शेष नहीं बची है।

यह सत्य है कि परमेश्वर की एक योजना है, कि हम पापी है और मसीह मरा और जी उठा,

ताकि हम विश्वास के द्वारा उद्धार पाए परन्तु इन कथनों को कंठस्थ करने का अर्थ यह नहीं है कि हम सुसमाचार को जानते या समझते है। हमें उन बेशकीमती पत्थरों को उलटे–पलटे बिना आगे नहीं बढ़ना चाहिये! कमतर प्राणी भी नकल करना और दोहराना सीख लेते है, परन्तु हमें पवित्रशास्त्र में खोज करनी चाहिये और इन बातों का अर्थ पता करना चाहिये। खान खनन करने वालों के समान हमें दूर–दूर तक जाने के लिये, स्वयं को तात्कालिक आनन्द से वंचित रखने के लिये, अध्ययन और प्रार्थना में अनगिनत घण्टों तक ध्यानमग्न रहने के लिये तैयार रहना चाहिये ताकि हम सुसमाचार के ज्ञान का ईनाम प्राप्त कर सके। अन्यथा हम सदैव ही हमारे भीतर अज्ञानता के कारण मंदबुद्धि बने रहेंगे।[7] हमें अपनी आँखें उस चट्टान पर लगानी चाहिये जिसमें से हम खोदे गये है।[8] हमें प्राचीनकाल के सुसमाचार को पुनः प्राप्त करने, उसमें पुनः खो जाने, और उन लोगों के समान जो जानते है कि उनका परमेश्वर कौन है और समझते हैं कि उसने उनके लिये क्या–क्या किया है, धुन के साथ उसका प्रचार करने के प्रयास करने चाहिये![9]

सुसमाचार का निम्न दृष्टकोण

दूसरा कारण कि परमेश्वर के लोगों में सुसमाचार के लिये इन दिनों में कम धुन है, यह है कि बहुत से लोग इसे मसीहत से कुछ ही अधिक मानते है, या वे सोचते है कि यह तो विश्वास में आगे बढ़ने के लिये उठाया गया प्रथम चरण (baby step) है, और बाद में इसे छोड़कर अन्य गहिरी बातों का पीछा किया जाये। लेकिन आगे इस सत्य से गहिरा कुछ नहीं है। सुसमाचार ही मसीहत की 'गहिरी बात' है! अंतिम दिनों का धर्मविज्ञान और प्रकाशितवाक्य मसीह के द्वितीय आगमन पर ही स्पष्ट हो पाएगा, परन्तु हम यीशु मसीह के सुसमाचार में निहित परमेश्वर की महिमा को कभी भी पूरी तरह से समझ नहीं पाएंगे। यदि कोई सोचता है कि वह सुसमाचार को भली भाँति जानता है और उसे पीछे छोड़कर अन्य गहिरी बातों की ओर बढ़ सकता है, उसके लिये प्रेरित पौलुस की चेतावनी पर अमल करना बेहतर होगाः ''यदि कोई समझता है कि वह कुछ जानता है तो उसे जैसा जानना चाहिये वैसा वह कुछ नहीं जानता।''[10] यदि हमें सामर्थ मिले कि हम इतिहास के महानतम धर्मविज्ञानियों और प्रचारकों से बात कर सके, वे सब साक्षी देंगे कि पृथ्वी पर रहने के दिनों में वे सुसमाचार में शिशु समान थे। वे सब नीतिवचन के बुद्धिमान व्यक्ति के साथ मिलकर यह बात कहेंगे, ''निश्चय मैं पशु सरीखा हूँ, वरन मनुष्य कहलाने के योग्य भी नहीं, और मनुष्य की समझ मुझ में नहीं है। न मैंने बुद्धि प्राप्त की है और न परमपवित्र का ज्ञान मुझे मिला है।''[11]

हमें समझना चाहिये कि सुसमाचार में हमारी यात्रा हमारे जीवन काल के बाद भी हजारों अनन्तकाल तक जारी रहेगी। प्रत्येक नये सत्य की खोज के साथ सुसमाचार की महिमा हमें अधिकाधिक अभिभूत करती जायेगी, जब तक कि वह हमारे विचारों को समाप्त और हमारी इच्छा पर शासन न करे। आप आश्चर्य करेंगे कि क्या कुछ पीछा करने योग्य है, कुछ ऐसी बड़ी बात है जो

आपका ध्यान आकर्षित कर सके। धीरज धरे! सुसमाचार जो आपको बताया गया है उस सबसे कहीं बढ़कर है उसमें ऐसी महिमा है जो कभी समाप्त नहीं हो सकती है। वास्तव में, हम समस्त अनन्तकाल में उस सम्पूर्ण महिमा की खोज करने में ही समय व्यतीत करेंगे जो इस एकमात्र संदेश में निहित है। और अनन्तकाल से अनन्तकालों के बाद भी असीम महिमा अनदेखी रह जाएगी। सुसमाचार सदैव वह बात है जिसे देखने और समझने की स्वर्गदूत और छुटकारा पाए लोग लालसा करते है![12] स्मरण रखें, आपको सदैव सुसमाचार में और उसके ज्ञान में बढ़ते रहना है। यह केवल मसीहत नहीं पर मसीहत की सम्पूर्ण वर्णमाला है। आपने अभी सुसमाचार पर अधिकार नहीं पाया है, न पा सकेंगे, पर वह आप पर अधिकार कर लेगा!

सुसमाचार में शिक्षा दिये जाने का अभाव

परमेश्वर के लोगों में सुसमाचार के लिये धुन की कमी का तीसरा कारण है एक गलत एवं प्राणघातक धारणाः हम मानते हैं कि परमेश्वर के लोग, यहाँ तक कि परमेश्वर के सेवक भी, सुसमाचार को समझते है और इस कारण हम सुसमाचार में शिक्षा दिये जाने की उपेक्षा करते है। सुसमाचार में शिक्षा को प्राथमिकता देना दूर की बात है। जब एक हृदयपरिवर्तन करने वाला सार्वजनिक रूप से अंगीकार करने आगे आता है उसे सुसमाचार में शिक्षा देने के लिये कितना समय दिया जाता है ?अकसर कोई कुछेक मिनिट चरणबद्ध रूप में सुसमाचार के परचे का उपयोग कर के परामर्श देता है, और तब उसे शिष्यता की कक्षा में रख दिया जाता है कि वह मसीही जीवन में कैसे क्या करना सीखें। मंच (पुलपिट) से सुसमाचार की कितनी शिक्षा उसे दी जाती है ?संभव है कि वह जीवनभर दर्शक दीर्घा में बैठे परन्तु कलवरी और खाली कब्र के द्वारा सम्पन्न कार्यो के विषय में उचित एवं विशेष व्याख्या वाले उपदेश उसे कभी सुनने न मिले। यदि उसे सेवकाई के लिये बुलाहट का संज्ञान होता है, तब वह सेमिनरी में कितनी ऐसी कक्षाएँ पाता है जिनमें सुसमाचार की विषय वस्तु और अनुप्रयोग पर शिक्षा पूरी तरह केन्द्रित होती है ?आपको बहुत सी धार्मिक शिक्षा संस्थानों के पाठ्यक्रम का सर्वेक्षण करना पड़ेगा तब शायद आपको विशेष रूप में इस उद्देश्य के लिसे समर्पित एकाध कक्षा मिले। भक्त राजा योशिय्याह के शासनकाल से पहले परमेश्वर की व्यवस्था बहुत सालों से मन्दिर में कहीं खो गई थी।[13] क्या हमारे मध्य भी ऐसा ही कुछ हुआ है ?क्या सुसमाचार प्रचारवादियों के बीच सुसमाचार (evangel) खो गया है ?

प्रचार में सुसमाचार की उपेक्षा

दर्शक दीर्घा में बैठने वालों में सुसमाचार के प्रति धुन के अभाव का चौथा और अंतिम कारण है मंच पर इस धुन का अभाव। मसीह का सेवक वास्तव में अन्य सब बातों से बढ़कर मसीह के सुसमाचार का

सेवक है। यह हमारा सबसे बड़ा भंड़ारीपन, सौभाग्य और बोझ है।[14] यद्यपि हम मिट्‌टी के पात्र है, निर्बल और क्षण भंगुर पर हममें स्वर्ग और पृथ्वी का सबसे बड़ा धन रखा गया है।[15] परमेश्वर ने हमें अलग किया है (पवित्र किया है)* कि हम उसकी उपस्थिति में रहा करे। उसने बुलाहट दी है कि हम अपने दिनों का बड़े से बड़ा भाग उसके गुप्त रहस्यों की खोज करने और वचन–प्रचार के द्वारा अन्य दूसरों पर प्रगट करने में व्यतीत करे। फिर भी आज बहुत से प्रचारक 'परमेश्वर को जानने' और 'परमेश्वर को प्रगट करने' की अपनी प्राथमिक बुलाहट से पीछे हट चुके है। उनका अध्ययन बांझ है और प्रार्थना के कक्ष बन्द हो चुके है। परमेश्वर के सेवक अब परमेश्वर के जन नहीं रहे पर मनुष्यों के जन बन चुके हैं। अब प्रचारकों का संदेश – ''प्रभु यहोवा यों कहता है!'' नहीं रहा, परन्तु वह संदेश प्रश्नावलियों, और मण्डली के लोगों की प्रगट आवश्यकताओं के उसके संभावितज्ञान या समझ के आधार पर बनता है। वह भविष्यद्वक्ता एलिय्याह के समान नहीं कह सकता, ''सेनाओं के यहोवा के जीवन की शपथ जिसके सामने मैं खड़ा होता हूँ'' और न ही वे अब लोगों के सामने परमेश्वर के द्वारा भेजे गये व्यक्ति के रूप में खड़े होते है।[16]

हम जो मसीह के नाम से सेवकाई करते हैं हम आत्मिक प्रशिक्षण देने वाले, सलाह देने या प्रेरणात्मक वक्ता के रूप में नहीं बुलाए गए है – हम प्रचारक हैं! सिर्फ इसलिये कि संसार उपहास करता है और इसलिये कि अनगिनत पाखण्डी विद्वान है जिन्हें ऐसा करना सही जान पड़ता है, हमें मसीह के द्वारा हमें दी गई 'चादर' को तुच्छ नहीं समझना चाहिये। हम प्रचारक है, और सब से बढ़कर सुसमाचार के प्रचारक है। हमें किसी कमतर उद्‌देश्य से केवल इसलिये प्रलोभित नहीं होना चाहिये क्योंकि उसे संसार का अनुमोदन प्राप्त है। हमें अपने अध्ययन और प्रार्थना के कक्ष से दूर जाने के बहकावें में नहीं आना चाहिये, परन्तु हमें भक्ति के उद्‌देश्य से स्वयं को अनुशासित करना चाहिये।[17] हमें परमेश्वर का अधिकृत और अनुमोदित दिखाने के लिये यत्नपूर्वक कार्य करने चाहिये ताकि सेवक के रूप में हमें शर्मिन्दा न होना पड़े और सत्य के वचन को ठीक रीति से काम में लाना चाहिये।[18] हमें इन बातों के लिये दुख सहना चाहिये। हम उनमें मगन रहे ताकि हमारी उन्नति सब पर प्रगट हो।[19] हम अपने भीतर के आत्मिक दान–वरदान की उपेक्षा न करे, पर स्वयं को पवित्रशास्त्र के सार्वजनिक पठन, प्रोत्साहन और शिक्षा के लिये समर्पित करे।[20]

आओं हम प्राचीनकाल के प्रेरितों के समान बनें जिन्होंने बहुत सी वैध आवश्यकताओं के बावजूद कहा था कि, ''यह ठीक नहीं कि हम परमेश्वर का वचन छोड़कर खिलाने–पिलाने की सेवा में रहे... परन्तु हम तो प्रार्थना में और वचन की सेवा में लगे रहेंगे।''[21] अय्यूब के दिनों में प्राचीन खनिकों के समान हमें स्वयं को दूर–दूर जाने और जीवन की आवश्यकताओं से स्वयं को वंचित रखने, कठोर चट्‌टानों में मार्ग बनाने, अंधकार और गहिरे स्थानों में जाने के लिये तैयार रहना चाहिये ताकि यीशु मसीह के सुसमाचार का असीमित धन प्राप्त करे और उसे परमेश्वर के लोगों के सामने रखें। यही एकमात्र और महान साधन है जो मंच और दर्शकदीर्घा दोनों को प्रज्वलित रख सकता है।

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. अय्यूब 28:6
2. Acropolis ग्रीक शब्द akro, जिसका अर्थ high और Polis जिसका अर्थात् है नगर, से आता है। सुसमाचार मसीही विश्वास का उच्च शिखर है, मसीहत का किलाबन्द नगर है।
3. नीतिवचन 3:14–15
4. इब्रानियों 6:4–5
5. यहुदा v. 3
6. 1 तिमुथि 1:11
7. इफिसियों 4:18
8. यशायाह 51:1
9. दानिय्यल 11:32
10. 1 कुरिन्थियों 8:2
11. नीतिवचन 30:2–3
12. 1 पतरस 1:12
13. 2 इतिहास 34:14–21
14. 1 कुरिन्थियों 4:1; 1 तिमुथि 1:12; 1 पतरस 1:12; 1 कुरिन्थियों 9:16
15. 2 कुरिन्थियों 4:7
16. 1 राजा 18:15; यूहन्ना 1:6
17. 1 तिमुथि 4:7–8
18. 2 तिमुथि 2:15
19. 1 तिमुथि 4:15
20. 1 तिमुथि 4:13–14
21. प्रेरितों के काम 6:2, 4

अध्याय – 5

सुसमाचार जो सौंपा और पहुँचाया गया

इसी कारण मैं ने सब से पहले तुम्हें वही बात पहुँचा दी, जो मुझे पहुँची थी कि पवित्रशास्त्र के वचन के अनुसार यीशु मसीह हमारे पपों के लिए मर गया, और गाडा गया, और पवित्रशास्त्र के अनुसार तीसरे दिन जी भी उठा।

– 1 कुरिन्थियों 15:3–4

उपरोक्त शास्त्रपद में हम सुसमाचार के विषय में दो महत्वपूर्ण सत्य सीखते है। सर्वप्रथम सुसमाचार मनुष्यों के आविष्कार का परिणाम नहीं है, परन्तु पवित्र आत्मा ने मनुष्यों को प्रेरित किया।[1] इस कारण यह पवित्रशास्त्र होने का पूर्ण अधिकार रखता है क्योंकि यह परमेश्वर की प्रेरणा से प्राप्त संदेश है।[2] दूसरी बात, यह संदेश पवित्र लोगों को सदा के लिये एक बार ही सौंपा गया है, मसीहियों की प्रत्येक पीढ़ी इसे बिना बदले आगे वाली पीढ़ियों को सौंपने के लिये जिम्मेवार है।[3]

सुसमाचार जो पहुँचाया गया

जब प्रेरित पौलुस यह लिखते हैं कि सुसमाचार उन तक ''पहुँचाया'' गया, तब वे एक विशेष प्रकाशन का दावा करते हैं। उन्होंने स्वयं इस संदेश के ताने बाने नहीं बुने और न ही किसी दूसरे से उधार लिया। परन्तु उन्हें यह सुसमाचार यीशु मसीह के एक असाधारण प्रकाशन के द्वारा मिला। गलातियों 1:11–12 में पौलुस ने बड़े विस्तार के साथ अपने उस अनुभव का वर्णन किया है: ''हे भाइयों, मैं तुम्हें बताए देता हूँ कि जो सुसमाचार मैंने सुनाया है वह मनुष्य का नहीं क्योंकि वह मुझे मनुष्य की ओर से नहीं पहुँचा, और न मुझे सिखाया गया, पर यीशु मसीह के प्रकाशन से मिला।''

अपने इस अनूठे अनुभव की चर्चा करने के पीछे पौलुस का अभिप्राय यह बताना था कि उसके सुसमाचार का स्त्रोत ईश्वरीय है। वह स्वयं को महिमा मण्डित करने नहीं लिख रहा था या यह नहीं बता रहा था कि उसका सुसमाचार अन्य दूसरे प्रेरितों या कलीसिया को दिये गये सुसमाचार से भिन्न था। वास्तव में इसी पत्री में आगे वह चर्चा करता है कि उसने अपना सुसमाचार उन्हें सौंपा है जो यरूशलेम की कलीसिया के प्रतिष्ठित लोग थे और उन्होंने कभी पौलुस की बातों में सुधार नहीं

किया और न उसकी समझ में बढ़ोत्तरी की।[4] इस पूरे प्रस्तुतीकरण के पीछे पौलुस का अभिप्राय यह दर्शाना था कि केवल एक ही सच्चा–सुसमाचार है। यह परमेश्वर के हृदय में जन्मा और प्रेरितों के माध्यम से कलीसिया में पहुँचाया गया। यह अनन्तकालीन और अपरिवर्तनीय वचन है जो समय और संस्कृति की सीमाओं से परे है। यह विभिन्न संस्कृतियों और विशेष कालखण्डों की मांग के अनुरूप सुधारा नहीं जाएगा और न उन्हें प्रसन्न करने इसमें फेरबदल किया जायेगा। परन्तु अवश्य है कि इसे सम्पूर्ण एवं अपरिवर्तनीय सत्य के रूप में सर्वोच्च सम्मान दिया जाये।

यही कारण है कि हम जिन्होंने सुसमाचार पाया और उसके भण्डारी है, हमें चाहिये कि हम बहुत अधिक सावधानी और भय के साथ उसे काम में लाना सीखें। यीशु के सौतेले भाई यहूदा ने हमें प्रोत्साहन देते हुये लिखा है कि हम सुसमाचार के सत्य के लिये पूरा यत्न करे जो पवित्र लोगों को एक ही बार सौंपा गया था, और पौलुस ने हमें सुसमाचार की सौंपे गये धन या धरोहर के रूप में रखवाली करने की आज्ञा दी है।[5] उसने आगे किसी भी कारणवश पवित्रशास्त्र (सुसमाचार) की बातों में फेरबदल करने वाले मनुष्य या स्वर्गदूत को शापित ठहराया है : "परन्तु यदि हम या स्वर्ग से कोई स्वर्गदूत भी तुम्हें कोई अन्य सुसमाचार सुनाये जो हमने तुम्हें नहीं सुनाया, वह शापित ठहरे। जैसा हमने पहिले भी कहा है और अब फिर कहते है यदि तुम्हें कोई अन्य सुसमाचार सुनाये जो तुमने हम से नहीं पाया, तो वह शापित ठहरे।"[6]

मसीहियों की प्रत्येक पीढ़ी को यह समझना चाहिये कि एक अनन्तकालीन सुसमाचर उन्हें सौंपा गया है।[7] भण्डारी के रूप में हमारा कर्त्तव्य है कि सुसमाचार में बिना कुछ जोड़े, घटाये या फेर बदल किये उसे संरक्षित करे। सुसमाचार में किसी तरह का परिवर्तन करने का अर्थ है स्वयं पर शाप लाना और अगली पीढ़ी को एक भ्रष्ट सुसमाचार सौंपना। यही कारण है कि प्रेरित पौलुस ने युवा तिमोथी को चेतावनी देकर कहा कि वह उसे सौंपे गये सत्यों के लिये दुख उठाए, और पौलुस ने उससे प्रतिज्ञा की कि ऐसा करने के द्वारा वह स्वयं अपना और अपने सुनने वालों का उद्धार सुनिश्चित करेगा।[8]

हम जिन्होंने सुसमाचार पाया है हमारी भययोग्य बाध्यता है कि हम उसकी सम्पूर्णता एवं प्रेरितों के समय जैसी शुद्धता के साथ उसे अगली पीढ़ी को सौंप दे। यह बाध्यता केवल परमेश्वर के प्रति ही नहीं है परन्तु हमारी पीढ़ी और आगे आने वाली पीढ़ियों के प्रति भी है। प्रेरित पौलुस ने रोम की कलीसिया को यह बताया कि, "मैं यूनानियों का और अन्य भाषियों का, और बुद्धिमानों और निर्बुद्धियों का कर्जदार हूँ।"[9] इसी प्रकार, हम भी वर्तमान समय में रह रहे सभी मनुष्यों और भविष्य में आने वाले अनगिनत पीढ़ियों के मनुष्यों के कर्जदार है। जिस सीमा तक हम सुसमाचार के प्रति विश्वासयोग्य ठहरेंगे, उसी अनुपात में हम अंधेरे में चमकने वाली ज्योति और आने वाले पीढ़ियों के लिये आशीष का स्त्रोत ठहरेंगे। जिसना अधिक हम अयोग्य ठहरेंगे उतना ही अधिक हम मसीह के क्रूस के बैरी, परमेश्वर के राज्य में ठोकर के कारण, और बहुतों के विश्वासरूपी जहाज के क्षतिग्रस्त होने का कारण ठहरेंगे।[10] सुसमाचार के सेवक होने के नाते हम पर भरोसा किया गया है और यह

जितना अद्‌भुत है उतना ही भययोग्य है। कौन इन सब बातों के लिये पर्याप्त है ? कौन इस कार्य को करने के योग्य है ?[11]

हमारी जिम्मेवारी की गम्भीरता को समझते हुये भला हो कि हम अपने आप को परमेश्वर का ग्रहण योग्य और ऐसा काम करने वाला ठहराने का प्रयत्न करें जो लज्जित होने न पाए, क्योंकि हम सत्य के वचन को ठीक रीति पर काम में लाना जानते हैं। भला हो कि हम एज्रा शास्त्री के समान बनें जिसने अपने हृदय को तैयार कर लिया था कि "परमेश्वर की व्यवस्था की खोज करे और उस पर अमल करे और उसकी आज्ञाओं और नियमों को इस्राएल को सिखाए।"[13] हम उस भक्त याजक के समान बनें जिन्हें भविष्यवक्ता मलाकी ने आदरयोग्य ठहराया है: "उसने मेरा भय मान भी लिया और मेरे नाम से अत्यन्त भय खाता था। उसको मेरी सच्ची व्यवस्था कंठस्थ थी और उसके मुँह से कुटिल बात न निकलती थी। वह शांति और सीधाई से मेरे संग–संग चलता था और बहुतों को अधर्म से लौटा ले आया था। क्योंकि याजक को चाहिये कि वह अपने होंठों से ज्ञान की रक्षा करे, और लोग उसके मुँह से व्यवस्था पूछें क्योंकि वह सेनाओं के यहोवा का दूत है।"[14]

जबकि इस संसार के खोए हुए लोग सीधे–सीधे नरक में प्रवेश करते जा रहे है तब चुप रहने से भी अधिक बुरी बात यह है कि हम पवित्रजनों से हम तक पहुँचाये गये सुसमाचार के अतिरिक्त किसी दूसरे सुसमाचार को प्रचार करने का अपराध करे। इसी कारणवश हमें आधुनिक सुसमाचार प्रचारवादियों के सुसमाचार से दूर रहना चाहिये क्योंकि वह मिलावट किया हुआ, सांस्कृतिक चतुराई से गढ़ा और काँट–छाँट किया हुआ सुसमाचार है जो मनुष्य को भक्ति का ऐसा स्वरूप धारण करने की अनुमति देता है जो सुसमाचार की सामर्थ से इन्कार करता, पर परमेश्वर को जानने का दावा करता है परन्तु कार्यो के द्वारा उसका इन्कार करता है, वह यीशु को 'प्रभु, प्रभु' कहता है जबकि पिता की इच्छा को पूरा नहीं करता।[15] हम पर हाय यदि हम सुसमाचार–प्रचार न करे, पर उससे भी बड़ी हाय, यदि हम उसे गलत रूप में प्रचार करे![16]

सुसमाचार जो उचित रीति से सौपा गया

पुराने नियम की व्यवस्था में किसी प्रकार की मिलावट न करने के सन्दर्भ में बहुत सी निषेधाज्ञाएँ है।[17] जब कोई दो प्रकार की वस्तुएँ मिला दी जाती है, उनके विशेष गुण निर्बल हो जाते है और दोनों ही अपनी–अपनी गुणवत्ता खो देते है। यही बात सुसमाचार के सन्दर्भ में भी कही जा सकती है। मसीहत और पवित्रशास्त्र में सुसमाचार सबकुछ है परन्तु मसीहत और पवित्रशास्त्र का सबकुछ सुसमाचार नहीं है।[18] शारीरिक चंगाई, स्वस्थ विवाह, परमेश्वर की कृपामय परवाह यद्यपि सुसमाचार पर आधारित और उसी से प्रवाहित है लेकिन सुसमाचार नहीं है।

यह प्रभु के सेवक के लिये बड़ी खतरनाक बात है यदि वह सोचे कि जो कुछ वह प्रचार करता है वही यीशु मसीह का सुसमाचार है या फिर वह जो भी सेवकाई कर रहा है उसे सुसमाचार

की सेवकाई कहा जा सकता है। सुसमाचार पवित्रशास्त्र का एक बहुत ही निश्चित और विषय केंद्रित संदेश है और पवित्रशास्त्र का यह पाठ उसे अति–स्पष्ट एवं सारगर्भित रूप में परिभाषित करता है: "इसी कारण मैंने सबसे पहले तुम्हें वही बात पहुँचा दी, जो मुझे पहुँची थी कि पवित्रशास्त्र के वचन के अनुसार यीशु मसीह हमारे पापों के लिये मर गया, और गाड़ा गया और पवित्रशास्त्र के अनुसार तीसरे दिन जी भी उठा।"[19]

पौलुस के निज शब्दों में हम सीखते हैं कि यीशु मसीह का सुसमाचार दो बड़े खम्भों पर टिका है: यीशु की मृत्यु और पुनरूत्थान। उसके दफनाये जाने का उल्लेख दो कारणों से महत्वपूर्ण है – सबसे पहले यह कि पवित्रशास्त्र ने उसकी मृत्यु की भविष्यवाणी की थी और उसे पूरा होना अवश्य था।[20] दूसरा, यह उसकी मृत्यु को साबित या प्रमाणित करता है और उसके पुनरूत्थान और स्वर्गारोहण की आधारशिला रखता है। उसे दफनाया गया क्योंकि वह वास्तव में मरा और चूंकि उसकी मृत्यु वास्तविक थी उसका पुनरूत्थान भी वास्तविक था।

जब हम आगे बढ़ेंगे सुसमाचार के इन महान सत्यों पर विचार करेंगे, परन्तु अभी हमारा एक ही लक्ष्य है कि हम यह दर्शाये कि हमें न केवल इन सत्यों की घोषणा करनी है पर उन्हें समझाना भी है। जब हम किसी भी रूप में सुसमाचार का प्रचार करते या बताते हैं, भला होगा यदि हम स्वयं से प्रश्न करे कि इसके अतिआवश्यक मूल तत्वों में से कितना कुछ हम वास्तव में बता रहे है। बहुत से लोग मुखाग्र इन तीन बातों को बता सकते हैं जो हमारे पाठ में है मसीह मर गया, गाड़ा गया और जी उठा। लेकिन कितने लोग इन बातों का अर्थ समझतें है ? और क्यों इन बातों को मंच से इतने विरले रूप में समझाया जाता है ?क्या हम सुसमाचार के लिये इतनी कमतर समझ रखते है कि वह विस्तार के साथ समझाए जाने के योग्य नहीं है ?या फिर हम सुसमाचार का इतना सतही दृष्टीकोण रखते है कि हम मानते है कि उसे समझाने की आवश्यता नहीं है ?सम्भवतः हमने मान लिया है कि सब लोग समझते है कि सुसमाचार क्या है और समझाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

सुसमाचार पर केन्द्रित प्रचार के अवयव (घटक)

शब्दों की सामर्थ उनके अर्थ में होती है। सुसमाचार के कुछ विचारों को सरसरी तौर पर कह देना या उद्धृत करना पर्याप्त नहीं है, हमें चाहिये कि यत्नपूर्वक उन्हें समझाये। इसी कारण एक सुसमाचार प्रचारक को एक शास्त्री भी होना चाहिये और प्रचारक को एक शिक्षक भी होना चाहिये। मसीह की मृत्यु एवं पुनरूत्थान के सन्दर्भ में हमारी साहसी घोषणा अवश्य है कि बाइबल सम्मत, विचारपूर्ण और स्पष्ट व्याख्या के साथ हो कि वास्तव में इन बातों का क्या अर्थ है! नीचे दिये गये चार अनुप्रयोग इस आवश्यकता का प्रमाण देते हैं।

सबसे पहले, सुसमाचार प्रचार करने वाले को हियाव के साथ सुनने वालों को यह बताने

की आवश्यकता है कि मसीह उनके पापों के लिये मरा। यद्यपि इस में संदेह नहीं कि पवित्र आत्मा इन पाँच शब्दों का उपयोग कर बुरे से बुरे व्यक्ति का उद्धार कर सकता है, पवित्रशास्त्र में ऐसा कोई आधार नहीं है कि हम यह मान ले कि हमें इस अत्याधिक महत्व के सत्य को बिना समझाये छोड़ देना चाहिये।[21] मनुष्य मसीह की मृत्यु के महत्व को पर्याप्त रूप में नहीं समझ सकते जबतक कि वे स्वयं के पापों के विषय में भी कुछ न कुछ समझते न हो। इस कारण हमें प्रयास करना चाहिये कि हम उन्हें न केवल पाप और उनके स्वयं के पापमय स्वभाव के विषय में अवगत कराये पर साथ ही उन्हें परमेश्वर के धार्मिकता युक्त चरित्र के बारे में बताने या सिखाने का भी यत्न करे और उन्हें पाप के प्रति परमेश्वर के प्रत्येक प्रत्युत्तर के प्रकार एवं परिमाण की जानकारी भी दे। हमें यह कार्य सरलता से सत्य बोलने और तरस खाने की भावना के संतुलन के साथ करना चाहिये, उसी प्रकार जैसे एक अच्छा डॉक्टर अपने रोगी को बीमारी की बुरी प्रकृति के बारे में समझाता है ताकि रोगी बिना विलम्ब किये उस रोग के उपचार करने की दिशा में आगे बढ़े।[22] यह जमीनी कार्य या 'मानव हृदय की भूमि' पर हल चलाना सच्चे सुसमाचार प्रचार के लिये अति आवश्यक है। हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि जब यहोवा परमेश्वर ने स्वयं अपने ईश्वरीय गुणों के बारे में विस्तार से बताया, मूसा 'शीघ्रता से उठा, पृथ्वी की ओर सिर झुकाकर, यहोवा की आराधना की।"[23] और परमेश्वर ने पौलुस पर व्यवस्था की धार्मिकता की माँग को प्रगट करने के बाद ही उसके पाप प्रगट हुये और उसकी स्व–धार्मिकता नष्ट हुई और उसका हृदय परिवर्तन हुआ।[24]

दूसरी बात, सुसमाचार प्रचार में हमें लोगों को यह बताना आवश्यक है कि मसीह पवित्रशास्त्र के अनुसार मरा। यद्यपि यह पवित्रशास्त्र की सबसे अधिक सामर्थी उद्घोषणाओं में से हैं, मनुष्यो के हृदय पर इसका प्रभाव अत्याधिक तेजी से होता है जब सुसमाचार प्रचार उचित रीति से इसके सत्यों का अनावरण करता और उसके अनुप्रयोगों को प्रगट करता है। इस कारण अवश्य है कि हम मनुष्यों को मसीह की मृत्यु का सही गुण और उसके अनुप्रयोगों को समझाने में परिश्रम करे। मसीह न केवल हमारे पाप के कारण मरा, पर वह परमेश्वर के स्वभाव या चरित्र के कारण भी मरा – अर्थात् परमेश्वर न्यायी है और किसी दुष्ट को धर्मी या पापमुक्त नहीं ठहरा सकता यदि पहले उनके विरूद्ध न्याय की मांग को सन्तु ट न कर ले।[25] मसीह न केवल मरा परन्तु वह अपने लोगों के बदले में खड़ा हुआ, उनके दोष–पाप अपने ऊपर लिये, परमेश्वर के क्रोध को सहा और अपने लोहू को बहा दिया।[26] उसके दुखभोग से ईश्वरीय न्याय सन्तु ट हुआ और परमेश्वर का कोप शांत हुआ, ताकि परमेश्वर उनके लिये धार्मिकता और धर्मी ठहराने वाला, दोनों बन सके जो परमेश्वर पर विश्वास करते है।[27]

मसीह के क्रूस पर सम्पन्न प्रायः सभी परम्परागत धर्मविज्ञान के कार्य जैसे प्रायश्चित की धर्मशिक्षा, दण्ड का प्रतिस्थापन, आरोपण, क्रोधशमन इत्यादि सभी इन सत्यों के साथ पहिचाना और समझाया जा सकता है। ये धर्मशिक्षाएं अपव्ययी, अनावश्यक और अगम्य नहीं है, परन्तु ये सुसमाचार

के अतिआवश्यक मूलतत्व हैं। अवश्य है कि वे सभी मनुष्यों विश्वासी और अविश्वासी दोनों को एक समान प्रचार किये जाये और उन्हें प्रचार किया जा सकता है। वे जो ऐसे तर्क देते हैं कि ये बातें आम मनुष्यों के समझने की दृष्टि से कठिन है, वे प्राचीन पोपों की भाषा बोल रहे हैं जिन्होंने बाइबल की प्रतिया जला दी थी क्योंकि उनके मत के अनुसार परमेश्वर के लोग उन्हें पढ़ने योग्य न थे या अति अज्ञानी थे!

तीसरी बात, सुसमाचार प्रचार की आवश्यकता है कि हम लोगों को बताये कि मसीह तीसरे दिन मृतकों में से जिलाया गया था। हालांकि 21वी सदी के मनुष्यों को इस घोषणा से प्रभावित करने के लिये अवश्य है कि हम पुनरूत्थान के महत्व एवं अभिप्रायों पर भी प्रकाश डाले। हमें लोगों को बताना चाहिये कि पुनरूत्थान परमेश्वर की ओर से यीशु के ईश्वरीय पुत्रत्व की सार्वजनिक पुष्टि थी, और यह इस बात का चिन्ह था कि परमेश्वर ने उसकी प्रजा के बदले में किये गये मसीह के छुटकारे के कार्य को स्वीकार कर लिया है।[28] हमें समझाना चाहिये कि पुनरूत्थान कैसे यीशु मसीह के स्वर्गारोहण का जमीनी आधार बनाता है, और यह प्रमाण है कि परमेश्वर ने उसी यीशु को जिसे हमने क्रूस पर चढ़ा दिया था, प्रभु और मसीह बना दिया।[29] हमें बताना चाहिये कि परमेश्वर ने यीशु को अति ऊँचे पर उठाया और उसे वह नाम दिया जो सब नामों से श्रेष्ठ है, ताकि यीशु के नाम के सामने हरेक घुटना झुके और हरेक जीभ अंगीकार करे कि यीशु प्रभु है।[30] हमें लोगों को चिताना चाहिये कि मसीह का पुनरूत्थान प्रमाणित करता है कि संसार के पास एक उद्धारकर्त्ता है, परन्तु यह भी कि विश्व का एक राजा है जो तब तक राज्य करेगा जब तक अपने लोगों को इकठ्ठा न कर लेगा और उसके शत्रु उसके पाँवों की चौकी न बन जायेंगे।[31] वह फिर आ रहा है और धर्म से जगत का न्याय करेगा।[32] इस कारण, सभी लोग चाहे जो भी हो, कंगाल और राजा दोनों – अवश्य है कि समझ प्राप्त करे और पुत्र का सम्मान करे, कही ऐसा न हो कि वह क्रोधित हो जाये और वे मार्ग में ही नाश हो जाए। क्योंकि उसका क्रोध शीघ्र भड़कने पर है, फिर भी धन्य है वे जो उसमें शरण लेते है![33]

अंत में, सुसमाचार–प्रचार की मांग है कि हम लोगों से मसीह के पास आने का निवेदन करे, किन्तु अवश्य है कि हमारा निवेदन भी हमारे संदेश के समान बाइबल सम्मत हो। हमें पश्चाताप करने और विश्वास लाने की बड़ी आज्ञाओं में काँट छाँट नहीं करनी चाहिये और उन्हें पापियों की प्रार्थना दोहराने जैसा कमतर स्वरूप नहीं देना चाहिये। अवश्य है कि हमारे श्रोतागण यह समझे कि पश्चाताप का अर्थ मन का बदलना है और इसमें केवल बौधिक नहीं परन्तु इच्छा और भावना भी शामिल होती है। उन्हें उद्धार करने वाले विश्वास की प्रकृति को समझना होगा कि वह – 'आशा की गयी वस्तुओं का निश्चय और अनदेखी वस्तुओं का प्रमाण है', यीशु मसीह में परमेश्वर ने जो प्रतिज्ञाएँ की है वे उनका पूर्ण निश्चय पायें कि परमेश्वर यह सब करने में समर्थ है।[34] इस के अलावा, आगे हमें अपने सुनने वालों को यह निर्देश भी देना चाहिये कि हृदय–परिवर्तन के प्रगट प्रमाण क्या है। हमें उन्हें वास्तविक पश्चाताप के लिये बताना चाहिये कि वह पश्चाताप के फलों को लाता है और यह कि बिना कामों के विश्वास मृत है।[35] हमें उन्हें चिताना चाहिये कि वे आत्म परीक्षण करे, और स्वयं को

जाँचे कि वें विश्वास में है या नहीं, और वे अपनी बुलाहट और चुन लिये जाने को सिद्ध करने जुटकर यत्न करे।[36] हमें मनुष्यों को केवल बाइबल सम्मत सुसमाचार ही नहीं सुनाना चाहिये पर बाइबल–सम्मत उचित निर्देश और आमंत्रण भी दिये जाने चाहिये। हम उन्हें केवल पापियों की एक प्रार्थना मात्र के साथ उनके कानों में गूंजने वाले आश्वासन के निर्बल शब्दों के साथ अनन्तकाल में न भेज दे।

ऊपर दी गयी संक्षिप्त व्याख्या यीशु मसीह के अगम्य सुसमाचार के मात्र कुछ हिस्से हैं जिन्हें देश–देश में प्रचार करने की हमारी जिम्मेवारी है। हमें सब प्राणियों को बताना है जो यीशु ने किया है, परन्तु हमें यह भी समझाना है कि उनका क्या अर्थ है और उन्हें प्रत्युत्तर में क्या करना चाहिये। घोषणाएँ और उनमें निहित शब्द महत्वपूर्ण है परन्तु एक सीमा तक ही, यदि उन्हें उचित रूप में परिभाषित और उन पर अमल न किया जाये। यही बात सुसमाचार के लिये भी सत्य है।

मसीही सुसमाचार प्रचारकों के सामने भविष्यद्वक्ताओं के समान बोलने और शास्त्रियों के समान समझाने की बड़ी जिम्मेवारी है।[37] पवित्रशास्त्र ऐसे उदाहरणों से भरा है। फिलिप्पुस ने इथियोपिया के खोजे को यशायाह की भविष्यवाणियों के स्पष्टीकरण के द्वारा यीशु के बारे में समझाया।[38] प्रिसकिल्ला और अक्विला ने अप्पुलोस को अलग ले जाकर परमेश्वर का मार्ग अधिक सही रूप में समझाया।[39] प्रेरित पौलुस ने थिस्सलुनीके के यहूदियों से लगातार तीन सब्त मुलाकातें की और पवित्रशास्त्र से तर्कवितर्क किया, "उन्हें समझाया और दर्शाया कि मसीह के लिये दुख उठाना और मृतकों में से जी उठना अवश्य था।"[40] अंत में व्याख्या करने वालों में सर्वश्रेष्ठ हमारे प्रभु यीशु मसीह ने अपने अवतार में परमेश्वर को मनुष्यों पर प्रगट किया और इम्माऊस के मार्ग पर अपने असमंजस में पड़े चेलों को सुसमाचार की व्याख्या की: "तब उसने मूसा से और सब भविष्यद्वक्ताओं से आरम्भ करके सारे पवित्रशास्त्र में से अपने विषय में लिखी बातों का अर्थ उन्हें समझा दिया।"[41]

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. 2 पतरस 1:21
2. 2 तिमुथि 3:16
3. यहुदा v. 3
4. गलातियों 2:1–10
5. यहुदा v. 3; 2 तिमुथि 1:14
6. गलातियों 1:8–9
7. प्रकाशित वाक्य 14:6
8. 1 तिमुथि 4:15–16
9. रोमियों 1:14 KJV

10. फिलिप्पियों 3:18;मत्ती 13:41; 1 तिमुथि 1:19
11. 2 कुरिन्थियों 2:16
12. 2 तिमुथि 2:15
13. एज्रा 7:10
14. मलाकी 2:5–7
15. 2 तिमुथि 3:5; तितुस1:16;मत्ती 7:21
16. 1 कुरिन्थियों 9:16
17. लैव्यव्यवस्था 19:19
18. इस अर्थ में यह मसीहत और पवित्र शास्त्र का एक आवश्यक महत्वपूर्ण सत्य है।
19. 1 कुरिन्थियों 15:3–4
20. यशायाह 53:9; मत्ती 27:57–60
21. रोमियों 1:16; 1 कुरिन्थियों 2:2; 2 तिमुथि 2:15
22. 2 तिमुथि 2:25 – "और विरोधियों को नम्रता से समझाने वाला होना चाहिए; क्या जाने परमेश्वर उन्हें पश्चाताप का मन दे कि वे भी सत्य को पहिचाने।"
23. निर्गमन 34:8
24. रोमियों 7:9–11
25. नीतिवचन 17:15; निर्गमन 34:6–7; निर्गमन 3:23–26
26. इब्रानियों 9:22
27. यशायाह 53:4–6, 10
28. रोमियों 1:4; 4:25
29. प्रेरितों के काम 2:36
30. फिलिप्पियों 2:6–9
31. लूका 20:41–44; प्रेरितों के काम 2:34–35; इब्रानियों 10:12–13
32. प्रेरितों के काम 17:31
33. भजन संहिता 2:10–12
34. इब्रानियों 11:1; 4:21
35. मत्ती 3:8; याकूब 2:14–26
36. 2 कुरिन्थियों 13:5; 2 पतरस 1:10
37. इस चर्चा में "मसीही सुसमाचार प्रचारक" का साधारण तौर पर संदर्भ किसी भी ऐसे मसीही से हैं जो प्रचार करता है या सुसमाचार की बातें बताता है।
38. प्रेरितों के काम 8:26–35
39. प्रेरितों के काम 18:26
40. प्रेरितों के काम 17:3
41. यूहन्ना 1:18 NASB. के अनुसार अर्थ समझा दिया ये शब्द ग्रीक शब्द exegeomai से आता है जिसका अर्थ है 'अभिप्राय निकालना', किसी शिक्षा एवं सत्य का खुलासा करना। लूका 24:27 NASB. यहाँ अर्थ समझा दिया ये शब्द ग्रीक शब्द diermeneuo से आता है जिसका अर्थ है किसी बात का अर्थ निकालना, समझाना, या व्याख्या करना है।

भाग – 2

उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ

क्योंकि मैं सुसमाचार से नहीं लजाता, इसलिए कि वह हर एक विश्वास करनेवाले के लिये,
पहले तो यहूदी फिर यूनानी के लिये, उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ्य है।

रोमियों 1:16

अध्याय – 6

सुसमाचार

क्योंकि मैं सुसमाचार से नहीं लजाता – रोमियों 1:16

इसके पहले कि हम सुसमाचार के प्रचार में पौलुस की निड़रता पर विचार करें, हमें उस सुसमाचार के बारे में कुछ समझना होगा जो उसने प्रचार किया। संचार का यह स्वस्थ सिद्धांत है कि किसी विषय पर बहस या उचित विचार–विमर्श से पूर्व उसके विशेष शब्दों को परिभाषित कर लिया जाये। यह मैदान को साफ करता है और चर्चा से जुड़े व्यक्तियों को समझने में मदद करता है कि क्या अन्य लोग उनकी बात समझ रहे हैं जो वे कह रहे हैं। सुसमाचार प्रचारक इन दिनों में धर्मविज्ञान के शब्दों की इतनी व्यापक व्याख्या या परिभाषा देते है कि हमें पता ही नहीं चलता कि हम सब उसी बात के बारे में चर्चा कर रहे है जबकि हम उन्हीं शब्दों का उपयोग करते है। सुसमाचार के सन्दर्भ में यह विशेष रूप में सत्य है।

हमारे सन्दर्भपद में सबसे पहले विचारणीय है उपपद (Eng: <u>*the*</u> Gospel*) पर विचार करना। पौलुस के पास ऐसा सुसमाचार नहीं था जो विशेष रूप में उसी का था, वह पौलुस का सुसमाचार नहीं था और जैसा कह सकते है, पतरस का सुसमाचार या यूहन्ना का सुसमाचार नहीं था।[1] यद्यपि सुसमाचार के प्रस्तुतीकरण में इन प्रेरितों के व्यक्तित्व की झलक दिखाई देती है, उनके द्वारा प्रचार किया गया सुसमाचार एक ही था। उन्हें हमारे वर्तमान युग की प्रचलित भाषा का ज्ञान नहीं था जिसके भिन्न–भिन्न उच्चारण, संस्करण और स्वाद है और उनमें कहे गये सुसमाचार सुनकर लगता है कि कहीं सुसमाचार एक से अधिक तो नहीं है।[2]

दूसरी बात, पौलुस के पास ऐसा सुसमाचार नहीं था जो एक संस्कृति विशेष के लिये विशिष्ठ हो। उसने यहूदियों को कुछ और, अन्यजातियों को कुछ और नहीं सुनाया। यद्यपि वह सांस्कृतिक विभिन्नता से परिचित था और उसने प्रत्येक संस्कृति की विशेषताओं का उपयोग भी किया, उसका सुसमाचार संस्कृति के अनुसार सामंजस्य करने वाला और उनके प्रति कम आक्रामक नहीं था। वास्तव में यहूदियों और अन्य जातियों दोनों के लिये उसके सुसमाचार की आक्रामकता ने ही उसके जीवन को लगातार खतरे में डाला। इसमें संदेह है कि पौलुस प्रेरित समकालीन

सुसमाचारवादियों के द्वारा संस्कृति विशेष को बारीकी से समझने और उनके अनुसार संदेश एवं प्रचारशैलियों के निर्धारण की अतिशय संलग्नता का विचार समझ पाते। पौलुस समझते थे कि अन्ततः, प्रत्येक संस्कृति में सभी लोग एक ही व्याधि से दुख भोगते हैं और केवल एक संदेश है जिसमें उन्हें उद्धार देने की सामर्थ है।

अन्त में पौलुस के पास ऐसा सुसमाचार नहीं था जो केवल विश्व–इतिहास के एक लम्बे कालखण्ड ही के लिये था। निश्चित रूप से पौलुस के जीवन काल के गुजरते दशकों में रोमन साम्राज्य में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुये फिर भी उसने अपनी मृत्यु के दिनों में भी उसी सुसमाचार का प्रचार किया जिसे दशकों पूर्व अपनी प्रेरिताई की आरम्भिक सेवकाई के दिनों में प्रचार किया था। निःसंदेह वह समकालीन मसीहियों की इस धारणा से चकित रह जाता कि प्रत्येक नयी पीढ़ी के गुजरने के साथ–साथ आने वाली पीढ़ी को सुसमाचार की एक नयी प्रस्तुति या अनुकूलनीयता की आवश्यकता है।

यीशु और पौलुस की शिक्षाओं में समरूपता

पवित्रशास्त्र के अनुसार यह बात स्पष्ट हो जाती है कि जो यीशु ने किया और अपने चेलों को सिखाया उसमें और जो पौलुस ने विश्वास किया और प्रचार किया उसमें एक अटूट और अविच्छेद समानता थी। यह सत्य बड़ी से बड़ी जाँच में भी खरा उतरता है। यीशु के सुसमाचार में परमेश्वर प्रेम है। वह अपना सूर्य भले और बुरे दोनों पर उदय करता है, और धर्मी और अधर्मी दोनों पर एक जैसा मेंघ बरसाता है।[3] समय के पूरा होने पर उसने अपने प्रिय पुत्र को भेजकर प्रेम का सबसे महान् प्रदर्शन किया ताकि मनुष्य नाश न हो परन्तु उसके पुत्र के माध्यम से अनन्त जीवन प्राप्त करे।[4]

पौलुस के सुसमाचार में परमेश्वर प्रेम है, उसने स्वयं को उसकी दया के गवाह के बिना नहीं रखा है, परन्तु वह सब मनुष्यों का भला करता है, उन्हें स्वर्ग से वर्षा और फलप्रद मौसम देता है, उनके हृदयों को भोजन और हर्ष से सन्तु ट करता है।[5] सही समय आने पर, उसके प्रेम का चरमोत्कर्ष उसके पुत्र को देने में प्रगट हुआ कि जब हम असहाय पापी ही थे और परमेश्वर के शत्रु थे, वह पाप में पतित मनुष्य जाति के लिये मृत्यु का वरण करे।[6]

यीशु के सुसमाचार में मनुष्य बुरे और पाप के गुलाम है।[7] वे बुरे वृक्ष है जो बुरे फल लाते हैं।[8] वे परमेश्वर के प्रकाशन की ज्योंति से घृणा करते है और उसके निकट नहीं आते कि कहीं उनके बुरे काम प्रगट न हो जाए।[9] उनके हृदय बुरे विचारों, हत्या, व्याभिचार, लीलाक्रीड़ा, चोरी, झूठी साक्षी और निन्दा इत्यादि से भरे हुये है। यहाँ तक कि मनुष्यों में सबसे अधिक मान्य और प्रतिष्ठित नैतिकतावादी लोग भी चूना फिरी कब्रों और मृत हड्डियों के ढ़ेर से बढ़कर नहीं है।[10]

पौलुस भी पाप में पतित मानव जाति के बारे में यही धारणा रखते है – ''क्योंकि सबने पाप

किया है और परमेश्वर की महिमा से रहित है।"[11] कोई धर्मी नहीं एक भी नहीं। एक भी ऐसा नहीं जो समझ रखता या परमेश्वर की खोज करता है। वे सब के सब मार्ग से भटक गये है और व्यर्थ ठहरे है। कोई नहीं जो भलाई करता है और अपनी आँखों के आगे परमेश्वर का भय मानकर चलता है।[12] यही कारण है कि व्यवस्था केवल मनुष्य को उनके पाप के लिये दोषी ठहराने और उनकी स्व–धार्मिकता की आशा को कुचलने और उन्हें निरूत्तर करने और पूरी तरह से परमेश्वर की दया–करूणा पर आधारित होने के लिये छोड़ देने का कार्य करती है।[13]

यीशु के सुसमाचार में सभी अविश्वासीजन परमेश्वर के समक्ष दोषी ठहरते हैं और उसका क्रोध उन पर बना रहता है।[14] वे गलीली जो पीलातुस के हाथों मारे गये या वे अठारह जिन पर शीलोम का गुम्बद गिरा वे इसलिये नहीं मरे कि बाकी मनुष्यों से अधिक पापी थे, बल्की सभी मनुष्य उसी दण्ड के हकदार है और यह ईश्वरीय दया है जो उन्हें बचाकर रखती है। सभी परमेश्वर के क्रोध के आधीन मृत्युदण्ड के योग्य है और यदि पश्चाताप नहीं करते, अपने–अपने नियत समय पर मरेंगे।[15] पौलुस के सुसमाचार में परमेश्वर का क्रोध स्वर्ग से सब अधर्मियों और भक्तिहीनों पर प्रगट होता है जो सत्य को अधर्म से दबाते है।[16] वे जो हठीले और अपश्चातापी हृदय के साथ पाप में लगातार बनें है वे अपने लिये क्रोध कमा रहे है जो न्याय के दिन प्रगट होगा।[17]

यीशु के सुसमाचार में, क्रूस उद्धार का अति–महत्वपूर्ण और सर्वोच्च कार्य है। मसीह के लिये दुख उठाकर उसकी महिमा में प्रवेश करना अवश्य था।[18] इस प्रकार उसने अपने चेलों को सिखाया कि उसका यरूशलेम जाना बहुत दुख उठाना, मारा जाना और तीसरे दिन मृतकों में से जी उठना अवश्य था।[19] गतसमनी और गोलगथा में उसने प्रगट किया कि उसका दुखभोग उसके साथ मनुष्यों या शैतान के दुर्व्यवहार तक ही सीमित नहीं था।[20] क्रूस पर उसने परमेश्वर के क्रोध से भरा पूरा प्याला पी लिया और एक त्यागे हुये मनुष्य के समान मरा।[21]

पौलुस के सुसमाचार में यही महान विचारधारा लगभग हरेक पन्ने पर है। पौलुस ने लोगों को वही सिखाया जो उसके लिये सबसे अधिक महत्व का था और जो उसे भी पहुँचाया गया थाः मसीह पवित्रशास्त्र के अनुसार हमारे पापों के लिये मरा, वह मारा गया और गाड़ा गया और पवित्रशास्त्र के अनुसार तीसरे दिन मृतकों में से जी उठा।[22] पौलुस ने बड़े और अकाट्य* प्रमाणों के द्वारा प्रदर्शित किया कि मसीह वह पाप उठाने वाला था जो शाप बन गया और अपने लोगों के पापों के बदले परमेश्वर के क्रोध–शमन के लिये मर गया।[23] उसने क्रूस पर चढ़ाये गये मसीह की घोषणा की, यद्यपि वह यहूदियों के लिये ठोकर का कारण और अन्य जातियों के लिये मूर्खता था।[24] क्रूस पौलुस के लिये कोई मामूली विषय नहीं था। वह सब कुछ था। उसने पौलुस को अभिभूत कर रखा था और अखंड़ रूप में विवश बना दिया था।[25]

यीशु का सुसमाचार सभी मनुष्यों को उनके पापों से पश्चाताप करने और विश्वास करने की बुलाहट देता है।[26] वह उन्हें जो बुलाहट का पालन करते हैं अनन्त जीवन पाने की प्रतिज्ञा देता

है।[27] शेष व्यक्तियों को वह परमेश्वर के क्रोध में विनाश की चेतावनी देता है, यदि वे अपनी अपश्चातापी और अविश्वासी दशा में बने रहते है।[28] पौलुस का सुसमाचार भी वही प्रतिज्ञाएं और चेतावनियाँ देता है। प्रेरित गम्भीरता पूर्वक यहूदियों और यूनानियों दोनों को परमेश्वर के समक्ष पश्चाताप करने और हमारे प्रभु यीशु मसीह पर विश्वास करने के लिये अपनी साक्षी देते है। वे कहते हैं कि परमेश्वर ने हर जगह सब मनुष्यों को मन फिराने की आज्ञा दी है और वे लोगों को व्यर्थ कामों से धोका न खाने की चेतावनी भी देते है क्योंकि परमेश्वर का क्रोध सभी आज्ञा न मानने वालों पर आने वाला है।[29]

यीशु के सुसमाचार में ईमानदारीपूर्ण एवं कीमती शिष्यता सदैव वास्तविक हृदय–परिवर्तन के साथ होती है। यीशु ने बार–बार उसके पीछे आने वाली बड़ी भीड़ के सामने चुनौतीपूर्ण माँग रखी ''यदि कोई मेरे पीछे आना चाहे और अपने पिता और माता, पत्नी एवं बच्चों, भाइयों और बहिनों, यहाँ तक कि अपने प्राण से मुझ से अधिक प्रेम करे, वह मेरा शिष्य बनने के योग्य नहीं।''[30] यहाँ तक कि उसने अपने निज चेलों को भी चेतावनी दी ''यदि कोई मेरे पीछे आना चाहे तो अपने आपे से इंकार करे और अपना क्रूस उठाये और (प्रतिदिन) मेरे पीछे हो ले, क्योंकि जो कोई अपना प्राण बचाना चाहे, वह उसे खोएगा और जो कोई मेरे लिये अपना प्राण खोएगा, वह उसे पाएगा।''[31]

पौलुस का सुसमाचार भी शिष्यता की यही चुनौतीपूर्ण माँग करता है। पवित्रता के सम्बन्ध में पौलुस ने विश्वासियों को संसार से निकल आने और अलग रहने के लिये कहा।[32] धार्मिकता के संबंध में उसने विश्वासियों को आज्ञा दी कि वे स्वयं को पाप के लिये मृत और परमेश्वर के लिये धार्मिकता के हथियार के रूप में जीवित समझे।[33] विश्वासयोग्यता के सम्बन्ध में उन्हें प्रोत्साहित किया कि वे बहुतेरे क्लेशों और सताव को सहन करे क्योंकि जो मसीह यीशु में भक्ति का जीवन बिताना चाहते हैं उनके जीवन में क्लेशों और सताव का आना अवश्य है।[34] यीशु मसीह का सुसमाचार शिक्षा देता है कि केवल विश्वास का अंगीकार करने मात्र से उद्धार का प्रमाण नहीं मिलता। यीशु ने चेतावनी दी कि प्रत्येक जो उससे 'हे प्रभु, हे प्रभु' कहता है, स्वर्ग के राज्य में प्रवेश न करेगा, परन्तु केवल वे ही प्रवेश करेंगे जो उसके स्वर्गीय पिता की इच्छा का पालन करते हैं।[35] वे इस बात पर अटल थे कि किसी के उद्धार का प्रमाण उसके जीवन का फल है, और हर एक जो भले फल नहीं लाता वह काटा और आग में झोंका जाता है।[36]

पौलुस का सुसमाचार भी यही गम्भीर चेतावनियाँ देता है। वह उन्हें चेतावनी देता है जो मसीह पर विश्वास का दावा करते है कि वे स्वयं को परखें और जाँचे कि क्या वे वास्तव में विश्वास में बने हुये है।[37] उसने उन मनुष्यों को चेतावनी दी जो भक्ति का स्वरूप धारण करते हैं पर उसकी सामर्थ से इन्कार करते है, वे परमेश्वर को जानने का दावा करते हैं परन्तु अपने कामों से उसका इंकार करते हैं।[38]

अन्त में, यीशु का सुसमाचार चेतावनियों से भरपूर है जिनका सम्बन्ध आने वाले न्याय और

नरक की भयावहता से है। वास्तव में यीशु ने अन्य सभी भविष्यद्वक्ताओं और प्रेरितों से भी अधिक इस भयानक विषय पर बातें कही है। यीशु के अनुसार न्याय का एक बड़ा दिन आ रहा है जब मनुष्यों को भेड़ और बकरियों के समान अलग–अलग किया जाएगा और एक बड़ी भीड़ यह सुनेगी – "हे शापित लोगों, मेरे सामने से उस अनन्त आग में चले जाओ, जो शैतान और उसके दूतों के लिये तैयार की गई है।"[39] यह मसला यीशु के लिये इतना महत्वपूर्ण था कि उसने यह चेतावनी उन लोगों को भी दी जिन्हें उसने अपना मित्र माना था : मैं तुम से जो मेरे मित्र हो कहता हूँ, कि जो शरीर को घात करते है परन्तु उसके पीछे वे कुछ नहीं कर सकते उन से मत डरो। मैं तुम्हें चिताता हूँ कि तुम्हें किससे डरना चाहिये, घात करने के बाद जिसको नरक में डालने का अधिकार है, उसी से डरो; हाँ, मैं तुम से कहता हूँ उसी से डरो।"[40]

प्रेरित पौलुस का सुसमाचार न्याय और नरक के मसले पर मसीह के साथ एकमत है। वह लिखता है कि दुष्ट–जन अपने लिये क्रोध कमा रहा है जो परमेश्वर के धर्ममय न्याय और क्रोध के दिन प्रगट होगा।[41] वह विश्वासी और अविश्वासी दोनों को चेतावनी देता है कि वे उनके व्यर्थ शब्दों से धोका न खाए जो आने वाले न्याय और क्रोध की वास्तविकता से इंकार करते हैं। परमेश्वर ठठ्ठों में नहीं उड़ाया जायेगा। जो भी अनाज्ञाकारी बोएगा, वही काटेगा।[42] मसीह के समान पौलुस भी अपनी चेतावनियों में अति–स्पष्ट और बिना क्षमायाचना के कहते हैः "प्रभु यीशु अपने सामर्थी दूतों के साथ धधकती हुई आग में स्वर्ग से प्रगट होगा, और जो परमेश्वर को नहीं पहिचानते और हमारे प्रभु यीशु के सुसमाचार को नहीं मानते उनसे पलटा लेगा। वे प्रभु के सामने से और उसकी शक्ति के तेज से दूर होकर अनन्त विनाश का दण्ड पाएंगे।"[43]

जिस पद पर हमने अभी–अभी विचार किया है, स्वाभाविक रूप से स्पष्ट है कि यीशु मसीह के सुसमाचार और जो प्रेरित पौलुस ने प्रचार किया और अपनी पत्रियों में समझाया, उसमें कोई विरोध या विचलन नहीं है। इसी प्रकार, मूसा और भविष्यद्वक्ता, चार सुसमाचारों के लेखक और नये नियम के अन्य लेखक सभी मसीह के साथ पूर्ण सहमति रखते है – "विश्वास जो पवित्र लोगों को एक ही बार सौंपा गया।"[44] केवल एक ही सुसमाचार है जो सभी संपादन एवं काट–छाँट करने वालों से सर्वोपरि है और उसे बदला नहीं जाना चाहिये, न सुधारा, न पुनः संरचित किया जाना चाहिये। ऐसा करने का कोई भी प्रयास, कारण या प्रेरना चाहे जो भी हो, एक दूसरे सुसमाचार का सृजन करेगा जो वास्तव में सुसमाचार ही नहीं होगा।[45] हमें ऐसी सभी मूर्खतापूर्ण और खतरनाक विचारधारा को दरकिनार रख देना चाहिये कि हम सुसमाचार के लिये सुसमाचार को बेहतर बना सकते हैं, और हमें गवाहों के उस बड़े बादल के साथ खड़े होना चाहिये जो समस्त कलीसियाई इतिहास में रहे और जिन्होंने उस मसीह का प्रचार किया जो पवित्रशास्त्र के अनुसार क्रूस पर चढ़ाया और जिलाया गया।

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. पतरस का सुसमाचार और युहन्ना का सुसमाचार ये शब्द पतरस और युहन्ना द्वारा क्रम क्रम से सुनाए गए सुसमाचार का उल्लेख करते है।

2. सुसमाचार के विषय में विभिन्न अभिमतों को अकसर एक ही सत्य के विभिन्न आशयों के रूप में श्रेणीबद्ध किया जाता है, या विभिन्न दृष्टिकोणों से एक ही सत्य के निष्कर्श पर पहुँचा जाता है, या एक ही सत्य के अलग–अलग पहलुओं पर जोर दिया जाता है। यह समझने में चूक हो जाती है कि भिन्न–भिन्न आशय अकसर अपने आप में एक अलग सुसमाचार बन जाते है। सुधारवादियों का सुसामाचार रोमन कैथोलिक सुसमाचार से सर्वथा भिन्न है; विश्वास पर आधारित सुसमाचार, कार्यो पर आधारित सुसमाचार का सीधा–सीधा विरोध करता है, वास्तविक रूप में प्रचारकीय सुसमाचार, अतिशय करिश्माई सुसमाचार से सर्वथा विपरीत है।

3.मत्ती 5:45

4. मरकूस 1:15; यूहन्ना 3:16

5. प्रेरितों के काम 14:17

6. गलातियों 4:4; रोमियों 5:6–10

7.मत्ती 7:11; यूहन्ना 8:34

8.मत्ती 7:17

9. यूहन्ना 3:20

10.मत्ती 23:27; 15:19

11. रोमियों 3:23

12. रोमियों 3:10–18

13. रोमियों 3:19

14. यूहन्ना 3:18, 36

15. लूका 13:1–5

16. रोमियों 1:18

17. रोमियों 2:5

18. लूका 24:26

19.मत्ती 16:21

20. गतसमनी का बाग वह स्थान था, जहाँ क्रूस पर चढ़ाये जाने से एक रात पहले यीशु ने प्रार्थना की थी और वह वहाँ पकड़वाया गया था, और गोलगुथा वह स्थान है जहाँ क्रूस रखा गया, और जहाँ यीशु को क्रूस पर चढ़ाया गया था।

21. लूका 22:42; मत्ती 27:46

22. 1 कुरिन्थियों 15:3–4

23. 2 कुरिन्थियों 5:21; ग्लातियों 3:10–13; रोमियों 3:23–26

24. 1 कुरिन्थियों 1:23

25. रोमियों 1:1; 2 कुरिन्थियों 5:14

26. मरकूस 1:15

27. यूहन्ना 5:24

28. लूका 13:1–5; यूहन्ना 3:18–36

29. प्रेरितों के काम 20:21; इफिसियों5:6

30. लूका 14:26

31.मत्ती 16:24–25

32. 2 कुरिन्थियों 6:14–18

33. रोमियों 6:11–14
34. प्रेरितों के काम 14:22; 2 तिमुथि 3:12
35.मत्ती 7:21
36.मत्ती 7:16, 19–20
37. 2 कुरिन्थियों 5:17
38. 2 तिमुथि 3:5; तितुस1:16
39.मत्ती 25:41
40. लूका 12:4–5
41. रोमियों 2:5
42. गलातियों 6:7;इफिसियों 5:6
43. 2 थिस्सलुनियों 1:7–9
44. यहुदा v. 3
45. गलातियों 1:6–7

अध्याय – 7

विक्षोभकारी सुसमाचार

क्योंकि मैं सुसमाचार से नहीं लजाता
– रोमियों 1:16

अब क्योंकि हम प्रेरित पौलुस के सुसमाचार की सामान्य समझ रखते हैं, हम इस बात को समझने का प्रयास कर सकते हैं कि क्यों पौलुस को सुनने वालों में सुसमाचार के प्रति इतनी अरूचि और आक्रमकता थी। यद्यपि सुसमाचार उन सबके लिये जो विश्वास करते है उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ है, फिर भी पाप में पतित संसार के लिये यह एक तिरस्कृत और अविश्वसनीय संदेश है।

तत्वतः अनन्य

पौलुस के शरीर में उसके द्वारा प्रचार किये गये सुसमाचार से लज्जित होने का प्रत्येक कारण था क्योंकि वह उन सभी बातों के विरोध में था जो उसके समकालीन लोगों में सत्य और पवित्र मानी जाती थी। यहूदियों के लिये सुसमाचार अति निचले दर्जे की ईशनिन्दा थी क्योंकि सुसमाचार का दावा था कि कलवरी पर क्रूसित और शापित नासरी ही मसीहा था। यूनानियों के लिये यह बहुत बड़ी मूर्खता थी क्योंकि सुसमाचार का दावा था कि यहूदी मसीहा देहरूप में परमेश्वर था। इस कारण पौलुस जानता था कि जब भी वह अपना मुँह सुसमाचार के विषय पर बोलने के लिये खोलेगा उसे बुरी तरह अस्वीकार किया जायेगा और उसकी हँसी और मखौल उड़ाया जायेगा, यदि पवित्र आत्मा हस्तक्षेप न करे और सुनने वालों के हृदयों और मनों में कार्य न करे। हमारे दिनों में मूल सुसमाचार आज भी उतना ही आक्रमक है क्योंकि वह आज भी समकालीन संस्कृतियों के सभी वादों का विरोध करता है जैसे किः यथा, सापेक्षवाद, बहुवाद और मानववाद, इत्यादि।[1]

हम सापेक्षवाद के युग में रहते हैं – यह विश्वास–तंत्र इस निश्चय पर आधारित है कि कुछ भी पूर्ण (परम–तत्व) नहीं है। हम पाखण्डपूर्ण तरीके से मनुष्यों को सत्य की खोज करने उत्साहित करते है परन्तु सत्य पा लेने का विश्वास करने वाले की सार्वजनिक हत्या की माँग करते

है। हम स्वयं पर थोपे गये 'अंधकार के युग' में निवास करते हैं, उसका कारण स्पष्ट है। स्वाभाविक मनुष्य पाप में गिरा प्राणी है, नैतिक रूप में भ्रष्ट और स्व–प्रशासन से नरक की ओर प्रवृत, वह परमेश्वर से घृणा करता है क्योंकि परमेश्वर धर्मी है और मनुष्य उसकी व्यवस्था से घृणा करता है क्योंकि वह पाप की निन्दा करती और उसकी बुराई का प्रतिरोध करती है। वह सत्य से घृणा करता है क्योंकि वह उजागर कर देता है कि वह क्या है और जो उसके विवेक में है उसके कारण उसे कष्ट देता रहता है। इस कारण पाप में पतित मनुष्य सत्य को जितना संम्भव हो उतना दूर हटाना चाहता है, विशेषकर परमेश्वर के बारे में सत्य। वह सत्य को दबाने के लिये किसी भी सीमा तक जा सकता है, यहाँ तक कि दिखावा करता है कि सत्य जैसा कुछ अस्तित्व में नहीं है या यदि उसका अस्तित्व है भी, तो उसे जानना सम्भव नहीं और वह हमारे जीवनों में आवश्यक नहीं है। यह छुपने वाले परमेश्वर की नहीं पर छुपने वाले मनुष्य की बात है। यहाँ समस्या बुद्धि की नहीं पर इच्छा की है। जिस प्रकार आक्रमणकारी गैंडे से बचने कोई अपना सिर रेत में छुपा ले उसी प्रकार, आधुनिक मनुष्य एक धर्मी परमेश्वर के सत्य और नैतिक आधारों को इस आशा के साथ अस्वीकृत करता है कि वह अपने विवेक को शांत कर लेगा, और उसके अवश्यंभावी न्याय को अपने मन और विचारों से दूर कर देगा। मसीही सुसमाचार मनुष्य और उसकी संस्कृति के लिये तिरस्कृत है क्योंकि वह एक काम करता है जिसे वे सर्वाधिक अनदेखा करना चाहते है : अर्थात उनके पाप में पतन और विद्रोह की दशा पर स्वतः आच्छादित निन्द्रा को भंग कर देता है, और उसे स्व–प्रशासन से इन्कार एवं पश्चाताप करने एवं यीशु मसीह पर विश्वास करने के द्वारा परमेश्वर के प्रति समर्पित होने की बुलाहट देता है।

हम बहुवाद के युग में रहते हैं – एक विश्वास–तंत्र जो यह कहकर कि सबकुछ सत्य है, सत्य का अंत कर देता है विशेषकर धर्म से संबंधित बाते। समकालीन मसीहियों के लिये यह समझना कठिन हो सकता है। पर विश्वास की कुछ प्रथम शताब्दियों में रहने वाले मसीहियों को वास्तव में अनीश्वरवादी कहा गया और सताया गया। उनके चारों ओर व्याप्त संस्कृति ईश्वरवाद में डूबी हुई थी। देवी–देवताओं की मूर्तियों से संसार भरा पड़ा था और धर्म का व्यापार फूलफल रहा था।[2] मनुष्य न केवल एक दूसरे के देवी–देवताओं को सहन कर रहे थे पर आपस में अदला–बदली और हिस्सेदारी भी कर रहे थे। समूचे धार्मिक जगत में सब कुछ ठीक ठाक चल रहा था कि मसीही लोग प्रगट हुये और उन्होंने घोषणा की, "वे ईश्वर नहीं है जो हाथ से बनाये गये है।"[3] उन्होंने कैसर की भक्ति से मना किया, तथाकथित देवी–देवताओं के आगे घुटने टेकने से इन्कार किया और अंगीकार किया कि यीशु ही एकमात्र सबके प्रभु है।[4] समूचा संसार मुँह खोलकर इस हठीलेपन को देखता रहा और फिर मसीहियों की इस सहनशीलता के विरूद्ध असहनीय असहनशीलता के प्रति क्रोधपूर्ण प्रतिक्रिया की।

हमारे आज के संसार में भी यही स्थिति निर्मित होती है। सभी तर्को के विरूद्ध, हम सुनते हैं कि धर्म और नैतिकता के सन्दर्भ में सभी विचार या धारणाएँ सत्य है, भले ही वे तत्व रूप में कितने भी भिन्न–भिन्न और विरोधाभासी हो। सबसे अधिक हतप्रभ करने वाला पहलू यह है कि मीडिया और

शैक्षणिक जगत के अथक प्रयासों के बावजूद यह विचारधारा अतिशीध्र बहुमत की विचारधारा बन चुकी है। हालांकि बहुवाद इस मसले पर सुधार या बीमारी के उपचार पर चर्चा नहीं करता। वह केवल रोगी को निश्चेतना (संज्ञा–शून्यता) में डालता है कि वह आगे महसूस या विचार न कर सके। सुसमाचार तिरस्कृत करने वाला है क्योंकि वह मनुष्य को नींद से जगाता है और उसे ऐसे तर्कशुन्य आधार पर विश्राम करने की अनुमति देने से मना करता है। वह उसे विवश करता है कि वह किसी निष्कर्ष पर आये – "तुम कब तक दो विचारों में लटके रहोगे, यदि यहोवा परमेश्वर हो तो उसके पीछे हो लो, और यदि बाल हो, तो उसके पीछे हो लो।"[5]

वास्तविक सुसमाचार तत्वरूप में एकमात्र है। यीशु एक मार्ग नहीं है, यीशु ही मार्ग है, और अन्य सभी मार्ग वास्तव में मार्ग है ही नहीं। यदि मसीहत केवल एक चरण आगे बढ़े और सहनशीलता के साथ सब वादों और धारणाओं को आत्मसात कर ले और निश्चयवादी उपपद (*the*) के बदले अनिश्चय सूचक उपपद (*a*) का उपयोग करे, तो तिरस्कृतता जाती रहेगी और संसार एवं मसीहत मित्र बन जाएंगे। किन्तु जब कभी भी ऐसा होगा, मसीहत आगे मसीहत न रहेगी, मसीह का इन्कार होगा और संसार बिना उद्धारकर्त्ता के रह जायेगा।

हम मानववाद के युग में रहते है – पिछले कई दशकों में मनुष्य ने अपने विवेक एवं संस्कृति से परमेश्वर को अलग करने के लिये संघर्ष किया है। उसने एकमात्र सच्चे परमेश्वर की प्रत्येक दृश्य वेदी को तोड़ दिया है और धार्मिक मतांध की धुन में स्वयं के स्मारक खड़े कर लिये है। उसने स्वयं को सभी बातों का केन्द्र, मानक और अन्त बनाने में सफलता प्राप्त की है। वह अपनी धरोहर के मूल्य की प्रशंसा करता है, आत्मसम्मान के लिये श्रद्धांजली चाहता है और आत्मसुख एवं आत्मबोध को सबसे बड़ी भलाई के रूप में उन्नत करता है। वह बार–बार उसे छलनी करने वाले विवेक को दोष के प्राचीन धर्म का अपभ्रंश मानता है और समाज को दोष देकर या समाज के एकभाग को जिम्मेदार ठहराकर कि उन्होंने अब तक जागृति नहीं पाई, उसके चारो ओर व्याप्त नैतिक अव्यवस्था में अपनी जिम्मेदारी के प्रति बहानेबाजी करता है। उसके विरूद्ध साक्षी देने वाले विवेक को सही ठहराने वाला कोई भी सुझाव कि संसार में फैली अनगिनत प्रकार की व्याधियों के लिये वह भी जिम्मेवार हो सकता है, कदापि विचारणीय नहीं है। यही कारण है कि पाप में पतित व्यक्ति के लिये सुसमाचार तिरस्कृत है क्योंकि वह उसके स्वयं के प्रति भ्रम को उजागर करता और उसकी पाप में पतित दशा एवं दोष के प्रति निरूत्तर करता है। यह आवश्यक रूप में सुसमाचार का प्रथम कार्य है और यही कारण है कि संसार सच्चे सुसमाचार–प्रचार से इतनी अधिक घृणा करता है। यह मनुष्यों के उत्सव को बर्बाद करता है, उनके जुलूस पर पानी फेरता, उनके विश्वास के मुखौटे उतारता और दर्शाता है कि शासक वस्त्रविहीन है।

पवित्रशास्त्र मानता है कि यीशु मसीह का सुसमाचार सभी युगों एवं संस्कृतियों के लिये 'ठोकर का कारण' और 'मूर्खता' है।[6] किन्तु सुसमाचार के विक्षोभकारी प्रभाव को हटाने का प्रयास

करना मसीह के क्रूस और उसकी उद्धार करने की सामर्थ को व्यर्थ ठहराने जैसा है।[7] हमें यह समझना चाहिये कि सुसमाचार केवल तिरस्कृत नहीं है, उसे तिरस्कृत होना ही चाहिये! सुसमाचार की मूर्खता के द्वारा परमेश्वर ने उसे नियुक्त किया है कि बुद्धिमानों की बुद्धि को नष्ट करे, महामतियों के ज्ञान को निष्फल करे, सभी मनुष्यों के अंहकार को लज्जित करे ताकि अन्त में उसकी उपस्थिति में कोई प्राणी घमंड न कर सके।[8] जैसा लिखा भी है, "जो घमण्ड करे, वह प्रभु में घमण्ड करे।"[9]

पौलुस के सुसमाचार ने उन दिनों के धर्म, दर्शन और संस्कृति का विरोध ही नहीं किया उसने उनके विरूद्ध युद्ध छेड़ दिया था। उसने संसार के साथ मैत्री या संधि से मना कर दिया और यीशु मसीह के प्रभुत्व के आगे संस्कृति के सम्पूर्ण समर्पण से कमतर किसी बात को नहीं माना। हम भला करेंगे यदि पौलुस के उदाहरण पर अमल करेंगे। हमें सावधान रहना चाहिये और हर उस परीक्षा से बचना चाहिये जो हमारे सुसमाचार को समय के अनुकूल या शारीरिक मनुष्यों की अभिलाषाओं के अनुरूप बनाने का प्रस्ताव लाती है। हमें कोई अधिकार नहीं कि उसकी आक्रामकता को निर्बल करे या उसकी तत्वतः माँगों को पाप में पतित संसार या कलीसिया के शारीरिक सदस्यों को प्रसन्न करने सुधारे।

हमारी कलीसियाओं में जिज्ञासुओं से अधिक मित्रवत बनने के लिये सुसमाचार की पुनः सरंचना या निर्धारण करने की बहुत सी रणनीतियाँ है। ठोकर के कारणों को दूर करना और धार के पैनेपन को कम करना ताकि वह शारीरिक मनुष्यों के लिये अधिक ग्रहणयोग्य बन सके। हमें जिज्ञासुओं से मित्रता करनी चाहिये परन्तु हमें यह समझना चाहिये कि खोजने वाला एक ही है और वह परमेश्वर है। यदि हम प्रयत्नशील है कि हमारी कलीसिया और संदेश अधिक ग्रहणशील हो तो हमें चाहिये कि उन्हें परमेश्वर को अधिकाधिक ग्रहण करने वाला बनाए। यदि हम एक कलीसिया या सेवकाई बनाना चाहते हैं तो उसे परमेश्वर को महिमा देने की धुन पर बनाये और इस अभिलाषा के साथ कि उस परमपवित्र को चोट नहीं पहुँचाएंगे। संसार हमारे बारे में जो भी सोचता है, हम पृथ्वी पर सम्मान की लालसा न करे पर हमारी अभिलाषा स्वर्ग से मिलने वाले सम्मान की हो।

एक अविश्वसनीय सुसमाचार

जैसा कि हम पहले तर्क दे चुके हैं कि पौलुस के शरीरिक स्वभाव में उसके द्वारा प्रचारित सुसमाचार से लज्जित होने का प्रत्येक कारण था क्योंकि वह उस सब बातों के विरूद्ध था जिसे उसके समकालीन लोग सत्य एवं पवित्र मानते थे। फिर भी शरीर में लज्जा का एक कारण और है: सुसमाचार एक पूर्णतः अविश्वसनीय संदेश है, संसार के बुद्धिमानों के लिये अति हास्यास्पद संदेश।

मसीही होने के नाते हम कभी–कभी यह महसूस नहीं करते कि किसी व्यक्ति का सुसमाचार पर वास्तव में विश्वास कर लेना कितना अधिक आश्चर्यचकित (भौचक्का) करने वाली बात है। एक अर्थ में देखें कि सुसमाचार का रोमन–साम्राज्य में दूर–दूर तक फैल जाना उसकी अलौकिक

गुण का एक प्रमाण है। ऐसी कौन सी बात है जो एक अन्यजातीय व्यक्ति को एक संदेश पर विश्वास में लाती है जो यीशु नाम के किसी व्यक्ति के बारे में है, जबकि वह पुराने नियम से पूरी तरह अनभिज्ञ है या फिर यूनानी दर्शन या अन्यजातीय अंधविश्वास में गहिरी जड़े रखता है ?

- वह एक निर्धन परिवार में, रोमी साम्राज्य के सबसे अधिक तुच्छ माने जाने वाले परिक्षेत्र में, प्रश्न करने योग्य परिस्थितियों में जन्मा फिर भी सुसमाचार दावा करता है कि वह अनन्त परमेश्वर का पुत्र था जो पवित्र आत्मा के द्वारा एक यहूदी कुँवारी स्त्री के गर्भ में आया।
- पेशे से वह बढ़ई था, और घूम–घूमकर शिक्षा देने वाला धार्मिक गुरू जिसके पास कोई आधिकारिक प्रशिक्षण नहीं था, परन्तु फिर भी सुसमाचार दावा करता है कि उसमें सभी यूनानी दार्शनिकों एवं प्राचीन रोम के विद्वानों की संयुक्त बुद्धि से अधिक बढ़कर बुद्धि थी।
- वह निर्धन था और उसके पास सिर धरने की जगह नहीं थी, परन्तु फिर भी सुसमाचार का दावा है कि लगभग तीन वर्ष तक उसने हजारों को वचन की रोटी खिलाई, मनुष्यों की सब प्रकार की बीमारियों को चंगा किया, यहाँ तक कि मुर्दो को भी जिला उठाया।
- उसे ईश निन्दा करने वाला एवं शासन का शत्रु मानकर यरूशलेम नगर के बाहर क्रूस पर चढ़ाया गया, परन्तु फिर भी सुसमाचार का दावा है कि उसकी मृत्यु मानव इतिहास की केन्द्रीय घटना थी और पापों से उद्धार एवं परमेश्वर के साथ मेल–मिलाप करने का एकमात्र माध्यम थी।
- उसे उधार की कब्र में रखा गया फिर भी सुसमाचार का दावा है कि तीसरे दिन वह मृतकों में से जी उठा, अपने बहुत से चेलों से जाकर मिला, चालीस दिनों बाद वह स्वर्ग पर उठा लिया गया और परमेश्वर के दाहिने हाथ जा बैठा।
- इस प्रकार सुसमाचार दावा करता है कि एक निर्धन यहूदी बढ़ई जिसे सिरफिरा और ईश–निन्दक मानकर उसके अपने लोगों ने इन्कार कर दिया, राज्य ने क्रूस पर चढ़ाया, अब वह संसार का उद्धारकर्त्ता है, राजाओं का राजा और प्रभुओं का प्रभु। उसके नाम पर हरेक घुटना, कैसर का घुटना भी झुकेगा।

ऐसे संदेश पर परमेश्वर की सामर्थ के बिना कोई कैसे विश्वास कर सकता है ? इसका अन्य कोई कारण नहीं बताया जा सकता। सुसमाचार कभी भी यरूशलेम से बाहर नहीं जाता, और रोमन साम्राज्य से बाहर संसार के सभी देशों में जाने का तो प्रश्न ही नहीं उठता, यदि स्वयं परमेश्वर ने उसके द्वारा कार्य करने का निश्चय नहीं किया होता। संदेश उसके जन्म के समय ही दब जाता

यदि वह संगठनात्मक योग्यताओं, चातुर्य, प्रचार की समझौतापरक सामर्थ पर निर्भर होता। संसार की सभी मिशनरी रणनीतियाँ और बाजार की चतुर योजनाएँ भी, जैसे कि वॉल्ट स्ट्रीट से उधार लिये विचार, मिलकर भी ऐसे मूर्खतापूर्ण और ठोकर खाने के योग्य संदेश को इतना विस्तारित नहीं कर पाते।

यह सत्य उन सबके लिये प्रोत्साहन और चेतावनी दोनों लाता है जो इस विश्वास को जिस पर हमने विश्वास किया है प्रसारित करना चाहते है। सबसे पहले, यह जानना प्रोत्साहन देता है कि सुसमाचार की सीधी सरल और विश्वासयोग्य उद्घोषणा संसार में उसके लगातार प्रसार को सुनिश्चित करेगी। दूसरा, यह चेतावनी है कि हम इस झूठ के प्रलोभन में न आये कि हम अपनी बुद्धि, चातुर्य या चतुर रणनीतियों के बल पर सुसमाचार का प्रसार कर सकते है। ऐसी बातों में मनुष्य के हृदय परिवर्तन जैसी 'असम्भव' बात लाने की सामर्थ नहीं है।[10] हमें आशा सहित तत्परता के साथ सुसमाचार प्रचार एवं प्रसार के एक मात्र बाइबल सम्मत माध्यम पर निर्भर हो जाना चाहिये – उस संदेश की निडर एवं स्पष्ट उद्घोषणा जिससे हम लजाते नहीं क्योंकि वह "हर एक विश्वास करने वाले के लिये उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ है।"[11]

हम एक अविश्वास और संशय करने वाले युग में रह रहे है। संस्कृति हमारे विश्वास को एक आशाविहीन कल्पित कथा मानकर उपहास करती है, वे समझते हैं कि हम संकीर्ण मानसिकता रखने वाले पूर्वाग्रही है या फिर निर्बल मन वाले धर्म के धोके के शिकार व्यक्ति हैं। अकसर ऐसा आक्रमण हमें सुरक्षात्मक बना देता है और हम वापस लड़ने और स्वयं की स्थिति एवं प्रासंगिकता को साबित करने पक्ष संरक्षण के साथ प्रयास करते हैं। यद्यपि पक्ष संरक्षण के कुछ स्वरूप काफी सहायक और आवश्यक भी है, फिर भी हमें यह समझना चाहिये कि तब भी सामर्थ सुसमाचार के प्रचार–प्रसार में ही है। हम किसी मनुष्य को विश्वास करने सहमत नहीं कर सकते ठीक जैसेकि हम किसी मृत को जीवित नहीं कर सकते। ऐसी बातें परमेश्वर की आत्मा के कार्य है। मनुष्य केवल परमेश्वर के अलौकिक रूप में कार्य करने के द्वारा ही विश्वास में लाया जा सकता है और उसने यह करने की प्रतिज्ञा की है – मानवीय ज्ञान या बौद्धिक विशेषज्ञता के द्वारा नहीं, परन्तु क्रूस पर चढ़ाये हुये और मृतकों में जी उठे मसीह का प्रचार करने के द्वारा![12]

हमें इस तथ्य को स्वीकार करना चाहिये कि हमारा सुसमाचार एक अविश्वसनीय संदेश है। हमें आशा नहीं करनी चाहिये कि कोई हमें सुनेगा, विश्वास तो दूर की बात है, यदि परमेश्वर का आत्मा अनुग्रह और सामर्थ के साथ कार्य नहीं करता। परमेश्वर की सामर्थ के बाहर हमारा सारा प्रचार कितना आशा रहित है! प्रचारक कितना अधिक परमेश्वर पर निर्भर है। हमारा सारा सुसमाचार प्रचार किसी मूर्ख की दौड़भाग से कम नहीं है यदि परमेश्वर मनुष्यों के हृदयों में कार्य न करे। तौभी, परमेश्वर ने प्रतिज्ञा दी है कि यदि हम विश्वासयोग्यता से उस एक मात्र संदेश का प्रचार करे, अर्थात सुसमाचार, जिसमें उद्धार करने की सामर्थ है, तो वे यह कार्य अवश्य करेंगे।

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. आदिम सुसमाचार का संदर्भ उस सुसमाचार से है जिसे प्रथम शताब्दी में यीशु और उसके प्रेरितों के द्वारा प्रचार किया गया था।
2. प्रेरितों के काम 19:27
3. प्रेरितों के काम 19:26
4. रोमियों 10:9
5. 1 राजा 18:21
6. 1 कुरिन्थियों 1:23
7. 1 कुरिन्थियों 1:17, 23
8. 1 कुरिन्थियों 1:19–20, 29
9. 1 कुरिन्थियों 1:31
10. 1 कुरिन्थियों 1:17–25
11. रोमियों 1:16
12. 1 कुरिन्थियों 1:22–24

अध्याय – 8

एक सामर्थशाली सुसमाचार

क्योंकि वह उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ है

– रोमियों 1:16

पाप एवं उसके दण्ड से स्वयं को बचा सकने में मनुष्य की पूर्ण असमर्थता सम्पूर्ण पवित्रशास्त्र में लगातार प्रवाहित विचारधारा है। अय्यूब ने कहा, "चाहे मैं हिम से स्नान करूं, और अपने हाथ खार से निर्मल करूं, तौभी तू मुझे गड़हे में डाल ही देगा और मेरे वस्त्र भी मुझ से घृणा करेंगे।"[1] भजनकार भी विलाप करते हुये कहता है कि उसके पाप सदैव उसकी दृष्टि में बने रहते हैं, और प्रेरित पौलुस भी विवशता में पुकारते हैं, "मैं भी कैसा अभागा मनुष्य हूँ। कौन मुझे इस मृत्यु की देह से छुड़ाएगा ?"[2]

मनुष्य की स्वयं को पाप से बचाने की सम्पूर्ण असहाय स्थिति और असमर्थता पवित्रशास्त्र के सबसे दुख भरे सत्यों में से एक है। परन्तु फिर भी वे मनुष्य को दीन करने और उद्धार के लिये सुसमाचार की सामर्थ को उँचा उठाने के अति उच्च उद्देश्य को पूरा करते है। रोम की कलीसिया को लिखे पत्र में पौलुस घोषणा करते हैं कि मनुष्य की शक्तिहीनता और स्वयं को बचा सकने में निरीह असमर्थता के कारण ही मसीह अधर्मियों के लिये मरा।[3] यदि मनुष्य को खुद के भरोसे छोड दिया जाए, वह स्वयं का उद्धार नहीं कर सकता। परन्तु परमेश्वर ने मनुष्य को उसके भरोसे नहीं छोड़ा परन्तु स्वयं के पुत्र के सुसमाचार के द्वारा उनके उद्धार का एक मार्ग निकाला! वह जो मनुष्यों के लिये असम्भव है, वह परमेश्वर के लिये सम्भव है।[4] वह उद्धार करने में सामर्थी है और वह पूरा पूरा उद्धार कर सकता है।[5]

सुसमाचार में परमेश्वर की सामर्थ्य

पवित्रशास्त्र में परमेश्वर की सामर्थ का भरपूर प्रदर्शन किया गया है। उसने मात्र वचन कहकर संसार की सृष्टि की।[6] वह आकाश के तारांगणों की गिनती जानना है, वह उन्हें नाम लेकर बुलाता है, उसकी सामर्थ और शक्ति की महानता के कारण उनमें से एक भी नहीं गिरता।[7] वह अपने नथुनों की श्वांस से

समुद्र में मार्ग बनाता है।[8] उसके सामने पर्वत मोम के समान पिघल जाते और वह गहिरे स्थानों में पानी उण्डेलता है।[9] वह लिव्यातान से ऐसे खेलता है, मानों एक पक्षी से।[10] वह आकाश के तारांगणों और पृथ्वी के निवासियों के बीच अपनी इच्छा के अनुसार जो चाहता है वह करता है। कोई उसका हाथ हटा नहीं सकता और न कह सकता है, ''ये तूने क्या किया ?'' हमारे परमेश्वर में ऐसी सामर्थ है, परन्तु फिर भी इन सभी ईश्वरीय सामर्थ के प्रदर्शनों में एक भी उस सामर्थ से तुलना करने योग्य नहीं है जो यीशु मसीह के सुसमाचार के द्वारा प्रगट की गई है।

हमारे संदर्भ पद में, पौलुस ने सुसमाचार के सन्दर्भ में उसे 'परमेश्वर की सामर्थ' कहा है। यह शब्द यूनानी भाषा के शब्द dunamis (ड्यूनामिस) का अनुवाद है। यद्यपि यह शब्द स्वयं में अपवाद नहीं है परन्तु यह सुसमाचार के सन्दर्भ में एक अति–असाधारण अर्थ धारण करता है। यहाँ पौलुस निःसंदेह पुराने नियम से अनगिनत उद्धरणों का समावेश करके अपने लोगों के उद्धार में परमेश्वर की सामर्थ्य प्रगट होने के विषय में लिख रहे है। परमेश्वर इस्राएल को बड़ी सामर्थ और बलवन्त भुजा के द्वारा मिस्र देश से निकाल ले आया।[12] उसने फिरौन को इसलिए खड़ा किया कि उसमें अपनी सामर्थ दिखाए और समस्त पृथ्वी पर अपनी कीर्ति फैलाए।[13] उसने अपने लोगों का उद्धार अपने नाम के निमित्त किया ताकि अपनी सामर्थ को प्रगट करे।[14] अन्त में उसने बार–बार इस्राएल को स्मरण दिलाया कि उनका उद्धार उनकी अपनी सामर्थ से नहीं हुआ था परन्तु सब कुछ परमेश्वर की सामर्थ के कारण हुआ था।[15]

यहाँ रोमियों के प्रथम अध्याय में ड्यूनामिस शब्द पद 16 के अतिरिक्त दो बार और आया है। अध्याय के आरम्भ में यह उस सामर्थ के सन्दर्भ में है जिसने मसीह को मृतकों में से जिलाया और उसके पुत्रत्व पर मुहर की।[16] हमारे संदर्भ पद के अनुसार सामर्थ की ओर संकेत करके उसे परमेश्वर का एक गुण बताया है जो कि सृष्टि के सृजन और विश्व के प्रबंधन में प्रगट है।[17] पवित्रशास्त्र में ये दोनों ही परमेश्वर के सर्वशक्तिमान होने के सबसे बड़े प्रदर्शन है किन्तु सुसमाचार भी उनके समकक्ष खड़ा होता है क्योंकि यह मनुष्यों के उद्धार के लिये परमेश्वर की सामर्थ है, यह उद्धार न केवल पाप के दण्ड से छुटकारा प्रदान करता है परन्तु एक नयी सृष्टि के रूप में और उसके सतत् संरक्षण या पवित्रीकरण में उन्हें आत्मिक पुनर्जीवन भी देता है।

सुसमाचार की सामर्थ के विषय में स्वयं से दो प्रश्न पूछना सहायक होगा, प्रथम प्रश्न है, ''क्या हम उस महान सामर्थ की पहिचान करते हैं जो पापी मनुष्य के उद्धार के लिये आवश्यक है ?'' उद्धार कोई हल्का–पुल्का काम नहीं है, यह सबके लिये असम्भव, परन्तु परमेश्वर के लिये सम्भव है।[18] यह मनुष्य के पाप में पतन की दशा और नैतिक भ्रष्टता के कारण है। पवित्रशास्त्र शिक्षा देता है कि परमेश्वर की छवि (जो हम में थी) वह बुरी तरह बिगड़ चुकी है और नैतिक पतन ने उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रदूषित कर दिया है।[19] इस कारण मनुष्य ने परमेश्वर के विरूद्ध युद्ध छेड़ दिया है और जो भी उसकी शक्ति से सम्भव है, वह परमेश्वर के सत्य को रोकने या दबाने में लगा है।[20] पवित्रशास्त्र

सिखाता है कि मनुष्य परमेश्वर के पास नहीं आ सकता क्योंकि वह परमेश्वर के पास नहीं आयेगा और वह परमेश्वर के पास इसलिये नहीं आएगा क्योंकि उसके हृदय में बुराई है। यीशु ने यूहन्ना 3:19–20 में यह सत्य सिखाया है, ''और दण्ड की आज्ञा का कारण यह है कि ज्योति जगत में आई और मनुष्यों ने अंधकार को ज्योति से अधिक प्रिय जाना क्योंकि उनके काम बुरे थे। क्योंकि जो कोई बुराई करता है, वह ज्योति से बैर रखता है, और ज्योति के निकट नहीं आता, ऐसा न हो कि उसके कामों पर दोष लगाया जाए।''

मनुष्य के हृदय के चारो ओर चारित्रिक पतन की दीवार, यरीहो की शहरपनाह से अधिक मजबूत है और अधिक कठोर वस्तु से बनी है। यदि मनुष्य उस महान नगर यरीहो की दीवार अपनी सामर्थ से नहीं गिरा सका, वे अपने हृदय के चारित्रिक पतन पर भी जय नहीं पा सकते। इसके लिये परमेश्वर की सामर्थ चाहिये। यही कारण है कि हम अकसर सुनते हैं कि सृष्टि के सृजन और विश्व के प्रबंधन में प्रगट परमेश्वर की सामर्थ से कहीं बढ़कर सामर्थ एक मनुष्य के उद्धार में प्रगट होती है। परमेश्वर ने शुन्य से (ex-nihilo) संसार को रचा किन्तु जब परमेश्वर एक मनुष्य का उद्धार करते हैं वे उससे कहीं अधिक बहुत कठिन काम करते है। पाप में पतित एवं भ्रष्ट मानवता से अच्छी बातों का पुनर्सृजन करने से 'शुन्यं' से 'अच्छा' सृजन करना कहीं अधिक आसान है।

अतिश्योक्ति का जोखिम उठाकर हमें कहना चाहिये कि जब तक हम मनुष्य की पाप में पतित दशा और नैतिक विकृति को नहीं समझते, हम मनुष्यों के उद्धार में सुसमाचार की सामर्थ की सराहना नहीं कर सकते। हम मनुष्य के भ्रष्ट चारित्र को जितनी अधिक गहिराई से समझेंगे, हम सुसमाचार की सामर्थ की समझ और सराहना में उतनी ही अधिक ऊँचाईयाँ प्राप्त करेंगे। हम यह भी बारीकी से समझ लेंगे कि बाजार की रणनीतियाँ और तौर–तरीके, प्रदर्शन के उपकरण, ध्यानाकर्षण और के उपाय जैसा कि समकालीन प्रचारवाद में अधिक उपयोग किये जाते है, व्यर्थ और अनुपयोगी है। यदि मनुष्यों को उद्धार मिलना है तो वह सुसमाचार में प्रगटित परमेश्वर की अलौकिक सामर्थ के द्वारा ही मिलेगा!

हमें स्वयं से दूसरा प्रश्न यह पूछना चाहिये – ''क्या हम जानते और मानते है कि उद्धार करने की सामर्थ विशेष रूप में केवल सुसमाचार में ही है ?'' यीशु मसीह का सुसमाचार उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ है। यह आवश्यकता का मध्यभाग या कोई एक भाग नहीं परन्तु सम्पूर्ण भाग है। मनुष्यों पर इसके भारी प्रभाव के लिये केवल इसे प्रचार करना आवश्यक है। इसमें प्रासंगिकता लाने के लिये संशोधन, समझने योग्य बनाने के लिये सुधार या विधिसम्मत बनाने के लिये अभिरक्षा की आवश्यकता नहीं है, यदि हम इस पर निर्भर होकर प्रचार करे, यह स्वयं कार्य करेगा। एक अकेला प्रचारक जिसने अपने शारीरिक अस्त्र–शस्त्रों को उतारकर रख दिया है और केवल सुसमाचार के प्रचार के साथ युद्ध में उतरता है, मध्यस्थता का काम करता है और प्रेमपूर्ण बलिदान में परिश्रम करता है, वह सभी रणनीतियों, स्कीमों और नये–नये तौर–तरीकों से कहीं अधिक संसार के

(उद्धार के) लिये काम करेगा।

यद्यपि पवित्रशास्त्र और कलीसियाई इतिहास दोनों इस सत्य को प्रमाणित करते हैं, समकालीन सुसमाचार का अध्ययन दर्शाता है कि सुसमाचार प्रचारकीय अब इस निडर विचार में विश्वास नहीं करते। पुराने भजनों में यह मधुर लगता है परन्तु वास्तव में उस पर विश्वास और अमल करना एक नयी बात लगती है। यही कारण है कि बहुत सी ''आदर्श कलीसियाएँ'' इन दिनों में सिय्योन के जहाज से अधिक यीशु पर लगे छः झण्डों के समान लगती है। वे न केवल एक काँटे–छाँटे और संशोधित सुसमाचार को देते है परन्तु वे ऐसे आकर्षणों को भी बढ़ाती है कि यदि असम्भव न कहे तो भी बाइबल–सम्मत सुसमाचार कठिन अवश्य बन जाता है। अब सरल संदेश में सामर्थ नहीं रहती पर वह निडर नेतृत्व, धारदार रणनीतियों, संस्कृति के प्रति संवेदनशीलता और संस्कृति के अनुदेशों पर कलीसिया के दर्दनिवारण की योग्यता में दिखता है।

हमारा संसार जितना अधिक गैर–धार्मिक और मसीहत–विरोधी बनता जा रहा है, सुसमाचार प्रचारवाद भी लक्ष्यहीन होकर उपचार या उपाय की खोज कर रहा है। हम सावधानी पूर्वक संस्कृति के सन्दर्भ में लोकप्रियता और प्रचलन का अध्ययन करते है ताकि सुसमाचार में आवश्यक परिवर्तन करके उसे अधिक प्रासंगिक बनाये। जब हमारी संस्कृति जो हमारे पास है वह नहीं चाहती, तब हम उन्हें वह देते हैं जो वह चाहती है। जब एक विशेष प्रकार की सेवकाई शारीरिक मनुष्यों की भीड़ को आकर्षित करती है, हम एक पुस्तक में ''कैसे करे'' रणनीति लिखते हैं कि बाकी सभी उसका अनुसरण करे। किन्तु इन सब बातों में हम यह देखना चूक जाते है कि हम सुसमाचार को प्रासंगिक नहीं बना रहे है। हम केवल एक ईश्वर रहित संस्कृति को बढ़ा रहे हैं कि वह हमारी दीवारों के बीच में ही रहे। अंत में सुसमाचार का लोप होता है, परमेश्वर को सम्मान नहीं मिलता और संस्कृति नरक की ओर बढ़ती जाती है।

कलीसिया को ऐसे मनुष्यों की आवश्यकता है जो सुसमाचार और जिस परमेश्वर ने सुसमाचार के द्वारा काम करने की प्रतिज्ञा की है उसे छोड बाकी किसी भी मदत करने या उनकी रक्षा करने वाले साधनों के बिना विरोध करने वाली भीड़ के सामने निहत्थे खड़े हो। शाऊल के अस्त्र–शस्त्र दाऊद के लिये कैसे असुविधाजनक थे और जब दाऊद ने उन्हें पहना तब कैसा हास्यास्पद लग रहा था ?उन वस्त्रों के भार से उसकी चपलता और सामर्थ दोनों बंध गई थी। परन्तु उसने उन्हें उतारने का महत्वपूर्ण निर्णय लिया और उस महाकाय का सामना करने केवल परमेश्वर का नाम लेकर निकल पड़ा। इसी प्रकार हमें भी शाऊल के युद्ध के वस्त्रों और अस्त्र–शस्त्रों से मना करना चाहिये और युद्ध में केवल सुसमाचार के चिकने पत्थर लेकर उतरना चाहिये। हमें यह महत्वपूर्ण निर्णय करना चाहिये कि आधुनिककाल के सुसमाचारवाद के उपकरणों, रणनीतियों और चतुर तकनीकी बातों को त्याग कर अविश्वास एवं संशयवाद के जुड़वा दानवों का सामना करने खुली बाइबल और क्रूस पर चढ़ाये गये और मृतकों में से जी उठे मसीह के सुस्पष्ट और समझौता

रहित संदेश के साथ मैदान में उतरेंगे। तब हम बड़े से बड़े पापियों के जीवन में होने वाले वास्तविक हृदय परिवर्तन में परमेश्वर की सामर्थ को प्रगट होते हुये देखेंगे। क्या प्रभु के लिये कोई बात अति–कठिन है ?[21]

अब जब कि हम मनुष्य की चारित्रिक भ्रष्टता और उसके उद्धार की असम्भवता के विषय में समझते हैं कि यह शरीर से जुड़ी किसी भी बात के द्वारा दूर–दूर तक सम्भव नहीं है, हम पौलुस के द्वारा सुसमाचार की सामर्थ को दी जाने वाली जय–जयकार की सराहना कर सकते है। इसी कारणवश वह अरिगपुस के सामने खड़ा हो सका और उसने क्रूस पर चढ़ाये गये एक यहूदी को विश्व का परमेश्वर और संसार का उद्धारकर्त्ता घोषित किया।[22] उसे किसी आग्रहकारी वाद–विवाद या वाक्‌चातुर्य की आवश्यकता नहीं थी। उसे पता था कि मनुष्यों के हृदय परिवर्तन होंगे यदि वह अपने एकमात्र संदेश को निडरता और स्पष्टता से प्रचार करेगा।[23] यही वह यकीन है जिसने विलियम केरी एवं अनगिनत अन्य मिशनरियों को कटनी से पहले अकाल के लम्बे वर्षों में जीवित रखा। सुसमाचार उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ है। मनुष्यों का हृदय–परिवर्तन होगा यदि इसे प्रचार किया जाएगा!

उद्धार करने वाला सुसमाचार

पवित्रशास्त्र में हम पढ़ते हैं कि उद्धार विश्वास का परिणाम या लक्ष्य है।[24] यही सुसमाचार के लिये भी सत्य है। पौलुस के आँकलन में मनुष्य को सुसमाचार से प्राप्त सबसे बड़ा वरदान उसकी आत्मा का उद्धार है। परमेश्वर ने इस संसार में अपने पुत्र को भेजा ताकि उसके द्वारा संसार उद्धार पाए।[25] सभी युगों में उद्धार कलीसिया की महिमामय विचारधारा और उसका महानतम भक्ति गीत रहा है। प्राचीनकाल के संतों ने उद्धार को सुसमाचार के बहुत से मिलने वाले लाभों में से केवल एक लाभ नहीं माना है पर उसे पाने पर एक बहुत बड़ा लाभ माना है, जो विश्वास करने वाले के जीवन को इतना अभिभूत कर देता है कि वह और कुछ भी नहीं चाहता। अहं एवं पाप से उद्धार, न्याय और परमेश्वर के क्रोध से छुटकारा, परमेश्वर के साथ मेल–मिलाप और मसीह की पहिचान पर्याप्त थी।

विलाप करने योग्य बात है कि पिछले कुछ दशकों में उद्धार ने उसका कुछ मूल्य खो दिया है। बहुतों के अभिमत में, उद्धार की प्रतिज्ञा अब पापियों को पश्चाताप करने और पवित्रजनों की सच्ची भक्ति के लिये बलशाली प्रेरणा नहीं रह गई है, इस कारण हमें सुसमाचार की बुलाहट को अधिक आकर्षित करने वाली बनाने के लिये उसमें बहुत सी अन्य प्रतिज्ञाएँ भी जोडनी चाहिये – स्वास्थ्य और समृद्धि, उद्‌देश्य और सामर्थ वर्तमान जीवन की सर्वाधिक अच्छी बातें और समकालीन मसीहत के लाभ देने वाले अन्य वास्तवकि साधन। वास्तव में वर्तमान दिनों में मंच से दर्शक दीर्घा में बैठे मनुष्यों की चाहने योग्य बातों की दी जाने वाली प्रतिज्ञाएँ अकसर उन बातों के सम्बन्ध में होती है जिनके विरूद्ध यीशु ने चेतावनी देकर कहा कि वे बातें सच्ची शिष्यता के दौरान खोनी पड़ेगी।[26] उसके

अनुसार हो सकता है उद्धार पाने के लिये मनुष्य को सारे जगत की हानि उठानी पड़े परन्तु फिर भी उसके आँकलन में उद्धार पाने के लिये यह बहुत कम कीमत है।[27]

पवित्रशास्त्र द्वारा उद्धार को दिये गये उच्च महत्व के प्रकाश में ऐसा क्यों हैं कि केवल उद्धार की प्रतिज्ञा आधुनिक मनुष्यों को अब रोमांचित नहीं करती ? अन्य सांसारिक प्रतिज्ञाओं को सुसमाचार में शामिल करना क्यों आवश्यक है कि वह समकालीन मनुष्यों को रूचिकर लगे ? सर्वप्रथम, ऐसा इसलिये है कि मनुष्य अपनी शोचनीय दशा की समझ नहीं रखते। जिस प्रकार एक धनी व्यक्ति को उपहार में केवल रोटी मिलने पर कोई खुशी नहीं होती यदि घटनाक्रम में परिवर्तन के कारण वह निर्धन न हो जाये, उसी प्रकार, पापी मनुष्य भी जब तक उनके पाप के भयावह स्वरूप या प्रवृत्ति का परिचय नहीं पाते और स्वयं को एक टूटा हुआ, दयनीय, कंगाल, अंधा और नंगा नहीं देखते, उद्धार में कोई आनन्द नहीं पाते।[28] दूसरी बात, ऐसा इसलिये है कि मनुष्य समझते ही नहीं कि वे कितने बड़े खतरे में है। एक मनुष्य उद्धार का आँकलन उतनी ही तीव्रता से करता है जितना वह समझता है कि किस बड़े खतरे से वह बचाया जा रहा है। नरक और परमेश्वर के क्रोध की अधिक स्पष्ट व्याख्या मनुष्य को सुसमाचार के द्वारा उद्धार के प्रस्ताव की अधिक उचित रीति से सराहना करने की समझ देती है। तीसरी बात, ऐसा इसलिये है कि मनुष्य नहीं समझता कि उद्धार प्राप्त करने के लिये एक असीम कीमत चुकाई गई है। आत्मा का उद्धार कीमती है और मनुष्य द्वारा दाम चुकाने की सामर्थ से परे है।[29] केवल परमेश्वर ही दाम चुका सकता था, और उसने उसके निज पुत्र के बहुमूल्य लोहू के द्वारा उस दाम को पूरा–पूरा चुकाया।[30] वे पापीजन जिन्हें यीशु के मूल्य का ज्ञान नहीं है, उनसे अधिक आशा नहीं की जा सकती कि परमेश्वर ने सुसमाचार में उनके लिये जो किया है वे उसकी सराहना करेंगे। चौथी बात, नया जन्म न पाये लोग सदैव ऐसे ही होते है। दृष्टिहीन सूर्यास्त में कोई सौन्दर्य नहीं पाते, बधिर सर्वश्रेष्ठ संगीत रचना से अप्रभावित रहते हैं, और हिसंक पशु कला की सराहना नहीं कर सकते। इसी प्रकार, नया जन्म और हृदय–परिवर्तन न पाए हुये शारीरिक मनुष्य भी आत्मिक रिती से दृष्टिहीन होते हैं, परमेश्वर के वचन के प्रति बधिर और हिंसक हृदय के दासत्व में 'परमेश्वर भला है' यह चखने और देखने के बदले में पाशविक लालसाओं में अधिक प्रवृत रहते हैं।[31] यही कारण है कि यीशु ने कहा था, यदि कोई मनुष्य नए सिरे से न जन्मे वह स्वर्ग के राज्य को नहीं ''देख'' सकता, उसके मूल्य का आँकलन तो दूर की बात है।[32] इसी कारण, शारीरिक मनुष्य हमारी कलीसियाओं की सदस्यता लेते है – वे मसीह और धार्मिकता की भूख–प्यास को छोड़ अन्य कितने ही कारणों से (चर्च में) आते है।[33] जितना अधिक प्रतिज्ञाओं को व्यवहारिक और समय के अनुकूल बनाकर सुसमाचार में जोड़ा जाता है और उनके लिये रूचिकर बनाया जाता है, वे कलीसिया में बने रहते है जब तक कि वे जो चाहते हैं उन्हें मिलता रहता है। इससे उनके शरीर की क्षुधापूर्ति धार्मिक रूप में होती रहती है, परन्तु उनकी आत्माएँ परमेश्वर के प्रति और वास्तविक उद्धार की आशा के प्रति मृत ही रहती है।

उद्धार की परिभाषा

प्रेरित पौलुस लिखते हैं कि सुसमाचार उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ है। यह सुनने में साधारण बात लगती है, परन्तु एक बार फिर कहूँ, इन शब्दों की व्याख्या या परिभाषा करने की बहुत आवश्यकता है। पौलुस का 'उद्धार' से क्या अभिप्राय था ? इस विषय पर परस्पर विरोधी विचार अत्याधिक संख्या में मिलते है, और यह मानकर चलना गलत होगा कि हम सबके एक ही अभिमत है। सुसमाचार में उद्धार बहुमुखी है, परन्तु हमारे लिये इसके सम्बन्ध में तीन प्रमुख विचारधाराएँ है : पाप के दण्ड से उद्धार, पाप की सामर्थ से उद्धार और अंत में, पाप की उपस्थिति से उद्धार। ये तीनों विचारधाराएँ समय के अनुसार कालक्रम में भी बाँटी जा सकती है – भूतकाल, वर्तमान काल और भविष्यकाल। वह जो सुसमाचार में विश्वास करता है वह अतीत में पाप के दण्ड से उद्धार पा चुका है, वर्तमान में वह पाप की सामर्थ से बचाया जा रहा है और अन्त में वह पाप की उपस्थिति से बचाया जायेगा।

अतीतकाल में मसीही–जन पाप के दोष या दण्ड से उद्धार पा चुका है। पवित्रशास्त्र के अनुसार आदम में सभी मनुष्य उनके अपने पापमय कामों के कारण दण्डनीय है।[34] यह दण्ड उन्हें अन्त में परमेश्वर के न्याय सिंहासन के सामने दिया जाएगा, जहाँ पापियों के पाप प्रगट होते है, उन्हें तौला जाता है और वे नर्क में निर्वासित होते है।[35] परन्तु मसीहियों के लिये परिदृश्य बिल्कुल अलग है। जिस पल एक मसीही व्यक्ति ने पश्चाताप किया और सुसमाचार पर विश्वास किया, तब परमेश्वर के सामने उसकी स्थिति पूरी तरह बदल गई।[36] उसे सदा के लिये विश्वास के द्वारा धर्मी ठहरया गया और परमेश्वर से उसका मेल–मिलाप हुआ।[37] जैसा कि पवित्रशास्त्र में उद्घोषणा है, ''इस कारण जो मसीह यीशु में हैं, उन पर दण्ड की आज्ञा नहीं है।''[38]

वर्तमान काल में, मसीही व्यक्ति पाप की सामर्थ से बचाया जा रहा है। परमेश्वर जिसने उसमें एक अच्छा काम आरम्भ किया है, उस कार्य को अंतिम दिन तक पूरा करने की प्रतिज्ञा भी करता है, कि वह उसे समस्त अशुद्धता और मूरतों से शुद्ध करेगा।[39] पवित्रशास्त्र के अनुसार, परमेश्वर केवल धर्मी ठहराने वाला परमेश्वर ही नहीं है परन्तु वह पवित्रीकरण भी करता है।[40] सभी मसीही जन, बिना अपवाद परमेश्वर के बनाए हुए है।[41] वे सभी सच्चे विश्वासियों के जीवन में सामर्थ और प्रभाव के साथ कार्य करते है, वे अपनी सुइच्छा के अनुसार उनमें इच्छा और काम को करने की सामर्थ भी देते है।[42] पवित्रीकरण का कार्य उद्धार का एक अति आवश्यक अंग है, और प्रत्येक सच्चा मसीही परमेश्वर के द्वारा संरचित, निदेशित और शक्ति सम्पन्न ऐसी प्रक्रिया में प्रवेश कर चुका है, जिससे वह बच नहीं सकता। यह सुसमाचार का दीर्घकालिन सत्य है कि धर्मी ठहराए जाने का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि धर्मी ठहराए जाने के बाद अब हम पवित्र किये जा रहे हैं। हमें निश्चय है कि परमेश्वर ने हमें पाप के दण्ड से बचाया क्योंकि वह हमें वर्तमान में पाप की सामर्थ से बचा रहा है। हमारी मानवीय दुर्बलता के कारण पवित्रीकरण की इस प्रक्रिया में एक वास्तविक संघर्ष है, पवित्रता में हमारा आगे बढ़ना,

बहुतों के जीवन में ऐसा है कि तीन कदम आगे चलना और एक कदम पीछे हटना। परन्तु फिर भी प्रत्येक मसीही के जीवन में आगे चलकर एक निश्चित उन्नति दिखाई देती है। केवल एक निर्बल और विकृत सुसमाचार ही बिना पवित्रता के उद्धार की संभावना का विचार रख सकता है। जैसा पवित्रशास्त्र में उल्लेख है, ''उस पवित्रता का पीछा कर जिसके बिना कोई प्रभु को कदापि न देखेगा'' और ''यदि वह ताड़ना जिसके भागी सब होते हैं, तुम्हारी नहीं हुई तो तुम पुत्र नहीं, पर व्याभिचार की सन्तान ठहरे।''[43]

भविष्यकाल में एक दिन मसीही जन पाप की उपस्थिति और उसके भ्रष्ट करने वाले प्रभाव से उद्धार पाएगा। इस कार्य में दो बातें आवश्यक है – प्रथम, मसीही व्यक्ति बदला जाये, उसका भ्रष्ट शरीर दूर किया जाये और उसकी देह को छुटकारा मिले।[44] यह पलक झपकते होगा, तुरही फूंकी जाएगी, जब देह अविनाशी दशा में उठाई जाएगी और मरणहार अमरता को पहन लेगा।[45] दूसरी बात, एक नया आकाश और नयी पृथ्वी तैयार किया जाना अवश्य है – ऐसी सृष्टि जो शाप और भ्रष्टता से मुक्त हो जिसके आधीन वह परमेश्वर के पुत्रों की महिमा में प्रगट होने की प्रतीक्षा में कराहती है।[46] यद्यपि इसमें अभी समय है, यह अंतिम चरण भी पहले दो चरणों के समान निश्चित रूप में होगा। पवित्रशास्त्र इसे इस प्रकार कहता है, ''फिर जिन्हें उसने पहले से ठहराया, उन्हें बुलाया भी; और जिन्हें बुलाया, उन्हें धर्मी भी ठहराया, और जिन्हें धर्मी ठहराया, उन्हें महिमा भी दी।''[47]

परमेश्वर की अमापनीय सामर्थ स्वयं को सुसमाचार में प्रगट करती है। सुसमाचार से कमतर अन्य कोई बात मनुष्य को पश्चाताप करने और विश्वास करने विवश नहीं कर सकती। सुसमाचार से कमतर अन्य कोई बात पापी को पवित्रजन नहीं बना सकती। सुसमाचार से कमतर अन्य कोई बात बहुत से पुत्रों को महिमा में नहीं पहुँचा सकती![48]

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. अय्यूब 9:30–31
2. भजन संहिता 51:3; श्रोमियों 7:24
3. रोमियों 5:6 – शब्द शक्तिहीन (NIV) या असहाय (NASB) ग्रीक शब्द asthenes से है जिसका अर्थ है नकारा, निर्बल, दुर्बल, बलहीन या रोगी।
4 मरकूस 10:24–27
5. यशायाह 63:1 – ''यह कौन है जो येदोम से, हां, बोस्रा से किरमिजी वस्त्र पहने हुए चला आता है। यह जिसकी वेश–भूषा ऐश्वर्यवान है, और जो अपने महान् सामर्थ्य में चला आता है ?यह मैं हूँ, जो धार्मिकता में बोलता और उद्धार करने में सामर्थी हूँ।'' इब्रानियों 7:25 – ''अतः जो उसके द्वारा परमेश्वर के समीप आते है, वह उन का पूरा पूरा उद्धार करने में समर्थ है, क्योंकि वह उन के लिए निवेदन करने को सर्वदा जीवित है।''
6. उत्पत्ति 1:3; इब्रानियों 11:3
7. यशायाह 40:26

8. निर्गमन 15:8
9. मीका 1:4
10. अय्यूब 41:5
11.दानिय्यल4:35
12. निर्गमन 32:11; व्यवस्थाविवरण 9:29; 2 राजा 17:36; नहेम्याह 1:10; भजन संहिता 77:14–15
13. निर्गमन 9:16
14. भजन संहिता 106:8
15. व्यवस्थाविवरण 8:16–17
16. रोमियों 1:4
17. रोमियों 1:20
18. मत्ती 19:26
19. नैतिक भ्रष्टता शरीर में (रोमियों 6:6, 12; 7:24; 8:10, 13), बुद्धी में (रोमियों 1:21; 2 कुरिन्थ 3:14–15; 4:4; इफिसियों 7:17–19), भावनाओं में (रोमियों 1:26–27; गलातियों 5:24; 2 तिमुथि 3:2–4) और इच्छाओं में (रोमियों 6:17; 7:14–15) फैल जाती है।
20. रोमियों 1:18, 30; 5:10
21. उत्पत्ति 18:14
22. प्रेरितों के काम 17:22
23. प्रेरितों के काम 17:34
24. 1 पतरस 1:9
25. यूहन्ना 3:17
26.मत्ती 16:24–26
27. मरकूस 8:36–37
28. प्रकाशित वाक्य 3:17
29. भजन संहिता 49:8
30. 1 पतरस 1:18–19
31. भजन संहिता 34:8
32. यूहन्ना 3:3
33.मत्ती 5:6
34. रोमियों 5:12–19; 3:23
35. प्रकाशित वाक्य 20:11–15
36. मरकूस 1:15
37. रोमियों 5:1 – शब्द justified धर्मी ठहराया जाना, एक न्यायिक या विधिसम्मत शब्द है। ''धर्मी ठहराये जाने'' का अर्थ है, किसी व्यक्ति को परमेश्वर के समक्ष विधिसम्मत रूप से या कानूनन धर्मी घोषित किया गया, अपने सद्गुणों या योग्यता के कारण नहीं, परन्तु यीशु मसीह के सद्गुणों और योग्यता, एवं कलवरी पर उस की मृत्यु के कारण।
38. रोमियों 8:1
39. फिलिप्पियों 1:6; यहेजकेल 36:25
40. 1 थिस्सलुनियों 5:23
41.इफिसियों2:10
42. फिलिप्पियों 2:13
43. इब्रानियों 12:14, 8 – ताड़ना यह शब्द विश्वासी के जीवन में परमेश्वर के हस्तक्षेप का उल्लेख करता है कि उसे पवित्रता में निपुण बनाए।

अध्याय – 9

सुसमाचार – हर एक विश्वास करने वाले के लिये

इसलिए कि वह हर एक विश्वास करनेवाले के लिये, पहले तो यहूदी फिर यूनानी के लिये....।

– रोमियों 1:16

सुसमाचार की बुलाहट विश्वव्यापी है। मसीह का छुटकारे का कार्य पृथ्वी के किसी निर्जन कोने में नहीं किया गया, परन्तु संसार के धार्मिक जगत के ठीक केन्द्र में सम्पन्न हुआ था।[1] उसकी मृत्यु और जी उठने की खबर अतिशीघ्र समस्त संसार में फैल गई।[2] साथ ही, मसीह केवल एक विशेष जन–समूह के लोगों ही का उद्धार करने नहीं आया था, परन्तु उसने सभी जातियों, भाषाओं, लोगों और कुलों के लोगों के छुटकारे के लिये अपना लोहू बहा दिया।[3] पुराने नियम की भविष्यद्वाणियों में घोषणा की गई कि मसीहा देश–देश के लोगों को मीरास में प्राप्त करेगा और यीशु मसीह का महान आदेश उस प्रतिज्ञा को पूरा कर रहा है।[4] मसीह ने उसकी कलीसिया को आज्ञा दी है कि सारे संसार में जाये और समस्त सृष्टी को सुसमाचार सुनाये। वे जो विश्वास करते और अपने विश्वास को मसीह में सार्वजनिक पहिचान अर्थात् बपतिस्में के द्वारा प्रगट करते हैं वे उद्धार पाएंगे, पर जो विश्वास नहीं करते वे दोषी ठहराए जाएंगे।[5]

विश्वास करनेवाले सभी के लिए उद्धार

पुराना और नया नियम दोनो ही बोधगम्य साक्षी देते हैं कि मनुष्य सुसमाचार के लाभों को केवल विश्वास से प्राप्त कर सकता है। हबक्कूक का विश्वास वचन सम्पूर्ण वास्तविक धर्म की आधारशिला है : ''धर्मीजन विश्वास से जीवित रहेगा।''[6] ये शब्द उद्धार की कुंजी है और धर्म के प्रत्येक जागृती के लिये चिंगारी है। इन शब्दों के बिना उद्धार का दरवाजा मोहरबन्द है। महिमा में प्रवेश का एकमात्र 'गुप्त शब्द' है – ''मैं विश्वास करता/करती हूँ।'' पौलुस इस सत्य को इस वृतान्त में स्पष्ट करते है जो उसके अतिरेक के लिये विशेष उल्लेखनीय है : ''यह जानकर कि मनुष्य व्यवस्था के कामों से नहीं पर केवल यीशु मसीह पर विश्वास करने के द्वारा धर्मी ठहराया जाता है, हम ने आप भी मसीह यीशु पर विश्वास किया कि हम व्यवस्था के कामों से नहीं पर मसीह पर विश्वास करने से धर्मी ठहरें,

इसलिये कि व्यवस्था के कामों से कोई प्राणी धर्मी न ठहरेगा।"[7]

उद्धार दो मूलभूत कारणों से कामों पर आधारित नहीं है। प्रथम, मनुष्य के कोई काम ऐसे नहीं है जिनके बारे में कहा जाये कि उनमें ऐसा कुछ है जो उद्धार पाने के योग्य है, परन्तु जो कुछ भी है वह पवित्र परमेश्वर की ओर से दण्ड को ठहराता है। यह पवित्रशास्त्र की साक्षी है कि कोई भी धर्मी नहीं, एक भी नहीं, कोई भलाई करने वाला नहीं है।[8] वास्तव में मनुष्य के सर्वश्रेष्ठ परिश्रम और परोपकार के महानतम कार्य, सबके सब परमेश्वर के सामने मैले–चीथड़ों से बेहतर नहीं है।[9] यह सत्य की बातें मनुष्य के गर्व को तबाह करते है, परन्तु अवश्य है कि ये सत्य उसके विवेक पर अंकित किये जाये ताकि परमेश्वर के सामने स्वयं को ऊँचा करने की सभी आशाएँ ध्वस्त हो और स्वयं की शक्ति के बलबूते पर ईश्वरीय अनुग्रह प्राप्त करने का प्रत्येक विचार कुचला जाये। कोई भी मनुष्य परमेश्वर के पास विश्वास से तब आता है जब वह अपनी बुरी दशा को जान लेता है और पुराने भजन गीत के लेखक के समान पुकार उठता है, "मेरे पास चुकाने का दाम नहीं है, मैं सिर्फ तेरे क्रूस से लिपटा हूँ।"[10]

दूसरी बात, उद्धार कामों से नहीं है क्योंकि उससे परमेश्वर को महिमा नहीं मिलेगी; यदि उद्धार कामों से होता तो परमेश्वर कर्जदार होता कि मनुष्यों के तथाकथित भले कामों का प्रतिफल उन्हें दे। कामों के द्वारा उद्धार धर्म के आवरण में लिपटे मानववाद से बढ़कर कुछ नहीं है। यह एक पौराणिक मनुष्य के समान है जो अपनी इच्छा शक्ति के बलबूते पर धूल से उठता है और सभी बाधाओं को पार करके इनाम को जीत लेता है। इसके विपरीत, विश्वास सच्चा धर्म है, यह मनुष्य है जो "पाप में पतन के कारण खो चुका है और बर्बाद हो चुका है", स्वयं में आत्म–विश्वास को पूरी तरह त्यागकर वह उद्धारक परमेश्वर की विश्वासयोग्य प्रतिज्ञाओं पर भरोसा करता है।[11] विश्वास के द्वारा उद्धार के महानाटक में परमेश्वर नायक है, और केवल उसी की प्रशंसा हम करते हैं। जैसा कि लिखा भी है, "हे यहोवा, हमारी नहीं, हमारी नहीं, वरन् अपने ही नाम की महिमा कर" और "परन्तु जो घमण्ड करे, वह प्रभु पर घमण्ड करे।"[12]

यह जानकर कि उद्धार केवल विश्वास से है, यह अनिवार्य है कि हम विश्वास के विषय में समझें कि वह क्या है। दुष्टात्माएँ भी तो विश्वास करती और भय से काँपती है, और भय में वे उन मनुष्यों से बढ़कर धर्म–परायणता दर्शाती है जो उद्धार करने वाले विश्वास को धारण करने का दावा करते है।[13] पवित्रशास्त्र के अनुसार विश्वास करने का अर्थ है परमेश्वर ने जो प्रतिज्ञा की है उसके प्रति पूर्ण आश्वस्त रहना कि वह उसे पूरा भी अवश्य करेगा।[14] सुसमाचार के विषय में इसका अर्थ यह है कि पश्चाताप करने वाला पापी जन शरीर की समस्त व्यर्थ आशाओं से फिर चुका है और उसने स्वयं को केवल मसीह पर निर्भर कर लिया है। ऐसा करके वह पूर्ण आश्वस्त हो जाता है कि मसीह की मृत्यु ने उसके बदले में पापों का प्रायश्चित पूरा किया है और परमेश्वर के साथ उसका मेल–मिलाप करा दिया है। यही विश्वास है, पर हमें कैसे पता चलेगा कि हम में यह विश्वास है ?सच्चे उद्धार करने वाले विश्वास के क्या प्रमाण है ?यह कैसे प्रमाणित होगा ? सौभाग्यवश पवित्रशास्त्र ने इस विषय पर हमें

अकेला नहीं छोड़ा कि हम अटकले लगाये। हमारे प्रश्नों का उत्तर प्रेरित याकूब ने अतिशय सादगी और स्पष्टता से दिया है, "वरन कोई कह सकता है तुझे विश्वास है और मैं कर्म करता हूँ, तू अपना विश्वास मुझे कर्म बिना तो दिखा और मैं अपना विश्वास अपने कर्मों के द्वारा तुझे दिखाऊंगा।"[15] इस पद का ऐसा अर्थ निकालना बहुत बड़ी भूल होगी यदि कोई कहे कि याकूब कामों के द्वारा उद्धार की बात कह रहे है। उनका तर्क यह नहीं है कि कामों से उद्धार मिलता है, पर यह कि वास्तविक उद्धार के सभी प्रकरणों में कार्य प्रगट होते है। दूसरे शब्दों में कार्य या किसी के जीवन में फल यह प्रमाणित करते है कि विश्वास के द्वारा वास्तव में उद्धार सम्पन्न हो रहा है।

यह शिक्षा केवल याकूब की नहीं है, यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले ने लोगों को उभारा था, "कि मन फिराव के योग्य फल लाओ।" यीशु ने चिताया था, "तुम उनके फलों से उन्हें पहिचान लोगे... . हर कोई जो हे पिता, हे पिता, कहता है, स्वर्ग के राज्य में प्रवेश न करेगा, पर वही जो मेरे स्वर्गीय पिता की इच्छा पर चलता है।"[16] पौलुस ने उन्हें जो मसीह में विश्वास का अंगीकार करते हैं आज्ञा दी कि वे अपने जीवनों को जाँचे और परखें और उनके जीवनों में विश्वास का प्रमाण प्राप्त करे।[17] इसके अलावा, उन्होंने उन्हें उन मनुष्यों के बारे में चेतावनी दी जिन्होंने परमेश्वर को जानने का दावा किया पर अपने कामों के द्वारा उसका इन्कार करते है।[18] अन्त में पतरस ने अपने पाठकों को चिताया कि वे मसीही गुणों में और मसीह के समान स्वभाव में बढ़ने का प्रमाण पाने के लिये अपने–अपने जीवनों की जाँच करे और यत्नपूर्वक अपनी "बुलाहट और चुने जाने" को सिद्ध करे।[19] इन शास्त्रपदों और बाकी अन्य को ध्यान में रखकर हम सही निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि उद्धार उन सबको मिलता है जो विश्वास करते हैं, किन्तु मनुष्य का जीवन–आचरण उसके विश्वास के अंगीकार की वैधता को प्रमाणित करता है।

इसके पहले कि हम मसीह के सुसमाचार और केवल विश्वास के द्वारा उद्धार पर इस संक्षिप्त विचार–विमर्श को पीछे छोड़कर आगे बढ़े, हमें एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय पर चर्चा करनी चाहिये। पवित्रशास्त्र केवल यह शिक्षा नहीं देता कि सुसमाचार हर उस व्यक्ति के लिये है जो विश्वास करता है; पर यह चेतावनी भी देता है कि सुसमाचार हर उस व्यक्ति के विरूद्ध है, जो विश्वास नहीं करता। यीशु ने इसे इस प्रकार स्पष्ट किया है : "जो उस पर विश्वास करता है उस पर दण्ड की आज्ञा नहीं होती, परन्तु जो उस पर विश्वास नहीं करता वह दोषी ठहर चुका, इसलिये कि उसने परमेश्वर के एकलौते पुत्र के नाम पर विश्वास नहीं किया... जो पुत्र पर विश्वास करता है, अनन्त जीवन उसका है, परन्तु जो पुत्र को नहीं मानता वह जीवन को नहीं देखेगा, परन्तु परमेश्वर का क्रोध उस पर रहता है।"[20] कितना आवश्यक है कि हम सम्पूर्ण तस्वीर देखे! सुसमाचार के सिक्के की एक ओर क्षमा और जीवन है और दूसरी ओर दण्ड एवं मृत्यु है। यह "हर किसी के लिये उद्धार" नहीं है, परन्तु "हर एक जो विश्वास करे" केवल उसके लिये है। शेष लोगों के लिये यह मृत्यु का दण्ड है, एक लगातार दिया जाने वाला स्मरण–पत्र है कि वे परमेश्वर के सम्मुख दोषी ठहर चुके है और परमेश्वर का क्रोध उन पर रहता है। यही कारण है कि अविश्वास करने वाला संसार सुसमाचार से घृणा करता

है और अपनी सामर्थभर उसके सत्य को दबाने या कुचलने का प्रयास करता हैं।[21] यही कारण है कि अविश्वासी लोग सुसमाचार के संदेश वाहको से नफरत करते और उन्हें चुप कराने का प्रयत्न करते है। सुसमाचार के संदेशवाहक उन की आँखों में कटीले तार और उनके बाजुओं में काँटों के समान चुभते है।[22] वे इस्राएल को 'दुख देने वाले' है और वे है जिन्होंने संसार को उलट–पुलट कर रख दिया है।[23] यद्यपि वे विश्वास करने वालों के लिये जीवन की सुगंध है, अन्य सभी के लिये वे मृत्यु की दुर्गन्ध है।[24]

सुसमाचार जो सबके लिये है

पुराने नियम के समूचे इतिहास क्रम में दो विशेष समूह संसार को प्रभावित करते थे – एक अब्राहम के वशंज और दूसरे शेष सभी मनुष्य। पहले समूह के लोग इस्राएली थे। वे पुत्र के रूप में ग्रहण किये गये थे, उनके पास वाचाएं थी, व्यवस्था थी, मन्दिर था, और प्रतिज्ञाएं भी थी।[25] दूसरे समूह में अन्य जातीय लोग थे जिन्हें विचारों की व्यर्थता, हृदय की कठोरता और परमेश्वर के जीवन से निष्कासन का अनुभव था।[26] वे एक दूसरे से दो ध्रुवों के समान विपरीत थे, उनमें कोई भी बात एक जैसी नहीं थी केवल यह कि वे दोनों मानव थे। किन्तु एक भयावह शुक्रवार की दोपहर सब कुछ बदल गया जब दोनों समूहों के उद्धारकर्त्ता ने अपना सिर झुकाकर प्राण त्याग दिये। उसके द्वारा यहूदियों और अन्य जातियों की एक बड़ी भीड़ एकता के सूत्र में बन्ध गई और परमेश्वर के साथ उनका मेल–मिलाप हो गया।[27] जैसा कि लिखा भी है, "उसने आकर तुम्हें जो दूर थे (अन्य जाति) और जो निकट थे (यहूदी) दोनों को मेल–मिलाप का सुसमाचार सुनाया।"[28]

यीशु की मृत्यु में उद्धार का द्वार सबके लिये खुल गया। सत्य यह है कि परमेश्वर जो किसी भी प्रकार से किसी को उद्धार देने के लिये विवश नहीं था, उसने अनुग्रह के इस अद्भुत प्रदर्शन को बहुत उँचा किया। यदि वह मनुष्यों के दुखों से मुँह फेर लेता और आदम की प्रत्येक सन्तान को सीधे–सीधे नरक में जाने देता, वह धर्मी ठहरता और उसकी प्रतिष्ठा धूमिल नहीं होती। यदि वह केवल इस्राएल के लिये उद्धारकर्त्ता भेज देता और अन्य जातियों को उनके स्वतः लादे गये निर्वासन में चलने देता तब भी उसके सिंहासन के विरूद्ध कोई आरोप नहीं लग सकता था। स्वर्गदूत मनुष्यों से बेहतर सृष्टि थे, पर परमेश्वर ने उन्हें उनके हाल पर, उनके विनाश के लिये छोड़ दिया।[29] वह हमारे साथ भी यही कर सकता था! वह संसार को एक उद्धारकर्त्ता देने बाध्य नहीं था!

कोई प्रश्न कर सकता है कि ऐसी दुखी और विचलित करने वाली चर्चा की क्या उपयोगिता है ? किन्तु ऐसे सत्यों के प्रकाश मे ही हम सुसमाचार में हमें दिये गये अनुग्रह का महत्व समझ सकते है। हम पाप में पतित एवं पापमय नस्ल है। हमने स्वयं हमारे निर्णय किये, स्वयं को स्वतंत्र घोषित किया और अपनी अन्तिम नियति का मार्ग स्वयं निश्चित किया। हम में ऐसा कोई सद्गुण नहीं था कि परमेश्वर हमें खोजता और न ही हमारा कुछ मूल्य था कि वह हमें छुटकारा देता।

उसकी महिमा कम नहीं होती और सृष्टि का कुछ नुकसान नहीं होता यदि वह हमें हमारे द्वारा निश्चित मार्ग पर चलते हुये हमें सीधे नर्क जाने देता और जरा भी हस्तक्षेप नहीं करता। परन्तु फिर भी उसने प्रत्येक कुल, भाषा, लोग और जाति के लिये सबसे मंहगा दाम चुकाकर उद्धार का द्वार खोला – अर्थात् उसके एकमात्र पुत्र के बेशकीमती रक्त के द्वारा![30]

यद्यपि सुसमाचार सब लोगों के लिये है, लेकिन स्मरण रखें कि यह पहले यहूदियों के लिये है फिर अन्यजातियों के लिये है। यह परमेश्वर के सर्व–शासन के विविध प्रदर्शनों में से एक है जो समस्त बाइबल के इतिहास में दृष्टिगोचर होती है। यह दर्शाती है कि परमेश्वर मनुष्य से स्वयं के चरित्र एवं चुनाव के आधार पर व्यवहार करता है न कि प्राप्तकर्त्ता के गुणों के आधार पर।[31] परमेश्वर ने इस्राएल को चुना और उसे पृथ्वी के अन्य देशों से सर्वोपरि स्थान दिया – इसलिये नहीं कि उन में कुछ बेहतर गुण थे, परन्तु अपनी ईच्छा के भले अभिप्रय और संप्रभु प्रेम के अनुसार :

> क्योंकि तू अपने परमेश्वर यहोवा की पवित्र प्रजा है; यहोवा ने पृथ्वी भर के सब देशों के लोगों में से तुझ को चुन लिया है कि तू उसकी प्रजा और निज धन ठहरे। यहोवा ने जो तुम से स्नेह करके तुम को चुन लिया, इसका कारण यह नहीं था कि तुम गिनती में और सब देशों के लोगों से अधिक थे, किन्तु तुम तो सब देशों के लोगों से गिनती में थोडे थे; यहोवा ने जो तुम को बलवन्त हाथ के द्वारा दासत्व के घर में से, और मिस्र के राजा फिरौन के हाथ से छुडाकर निकाल लिया, इसका यही कारण है कि वह तुम से प्रेम रखता है, और उस शपथ को भी पूरी करना चाहता है जो उसने तुम्हारे पूर्वजों से खाई थी।[32]

इस्राएल के प्रति परमेश्वर के विशेष प्रेम की एकमात्र व्याख्या स्वयं परमेश्वर में निहित है : परमेश्वर ने उनसे प्रेम किया क्योंकि उसने उनसे प्रेम किया।[33] गुणों या अन्य किसी बात के कारण उसने प्रेम नहीं किया। उसने यहूदियों में ऐसी कोई बात नहीं पाई जिसकी अन्यजातियों में कमी थी। वे एक दूसरे से बेहतर नहीं थे। प्रेरित पौलुस ने यह प्रमाणित किया जब उन्होंने यह प्रश्न किया "क्या हम उनसे बेहतर है ?कदापि नहीं। क्योंकि हम पहले ही कह चुके है कि यहूदी और यूनानी दोनों ही पाप के आधीन है।"[34] परमेश्वर ने यह चाहा कि वह अपने उद्धार को इस्राएल पर उसी कारण प्रगट करे जिस कारणवश उसने अब अन्यजातियों के लिये उद्धार का द्वार खोला है – क्योंकि यह उसकी दृष्टि में मनभावना था। उसने हमसे प्रेम किया क्योंकि उसने हमसे प्रेम किया – हमारी मानवीय श्रेष्ठता, गुणों या मूल्य के कारण नहीं, परन्तु हमारे भीतर इन बातों की अत्यन्त कमी के बावजूद। वह चाहता तो हमें हमारे हाल पर छोड़ देता। वह हमें हमारी हृदयगत लालसाओं के आधीन सब प्रकार की अशुद्धता के काम करने के लिये छोड़ सकता था।[35] वह हमें प्रतिबन्ध में छूट दे सकता था : "अन्य जातियों की सी चाल मत चलो।"[36] फिर भी उसकी सुईच्छा के निमित्त और उसकी बडी करूणा के प्रदर्शन के लिये सुसमाचार की बुलाहट पृथ्वी के छोर के स्थानों तक भेजी गई। पवित्रशास्त्र इस

महान और महिमामय सत्य की भरपूर साक्षी देता है : "जो लोग अंधियारे में बैठे थे उन्होंने बड़ा उजियाला देखा; और जो लोग घोर अंधकार से भरे मृत्यु के देश में रहते थे, उन पर ज्योति चमकी।"[37] "मेरे दास को देखो जिसे मैंने चुना है... वह जाति–जाति के लिये न्याय प्रगट करेगा... अन्यजातियाँ उसके नाम पर भरोसा रखेगी।"[38] "मैंने तुझे अन्यजातियों के लिये ज्योति ठहराया है, ताकि तू पृथ्वी की छोर तक उद्धार का द्वार हो।"[39] वह फिर कहता है : "हे जाति–जाति के सब लोगों उसकी प्रजा के साथ आनन्द करो।"[40]

सुसमाचार की विश्वव्यापी बुलाहट उसकी सुन्दरता का एक बड़ा भाग है, परमेश्वर ने अपनी प्रजा को यहूदियों और अन्यजातियों में से चुना है, जो कोई आना चाहे उन सबके लिये विश्वास का एक बहुत बड़ा द्वार खोला है – यूनानी और यहूदी, खतनासहित और खतनारहित, अन्य जातीय सीथियाई, गुलाम हो या स्वतंत्र।[41] सुसमाचार के द्वारा अन्यजातियों की आशा अब उस सरूफिनीकि जाति की उस माँ की आशा से कहीं अधिक बहुत बढ़ चुकी है, जिसने इस्राएल की मेज से गिरे चूर–चार को खाने के लिये याचना की थी।[42] विश्वास के द्वारा सबसे अधिक पिछड़े और नीच मनुष्यों में से सबसे बड़ा पापी भी अब प्रभु की मेज में एक पुत्र के समान भाग ले सकता है और खा सकता है।

परमेश्वर यहूदी और अन्यजाति दोनों को एकसमान निःशुल्क रूप में सुसमाचार देते हैं, और यह एक और सत्य विचारों में लाता है जिस पर इस विचार पर चर्चा समाप्त करने से पूर्व अवश्य है कि व्याख्या की जाये : यहूदियों का उद्धार करने वाला सुसमाचार वही है जो अन्य जातियों का उद्धार करने वाला सुसमाचार है। यद्यपि हमें उनकी सांस्कृतिक विभिन्नताओं से अवगत होना चाहिये, हमें संस्कृति को अवसर नहीं देना चाहिये कि वह सुसमाचार का स्वरूप तय करे या उसे संचरित कैसे करना है, यह तय करे। हमारे प्रारम्भ का विचारबिन्दु सदैव पवित्रशास्त्र में होना चाहिये। केवल बाइबल ही हमें बताती है कि सुसमाचार क्या है और मनुष्यों को कैसे सिखाया जाये। परिणाम स्वरूप, अवश्य है कि हमारे संदेश का स्वरूप निर्धारण करने वाले मानव शास्त्री, समाज शास्त्री, मिशनवादी या चर्च उन्नति के विशेषज्ञ नहीं परन्तु पवित्रशास्त्र के भावार्थ जानने के लिये समर्पित लोग और धर्मविज्ञानी होने चाहिये।

पिछले कुछ वर्षों में हमें सांस्कृतिक संवेदना में वृद्धि और विशेष सांस्कृतिक परिस्थितियों में सुसमाचार संदेश के अनुकूल बनाने की आवश्यकता का पूर्वाग्रह देखने में आता है। सुसमाचारकीय लोगों का एक बड़ा बहुमत इस बात से सहमत प्रतीत होता है कि अब आदिम या अनगढ़ सुसमाचार कार्य नहीं करेगा, और यह कि मनुष्य किसी न किसी कारणवश ऐसे सुसमाचार से उद्धार पाने और रूपान्तरित होने के सन्दर्भ में अतिशय जटिल या अतिशय सरल बन गया है। अब सुसमाचार के एकमात्र संदेश के प्रचार से बढ़कर जिसमें उद्धार करने की सामर्थ है, संस्कृति को समझने और उसकी रूचि को ध्यान में रखने पर अधिक जोर दिया जा रहा है।

हमें पवित्रशास्त्र पर अपनी निर्भरता में वापस आना होगा कि वह एक बार फिर इस दृढ़

निश्चय को जन्म दे कि केवल सुसमाचार में ही परमेश्वर की उद्धार करने की सामर्थ है। यद्यपि यह भी सच है कि वह तिरस्कृत और अबोधगम्य संदेश है, यह भी सच है कि यही एकमात्र संदेश है जिसके द्वारा परमेश्वर ने पाप में पतित मनुष्य का उद्धार करने की प्रतिज्ञा की है। किसी विशेष संस्कृति को अधिक प्रभावित करने के उद्देश्य से सुसमाचार में संशोधन या पुनर्संरचना करना सुसमाचार के सत्य में विकृति लाना है, उसकी सामर्थ को निर्बल करना और संसार को उस एकमात्र संदेश से वंचित करना होगा जिसमें उनका उद्धार करने की सामर्थ है!

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. प्रेरितों के काम 26:26
2. कुलुस्सियों 1:5–6
3. प्राकाशित वाक्य 5:9
4. भजन संहिता 2:8
5. मरकूस 16:15; मत्ती 28:18–20
6. हबक्कूक 2:4; रोमियों 1:17 7. गलातियों 2:16
8. रोमियों 3:10–12
9. यशायाह 64:6
10. Augustus M. Toplady, “Rock of Ages,” 1775.
11. Joseph Hart, “I Will Arise and Go to Jesus,” 1759.
12. भजन संहिता 115:1; 1 कुरिन्थियों 1:31; रोमियों 3:27
13. याकूब 2:19
14. रोमियों 4:21
15. याकूब 2:18
16. मत्ती 3:8; 7:16, 21
17. 2 कुरिन्थियों 13:5
18. तितुस1:16
19. 2 पतरस 1:5–10
20. यूहन्ना 3:18, 36
21. रोमियों 1:18
22. गिनती 33:55
23. 1 राजा 18:17; प्रेरितों के काम 17:6
24. 2 कुरिन्थियों 2:15–16
25. रोमियों 9:4–5
26. इफिसियों 4:17–19
27. इफिसियों 2:13–16
28. इफिसियों 2:17
29. इब्रानियों 2:7

30. प्रकाशित वाक्य 5:9; 1 पतरस 1:18–19
31. रोमियों 9:15–16
32. व्यवस्थाविवरण 7:6–8
33. व्यवस्थाविवरण 7:8
34. रोमियों 3:9
35. प्रेरितों के काम 14:16; रोमियों 1:24, 26; इफिसियों 4:17–19
36. मत्ती 10:5
37. मत्ती 4:16
38. मत्ती 12:18, 21
39. प्रेरितों के काम 13:47
40. रोमियों 15:10
41. प्रेरितों के काम 15:14; 14:27; कुलुस्सियों 3:11
42. मरकुस 7:28

भाग – 3

मसीही विश्वास का शिखर

इसलिये कि सब ने पाप किया है और परमेश्वर की महिमा से रहित हैं, परन्तु उसके अनुग्रह से उस छुटकारे के द्वारा जो मसीह यीशु में है, सेंत–मेंत धर्मी ठहराए जाते हैं। उसे परमेश्वर ने उसके लहू के कारण एक ऐसा प्रायश्चित ठहराया, जो विश्वास करने से कार्यकारी होता है, कि जो पाप पहले किए गए और जिन पर परमेश्वर ने अपनी सहनशीलता के कारण ध्यान नहीं दिया। उनके विषय में वह अपनी धार्मिकता प्रगट करे। वरन् उसी समय उसकी धार्मिकता प्रगट हो कि जिससे वह आप ही धर्मी ठहरे, और जो यीशु पर विश्वास करे उसका भी धर्मी ठहरानेवाला हो। तो घमण्ड करना कहाँ रहा ?उसकी तो जगह ही नहीं। कौन–सी व्यवस्था के कारण से ?क्या कर्मों की व्यवस्था से ?नहीं, वरन् विश्वास की व्यवस्था के कारण।

रोमियों 3:23–27

अध्याय – 10

पाप की विस्तृत समिक्षा

इसलिये कि सब ने पाप किया है
– रोमियों 3:23

सुसमाचार का केन्द्र मसीह की मृत्यु है और मसीह पापों के लिये मरा। इस कारण सुसमाचार की उद्घोषणा बाइबल के अनुसार पाप की समिक्षा (उपचार) के बिना नहीं हो सकती। इसमें पाप के जघन्य स्वरूप को समझाना और मनुष्यों को पापियों के रूप में उजागर करना भी शामिल है, यद्यपि पाप का विषय अधिक लोकप्रिय नहीं है, यहाँ तक कि सुसमाचारकीय वृतों में भी, पवित्रशास्त्र पर ईमानदारी पूर्वक कोई भी विचार करने पर समकालीन संस्कृति के सन्दर्भ में यह प्रदर्शित होता है कि पाप की विस्तृत समीक्षा करने की आज भी आवश्यकता है।

पाप के सन्दर्भ में साफ–साफ बातें करना आवश्यक है क्योंकि हम ऐसी पीढ़ी में रहते है जो पाप में जन्मी और पली–बढ़ी है।[1] हम वे लोग है जो अधर्म को पानी के समान पीते है और पाप में पतन की अपनी दशा को नहीं समझते जिस प्रकार मछली नहीं जानती कि वह गीली है।[2] इसी कारणवश हमें पाप और मनुष्य के पापमय स्वभाव के बारे में बाइबल के विचारों को पुनः खोजने के लिये प्रयत्न करने चाहिये। परमेश्वर एवं सुसमाचार की हमारी समझ इसी पर निर्भर करती है।

यीशु मसीह के सुसमाचार के भण्डारी होने के नाते हम मनुष्यों का भला नहीं कर पाएँगे यदि पाप को कमतर बताते हैं, मसले के आसपास बाते करते या उसकी बिल्कुल अनदेखी करते है। मनुष्य की बस एक ही समस्या है : वे उनके पापों के कारण परमेश्वर के क्रोध के आधीन है।[3] इस बात से इन्कार करने का अर्थ है मसीहत की सबसे मूलभूत धर्मशिक्षाओं में से एक का इन्कार करना। मनुष्यों से यह कहना कि वे पापी है उनसे प्रेम न करना नहीं है, परन्तु न कहना सबसे बुरे स्वरूप में अनैतिकता है! वास्तव में, परमेश्वर कहते है कि उनका लोहू हमारे सिर होगा यदि हम उन्हें पाप और उनके आने वाले न्याय के बारे में नहीं बताते।[4] पाप के मसले पर चर्चा किये बिना सुसमाचार–प्रचार करने का अर्थ है किसी के दुखों का सतही उपचार करना और यह कहना – ''शांति–शांति'' जबकि वहाँ शांति नहीं है।[5]

पवित्रशास्त्र में रोमियों की पुस्तक पाप के विषय पर सबसे अधिक निकटतम सुव्यवस्थित धर्मविज्ञान है। इस पत्र में प्रेरित पौलुस ने रोम की कलीसिया के सम्मुख अपने धर्मविज्ञान को प्रस्तुत किया है। वह चाहता था कि उन्हें उसकी अगली मुलाकात के लिये तैयार करे और उसे आशा थी कि वे उसके साथ उसके स्पेन के मिशनरी अभियान में शामिल होंगे।[6] यह ध्यान देना अति–महत्वपूर्ण है कि इस पत्री के प्रथम तीन अध्याय एक संक्षिप्त प्रस्तावना को छोड़ हमारटियोलॉजी अर्थात् पाप की धर्मशिक्षा के लिये समर्पित है।[7] तीन अध्यायों में प्रेरित अपनी सम्पूर्ण बुद्धि के साथ पवित्र आत्मा की प्रेरणा के आधीन एक बड़े लक्ष्य (उद्देश्य) की प्राप्ति के लिये परिश्रम करते हैं कि मनुष्य की पापमय दशा और समस्त संसार का दण्ड योग्य ठहरना प्रमाणित करे!

मसीहियों के लिये इस बात पर जोर देना अति लोकप्रिय है कि परमेश्वर ने उन्हें भर्त्सना और मृत्यु की नहीं परन्तु धार्मिकता, मेलमिलाप और जीवन की सेवकाई दी है।[8] यह पूर्णतः सत्य है, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि हम पाप की विस्तृत व्याख्या न करे, या मनुष्यों को उनके पाप के विषय पवित्र आत्मा द्वारा निरूत्तर करने के सन्दर्भ में पवित्रशास्त्र का उपयोग न करे। यह भी सही है कि अब 'जो मसीह में है' उन पर दण्ड की आज्ञा नहीं है, परन्तु मसीह से अलग होकर और कुछ नहीं बल्की केवल दण्ड की आज्ञा ही है।[9]

पवित्रशास्त्र बताता है कि व्यवस्था उद्धार के लिए माध्यम के रूप में नहीं दी गयी थी, परन्तु वह बुरे से बुरे पाप (ताकि आज्ञाओं के कारण पाप अत्याधिक पापमय बन जाए) और मनुष्य की पापमय अवस्था (ताकि समस्त संसार परमेश्वर के समक्ष दोषी ठहराया जाए) दोनों को प्रगट करने दी गयी थी।[10] यद्यपि हम वर्तमान युग में ऐसे उद्देश्य के लिये व्यवस्था को बिरले ही काम में लाते हैं, पर नये नियम में कोई प्रमाण नहीं मिलता कि व्यवस्था की सेवकाई हमारे सुसमाचार प्रचार के अतिआवश्यक तत्व के रूप में जारी न रखी जाये। पुराने समय के प्रचारकों ने इसे बंजर भूमि की खुदाई, पत्थर निकालने और भूमि तैयार करने की संज्ञा दी है।[11] उन्होंने इस आवश्यकता को समझा कि वे मनुष्यों के सामने परमेश्वर की व्यवस्था के आईने को पकड़कर रखें ताकि वे अपनी दुर्दशा देख सके और दया के लिये पुकार सके। निश्चय ही यह कार्य अहंकार और हठीलेपन की भावना के साथ नहीं किया जाना चाहिये, और अवश्य है कि हम मनुष्यों से कठोरता न करे। परमेश्वर ने हमें चोट देने वाले और आक्रामक व्यक्ति बनने नहीं बुलाया है, भले ही पूर्ण विनम्रता के साथ हम जो सत्य प्रचार करते हैं वह बहुतों के लिये बहुत बड़ी चोट या ठोकर का कारण बन जाये।

प्रेरित पौलुस की सेवकाई में दोषी ठहराना लक्ष्य नहीं था, परन्तु उसने वास्तविक अर्थों में दोषी ठहराए गए लोगों के लिये इस आशा से परिश्रम किया कि वे स्वयं की अतिशय नैतिक दुर्दशा को पहचान ले और पश्चाताप एवं विश्वास के साथ मसीह की ओर फिरे। रोमियों की पुस्तक में पौलुस ने सबसे पहले समस्त संसार की नैतिक भ्रष्टता, परमेश्वर के प्रति उनका विद्रोह या आक्रामकता, और वे किस तरह सत्य को जानकर भी उसकी आधीनता से पूरी तरह इन्कार करते है इन बातों को साबित करने लिखा है।[12] तब वे यहूदियों पर ध्यान आकर्षित करते हैं और प्रमाणित करते हैं कि यद्यपि उन्हें

अतुल्य रूप से विशेष प्रकाशन के दान की आशीष मिली थी, वे भी अन्य जातियों के समान ही परमेश्वर के समक्ष दोषी है।[13] अन्त में वे अपने तर्कों का समापन करते हुये मनुष्यों पर आरोप लगाते हैं, वे आरोप पवित्रशास्त्र में मनुष्यों पर लगाए गए आरोपों में सबसे अधिक सीधे और आक्रामक हैं।[14] उनका उद्‌देश्य क्या है ?वे अपने अंतिम तर्कों में कहते है : ''इसलिये कि हर एक मुँह बन्द किया जाये और सारा संसार परमेश्वर के दण्ड के योग्य ठहरे।''[15]

पौलुस के पूर्ववर्ती यिर्मयाह के समान पौलुस केवल 'बनाने और रोंपने के लिये ही नहीं परन्तु उखाड़ने, गिराने, नष्ट करने और काँट डालने के लिये भी बुलाया गया था।[16] उसके अपने शब्दों में वह कहते है – ''इसलिये हम कल्पनाओं को और हर एक ऊँची बात का, जो परमेश्वर की पहिचान के विरोध में उठती है, खण्डन करते है।''[17] पवित्र आत्मा की सेवकाई और पवित्रशास्त्र के माध्यम से पौलुस अन्यजातियों के नैतिकतावादियों एवं धार्मिक यहूदियों और वे सब जो इन दो श्रेणियों के बीच आते है, उन सबकी आशा का अन्त करने का प्रयास करता रहा। उसने लोगों का मुँह बन्द करने के लिये लिखा और प्रचार भी किया ताकि वे फिर कभी स्व–धार्मिकता में घमन्ड न करे और पाप के लिये बहाने न बना सके। उसने उनकी सभी आशाओं को नष्ट किया ताकि वे मसीह की ओर फिर सके।

क्या प्रेरित पौलुस मानवों के विरूद्ध क्रोध और कड़वाहट से भरा व्यक्ति था जो कुलहाड़ा लेकर उनको नष्ट करने तैयार था ?नहीं। वह मनुष्यों से इस सीमा तक प्रेम करता था कि उसने अपने जीवन को अन्यजातियों के लिये अर्ध्य के समान उण्डेल दिया, उसने यह भी चाहा कि वह अपने निज लोगों (यहूदियों) के लिये शापित हो जाता या मसीह से अलग कर दिया जाता।[18] पौलुस ने पाप के विरूद्ध इसलिय भी प्रचार किया, जिस प्रकार एक चिकित्सक अपने रोगी के रोग की पहिचान करने और उसे बुरी से बुरी खबर सुनाने भी तैयार रहता है। यह सुनने वालों के उद्धार के लिये प्रेम का परिश्रम है। चिकित्सक या प्रचारक की ओर से अन्य कोई प्रत्युत्तर प्रेम और नैतिकता के बिना होगा।

इस समय स्वयं से यह प्रश्न करना उचित होगा कि क्या हमारे सुसमाचार–प्रचार का भी यही उद्‌देश्य है। क्या हम भी इतना अधिक प्रेम करते हैं कि सत्य की शिक्षा दे, पाप उजागर करे और अपने सुनने वालों का सामना करे ? क्या हम मनुष्यों को इस आशा के साथ कि पाप के बोझ तले उनके ह्रदय टूटेंगे और वे केवल मसीह की ओर दृष्टि करेंगे, सत्य बताने या प्रचार करने की बाइबल सम्मत तरस रखते हैं ?क्या हम गलत समझें जाने और बुरा बताया जाने का जोखिम उठाने तैयार है कि मनुष्यों को सत्य बतायें ताकि उनका उद्धार हो सके ?ऐसा लगता है कि सुसमाचारकीय लोगों में भी यह धारणा बलवती होती जा रही है, यहाँ तक कि सुसमाचार प्रचारकीय लोगों में भी समकालीन पश्चिमी देशों के मनुष्यों में पहले ही इतनी मनोवैज्ञानिक टूट–फूट और दोष भावना का बोझ है कि हम उससे और कुछ न कहें, कहीं ऐसा न हो कि वह धराशायी हो जाये। ऐसी धारणा यह समझने में असफल होती है कि मनोवैज्ञानिक टूट–फूट और बाइबल सम्मत पश्चाताप जो जीवन की ओर से

चलता है, उन दोनों में बहुत भारी अन्तर है। आधुनिक मनुष्य एक निर्बल चरित्र बनकर रह गया है क्योंकि वह स्वार्थ में लिप्त है और परमेश्वर के विरूद्ध विद्रोह में जीवन जी रहा है। वह दोष के बोझ से दबा जा रहा है, क्योंकि वह दोषी है। उसे उसका पाप उजागर करने और पश्चाताप की दशा में पहुँचाने के लिये परमेश्वर के वचन की आवश्यकता है, केवल तब ही बाइबल सम्मत टूटापन आयेगा जो उन्हें जीवन की ओर लेकर जाएगा।

परमेश्वर का इस्राएल के साथ व्यवहार इस सत्य का एक अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत करता है। यशायाह नबी के द्वारा परमेश्वर इस्राएल की दशा का वर्णन करता है : ''तुम बलवा करके क्यों अधिक मार खाना चाहते हो ?तुम्हारा सिर घावों से भर गया, और तुम्हारा हृदय दुख से भरा है। पाँव से सिर तक कहीं भी कुछ आरोग्यता नहीं केवल चोट और कोड़ें की मार के चिन्ह और सड़े हुये घाव हैं जो न दबाए गए, न बांधे गये, न तेल लगाकर नरमाए गए है।''[19] इस्राएल देश चोटों से भरा और निर्बल था जिसकी आज तक कोई कल्पना नहीं कर सकता, फिर भी परमेश्वर ने उनके भले के लिये उनके विद्रोह या बलवे की ओर ध्यान दिलाया और उन्हें पश्चाताप करने की बुलाहट दी। परमेश्वर ने उनके विरूद्ध बहुत से कठोर शब्द कहें पर वे सब उनके पाप को उजागर करने और उनसे उन्हें फेर लाने के लिये आवश्यक थे। ''हाय, यह जाति पाप से कैसी भरी है! यह समाज अधर्म से कैसा लदा हुआ है! इस वंश के लोग कैसे कुकर्मी हैं ये बाल बच्चे कैसे बिगड़े हुये है! उन्होंने यहोवा को छोड़ दिया, उन्होंने इस्राएल के पवित्र को तुच्छ जाना है! वे पराए बनकर दूर हो गये है।''[20] साथ ही, ''आओ हम आपस में वाद–विवाद करे, यहोवा कहता है... तुम्हारे पाप चाहे लाल रंग के हों तौभी वे हिम के समान उजले हो जाएंगे; और चाहे अर्गवानी रंग के हों, तौभी ऊन के समान श्वेत हो जाएंगे। यदि तुम आज्ञाकारी होकर मेरी मानों, तो इस देश के उत्तम–उत्तम पदार्थ खाओगे।''[21]

बीमारी की पहिचान करना और उसकी गम्भीरता को समझाना, उपचार की दिशा में हमेशा ही पहला कदम है। एक मनुष्य जिसे उसे हुये कैंसर की जानकारी नहीं है वह दवाईयों की सहायता नहीं लेगा, एक मनुष्य जलते मकान से निकलकर भागेगा नहीं यदि उसे आग लगने का पता न चले। उसी प्रकार एक मनुष्य जब तक कि वह यह नहीं जानता कि वह पूरी तरह से खोया हुआ है वह उद्धार की खोज नहीं करेगा और जब तक कि वह यह न जाने कि उद्धार पाने का कोई दूसरा उपाय (मार्ग) नहीं है, वह यीशु मसीह के पास दौड़कर नहीं जायेगा। इसके पहले कि वे उन्हें मानें, अवश्य है कि मनुष्यों को उनके पाप बताए जाए; उन्हें खतरे के प्रति सावधान करना अवश्य है ताकि वे भागकर बच सके। उन्हें यह बात समझाना अवश्य है कि उद्धार केवल मसीह में ही मिलेगा, इसके पहले कि वे अपनी समस्त स्व–धार्मिकता की आशाओं को त्यागकर मसीह के पास दौड़े चले आये।

उपर चर्चित सत्यों के प्रकाश में, यह उपहासजनक है कि सुसमाचारकीय समुदाय में बहुत से लोग पाप के बारे में विस्तृत समीक्षा करने का विचार भी नहीं रखते। लगता है कि ऐसे प्रचार को नकारात्मक एवं विनाशकारी बताकर उसे रोकने का जानबूझकर प्रयास किया जा रहा है, यद्यपि यह

पवित्र आत्मा की प्राथमिक सेवकाईयों में से एक है : "वह आकर संसार को पाप और धार्मिकता और न्याय के विषय में निरूत्तर करेगा। पाप के विषय में इसलिये कि वे मुझ पर विश्वास नहीं करते, धार्मिकता के विषय में इसलिये कि मैं पिता के पास जाता हूँ और तुम मुझे फिर न देखोगे, न्याय के विषय में इसलिए कि संसार का सरदार दोषी ठहराया गया है।"[22]

प्रभु यीशु मसीह के अनुसार, परमेश्वर ने पवित्र आत्मा को संसार में मनुष्यों को पाप, धार्मिकता और न्याय के विषय निरूत्तर करने भेजा। पाप को प्रकाश में लाना और पापी पर पश्चाताप करने दबाव बनाना पवित्र आत्मा की प्राथमिक सेवकाईयों में से एक है। क्या सुसमाचार के सेवक के रूप में हम सबका भी यही लक्ष्य नहीं होना चाहिये ?क्या हमारे प्रचार में यह बात दिखाई नहीं देनी चाहिये ?क्या पवित्र आत्मा की सामर्थ में होकर सुसमाचार प्रचार करना सम्भव है जबकि पवित्र आत्मा की इस मूल सेवकाई में हम उसके साथ काम करने से इन्कार करते है ?यद्यपि पवित्र आत्मा मनुष्य के उपर निर्भर नहीं है, परमेश्वर ने यह ठहराया (नियुक्त किया) है कि मनुष्य प्रचार के द्वारा पाप के प्रति निरूत्तर होने, पश्चाताप करने और उद्धार करने वाले विश्वास को प्राप्त करने के स्थान में आये।[23] परन्तु पवित्र आत्मा कैसे हमारे प्रचार का उपयोग कर सकता है यदि हम पाप को उजागर करने और मनुष्यों को पश्चाताप करने की बुलाहट देने तैयार नहीं है ?पवित्रशास्त्र की हमारे लिए शिक्षा है कि परमेश्वर का वचन आत्मा की तलवार है, परन्तु यदि परमेश्वर का दास मनुष्यों को पाप के प्रति निरूत्तर करने संकोच के साथ इस तलवार का उपयोग करे तो क्या यह बात पवित्र आत्मा की सेवकाई और व्यक्तित्व दोनों को शोकित न करेगी ?[24] पापियों के सन्दर्भ में हमें आत्मा के उदाहरण को अमल में लाने से डरना नहीं चाहिये। यदि वह मनुष्यों को पाप के विषय में निरूत्तर करने को उचित समझते हैं, हमें उनके साथ मिलकर वही काम करना चाहिये। वे प्रचारक और कलीसियायें जो समझती है कि उनके पास 'बेहतर' मार्ग है, उन्हें आशा धरने का कोई आधार नहीं है कि मनुष्यों को मसीह में लाने परमेश्वर का आत्मा उनके बीच में कार्य कर रहा है।

इसके पहले कि हम इस अध्याय का समापन करे, एक अंतिम चर्चा करना महत्वपूर्ण है। पाप की विस्तृत समीक्षा करने का सबसे बड़ा कारण है कि उससे सुसमाचार की प्रतिष्ठा बढ़ती है। आप दोपहर के समय तारों की सुन्दरता नहीं देख सकते क्योंकि सूर्य का प्रकाश उन्हें छुपा देता है। किन्तु सूर्यास्त होने के बाद जब आकाश गहिरा काला होता है आप सितारों को उनकी पूरी भव्यता के साथ देख सकते है। यही यीशु मसीह के सुसमाचार के लिये भी सत्य है। हम हमारे पापों की पृष्ठभूमि में ही उसके वास्तविक सौन्दर्य को देख सकते है। मनुष्य जितना अधिक अंधकारमय होगा, सुसमाचार उतना अधिक चमकदार दिखाई देगा।

मनुष्य कभी भी मसीह के सौंन्दर्य पर उतना अधिक ध्यान नहीं दे पाते या उसके महत्व पर विचार नहीं कर पाते, जब तक कि वे स्वयं के पाप की जघन्य प्रवृत्ति और स्वयं की पूर्ण निराश्रित दशा, और स्वयं में किसी गुण का न होना, समझ नहीं जाते। विभिन्न युगों में मसीहियों की अनगिनत साक्षियाँ है जिन्होंने मसीह पर कभी ध्यान नहीं दिया, जब तक कि एक दिन पवित्र आत्मा ने

आकर उन्हें पाप, धार्मिकता, और न्याय के विषय में निरूत्तर नहीं कर दिया। जब वे स्वयं के पाप के निरन्तर अंधकार में डूब गये तब मसीह भोर के तारे के समान प्रगट हुआ और उनके लिये बेशकीमती जान पड़ा।[25]

यह उल्लेखनीय है कि जब यीशु मसीह के सच्चे विश्वासियों ने मनुष्य के चारित्रिक पतन या विकृति पर एक उपदेश सुना वे आनन्द से भरकर चर्च से गये और मसीह के पीछे चलने के लिये एक नये जोश, धुन से भर गये। इसका कारण यह नहीं था कि वे पाप को कमतर मानते थे या अपनी पहले वाली पापमय दशा में किसी प्रकार का आनन्द या संतुष्टि पाते थे, बल्की सत्य के ज्ञान ने उन्हें अवर्णननीय आनन्द से भर दिया, क्योंकि अधिक अंधकार के कारण उन्हें मसीह की अधिक महिमा दिखी। हम मनुष्यों को परमेश्वर के बड़े दर्शन से वंचित करेंगे यदि उन्हें उनके विषय में तुच्छता या कमतरी का अहसास नहीं कराएंगे।

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. भजन संहिता 51:5; 58:3
2. अय्यूब 15:16
3. यूहन्ना 3:36
4. यहेजकेल 33:8
5. यिर्मयाह 6:14
6. रोमियों 15:23–24
7. *Hamartiology* की उत्पत्ति ग्रीक शब्द *hamartia* जिसका अर्थ 'पाप' है और *logos* जिसका अर्थ 'वचन', शब्द या तर्कपूर्ण अभिव्यक्ति है, इन दो शब्दों से है। शाब्दिक रूप में Hamartiology पाप की तर्कपूर्ण अभिव्यक्ति है।
8. यह कथन 2 कुरिन्थ 3:7–9 और 2 कुरिन्थ 5:17–18 पर आधारित है।
9. रोमियों 8:1; 5:18
10. रोमियों 7:13; 3:19
11. यिर्मयाह 4:3; होशे 10:12
12. रोमियों 1:18–32
13. रोमियों 2:1–29
14. रोमियों 3:1–18
15. रोमियों 3:19
16. यिर्मयाह 1:10
17. 2 कुरिन्थियों 10:5
18. फिलिप्पियों 2:17; रोमियों 9:3
19. यशायाह 1:5–6
20. यशायाह 1:4
21. यशायाह 1:18–19

22. यूहन्ना 16:8–11
23. 1 कुरिन्थियों 1:21
24. इफिसियों 6:17
25. 2 पतरस 1:19; प्रकाशित वाक्य 22:16

अध्याय – 11

परमेश्वर की विस्तृत समीक्षा

इसलिये कि सब ने पाप किया है और परमेश्वर की महिमा से रहित हैं,

रोमियों 3:23

मैं ने केवल तेरे ही विरूद्ध पाप किया, और जो तेरी दृष्टी में बूरा है, वही किया है; ताकि तू बोलने में धर्मी और न्याय करने में निष्कलंक ठहरे।

भजनसंहिता 51:4

उपर वर्णित पदों में मनुष्यों के विरूद्ध लागू होने वाले ईश्वरीय आदेशों का उन संस्कृतियों में कोई अर्थ नहीं है जो पाप करके हसते हैं और उसे सद्‌गुण मानकर गले लगाते है। हमारी संस्कृति बुरे को भला और भले को बुरा कहती है; हम ज्योति के बदले अंधकार और अंधकार के बदले ज्योति को स्थान देते हैं![1] इस पर नियंत्रण पाने के लिये अवश्य है कि हम इस रीति से प्रचार करे जो मनुष्यों को उनके पाप की गम्भीरता और भयावहता को प्रदर्शित करे। ऐसा करने का सबसे उत्तम तरीका लोगों को न केवल मनुष्यों के बारे में बाइबल का दृष्टीकोण बताना है पर साथ ही परमेश्वर के विषय में बाइबल का दृष्टीकोण बताना भी है। जो पाप वे कर रहे है उसकी जघन्य प्रवृत्ति को समझने के लिये अवश्य है कि मनुष्य पवित्रशास्त्र द्वारा उन्नत उस परम पवित्र के दृष्टीकोण को समझें जिसके विरूद्ध वे पाप कर रहे है। यदि सबसे अधिक दुस्साहसी और सबसे अधिक कठोर अधर्मीजन परमेश्वर कौन है, यह थोड़ा भी कुछ समझ ले, तो वह तुरन्त उसके पाप के बोझ तले धराशायी हो जाएगा।

यदि पाप हमारे समकालीन सन्दर्भ में कही उल्लेख पाता है, तो वह मनुष्य के प्रति पाप है, समाज के प्रति पाप है, यहाँ तक कि प्रकृति के विरूद्ध पाप है, परन्तु संस्कृति कभी परमेश्वर के विरूद्ध पाप पर विचार करे यह दुर्लभ है। इसके विपरीत, पवित्रशास्त्र सभी पापों को अन्तिम रूप में और सर्वाधिक महत्व देते हुये उन्हें परमेश्वर के विरूद्ध पाप मानता है। राजा दाऊद ने अपने लोगों के भरोसे के साथ विश्वासघात किया, व्याभिचार किया, और यहाँ तक कि एक निर्दोष मनुष्य की हत्या का षड़यंत्र भी रचा, परन्तु फिर भी भविष्यद्वक्ता नातान द्वारा फटकारे जाने पर जब वह पश्चाताप करने के स्थान में लाया गया, वह परमेश्वर के समक्ष अंगीकार करते हुये पुकार उठा : "मैंने केवल तेरे

ही विरूद्ध पाप किया है, और जो तेरी दृष्टि में बुरा है वही किया है।''[2]

इस पद से हम दो महत्वपूर्ण सत्य सीखते हैं, प्रथम, भले ही पाप साथी मनुष्यों के प्रति हो या सृष्टि के विरूद्ध हो, सभी पाप सबसे पहले परमेश्वर के विरूद्ध ही होते हैं। दूसरी बात, पाप उसके द्वारा उत्पन्न विनाश के कारण ही जघन्य नहीं है, जो वह साथी मनुष्यों या समग्र सृष्टि (या, उसके एकभाग) पर लाता है परन्तु प्राथमिक रूप में, एवं विशेषतौर पर वह एक असीम महिमामय परमेश्वर के विरूद्ध किया गया अपराध है, जो उसकी सृष्टि के द्वारा सर्वाधिक सिद्ध प्रेम, भक्ति–समर्पण और आज्ञाकारिता के योग्य है। इस कारण, मनुष्य जिस परमेश्वर के विरूद्ध पाप करता है उसकी महिमा और सर्वोच्चता पर जितना अधिक विचार करता है, उतना ही अधिक पाप की पाशविक गुण को समझेगा। परमेश्वर का सच्चा ज्ञान मनुष्य को इस दिशा में समझ देता है कि परमेश्वर की व्यवस्था का लघुतम उलंघन भी वर्णन से बाहर अपराध है किन्तु परमेश्वर के प्रति अज्ञानता पाप को कमतर परिणामों की छोटी सी बात बना देती है।

मसीही विश्वास के लिये यह बुनियादी आवश्यकता है कि यदि वास्तविकता का सही ज्ञान या समझ पाना हो तो परमेश्वर का सच्चा ज्ञान आवश्यक है। परमेश्वर के प्रति गलत दृष्टीकोण अन्त में सभी बातों के लिये एक गलत समझ बन जाती है। यह बात विशेष रूप में पाप के लिये सत्य है। भजन 50 में परमेश्वर इस्राएली लोगों पर हँसते हैं क्योंकि उन्होंने परमेश्वर के चरित्र के सबसे अधिक महत्वपूर्ण सत्यों को भुला दिया या उनसे इनकार कर दिया और यह मानने लगे कि परमेश्वर भी उनके ही समान है – अर्थात् अधार्मिकता से उदासीन या अप्रभावित।[3] परमेश्वर के प्रति गलत समझ रखने के कारण पाप के प्रति भी उनकी समझ गलत थी। उन्होंने सभी नैतिक प्रतिबंधों को हटा दिया था और उनके चाल–चलन को बिना भय या लज्जा के विकृत कर लिया था। उनके विद्रोह ने उनको विनाश तक पहुँचाया। वे ज्ञान न होने के कारण नष्ट हो गये।[4] यही कारण है कि भविष्यद्वक्ता यिर्मयाह ने घोषणा की कि परमेश्वर का सच्चा ज्ञान रखना अन्य सभी बातों यथा लाभकारी बातों, सदगुणों या आशीषों से अधिक मूल्य रखता है : ''यहोवा यों कहता है : बुद्धिमान अपनी बुद्धि पर घमण्ड न करे, न वीर अपनी वीरता पर, न धनी अपने धन पर घमण्ड करे, परन्तु जो घमण्ड करे वह उसी बात पर घमण्ड करे कि वह मुझे जानता और समझता है।''[5]

यह कहना अतिशयोक्ति नहीं कि सड़कों पर और चर्च की दर्शकदीर्घा में परमेश्वर के गुणों के प्रति अज्ञानता बहुतायत से है। कुछ बातों में मनुष्यों के अभिमत बाइबल में परमेश्वर के विषय पर दिये अभिमतों के काफी नजदीक है, पर बहुत बड़ा बहुमत पाप और परमेश्वर का उसके प्रति व्यवहार के विषय पर अत्याधिक धोके में है। मनुष्य परमेश्वर के प्रेम, तरस और दया–करूणा के बारे में बड़ी–बड़ी बातें कह सकता है परन्तु उसकी पवित्रता, धार्मिकता और संप्रभुता के विषय पर संशयपूर्ण चुप्पी है। इन सबके कारण अधिकतर लोग परमेश्वर के बारे में संकीर्ण समझ रखते हैं और अपने पापों की वास्तविक प्रकृति के सन्दर्भ में दृष्टिहीन है।

सुसमाचार के प्रचार में, हमें परमेश्वर के सत्य ज्ञान को फैलाने के द्वारा पाप की पापमयता को उजागर करना चाहिये। हमें परमेश्वर के सभी गुणों, विशेषकर वे जो अधिक लोकप्रिय नहीं है और शारीरिक मनुष्यों के कम रूचिकर है, उनके विषय में पवित्रशास्त्र के सारे अभिप्राय का खुलासा करना चाहये, अर्थात् परमेश्वर की सर्वोच्चता, संप्रभुता, पवित्रता, धार्मिकता और प्रेम।

परमेश्वर की सर्वोच्चता

हमें इस विकृत युग का सामना करना चाहिये, जिसमें हम रहते है जिसमें मनुष्य ने स्वयं को सब बातों का मानक बना लिया है। गैर–धार्मिक मानववादी नीचे देखता हैं और स्वयं को उदविकास के क्रम में सर्वोच्च मानता है। वह उपर देखता है और कुछ नहीं पाता। इस प्रकार वह स्वभावतः स्वंय को राजा समझता हैं, स्वयं की नियति के निर्धारण–कर्त्ता, नियम बनाने वाला और इस ग्रह के प्रबंधकर्त्ता के रूप में मानता है। अब चूंकि उससे बढ़कर कोई और नहीं जिससे वह अपनी तुलना करे, वह भ्रम में जीता है, उसे पता नहीं कि अपनी सर्वोच्च दशा में वह एक सांस मात्र है, व्यर्थ है, घास का एक फूल जो हवा लगते मुरझा जाता है, पानी की भाप जो क्षण भर में लोप हो जाती है।[6]

धार्मिक मानववादी अपने गैर–धार्मिक प्रतिरूप से अधिक बेहतर नहीं है, यद्यपि वह सुसमाचार के असामान्य वस्त्र धारण किये है।[7] उसका स्वत्व के महत्व का संज्ञान चरमोत्कर्ष पर है और आत्मबोध एवं आत्मसंतुष्टि के वर्तमान युगीन मनोविज्ञान के प्रभावों से जुड़कर विनाशकारी बन चुका है। इससे भी बद्तर बात यह कि, इन त्रुटियों को उजागर करने के लिये आमंत्रित प्रचारक कलीसिया में इन बातों को प्रश्रय देते हैं और उनका समर्थन करते है। यद्यपि परमेश्वर के बारे में अधिकतर शिक्षा परम्परागत है उसकी महिमा अब मनुष्यों द्वारा महसूस की जाने वाली आवश्यकताओं के अनुरूप है और इस प्रकार, परमेश्वर मनुष्यों के लिये हैं जबकि इसका उलटा सत्य है। साथ ही परमेश्वर के उद्देश्य और उसकी सनातन भली इच्छा अब पूर्णरीति पर मनुष्यों के भले के साथ जोड़कर देखा समझा जाता है कि वे (परमेश्वर) हमारे बिना सन्तु ट या पूर्ण नहीं हो सकते। यद्यपि ये कथन बढ़ा–चढ़ाकर कहे गये कथन माने जा सकते हैं, ईमानदारी पूर्वक विचार करने पर यह स्पष्ट हो जायेगा कि सुसमाचारकीय समुदाय संसार को वास्तव में जो प्रदर्शित कर रहा है, वह वास्तव में वैसा नहीं है।

समकालीन मसीहत का यह मानववादी प्रचलन उस सुसमाचार पर नुकसानदेह प्रभाव डालता है जिसे हम संसार में प्रचार करते है। परमेश्वर के बारे में कमतर समीक्षा या समझ के कारण, जो हमारे प्रचार में प्रगट हुये बिना नहीं रह सकता, उसने सुनने वालों को स्वयं के प्रति उच्चविचार, परमेश्वर के भय से अप्रभावित रहने, उसके व्यक्तित्व या उसकी महिमा की बढ़ोत्तरी में अंतिम रूप में अपनी भलाई और संतुष्टि प्राप्त करना, जैसे लोक सम्मत किन्तु गलत विचारों में बढ़ते रहने की अनुमति दी है। हम हमारे विचारों और उद्घोषणाओं में इतने गिर चुके हैं कि हमारी

अति–परम्परावादी और आदरयुक्त सैद्धान्तिक प्रश्नावली (Catechism) के कथनों में इस सबसे बड़े और प्रथम प्रश्न के उत्तर के विषय में अधिकांश सुसमाचारीय समुदाय अज्ञात है – "मनुष्य का प्रमुख एवं उच्चतम लक्ष्य क्या है ? परमेश्वर को महिमा देना और सर्वदा उसमें पूर्ण आनन्द प्राप्त करना।"[8]

सब शोर–शराबे ओर गड़बड़ी के बीच क्या किया जा सकता है ?हमें जो करना है वह सरल तो है पर कठिन भी है। हमें चाहिये कि हम परमेश्वर के गुणों की घोषणा करे जैसा पवित्रशास्त्र उन्हें दर्शाता है – यथार्थ, अनगढ़, असम्पादित और हमारे युग की मानववादी दार्शनिकता की मिलावट के बिना। परमेश्वर को आवश्यकता नहीं कि हम उसके बचाव के लिये कुछ करे। यदि हम उसे वैसा ही प्रचार करे जैसा उसने स्वयं को पवित्रशास्त्र में दर्शाया है, तो वह अपना बचाव स्वयं कर लेगा![9] हमें स्वयं में सुधबुध खोए व्यक्तियों के बीच खड़ा होना चाहिये उनके विश्वासों को चुनौती देनी चाहिये और उनकी आँखों को सत्य की उद्घोषणा के द्वारा स्वर्ग की ओर उठानी चाहिये। हमें उन्हें बताना चाहिये कि प्रभु परमेश्वर ही एक मात्र परमेश्वर है, वे सनातन, अमरणहार और अदृश्य है, और "समस्त पृथ्वी के उपर परम प्रधान है।"[10] हमें उन्हें चेतावनी देनी चाहिये कि उसके सामने सब मिलाकर भी बाल्टी में एक बून्द के समान है, और वह उन्हें धूल के कण जैसा समझता है।[11] हमें उन्हें इस निष्कर्ष पर पहुँचाना चाहिये कि महानता, सामर्थ, महिमा और पराक्रम सब उसी का है, सब कुछ जो उपर स्वर्ग में है और नीचे पृथ्वी पर है सब उसी का है।[12] क्योंकि उसी की ओर से, उसी के द्वारा और उसी के लिए सबकुछ है।[13] हमें अत्याधिक स्पष्टता और यथार्थता के साथ प्रचार करना चाहिये कि यही वह परमेश्वर है जिसके विरूद्ध हमने पाप किया है और चूंकि वह अति महान है, हमारे पाप अति बुरे है।

परमेश्वर की संप्रभुता

निःसंदेह शारीरिक मनुष्य के लिये परमेश्वर की संप्रभुता उसका सबसे कम रूचिकर गुण है। यह बात आधुनिक पश्चिमी देशों में विशेष रूप में सत्य है, जहाँ व्यक्तिवाद, स्व–प्रशासन और प्रजातंत्र को पवित्र विचारधारा, विरासत का अधिकार और स्वंय–प्रमाणित सत्य माना जाता है। यद्यपि ये उल्लेखनीय विचारधारा है जिनके आधीन मनुष्य का मनुष्य पर प्रशासन परिभाषित और सीमित किया जाना चाहिये, पर हमें लगातार चौकसी रखनी चाहिये कि कहीं हम यह न मान लें कि परमेश्वर भी अपने प्रशासन के क्रियान्वयन में इतना सीमित है। पवित्रशास्त्र बिना खेद घोषित करता है कि प्रभु ने अपना सिंहासन स्वर्ग में स्थिर किया है और उसकी संप्रभुता सब पर राज्य करती है।[14] उसके प्रशासन की कोई सीमा नहीं है और न ही कोई प्राणी या गतिविधि उसके राजदण्ड (अधिकार) की सीमाओं से बाहर है। प्रत्येक जीवित प्राणी, प्रत्येक सृजित प्राणी और इतिहास की घटनाएँ उसी की है। सृष्टि के हर पहलू, हर भाग में वह जो कुछ चाहता है, वह वही करता है।[15] वह अपनी ईच्छा की सुमति के

अनुसार सबकुछ करता है और कोई उसको उससे फिरा नहीं सकता। वही मारता और वही जिलाता है।[17] वही भलाई लाता और वही विपत्ति भी लाता है।[18] और ऐसा कोई नहीं जो उसका हाथ रोके और पूछे कि 'तू ने यह क्या किया ?'[19] उसकी युक्ति सदाकाल बनी रहती है, और उसके हृदय की योजनाएँ पीढ़ी से पीढ़ी तक चलती है।[20] ऐसी कोई बुद्धि, कोई समझ, या युक्ति नहीं जो यहोवा के विरूद्ध ठहर सके।[21] उसकी प्रभुता सनातन की है, और उसके राज्य का कोई अन्त नहीं है।[22] इस स्थिति में कभी परिवर्तन नहीं होगा और उसका पद कभी कोई दूसरा नहीं लेगा। वह सदा–सर्वदा परमेश्वर होगा और हमें उसी के साथ कार्य करना होगा।

मनुष्यों को यह समझना चाहिये कि जब वे पाप करते हैं तब वे किसी छोटे–मोटे देवता या किसी छोटे प्रदेश के अधिकारी के विरूद्ध नहीं परन्तु सब ईश्वरों के राजा, स्वर्ग और पृथ्वी के प्रभु, धन्य और एकमात्र संप्रभु, राजाओं के राजा और प्रभुओं के प्रभु के विरूद्ध पाप करते है![23] उन्हें यह समझना चाहिये कि पाप करने का अर्थ है उसके विरूद्ध युद्ध की घोषणा, जिस प्रमप्रधान ने समस्त विश्व की सृष्टि वचन बोलकर की और जो समस्त विश्व पर स्वतंत्रतापूर्वक एवं बिना रोक–टोक राज्य करता है। उसने तारों को आज्ञा दी कि मध्यरात्रि में आकाश की घड़ी बने और उन्होंने अपने–अपने स्थान ग्रहण किये। उसने ग्रहों को आदेश दिया और वे अपनी खगोलीय कक्षा में स्थापित हो गये और उसके आदेश का पालन किया। उसने घाटियों को नीचा होने और पहाड़ों को ऊँचा उठने की आज्ञा दी और उन्होंने भयसहित आज्ञा मानी है। उसने रेत पर सीमा बांधी और समुद्र को आज्ञा दी कि उसे पार न करे, और समुद्र ने झुककर उसे सम्मान दिया। परन्तु फिर भी सृष्टि की बड़ी से बड़ी शक्तियों के अपरिवर्तनीय आज्ञापालन के बावजूद मनुष्य अपनी दुर्बल मुठि्ठयाँ परमेश्वर के मुख पर लहराता है। वह एक कीड़े के समान दयनीय है जो अपना सिर ग्रेनाइट पत्थरों के संसार से टकराता है और एक व्यक्ति के समान है जो मृत्युशैय्या पर कृत्रिम सांस के भरोसे हैं किन्तु उस यंत्र को चलाने वाले बिजली के तार को दीवार से खींचकर अलग करने की आत्मघाती चेष्ठा करता है।

सुसमाचार के प्रचारक होने के नाते अवश्य है कि हम परमेश्वर की संप्रभुता को अत्यधिक महत्व दे और मनुष्यों को यह प्रमाणित करे कि उनके पाप जघन्य अपराध है जो पाप में पतित हृदय की विक्षिप्तता और आत्मघात की प्रवृत्ति को प्रगट करते है। किन्तु यदि हम परमेश्वर की सम्पूर्णता को बताने से इन्कार करते और अपने श्रोताओं से ये कठोर सत्य नहीं कहते तब हम उनके विरूद्ध बड़ा अन्याय करते है और उन्हें अज्ञानता एवं मूर्तिपूजा के जीवन का दोषी बनाते है। पवित्रशास्त्र हमें बताता है कि परमेश्वर ने स्वयं को इस्राएल पर प्रगट किया ताकि वे उसका भय मानें।[24] बदले में, हमें उसके स्वंय के विषय में परमेश्वर के प्रकाशन का सम्पूर्ण अभिप्राय प्रचार करना चाहिये ताकि सभी जातियाँ उसका भय मानें और उद्धार पाये। वे उसे जितना अधिक जानेंगे, उतना अधिक वे अपने पाप की जघन्यता या भयावहता को समझेंगे और सम्भव है कि वे यीशु मसीह के सुसमाचार में उसका उपाय खोजें।

परमेश्वर की पवित्रता

पवित्रशास्त्र के दोनों नियम परमेश्वर का वर्णन पवित्र, पवित्र, पवित्र के रूप में करते हैं।[25] यह त्रिपदीय सूत्र अकसर trisagion (ट्रिसेजन) कहलाता है और इब्रानी भाषा में उत्कृष्टता का सर्वोच्च एवं सबसे बलवान स्वरूप (अभिव्यक्ति) है।[26] पवित्रशास्त्र के लेखक परमेश्वर के अन्य किसी गुण को इतने ऊँचे पर नहीं उठाते। पवित्रता केवल उसका बहुत से गुणों में से एक गुण ही नहीं है परन्तु यह एक सन्दर्भ भी है जिसमें उसके सभी अन्य गुण समझें और परिभाषित किये जाते है। इसी कारण सब बातों से बढ़कर, मनुष्यों को जानना चाहिये कि परमेश्वर पवित्र है! वे इस एक गुण के बारे में क्या समझते हैं, वह तय करता है कि वे परमेश्वर, स्वयं, पाप, उद्धार और सम्पूर्ण वास्तविकता के बारे में क्या समझते है। नीतिवचन का बुद्धिमान शिक्षा देता है कि परमपवित्र का ज्ञान रखना ही समझ है।[27] इस एकमात्र महत्वपूर्ण गुण के प्रति अज्ञानता का अर्थ है परमेश्वर के प्रति अज्ञान होना और उसके सभी ईश्वरीय गुणों एवं कार्यो को गलत रूप में समझने के लिये स्वयं को असुरक्षित करना। न केवल यह पर परमपवित्र के ज्ञान का अभाव मनुष्य को स्वयं के प्रति गलत या विकृत समझ की ओर ले जाता है। इस प्रकार, यदि मनुष्य कभी अपने पाप की अरूचिकर प्रवृत्ति को समझना चाहे तो अवश्य है कि वे सर्वप्रथम परमेश्वर के पवित्र स्वभाव की प्रवृत्ति को समझें!

शब्द पवित्र (Holy) इब्रानी में qadosh (क्वाडोश) है जिसका अर्थ है अलग किया हुआ, चिन्हांकित, अलग रखा गया या सामान्य उपयोग से दूर किया हुआ। परमेश्वर के सम्बन्ध में यह शब्द दो महत्वपूर्ण सत्य दर्शाता है। प्रथम, परमेश्वर की पवित्रता दर्शाती है कि वह असीम है।[28] सृष्टिकर्त्ता के रूप में वह अपनी समस्त सृष्टि से कही उपर है और उसने जो कुछ बनाया है और जिसे वह सम्भालता है उन सबसे वह पूर्णतः भिन्न है। यह भिन्नता या अलगाव, परमेश्वर और बाकी सब कुछ के बीच केवल परिमाणात्मक नहीं है (अर्थात, परमेश्वर बढ़कर है) परन्तु गुणवत्तात्मक, (अर्थात, परमेश्वर पूर्णतः भिन्न है) भी है। व्यक्तिगत भव्यता के बावजूद पृथ्वी पर और स्वर्ग में जो भी है वे केवल सृष्टि है। केवल परमेश्वर ही परमेश्वर है, अलग बढ़कर और अगम्य है।[29] परमेश्वर की उपस्थिति में खड़े रहने वाले सबसे अधिक भव्यतम् स्वर्गदूत भी परमेश्वर के जैसे नहीं है, जिस प्रकार, पृथ्वी पर रेंगने वाला छोटे से छोटा कीड़ा भी परमेश्वर के जैसे नहीं है। प्रभु परमेश्वर के समान कोई पवित्र नहीं है।[30] वह अतुलनीय है!

परमेश्वर की यही भिन्नता मनुष्यों को उसकी उपस्थिती में आदर तथा भय की मिश्रित भावना में खड़ा करती है। स्वर्ग और पृथ्वी पर सबसे अधिक भयानक और विस्मयकारी प्राणी भी हमारे ही समान परमेश्वर की सृष्टिमात्र है। भले ही हम कदकाठी में बौने लगे, वे बल में हमसे बढ़कर है, और अपनी बुद्धि और सौन्दर्य से हमें लज्जित करते हैं, फिर भी वे सृजित प्राणी मात्र है, और हमारे बीच जो अन्तर है वह केवल परिमाण का है। परन्तु परमेश्वर पवित्र, अद्वैत और अलग है – केवल बढ़कर ही नहीं है परन्तु समग्र और सम्पूर्ण रूप में भिन्न है। यही कारण है कि मूसा और इस्राएल के

लोगों ने यह गीत गाया था, "हे यहोवा, तेरे तुल्य कौन है, देवताओं में तेरे तुल्य कौन है ? पवित्रता की महिमा में कौन तेरे समान है ?"[31]

दूसरी बात, परमेश्वर की पवित्रता उसकी सृष्टि के नैतिक अधःपतन से कहीं श्रेष्ठ होने का भाव दर्शाती है। वह सभी अशुद्ध और पापमय बातों से अलग है। वह त्रुटिरहित अर्थात पाप करने में असमर्थ और शुद्ध है।[32] वह ज्योति है और उसमें कुछ भी अन्धकार नहीं है।[33] वह ज्योतियों का पिता है, जिसमें कोई परिवर्तन या अदल–बदल नहीं है।[34] वह बुरी बातों के द्वारा परखा नहीं जा सकता और न वह स्वयं बुरी बातों के द्वारा किसी की परीक्षा करता है।[35] उसकी आँखें इतनी अधिक शुद्ध है कि वह बुराई का अनुमोदन नहीं कर सकता न उसे देख सकता है कि उसके पक्ष में कार्य करे।[36] सभी पाप उसके सम्मुख घृणित है – वे अरूचिकर है जो घृणा और नफरत उत्पन्न करते है। प्रत्येक जो अन्यायपूर्वक कार्य करता है, वह उसके सिंहासन के समक्ष घृणित ठहरता है, और वह सभी अधर्म करने वालों के विमुख रहता है।[37] यही कारण है कि पवित्रशास्त्र के सबसे अधिकतम पवित्र और भक्तिमय व्यक्ति जिन्हें परमेश्वर के व्यक्तित्व के निकट आने का सौभाग्य मिला, वे उसके सामने मृत समान गिरे और पुकार उठे, "हाय!, हाय!, मैं नष्ट हुआ, क्योंकि मैं अशुद्ध होंठो वाला मनुष्य हूँ; और अशुद्ध होंठ वाले मनुष्यों के बीच रहता हूँ, क्योंकि मैंने यहोवा महाराजाधिराज को अपनी आँखों से देखा है।"[38]

मनुष्यों के उद्धार में तर्कसंगत उन्नतिक्रम जैसा कुछ है। उन्हें पता होना चाहिये कि वे खोए हुए है, इसके पहले कि वे उद्धार प्राप्त करे। और वास्तव में स्वयं को खोया हुआ समझने के लिये उन्हें यह जानना अवश्य है कि वे पापी है। और अंत में, अपने पाप की जघन्य प्रवृत्ति को पूरी तरह समझने से पूर्व उन्हें यह समझना अवश्य है कि परमेश्वर पवित्र है! इन सत्यों के प्रकाश में हमें यह बात स्पष्ट रूप में समझ लेनी चाहिये कि जब हम उनसे उनके पाप का सत्य नहीं बताते, तब हम उनकी भलाई नहीं करते, और जब हम परमपवित्र के बारे में उन्हें नहीं बतातें, तब हम उनके पक्ष में कुछ लाभदायी नहीं करते। प्रभु यीशु मसीह कृत–संकल्प थे कि परमेश्वर का सुसमाचार और राज्य उस सीमा तक पहुँचे कि मनुष्य परमेश्वर के नाम को 'महिमा' दे, या उसे पवित्र मानें।[39] इस कारण यदि परमेश्वर की पवित्रता की विस्तृत व्याख्या न की जाये, सुसमाचार का प्रचार करना किसी भी तरह विश्वासयोग्य नहीं माना जा सकता।

परमेश्वर की धार्मिकता

शब्द 'धार्मिकता', इब्रानी के शब्द tsaddik (सेडिक) से अनुवादित है और यह ग्रीक भाषा के शब्द dikaios (डिकायस) के समकक्ष है। दोनों ही शब्द परमेश्वर के सही होने, धर्ममय होने या उसकी नैतिक उत्कृष्टता को दर्शाते है। पवित्रशास्त्र के अनुसार परमेश्वर की धार्मिकता केवल वह नहीं जो वह बनना या करना चाहे, पर उसकी प्रवृत्ति का महत्वपूर्ण गुण है। वह धर्मी परमेश्वर है, उसकी

धार्मिकता अनन्तकालीन है और वह बदलता नहीं।[40] वह विश्वासयोग्य परमेश्वर है और जो सही है उसमें परिवर्तन नहीं करता।[41] वह सदैव उस प्रकार कार्य करता है जो उसके व्यक्तित्व या जो वह है, उसके अनुरूप है। इस प्रकार, उसके सभी काम सिद्ध है और उसके मार्ग न्याय के है।[42]

परमेश्वर का उसकी सृष्टि के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार विशेष रूप से उसके धार्मिकता के चरित्र को दर्शाता है। उसके वचन में हमें यह निश्चय मिलता है कि धार्मिकता और न्याय उसके सिंहासन के आधार है और वह बिना मनमानी, बिना पक्षपात या बिना अन्याय के सब पर शासन करता है।[43] धर्मी परमेश्वर होने के नाते वह अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व के साथ धार्मिकता से प्रेम और अधर्म से सिद्धरूप में घृणा करता है।[44] इस कारण वह मनुष्यों और स्वर्गदूतों के चरित्र एवं कामों के प्रति नैतिक रूप में तटस्थ और उदासीन नहीं रह सकता, परन्तु वह बिना समझौता किये, न्यायपूर्वक और बिना मिलावट समान रूप में उनका न्याय करेगा। जिस प्रकार, भजनकार ने घोषणा की है, ''परन्तु यहोवा सदैव सिंहासन पर विराजमान है, उसने अपना सिंहासन न्याय के लिये सिद्ध किया है, और वह आप ही जगत का न्याय धर्म से करेगा, वह देश देश के लोगों का मुकद्दमा खराई से निपटाएगा।''[45]

इन सत्यों के आधार पर, हम निश्चय जानते है कि जिस दिन परमेश्वर सभी मनुष्यों के कामों का न्याय करेगा उस दिन दोषी ठहराये गये लोग भी अपना सिर झुकाएंगे और कहेंगे कि परमेश्वर धर्मी है! क्योंकि सेनाओं का यहोवा परमेश्वर न्याय में ऊँचा उठेगा और धार्मिकता में अपने आप को पवित्र ठहरायेगा।[46] उसके विरूद्ध कभी भी कोई आरोप नहीं लगेगा और न उसके किसी काम को गलत ठहराया जा सकेगा, क्योंकि वह धर्मी परमेश्वर है जिसके सभी काम, निर्णय, और न्याय सर्वांग सिद्ध है।[47]

परमेश्वर की धार्मिकता या न्याय का यह समाचार अच्छा और बुरा दोनों ही है। यह अच्छा समाचार इसलिए है क्योंकि हम चाहते हैं कि एक असीम शक्तिशाली और पूर्ण–संप्रभु परमेश्वर धर्मी और न्यायी हो। किसी ऐसे व्यक्ति की कल्पना करना जो सर्वसामर्थी और दुष्ट दोनो ही है सब बातों से अधिक कठिन और भयावह है। एक अनैतिक और बेलगाम शक्तियों वाला ईश्वर इस संसार के हिटलरों को अपराधी और गलत एवं अस्वीकार्य कामों का करने वाला बना देगा। यदि परमेश्वर है तो हम चाहते हैं कि वह धर्मी हो!

दूसरी ओर, एक धर्मी परमेश्वर मनुष्यों के लिये बड़ी समस्याएँ उत्पन्न करता है, वास्तव में यह कहा जा सकता है कि परमेश्वर की धार्मिकता ही मनुष्य की सबसे बड़ी समस्या है। सर्वसामान्य तर्क हमें इस निष्कर्ष पर पहुँचाता हैं :

प्रथम कथन : विश्व का सृष्टिकर्त्ता एवं संप्रभु धर्मी और भला दोनों है।

दूसरा कथन : एक धर्मी और भला परमेश्वर सभी अधर्मियों या बुरे लोगों का विरोध और न्याय करेगा।

तीसरा कथन : सभी मनुष्य बुरे और अधर्म के दोषी है।

निष्कर्ष : – इस कारण, परमेश्वर सभी मनुष्यों का विरोध और न्याय करेगा।

परमेश्वर की धार्मिकता धर्मी प्राणियों के लिये शुभ समाचार है परन्तु अधर्मियों के लिये डरावनी उद्घोषणा है। नीतिवचन का लेखक इस सत्य की पुष्टि करता है, "न्याय का काम करना धर्मी को तो आनन्द परन्तु अनर्थकारियों को विनाश ही का कारण जान पड़ता।"[48]

यदि हम भी धर्मी होते जैसा कि परमेश्वर है तो न्याय का कोई भी काम हमारे लिये उत्सव मनाने का कारण होगा। परन्तु हम धर्मी नहीं है, वास्तव में कोई भी धर्मी नहीं है, एक भी नहीं।[49] इस कारण परमेश्वर के धर्ममय न्याय की आशा करना प्रत्येक मनुष्य में बड़े भय को उत्पन्न करेगा और उसे एक मध्यस्थ या सहायक की खोज के लिये प्रेरित करेगा। यह तथ्य कि बहुत से लोगों पर आने वाले न्याय–दण्ड का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता, हमें नीचे दिये गये निष्कर्षों में से एक में पहुँचाता है। प्रथम, उनके विवेक दागी हो चुके है, और वे इन सब बातों को मिथक मानते हैं। दूसरी बात, वे स्वयं को जितना वे है, उससे अधिक धर्मी समझते है। तीसरी बात, वे सोचते हैं कि परमेश्वर स्वयं को जितना धर्मी कहता है, वास्तव में वह उतना धर्मी नहीं है। चौथा, वे ऐसी विचारधाराओं से सर्वथा अनजान है क्योंकि सुसमाचारकीय मंच से विरले ही स्पष्ट प्रचार किया जाता है।

संसार भर में बहुत सी संस्कृतियों में, न्याय को एक स्त्री के रूप में दिखाया जाता है जिसके हाथों में एक तुला (तराजू) है और आँखों पर पट्टी बंधी है। यह प्रतिकृति दर्शाती है कि न्याय पक्षपात और घूसखोरी के लिये दृष्टिहीन है, फिर भी जो पाप में पतित लोग है उन्हें यह प्रतिकृति कुछ कमतर नैतिकता प्रदर्शित करती है : हम न्याय, धार्मिकता और समानता के लिये दृष्टिहीन है। हम गलत तौलने वाली तुला और छल के तराजू रखने वाले लोग है।[50] हम अपने पड़ोसी की आँख के तिनके पर ऊंगली उठाते है, पर हम हमारी अपनी आँख में पड़े लट्ठे से अनभिज्ञ बने रहते हैं।[51] हम उन भ्रष्टाचारी राजनीतिज्ञों के विरूद्ध आक्रोश जताते हैं जो अपने लोगों को लूटते और सार्वजनिक निकायों के महामानवों के अंकुशहीन लालच का प्रतिरोध करते है, पर हम यह नहीं देख पाते कि उनमें और हम में कितनी अधिक समानता है। अन्तर केवल स्तर या सीमा का है। हम स्वयं चोरी की रोटी खाते, मुँह पोंछते, और कहते हैं कि हमने कुछ गलत नहीं किया है। हम यह समझने में असफल रहते हैं कि जब हम पृथ्वी के बड़े बड़े पापियों के विरूद्ध ईश्वरीय न्याय या दण्ड की माँग करते हैं, तब हम स्वयं अपने सिर पर भी न्यायदण्ड लाते है। हम पवित्रशास्त्र में वर्णित हम सबके विरूद्ध इस विश्वव्यापी आरोप से अनभिज्ञ या विस्मृत जान पड़ते हैं कि – "कोई भी धर्मी नहीं, एक भी नहीं।"[52]

सुसमाचार के प्रचारक होने के नाते हमें परमेश्वर की धार्मिकता की उद्घोषणा करनी चाहिये और इस प्रकार मनुष्यों की अधार्मिकता को उजागर करना चाहिये। हमें परमेश्वर की धार्मिकता की अनिवार्यता को बताना चाहिये और साबित करना चाहिये कि उसकी धार्मिकता से हमारा जरा सा भी विचलन हमें अयोग्य और दोषी ठहराता है। मनुष्यों को यह समझना चाहिये कि

हमारे आदि माता–पिता के अधर्म के एक काम ने समस्त मानव जाति पर दण्ड लाया और संसार को ऐसे संकट में डाल दिया जिसे मनुष्यों द्वारा सुधारा नहीं जा सकता।[53] केवल तब वे समझ पायेंगे कि उनके अधर्म के अनगिनत काम उन्हें उनके स्वयं के सद्‌गुणों या योग्यताओं के आधार पर परमेश्वर के साथ लाभकारी संबंधों के अयोग्य ठहराते है। जब अविश्वासी संसार हमसे पूछता है कि परमेश्वर की उपस्थिति में बने रहने के लिये मनुष्यों को क्या करना चाहिये, तब हमारा उत्तर खरा और चुभने वाला होना चाहिये। यदि कोई मनुष्य परमेश्वर की संगति में रहना चाहता है तो परमेश्वर उससे केवल एक ही माँग करते हैं – कि वह उसके जीवन के हर दिन, हर एक पल, बिना दोष या असफलता के साथ सम्पूर्ण नैतिक सिद्धता का जीवन जीयें।[54] जब हमारे सुनने वाले ऐसे जीवन का असम्भव होना मान लेते हैं, तब हम उन्हें मसीह की ओर संकेत कर सकते है।

परमेश्वर का प्रेम

परमेश्वर के प्रेम पर स्पष्ट और लगातार प्रचार से बढ़कर अन्य कोई बात मनुष्यों के पाप और नैतिक भ्रष्टता को इतना अधिक उजागर नहीं करती। जब कोई प्रचारक परमेश्वर की सृष्टि के प्राणियों द्वारा परमेश्वर के प्रति उदासीनता एवं आक्रामकता के विरूद्ध परमप्रधान परमेश्वर के इस गुण का वर्णन करता है, वह मनुष्यों की दुष्टता को उजागर करता है और दर्शाता है कि पाप अत्याधिक पापमय है।[55]

सुसमाचार के प्रचारक को परमेश्वर के प्रेम की प्रचुरता से मनुष्यों को भर देना चाहिये। वे यह अवश्य जाने कि उनके गुण या सदाचार नहीं पर परमेश्वर का प्रेम है जो परमेश्वर को स्वतंत्र एवं निःस्वार्थ रूप में स्वयं को दूसरों के लाभ या भले के लिये दे देने हेतु परिचालित करता है।[56] उन्हें अवश्य जानना चाहिये कि परमेश्वर का प्रेम एक गुण, भावना, या कार्य से कहीं बढ़कर है। यह परमेश्वर के स्वभावगुण का लक्षण है, उसके व्यक्तित्व का आवश्यक अंग या प्रवृत्ति है। परमेश्वर केवल प्रेम नहीं करता – वह स्वयं प्रेम है।[57] वह प्रेम का परमेश्वर है।[58] वह वास्तविक प्रेम का तत्व है, और समस्त सच्चा प्रेम उसी से प्रवाहित है क्योंकि वही प्रमुख स्त्रोत है। मनुष्यों को यह समझना चाहिये कि आकाश के तारागणों को गिनना और पृथ्वी की बालू के कणों को गिनना आसान है बजाय इसके कि परमेश्वर के प्रेम को मापा जाये या उसका वर्णन करने का प्रयास किया जाये। जीवधारीयों में जो सबसे महान और विद्वान है, परमेश्वर के प्रेम की ऊँचाई, गहराई और चौड़ाई का आंकलन करना उनकी भी बुद्धि की सीमा के परे है।

सुसमाचार के प्रचारक को पापी मनुष्यों के प्रति परमेश्वर के प्रेम का प्रदर्शन करते हुये, उसके सभी लाभों के बारे में बताना चाहिये – उसकी अभिलाषा कि वह दूसरों का भला करे, उन्हें आशीष दे, और उनके कल्याण के कामों को आगे बढ़ाये। पवित्रशास्त्र की यह साक्षी है कि वह प्रेमी सृजनहार है जो मनुष्यों, स्वर्गदूतों और अन्य निम्नतर प्राणियों को आशीष देने और उनको लाभ देने की चेष्टा करता है।[59] वह ऐसे किसी भी अभिमत के सर्वदा विपरीत है जो उसे उसकी सृष्टि का

विनाश करने वाला और उसे शोचनीय बनाने वाले मनमौजी और प्रतिशोध लेने वाले ईश्वर के रूप में दर्शाता है। वह सबके लिये भला है, और उसकी दया उसके सभी कामों में है।[60] वह अपना सूर्य भले और बुरे दोनों पर उदय करता है और धर्मी और अधर्मी दोनों पर एक सा मेंह बरसाता है।[61] वह कृतज्ञ और बुरे मनुष्यों के प्रति भी दयालु है।[62] हरेक भली वस्तु और प्रत्येक सिद्ध दान उसी की ओर से मिलता है।[63]

सुसमाचार प्रचारक को परमेश्वर की दया, करूणा और अनुग्रह की परिभाषा एवं व्याख्या देकर पापी मनुष्यों को परमेश्वर का प्रेम प्रदर्शित करना चाहिये। मनुष्यों को उसकी प्रेमपूर्ण करूणा, कोमल हृदयभाव और सबसे अधिक शोचनीय एवं दयनीय मनुष्यों के प्रति उसके तरसभाव को उसकी दया के एक स्वरूप के रूप में जानना समझना चाहिये। परमेश्वर को पवित्रशास्त्र में करूणा का परमेश्वर कहा गया है जो दया से 'भरपूर' और 'समृद्ध' है।[64] मनुष्यों को जानना चाहिये कि परमेश्वर का अनुग्रह उसकी सहमति है कि वह अपने सृजित प्राणियों के साथ उनके मूल्यों एवं गुणों के आधार पर नहीं परन्तु स्वयं की दया और उदारता के अनुसार व्यवहार करे। वह सारे अनुग्रह का परमेश्वर है।[65] वह अनुग्रह करने की तीव्र इच्छा रखता है और उन पर स्वर्ग से तरस खाने के लिये ठहरा रहता है।[66] जबकि मनुष्य स्वयं को बचाने में असमर्थ है, वह उनका उद्धार करता है, ताकि आने वाली पीढ़ियों के अयोग्य मनुष्यों के प्रति उसकी दया और करूणा की समझ से परे प्रचुरता को प्रदर्शित कर सके।[67]

सुसमाचार प्रचारक को उसके धीरज या सहनशीलता की विस्तृत समीक्षा के द्वारा परमेश्वर के प्रेम की उत्कृष्टता को प्रदर्शित करना चाहिये। मनुष्यों को यह जानना अवश्य है कि परमेश्वर ने उसके सृजित प्राणियों की निर्बलताओं और गलतियों को 'लम्बें समय तक सहन करने' और 'धीरज धरकर सहते रहने' में सदैव अपनी इच्छा को प्रदर्शित किया है। वह अपने क्रोध पर अंकुश लगाता और अपने कोप को धधकने से रोकता है; क्योंकि उसे स्मरण रहता है कि मनुष्य मिट्टी ही है, और वायु सदृश्य है जो बहती है और फिर लौट कर नहीं आती।[68] वह क्रोध में धीमा है, नहीं चाहता कि कोई नाश हो, पर यह कि सब पश्चाताप करे।[69] वह चाहता है कि सभी मनुष्यों का उद्धार हो और सत्य के ज्ञान की पहिचान प्राप्त करे।[70] वह दुष्ट के मरने से प्रसन्न नहीं होता, परन्तु वह चाहता है कि वह पश्चाताप करे और जीवित रहे।[71]

अन्त में, सबसे महत्वपूर्ण है कि सुसमाचार प्रचारक को परमेश्वर पिता के द्वारा उसके पुत्र को अनुग्रह सहित देने की उद्घोषणा के द्वारा परमेश्वर के प्रेम को ऊँचा करने के लिये लगातार परिश्रम करना चाहिये। परमेश्वर का प्रेम समझ के परे है, उसके समस्त प्राणियों पर अनगिनत तरीकों से प्रगट होता है। परन्तु फिर भी पवित्रशास्त्र हमें सिखाता है कि परमेश्वर के प्रेम का एक प्रगटीकरण अन्य सभी तरीकों से अधिक बढ़कर है – उसके लोगों के उद्धार के लिये उसके इकलौते पुत्र का दिया जाना। पवित्रशास्त्र की साक्षी है कि परमेश्वर प्रेम है और उसने अपना प्रेम इस रीति से प्रगट

किया कि अपने एक इकलौते पुत्र को मरने भेज दिया ताकि मनुष्य उसके द्वारा जीवन पाये। हमारे विचार और कार्य उसके प्रेम को परिभाषित नहीं कर सकते या नाप नही सकते; पर वास्तविक प्रेम, परमेश्वर का प्रेम है, जिसे उसने हमारे पापों के बदले में दाम स्वरूप अपने पुत्र को भेजकर प्रगट किया।[72] यह सामान्य ज्ञान की बात है कि कोई किसी धर्मी के लिये शायद ही मरना चाहे, हो सकता है कि किसी भले व्यक्ति के लिये कोई मरने का साहस कर बैठे। परन्तु परमेश्वर ने हम पर अपना प्रेम इस रीति से प्रगट किया कि जब हम पापी ही थे, मसीह अधर्मियों और अतिशय असहाय मनुष्यों के लिये मर गया।[73] छुटकारे के इस बहुत बड़े दाम को चुकाने के द्वारा परमेश्वर के प्रेम की सर्वाधिक मनोहरता और हमारे पापों की सर्वाधिक जघन्यता साबित होती है।

ये कुछ सत्य है जो हमें मनुष्यों के सामने रखने चाहिये इसके पहले कि वे परमेश्वर के विषय में बाइबल के विचारों को जाने और परमेश्वर के विरूद्ध किये गये उनके पापों की वास्तविक प्रकृति को समझें। सभी पाप अन्तिम रूप में और प्राथमिक रूप में बुरे हैं क्योंकि वे असीम भले परमेश्वर के विरूद्ध किये जाते हैं जो समस्त प्रेम, भक्ति–आराधना और आज्ञाकारिता के योग्य है। हम इस परमेश्वर को जितना अधिक हमारे प्रचार में बताएंगे, उतना अधिक सुनने वाले मनुष्य उनके पापों की विकरालता और उद्धार की आवश्यकता को समझ पाएंगे।

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. यशायाह 5:20
2. भजन संहिता 51:4
3. भजन संहिता 50:21
4. होशे 4:6
5. यिर्मयाह 9:23–24
6. यशायाह 2:22; भजन संहिता 103:15; याकूब 4:14
7. Garb का अर्थ वस्त्रों या आवरण या परिधान से है, और यह बाहरी रूपरंग को प्रदर्शित करने का रूपक है जो आतंरिक वास्तविकता को झुठलाता है।
8. Westminster Larger Catechism, Q. 1.
9. लेखक ने यह विचार स्पर्जन से लिया है, उन्होंने ऐसा ही दावा पवित्र शास्त्र के लिये किया था, "पवित्र शास्त्र एक सिंह के समान है, किसी ने कभी सिंह के बचाव की बात सुनी है ?उसे खुला छोड़ दे; वह अपना बचाव स्वयं कर लेगा।"
10. भजन संहिता 97:9; यशायाह 57:15; 1 तिमुथि 1:17
11. यशायाह 40:15–18
12. 1 इतिहास 29:11
13. रोमियों 11:36
14. भजन संहिता 103:19

15. भजन संहिता 115:3; 135:6
16. इफिसियों 1:11; अय्यूब 23:13
17. 1 शमूएल 2:6
18. यशायाह 45:7
19. दानिय्यल4:34–35
20. भजन संहिता 33:11
21. नीतिवचन 21:30
22.दानिय्यल 4:34–35
23. भजन संहिता 95:3; प्रेरितों के काम 17:24; 1 तिमुथि 6:15
24. निर्गमन 20:20
25. यशायाह 6:3; प्रकाशित वाक्य 4:8
26. From the Greek, *tris*: three; *agion*: holy. यूहन्ना N. Oswalt, *The Book of* यशायाह*: Chapters 1–39*, The New International Commentary of the Old Testament (Grand Rapids: Eerdmans, 1986), 181.
27. नीतिवचन 9:10
28. शब्द transcendence लैटिन भाषा के क्रियापद transcendere (tran: over; scandere : to climb) से आता है, अर्थात् आगे बढ़ना उपर उठना, या पार कर जाना।
29. व्यवस्थाविवरण 4:35; 1 तिमुथि 6:16
30. 1 शमूएल 2:2
31. निर्गमन 15:11
32. शब्द impeccable की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द impeccabilis (im – नहीं; peccare – पाप करना; abilis – योग्य) से है, जिसका अर्थ है – 'पाप करने में असमर्थ' या पाप के दोष या त्रुटि से रहित।
33. 1 यूहन्ना 1:5
34. याकूब 1:17
35. याकूब 1:13
36. हबक्कूक 1:13
37. व्यवस्थाविवरण 25:16; भजन संहिता 5:4
38. यशायाह 6:5
39. मत्ती 6:9
40. भजन संहिता 7:9; 119:142
41. व्यवस्थाविवरण 32:4; टय्यूब 8:3
42. व्यवस्थाविवरण 32:4
43. भजन संहिता 89:14
44. भजन संहिता 11:7; 5:5
45. भजन संहिता 9:7–8
46. यशायाह 5:16
47. अय्यूब 36:23
48. नीतिवचन 21:15

49. रोमियों 3:10
50. नीतिवचन 11:1
51. मत्ती 7:3–4
52. रोमियों 3:10
53. रोमियों 5:12–19
54. मैंने यह विचार 'ओक ग्रोव बैपटिस्ट चर्च, पडुकाह, केंटुकी के पास्टर माइकल दुरहैम से लिया है।
55. रोमियों 7:13
56. व्यवस्थाविवरण 7:7–8
57. 1 यूहन्ना 4:8, 16
58. 2 कुरिन्थियों 13:11
59. योना 4:11; नीतिवचन 12:10
60. भजन संहिता 145:9
61. मत्ती 5:45
62. लूका 6:35
63. याकूब 1:17
64. भजन संहिता 145:8; 2 कुरिन्थियों 1:3; इफिसियों 2:4
65. 1 पतरस 5:10
66. यशायाह 30:18
67. इफिसियों 2:7–8
68. भजन संहिता 78:38–39
69. निर्गमन 34:6; 2 पतरस 3:9
70. 1 तिमुथि 2:4
71. यहेजकेल 18:23, 32
72. 1 यूहन्ना 4:8–10
73. रोमियों 5:6–8

अध्याय – 12

सबने पाप किया

क्योंकि सबने पाप किया है और परमेश्वर की महिमा से रहित है – रोमियों 3:23

परमेश्वर के प्रति बाइबल के विचार जानने के साथ–साथ मनुष्य के लिये स्वयं के बारे में बाइबल के विचार जानना भी अति–आवश्यक है। यहाँ हम मनुष्यों के बारे में गैर–धार्मिक विचारों और बाइबल के सत्य में बड़ा भारी विरोधाभास पाते है। समकालीन धारणा है कि मूल रूप में मनुष्य भला है और उसकी सबसे बड़ी समस्याएँ उस पर पड़ने वाली बाहरी अस्वस्थ बातों के प्रभाव से उत्पन्न होती है : सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और शिक्षा संबंधित कारण उनमें से कुछ है। इसके विपरीत पवित्रशास्त्र शिक्षा देता है कि मनुष्य पाप में भ्रष्ट प्राणी है, उसका हृदय नैतिक पतन के कारण सभी बुराईयों का स्त्रोत है।

यीशु मसीह के सुसमाचार के प्रचार में हमें चाहिये कि हम सुनने वालों को पाप और पापियों के बारे में बाइबल के विचारों से अवगत कराये। पवित्र आत्मा की सहायता से पवित्रशास्त्र की व्याख्या करना ही ऐसे अभियान को सम्पन्न करने का तरीका है। यह कार्य कठिन है और बहुधा गलत रूप में समझा जाता है, परन्तु यह उसी प्रकार आवश्यक है जैसे बीज बोने से पूर्व हल चलाना आवश्यक है। यह हमारा काम है कि इस विषय–विशेष पर बोले जिसे अधिकतर मनुष्य भूलना चाहेंगे। हमारा यह कार्य असामान्य है क्योंकि जितना अधिक सुनने वालों के हृदय में दोषसिद्धि, टूटापन और पश्चाताप निर्माण हो, उतना ही हम सफल मानें जाएँगे। यह मार्ग कठिन है, पर उद्धार का यही एक मात्र मार्ग है।

रोमियों 3:23 में 'पाप किया' (*have Sinned*) एक अति सामान्य ग्रीक शब्द *hamartano* (हैमरटानों) अर्थात् पाप का अनुवाद है, जिसका अर्थ है निशाने से चूक जाना, गलती करना या मार्ग भटक जाना। इब्रानी में पाप के लिये सबसे आम शब्द है *chata* और यह शब्द भी वही अर्थ रखता है। न्यायियों की पुस्तक का लेखक हमें इन दोनों शब्दों का अभिप्राय समझाता है जब वह लिखता है कि बिन्यामीनियों में ऐसे लोग थे जो "गोफन से निशाना लगाने में बालभर भी न चूकते थे।"[1] नीतिवचन के बुद्धिमान पुरूष ने भी चेतावनी दी है कि "जो उतावली से दौड़ता है वह चूक जाता है।"[2] बाइबल के अनुसार वह निशाना जिसे चूकना नहीं है और वह मार्ग जिस पर मनुष्य को

चलना चाहिये वह परमेश्वर की इच्छा है। अन्य कोई विचार शब्द या कार्य जो इस स्तर से सिद्ध रूप में अनुकूल नहीं है, वह पाप है। यहाँ तक कि जरा सा भी चूकना दोषी ठहराता है। यही कारण है कि वेस्टमिन्स्टर लार्जर कैटेकिझम पाप की यह परिभाषा देती है – परमेश्वर की व्यवस्था के साथ अनुकूलता की जरा सी भी कमी पाप है'' (प्रश्न. 24)। यह स्मरण रखना महत्वपूर्ण है कि पवित्रशास्त्र में कभी भी 'निशाने से चूकना' एक निर्दोष त्रुटि या ईमानदार गलती नहीं कहा गया है। यह कार्य सदैव ही सोच समझकर और इच्छापूर्वक की गयी अनाज्ञाकारिता है जिसका उद्भव परमेश्वर के प्रति मनुष्य की नैतिक भ्रष्टता और शत्रुता से होता है।

हमारे सन्दर्भ पद में बिना अपवाद, पाप का दोष प्रत्येक व्यक्ति के सिर पर है, क्योंकि ''सबने पाप किया।'' यही भावाभिव्यक्ति सम्पूर्ण पवित्रशास्त्र में गूंजती है। पुराने नियम में हम पढ़ते है – ''निष्पाप तो कोई भी मनुष्य नहीं'' और ''कोई भी मनुष्य धर्मी नहीं।''[3] बुद्धिमान और खिन्न राजा सुलैमान ने मनुष्यों की आभासी नैतिकता को देखकर यह लिखा था – ''पृथ्वी पर एक भी धर्मी नहीं जो भलाई करता और पाप नहीं करता।''[4] अन्त में, भविष्यद्वक्ता यशायाह ने समस्त मानव जाति में खोजबीन की और पुकार उठा, ''हम सब भेड़ों की नाई भटके हुये थे और हम सबने अपना–अपना मार्ग लिया।''[5]

पुराने नियम के लेखक मनुष्य को दण्डयोग्य ठहराने में अथक परिश्रम के साथ जुटे थे, पर हमें यह नहीं सोचना चाहिये कि 'नये–नियम' के लेखक किसी अलग विचार के थे या उनकी ओर से परिनिन्दा में कुछ हल्कापन था। रोमियों के तीसरे अध्याय में प्रेरित पौलुस ने पुराने नियम से उद्धरण देकर पाप की व्यापकता और मनुष्य की नैतिक भ्रष्टता की गहराई के बारे में लिखा है। सम्पूर्ण पवित्रशास्त्र में यह मानवजाति की सबसे अधिक लम्बी और सीधे–सीधे कही गई भर्त्सना है : ''तो फिर क्या हुआ ?क्या हम उनसे अच्छे है ? कभी नहीं; क्योंकि हम यहूदियों और यूनानियों दोनों पर दोष लगा चुके हैं कि वे सबके सब पाप के वश में हैं। जैसा लिखा है : ''कोई धर्मी नहीं, एक भी नहीं, कोई समझदार नहीं, कोई परमेश्वर का खोजने वाला नहीं। सब भटक गए है, सबके सब निकम्मे बन गये हैं, कोई भलाई करने वाला नहीं; एक भी नहीं।''[6]

पवित्रशास्त्र के अनुसार, हम देख सकते है, कि पाप किसी एक छोटे समूह या मानवजाति के अल्पमत में कोई दुर्लभ या असामान्य सी घटना नहीं है, परन्तु यह समस्त विश्व में व्याप्त है। आदम की नस्ल का प्रत्येक सदस्य, उसके द्वारा आरम्भ किये गये बलवे में शामिल हो चुका है। वे जो ऐसे सत्य से इन्कार करते हैं, उन्हें पवित्रशास्त्र की साक्षी, मानव इतिहास और उनके स्वयं के पापमय विचारों, शब्दों और कार्यों से इन्कार करना होगा। प्रेरित यूहन्ना ने तो यहाँ तक कह दिया है कि वे जो अपने पाप की सच्चाई से इन्कार करते हैं वे परमेश्वर को झूठा ठहराते और साबित करते है कि परमेश्वर के साथ उनका कोई सम्बन्ध नहीं है : ''यदि हम कहें कि हम में कुछ भी पाप नहीं तो अपने आप को धोका देते हैं और हम में सत्य नहीं... यदि हम कहें कि हमने पाप नहीं किया, तो उसे झूठा

ठहराते हैं, और उसका वचन हम में नहीं है।''[7]

पवित्रशास्त्र पर जरा भी ध्यान दे तो वह प्रगट करेगा कि पाप मनुष्य की सबसे बड़ी बीमारी है। फिर भी इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि हमारी समकालीन संस्कृति में और उससे निर्मित तथाकथित मसीहत में पाप की कल्पना या विचार एक छोटी बात मानी जाती है। यही कारण है कि हमें पवित्रशास्त्र के लेखकों का उदाहरण पालन करने के प्रति और भी अधिक सावधान रहना चाहिये, जिन्होंने दृढ़ संकल्प के साथ पाप को उजागर करने के प्रयास किये और पाप को अत्याधिक पापमय प्रमाणित किया। हमें पाप को नुकसान न करने वाली एक आम बात मानकर नहीं चलना चाहिये जो आत्मा को अविचलित और अपरिवर्तित रूप में छोड़ जाती है, परन्तु हमें चाहिये कि सुनिश्चित और सटीक भाषा का उपयोग करके पाप के वास्तविक चरित्र को परिभाषित करे और उसके प्रत्येक प्रगटीकरण को उजागर करे। हमारा लक्ष्य हमारे सुनने वालों के हृदयों और मनों में पाप की वह तस्वीर बनाना है, जो इतनी अधिक भयावह हो कि मेम्ने के लोहू को छोड़कर अन्य किसी वस्तु से मिटाई न जा सके। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये अवश्य है कि हम पाप के कुछ अत्याधिक सामान्य और दोहराये जाने वाले लक्षणों पर विचार–विमर्श करे।

पाप अपराध है

''गला खोलकर पुकार, कुछ न रख छोड़, नरसिंगे का ऊँचा शब्द कर, मेरी प्रजा को उसका अपराध जता दे।''[8]

इस पद में परमेश्वर अपने प्रवक्ता यशायाह को आज्ञा देते हैं कि साफ–साफ और मन लगाकर उनकी प्रजा के अपराधों को उजागर करे। परमेश्वर भविष्यद्वक्ता से कहते है – अपनी आवाज को नरसिंगे के समान ऊँचा उठाकर, गला खोलकर पुकारे, बताये और पापों की विस्तार से समीक्षा करे जो शीघ्र ही इस्राएल के विनाश का कारण बनेंगे। परमेश्वर भविष्यद्वक्ता को अपनी आज्ञा में ईश्वरीय चेतावनी भी जोड़ते हैं – कुछ न रख छोड़। भविष्यद्वक्ता को अपने प्रचार में पाप के विरूद्ध कोई बात छोड़नी नहीं है, भले ही उसके मन में तरस का एक झूठा भाव उत्पन्न हो। उसे चोट लगने का भय नहीं खाना है, अवश्य है कि इस्राएल आत्मा की तलवार से छेदा जाये। एक गहरी और दर्दनाक शल्यचिकित्सा की आवश्यकता थी, यदि इस्राएल को उद्धार पाना था। यह उन समकालीन सुसमाचार प्रचारको के लिये डाँट–फटकार और प्रोत्साहन दोनों है जो वास्तविक सुसमाचार प्रचार के इस आवश्यक तत्व की अकसर उपेक्षा करते है।

पुराने नियम में 'अपराध' शब्द, इब्रानी भाषा के शब्द abar (अबार) का अनुवाद है जिसका अर्थ है – पार करना, उस पार जाना या वहाँ से गुजरना है। नये नियम में यह शब्द ग्रीक भाषा के शब्द parabaino (पैराबैनों) का अनुवाद है जिसका अर्थ है, किनारे से निकलना, उस पार जाना

या उस तरफ कदम रखना। पाप का अर्थ है, परमेश्वर के व्यक्तित्व और अधिकार की पूर्ण अव्हेलना के साथ उसकी व्यवस्था से पार जाना या उसका उल्लन्घन करना। इसका अर्थ है उसकी आज्ञाओं की अनुमति की सीमा से बाहर जाना, या उसकी व्यवस्था में हम पर लगाये गये प्रतिबन्धों की अनदेखी करना। यह बाड़े के बाहर भागने और उन स्थानों में जाने के जैसा है, जो स्थान हमारे लिये नहीं है, जैसे कि भेड़ रास्ते में भटक जाये और अपने मन के मुताबिक किसी भी मार्ग पर चल दे।[9] उस विशाल समुद्र के विपरीत जो परमेश्वर की आज्ञा मानता और उसके द्वारा खीचें गये सिवानों के भीतर रहता है, मनुष्य लगातार परमेश्वर द्वारा उनके लिये नियत सीमाओं के पार जाने और बाड़े को तोड़ने की चेष्ठा करते हैं।

पाप को अपराध के रूप में प्रचार करने के बहुत से लाभ है। सबसे पहले यह मनुष्य के हृदय में बसे हठीलेपन को प्रगट करता है। यह निर्बल जीव कौन है जो परमेश्वर द्वारा उसके लिये नियत की गई सीमाओं के पार बेधडक दौड़ लगाता है ?वह समस्त सृष्टि के लिये विक्षोभ और अपमान का कारण है! बैल और गदहे उससे अधिक समझ रखते है।[10] दूसरी बात, यह हमारी मूर्खता को उजागर करता है। हम कल जन्मे हैं, और हम जो जानते है, वह एक छोटे पात्र में उण्डेला जाने पर उसे पूरा भी नहीं भरता।[11] फिर भी हम अनन्त परमेश्वर के संकल्प के विरूद्ध बलवा करने का विकल्प चुनते है जिसका ज्ञान असीमित है और जिसकी बुद्धि बेजोड़ है। तीसरी बात, यह हमें हमारी सभी व्याधियों का वास्तविक कारण बताता है – हमने परमपवित्र को तुच्छ जाना और उसके पास से दूर हो गये है।[12] हमारे अपराधों के कारण हमारे सिरों में चंगाई नहीं है और हमारे हृदय आशंकित रहते है। हमारे पाप के तलुवे से लेकर, हमारे सिर के उपरी भाग तब कहीं आरोग्यता नहीं है। हम चोटों से भरे हैं, मार के निशान और ताजे घावों से भरे है, और यह सब हमने स्वयं अपने उपर लिया है।[13]

पाप बलवा और आधीनता से इन्कार है

"देख बलवा करना और भावी कहने वालों से पूछना एक ही समान पाप है, और हठ करना मूरतों और गृह–देवताओं की पूजा के तुल्य है।"[14] हम ऐसी संस्कृति में रहते है जो अपनी सुविधा के अनुसार पाप की पुर्नव्याख्या और श्रेणी निर्धारण करती है। यद्यपि अधिकतर लोग उनके जीवनों की कुछ गलतियों को स्वीकार करते हैं, वे स्वयं को बुरा या उनके पाप को दूसरे के पापों जितना बुरा नहीं मानते। 1 शमूएल 15:23 का सबसे बड़ा लाभ यह है कि उसमें दर्शाया गया है कि कोई पाप छोटा नहीं है। परमेश्वर की दृष्टि में थोड़ा सा भी बलवा करना उतना ही बुरा है जितना कि किसी शैतानी क्रिया में भाग लेना, और आधीनता में न रहने का छोटा सा संकेत भी बुरे से बुरे अधर्म या झूठे देवी–देवताओं की उपासना करने के समतुल्य है। यद्यपि कुछ पापों के परिणाम अन्य पापों की तुलना में अधिक विनाशकारी होते है, प्रत्येक पाप के केन्द्र में बलवे और आधीनता में न रहने की वही भावना होती है। एक बच्चा जो जानबूझकर खाने की थाली फर्श पर बिछे कालीन पर फेंकता है और एक बच्चा

जो अपने खिलौने समेटने से मना करता है, दोनों ही अपने–अपने माता–पिता के अधिकार के विरूद्ध बलवा करते हैं। यद्यपि उनके पापमय कार्यों के परिणाम भिन्न–भिन्न हो सकते है पर विद्रोह की भावना एक ही है।

पहला शमूएल 15:23 पाप का वर्णन विद्रोह और आधीनता में न रहने के रूप में करता है। शब्द 'बलवा' का अर्थ है – विद्रोह, अवज्ञा, विरोध में सिर उठाना या गदर करना। शब्द 'आधीनता में न रहने' का मूल शब्द इब्रानी भाषा में patsar (पॅटसर) है जिसका शब्दिक अर्थ है – 'दबाना या ढ़केलना'। यह शब्द हठीलेपन, अभद्रता अनाधिकार चेष्टा और गर्वीलेपन को दर्शाता है। ये परिभाषाएँ हमारी सहायता करती है कि हम मनुष्य की अनाज्ञाकारिता के भयावह जन्मजात गुण को समझ सके। पाप करने वाला व्यक्ति परमेश्वर के विरूद्ध बलवा करने वाला विश्वासघाती है। वह स्वर्ग के राज्य के विरोध में खड़ा होता है और अपनी स्वयं की सत्ता की वकालत करता है। वह उसके पिता शैतान का काम करता है जो परमेश्वर के सिंहासन के सामने तूफान खड़ा करता है और उसे उसी के मन्दिर में घात करना चाहता है।[15] पापी मनुष्य हठीले और अभद्र पशु समान होते है जो न केवल उनके सृष्टिकर्त्ता की इच्छा पूरी करने से इन्कार करते हैं पर उस पर अपनी इच्छा थोपने का प्रयास भी करते है।

परमेश्वर की सर्वोच्चता, संप्रभुता और सामर्थ के विषय पवित्रशास्त्र हमें जो शिक्षा देता है उसके प्रकाश में, अवश्य है कि हमारे पाप हठीलेपन के बुरे रूप में और विक्षिप्तता के शिखर पर दिखाई देने चाहिये। क्या मनुष्य जो भाप जैसा है और कुछ भी नहीं है, उसे अनन्त परमेश्वर के विरूद्ध विद्रोह करना चाहिये ?[16] क्या मिट्टी के टूटे पात्र के टुकड़ों को सृजनहार के हाथों का इन्कार करना चाहिये?परन्तु फिर भी मनुष्य परमेश्वर की संप्रभुता का इन्कार करता और स्व–प्रशासन का प्रयास करता है। वे न केवल उसकी इच्छा का इन्कार करते है पर उससे अपनी इच्छा मनवाने का प्रयास भी करते है। आधुनिक मनुष्य विरले ही स्वयं को इस प्रकाश में देखता और शायद ही कभी अपने पाप को विद्रोह या अवज्ञाकारक के रूप में देखता है। इस कारण सुसमाचार प्रचारक को उसकी सहायता करने और वह दिखाने के लिये परिश्रम करना चाहिये जो देखना और स्वीकार करना उसके लिये कठिन है परन्तु उसके उद्धार पाने के लिये आवश्यक है।

पाप व्यवस्था का विरोध है

''जो कोई पाप करता है, वह व्यवस्था का विरोध करता है, और पाप तो व्यवस्था का विरोध है।''[17] इसमें संदेह नहीं कि यह पद सब प्रकार के पापों की गम्भीरता को प्रमाणित करता है। सभी पाप के कर्म, मानवीय मूल्यांकन में बड़े या छोटे से छोटे, सभी व्यवस्था का विरोध है, और किसी भी प्रकार के पाप का आचरण व्यवस्था का विरोध हैं। व्यवस्था का विरोध यह वाक्यांश यूनानी शब्द anomia (अनोमिया) का अनुवाद है, जिसका शाब्दिक अर्थ है – ''व्यवस्था न होना'' या ''व्यवस्थारहित''।

व्यवस्था का विरोध करने का अर्थ है, इस प्रकार जीवन जीना मानों परमेश्वर नैतिक रूप में तटस्थ या उदासीन है, या फिर इस प्रकार जीवन जीना मानों परमेश्वर ने मानवजाति के लिये कभी अपनी इच्छा प्रगट न की हो। ये दोनों ही मत सीधे तौर पर पवित्रशास्त्र का विरोध करते है। पवित्रशास्त्र के अनुसार परमेश्वर धर्मी है। उसने सभी मनुष्यों को अपनी व्यवस्था या सुइच्छा उनके हृदय पर लिखे व्यवस्था के कामों के द्वारा, और कुछ मनुष्यों पर पवित्रशास्त्र के अधिक प्रकाशन के द्वारा प्रगट की है।[18] दोनों ही स्थितियों में, पवित्रशास्त्र की साक्षी है कि परमेश्वर की इच्छा के विषय में सभी मनुष्यों को पर्याप्त प्रकाश दिया गया है ताकि न्याय के दिन किसी के पास कोई बहाना न रहे।[19] भविष्यद्वक्ता मीका ने यहूदियों से जो कहा था, वही बात अलग–अलग अंशों में प्रत्येक मनुष्य के लिये कहीं जा सकती है : "हे मनुष्य वह तुझे बता चुका है कि अच्छा क्या है, और यहोवा तुझ से इसे छोड़ और क्या चाहता है कि तू न्याय से काम करे, और कृपा से प्रीति रखें, और अपने परमेश्वर के साथ नम्रता से चले ?"[20]

यह समझना महत्वपूर्ण है कि मनुष्य परमेश्वर की व्यवस्था को खुल्लम खुल्ला इन्कार करके व्यवस्था का विरोध कर सकता है या जानबूझकर उसकी परवाह न करे या अनदेखी कर दे। दोनों ही प्रकरणों में उसका आचरण परमेश्वर और उसके अधिकार की अवज्ञा दर्शाता है। यह अनिवार्य है कि हम यह भी समझें कि किसी के विद्रोह के दण्ड की तीव्रता या परिणाम उस व्यवस्था के नियम के बड़े या छोटे होने पर निर्भर नहीं करती। सभी पाप व्यवस्था का विरोध है और "जो कोई सारी व्यवस्था का पालन करता है परन्तु एक ही बात में चूक जाए तो वह सब बातों में दोषी ठहर चुका है।"[21] इसके अलावा, तथ्य यह भी है कि ख्रिस्त विरोधी को 'विनाश का पुत्र' कहा गया है जो व्यवस्था के विरोध की घृणित प्रकृति को दर्शाता है और यीशु व्यवस्था का विरोध करने वालों से न्याय के दिन कहते हैं कि वे उसके पास से चले जाए।[22] सभी पाप व्यवस्था का विरोध है, नरक में जन्में हैं और सम्पूर्ण दण्ड के सर्वथा योग्य है।[23]

सुसमाचार के प्रचारक होने के नाते परमेश्वर की बुलाहट है कि हम सभी प्रकार की व्यवस्था के विरोध को उजागर करे और उसकी रोकथाम करे जो मनुष्यों के बीच स्वयं को उभारती है। हम यह कार्य केवल परमेश्वर की सम्पूर्ण संकल्प के प्रचार के द्वारा ही कर सकते है। नीतिवचन के लेखक ने हमें चेतावनी दी है, "जहाँ दर्शन की बात नहीं होती, वहाँ लोग निरंकुश हो जाते हैं, और जो व्यवस्था को मानता है, वह धन्य होता है।"[24] मनुष्य और उनके समाज सीधे–सीधे व्यवस्था के विरोध में निरंकुश होकर बढ़ते हैं जब परमेश्वर की इच्छा का प्रकाशन या दर्शन नहीं होता। किन्तु परमेश्वर व्यवस्था के विरोध पर अंकुश लगाते हैं जब वे व्यवस्था के द्वारा मनुष्यों का सामना करते हैं और पवित्र आत्मा उन्हें निरूत्तर करता है और यीशु मसीह की उद्धार देने वाली पहिचान में लेकर आता है। सुसमाचार प्रचार का कार्य कोई छोटा–मोटा कार्य नहीं है जिसे मनुष्य आशंकित हृदय के साथ कर सकता है। सुसमाचार प्रचार में परमेश्वर की बुलाहट है कि हम प्रवाह के विरूद्ध ज्वार के बीच खड़े

हो, पाप को व्यवस्था का विरोध और मनुष्यों को व्यवस्था भंग करने वाला बताकर उजागर करे और उन्हें मसीह के बारे में बताये जो परमेश्वर और मनुष्यों के बीच एकमात्र मध्यस्थ है।[25]

पाप शत्रुता है

''क्योंकि शरीर पर मन लगाना तो परमेश्वर से बैर रखना है, क्योंकि न तो परमेश्वर की व्यवस्था के आधीन है, और न हो सकता है।''[26] मनुष्य के पाप के विषय में सबसे अधिक विचलित करने वाले सत्यों में एक है, उसकी परमेश्वर के प्रति आक्रामकता, शत्रुता और यहाँ तक कि घृणा की अभिव्यक्ति अथवा प्रगटीकरण हैं। इस सत्य को समझने के लिये हमें सर्वप्रथम इसके पीछे छिपे कारण की खोज करनी होगी। क्यों मनुष्य एक निर्भर प्राणी, एक असीमित भले परमेश्वर के प्रति ऐसे विरोध या बैर को मन में रखता है ?पवित्रशास्त्र के अनुसार यह इसलिये है कि पाप में पतित मनुष्य नैतिक रूप में भ्रष्ट प्राणी है जो अधार्मिकता से प्रेम करता है और स्वयं का अधिकार चाहता है (अर्थात् ऐसी दशा जिसमें वह स्वतंत्र हो और स्वयं अपनी दिशा निर्धारित करे) और वही करे जो उसकी दृष्टि में भला है।[27] परिणाम स्वरूप वह परमेश्वर से घृणा भी करता है जो धर्मी है और उसकी व्यवस्था से घृणा करता है जो परमेश्वर की धार्मिकता की अभिव्यक्ति है।[28] इस प्रकार, जैसा हमारे पद में शिक्षा है, मनुष्य आज्ञा नहीं मान सकता और न स्वयं को परमेश्वर की व्यवस्था के आधीन कर सकता है, क्योंकि वह ऐसा नहीं करेगा क्योंकि वह परमेश्वर से घृणा करता है। यहाँ समस्या स्वतंत्र इच्छा की नहीं है पर बुरी इच्छा की है। पाप में पतित मनुष्य परमेश्वर से इतनी घृणा करता है कि भले ही उसका परिणाम अनन्तविनाश हो, वह स्वयं को परमेश्वर के आधीन नहीं करेगा।

प्रभु यीशु मसीह ने शिक्षा दी थी, ''यदि तुम मुझ से प्रेम करते हो तो मेरी आज्ञाओं को मानोगे।''[29] यह इस बात का एक और प्रमाण है कि हमारे और परमेश्वर के बीच एक सीधा सम्बन्ध है, हम परमेश्वर के प्रति कैसा व्यवहार करते हैं और उसकी इच्छा के साथ हमारे सम्बन्ध कैसे है। परमेश्वर की इच्छा का लगातार सही आज्ञापालन परमेश्वर के प्रति हमारे सच्चे प्रेम को दर्शाता है। पाप इसके ठीक विपरीत है – वह घृणा या शत्रुता को प्रदर्शित करता है। प्रत्येक पाप जो हम करते है, उसके अन्तःस्थल में परमेश्वर के प्रति हमारा व्यवहार छुपा होता है जो कि घृणास्पद और अक्षम्य है। इस प्रकार, समाज की दृष्टि में छोटे हो या बड़े सभी पाप अमापनीय रूप में बुरे है क्योंकि वे ऐसे हृदय से निकलते हैं जो उस परमेश्वर से युद्ध करते है जो असीमित रूप में समस्त प्रेम, कृतज्ञता और भक्ति के योग्य है।

सुसमाचार प्रचारक को ये सत्य सुनने वालों के हृदय पर अंकित करना चाहिये। पाप एक आन्तरिक और अधिक अंधकारमय बीमारी का केवल बाहरी लक्षण है – पाप में पतित हृदय जो बुराई से प्रेम करता है और एक धर्मी परमेश्वर के संप्रभुतायुक्त आदेशों के प्रति आक्रामक है। सभी

कलीसियाई नियम और धार्मिक सुधार मिलकर भी मनुष्य के अंतःकरण को बदल नहीं सकते या उसके हृदय से आक्रामकता को नहीं निकाल सकते। सुसमाचार के शुद्ध कार्य के बिना मनुष्य की अवस्था आशाविहीन है, यदि सुसमाचार विश्वासयोग्यता के साथ प्रचार किया जाये और पवित्र आत्मा की पुनर्जीवित करने वाली सामर्थ उसके साथ कार्य करे।

पाप विश्वासघात है

''परन्तु उन लोगों ने आदम के समान वाचा को तोड दिया; उन्होंने वहाँ मुझ से विश्वासघात किया है।''[30] पाप चाहे किसी भी रूप में किसी भी प्रकार का हो विश्वासघात है। शब्द 'विश्वासघात' दो इब्रानी शब्दों से मिलकर बना है maal (माल) और bagad (बॅगड) जिनका अर्थ है, विश्वासघात के काम करना, धोकेबाजी या अविश्वासयोग्यता का आचरण करना। वेबस्टर के शब्दकोष में विश्वासघात की परिभाषा दी गई है – निष्ठा का उल्लंघन, भरोसे को तोड़ना या गद्दारी का कार्य। होशे 6:7 हमारे आदि पिता आदम के पाप का वर्णन विश्वासघात के रूप में करता है, जो परमेश्वर के विरूद्ध किया गया, और सम्पूर्ण पवित्रशास्त्र में सभी पापों में 'विश्वासघात' एक आम तत्व है।[31] हम विद्रोह के कार्य में पाप पाते हैं, सच्चे परमेश्वर को मूर्तियों के लिये, त्याग देने या अन्य किसी भी प्रकार के धर्म–परित्याग में या परमेश्वर से विमुख होकर दूर जाने में पाप पाते है।[32]

जब हम उस मनुष्य के प्रति जिसने परमेश्वर के विरूद्ध विश्वासघात किया है, परमेश्वर के कार्य और स्वभाव पर विचार करते है, तब हम पाप के विश्वासघात को अधिक स्पष्ट रूप में देख पाते हैं। वह विश्वासयोग्य परमेश्वर है, जिसकी विश्वासयोग्यता का विस्तार आकाश तक और प्रसार सभी पीढ़ियों में होता चला आया है।[33] वह अपनी सभी योजनाओं और कामों को पूर्ण विश्वासयोग्यता के साथ पूरा करता है।[34] वह सदैव विश्वास बनाये रखता है और बदलता नहीं।[35] वह अपनी वाचा की अभिरक्षा करता और हजारों पीढ़ियों तक अपनी प्रेमपूर्ण करूणा को बनाये रखता है और कभी भी उसके वचनों या प्रतिज्ञाओं में कुछ भी कभी पूरा हुये बिना नहीं रहा।[36] इस कारण, जब मनुष्य परमेश्वर के विरूद्ध पाप करता है, वह उसके प्रति विश्वासघात करता है जो उसकी सबसे अधिक निष्ठा, स्वामिभक्ति, समर्पण एवं कर्त्तव्यनिष्ठा के योग्य है। इसी कारणवश, पाप सबसे अधिक बुरा विश्वासघात है – विद्रोह का सर्वोच्च स्वरूप है – और मृत्युदण्ड के योग्य है।[37] मनुष्य द्वारा किया जाने वाला प्रत्येक पाप उसकी यहूदा इस्करियोति के साथ रिश्तेदारी या भातृभाव को साबित करता है जिसने यीशु को गिरफ्तार कराने में मार्गदर्शन दिया।[38] सुसमाार के प्रचारक होने के नाते हमें मनुष्य के विश्वासघात के बारे में इन कठोर शब्दों को कहना चाहिये, कहीं ऐसा न हो कि हम उस परमेश्वर से विश्वासघात कर बैठे जिसकी सेवा करने की हमें बुलाहट है, और उस सुसमाचार से जिसका प्रचार करने हम बुलाए गये है, और उन मनुष्यों से जिन्हें सत्य सुनने की इतनी अधिक आवश्यकता है।

पाप घृणास्पद है

"छः वस्तुओं से यहोवा बैर रखता है, वरन सात हैं जिनसे उसको घृणा है।"[39] "क्योंकि ऐसे कामों में जितने कुटिलता करते हैं, वे सब तेरे परमेश्वर यहोवा की दृष्टि में घृणित है।"[40] पाप के जघन्य स्वभाव का वर्णन करने जितने भी शब्दों का प्रयोग किया जाता है, उनमें 'घृणास्पद' शब्द सबसे अधिक उचित है। यह इब्रानी के शब्द tow'ebah (टोएबाह) और ग्रीक शब्द bdelugma (डेलगमा) का अनुवाद है। दोनों ही भाषाओं में ये शब्द किसी बुरी, नीच या घृणाजनक वस्तु को दर्शाने वाले सबसे अधिक कठोर शब्द है। वेबस्टर के शब्दकोष में 'घृणास्पद' को परिभाषित करते हुये बताया गया है कि वह अरूचि या विभत्स के योग्य है, ऐसा कुछ जो घृणा, प्रतिकार या अत्याधिक अरूचि उत्पन्न कर दे। सरल शब्दों में कहे तो पाप के सभी स्वरूप प्रभु परमेश्वर के समक्ष घृणा के योग्य है, और उसकी अत्याधिक अरूचि, विभत्सता और नफरत को उत्पन्न करते हैं। ये शब्द कठोर है, परन्तु पवित्र और धर्मी परमेश्वर से इससे कमतर किसी बात की आशा नहीं की जा सकती जिसकी आँखें ऐसी शुद्ध है कि वह बुरी बातों को स्विकृती नहीं दे सकता, और जो उत्पाद को देखकर उसका पक्ष नहीं ले सकता।[41]

पवित्रशास्त्र के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति जो अन्याय करता है वह प्रभु परमेश्वर के समक्ष घृणित है,[42] और पाप का कार्य घृणास्पद है।[43] वास्तव में परमेश्वर दुष्टों से इतना अप्रसन्न होता है कि उनके धर्म के काम भी उसे घृणास्पद लगते है।[44] नीतिवचन का लेखक हमें बताता है कि पाप परमेश्वर के समक्ष केवल घृणित ही नहीं है परन्तु उसके धर्ममय क्रोध या तिरस्कार की वस्तु भी है।[45] वह हमें चेतावनी देता है कि वे जिन्होंने अपनी अनाज्ञाकारिता के द्वारा स्वयं को घृणित ठहरा दिया है वे निश्चय ही बिना दण्ड पाये न रहेंगे।[46] प्रकाशितवाक्य की पुस्तक इस चेतावनी के साथ समाप्त होती है कि जो घृणास्पद है और घृणित कामों में लिप्त है वे अनन्त दण्ड भोगेंगे और परमेश्वर की अनुग्रहमय उपस्थिति से सर्वदा के लिये दूर कर दिये जाएँगे।[47]

यह कैसे हो सकता है कि हम जो पाप के बारे में इन बातों को जानते और विश्वास करते है, अन्य दूसरों को न बताए ?क्या शिष्टाचार और कोमलता के नाम पर हमें यह जानकारी अपने पास दबा कर रखनी चाहिये ?परमेश्वर ने इन पापों को उजागर करने में जिन 'कठोर' शब्दों का उपयोग किया है, यदि हम अपने साथी मनुष्यों के लिए जो अज्ञानता में है और बिना मसीह के मर रहे है इन्हीं शब्दों का उपयोग करे तो क्या यह गलत है ?पाप घृणित है और अनगिनत जीवनों को विनाश की ओर ले जाता है। सुसमाचार का प्रचारक होने के नाते हमें स्वयं को बचाने और मनुष्यों में लोकप्रिय होने की भावना को त्याग देना चाहिये। निडर होकर और प्रेमपूर्वक, हमें उन कठोर शब्दों का उपयोग करना चाहिये जो पाप की दुष्टता या बुराई को सबसे बेहतर रूप में उजागर करते है ताकि मनुष्य उसे महामारी जानकर उससे दूर भागे और मसीह में उद्धार की ओर दौड़े।

निष्कर्ष एवं चेतावनी

इस अध्याय के अन्तिम भाग में पहुँचकर पाठकगण सोच रहे होंगे – ''यह कठोर बात है, कौन इसे समझ सकता है ?''[48] पाप के विषय में सत्य विचलित करने वाला और भाषा कठोर है। परन्तु फिर भी हमें समझना चाहिये कि पाप के विषय में बिना लागलपेट के सीधे–सीधे शिक्षा देना यीशु मसीह के सुसमाचार का एक अतिमहत्वपूर्ण अंग है। मनुष्यों को जानना चाहिये कि वे क्या है और उन्होंने क्या किया है। यद्यपि ये सत्य विक्षुब्धकारी है और तकलीफ भी देते है, पर वे बाइबल के अनुसार है और आवश्यक है।

हमारी समकालीन संस्कृति में हम पाप शब्द का प्रयोग विरले ही करते हैं, इसलिये नहीं कि हमें उससे भी अधिक उचित शब्द मिल गया है परन्तु इसलिये कि अब 'पाप का विचार' करना प्रचलन में नहीं है। हम ऐसे मनुष्यों के मध्य निवास करते है जो नैतिक रूप में भला–बुरा परखने और किसी बात को दण्डनीय ठहराने में असमर्थ है या अनिच्छुक है। पाप अब उतना अधिक पापमय नहीं रह गया है और मनुष्य भी स्वयं को पूर्ण रूप में चारित्रिक भ्रष्ट नहीं मानते। यहाँ तक कि यह कहना कि अमुक बात गलत हो सकती है, असहनीय है, किसी बात को पाप ठहराना अब विचारों से भी परे है और मनुष्य को यह सिखाना कि वे पापी है, अपराध है। परन्तु फिर भी हमारी संस्कृति को यह जान लेना अवश्य है कि एक पवित्र, धर्मी और अपरिवर्तनीय परमेश्वर एक दिन उन सबका न्याय करेगा। जिसे पूर्वकाल में पाप कहा जाता था, वह आज भी पाप है, और जो पहले अनन्तविनाश की ओर ले जाता था, आज भी अनगिनत लोगों को वरन उससे भी अधिक लोगों को निगल जायेगा।

सुसमाचार के प्रचारक होने के नाते हमें इन सत्यों को मनुष्यों के मन पर अंकित करना चाहिये। यद्यपि मनुष्य हमारी भाषा को विक्षुब्धकारी कहेंगे और हमारे अभिप्रायों पर उंगली उठाएंगे, हमें परमेश्वर के द्वारा उपयोग की गई भाषा का उपयोग करने से पीछे नहीं होना चाहिये और उन्हें बताना चाहिये कि सच क्या हैं ताकि मनुष्य वस्तुस्थिति देख सके कि वे क्या है।

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. न्यायियों 20:16, emphasis added
2. नीतिवचन 19:2, emphasis added
3. 1 राजा 8:46; भजन संहिता 143:2
4. सभोपदेशक 7:20
5. यशायाह 53:6
6. रोमियों 3:9–12
7. 1 यूहन्ना 1:8, 10
8. यशायाह 58:1

9. यशायाह 53:6
10. यशायाह 1:3
11. अय्यूब 8:9
12. यशायाह 1:4
13. यशायाह 1:5–6
14. 1 शमूएल 15:23
15. यूहन्ना 8:44
16. याकूब 4:14
17. 1 यूहन्ना 3:4
18. रोमियों 2:14–16; 2 तिमुथि 3:15–17
19. रोमियों 1:20
20. मीका 6:8
21. 1 यूहन्ना 3:4; याकूब 2:10
22. 2 थिस्सलुनियों 2:3; मत्ती 7:23
23. सभी पाप शैतान से है (यूहन्ना 8:44), याकूब 3:6 पढ़ें जिसमें जीभ के विषय में मिलता–जुलता कथन कहा गया है, "वह नरक कुण्ड की आग से जलती रहती है।"
24. नीतिवचन 29:18
25. 1 तिमुथि 2:5
26. रोमियों 8:7
27. रोमियों 3:12; यशायाह 64:6; अय्यूब 15:16; न्यायियों 17:6; नीतिवचन 14:12
28. रोमियों 1:30
29. यूहन्ना 14:15
30. होशे 6:7
31. यहेजकेल 18:24
32. यशायाह 48:8; 1 इतिहास 5:25; भजन संहिता 78:57
33. व्यवस्थाविवरण 7:9; भजन संहिता 36:5; 100:5
34. भजन संहिता 33:4; यशायाह 25:1; 1 थिस्सलुनियों 5:24
35. भजन संहिता 146:6; मलाकी 3:6
36. व्यवस्थाविवरण 7:9; यहोशू 23:14; 1 राजा 8:56
37. यहेजकेल 18:24
38. प्रेरितों के काम 1:16
39. नीतिवचन 6:16
40. व्यवस्थाविवरण 25:16
41. हबक्कूक 1:13
42. व्यवस्थाविवरण 25:16
43. यहेजकेल 16:52
44. नीतिवचन 15:8
45. नीतिवचन 6:16
46. नीतिवचन 16:5
47. प्रकाशित वाक्य 21:27
48. यूहन्ना 6:60

अध्याय – 13

पापीजन महिमा से रहित है

इसलिए कि सबने पाप किया है और परमेश्वर की महिमा से रहित है – रोमियों 3:23

'रहित होना' यह वाक्यांश ग्रीक शब्द hustereo (हस्टेरिओं) का अनुवाद है जिसका अर्थ है, लक्ष्य पाने में असफल होना या अन्तिम उद्देश्य से रहित रहना। उपरोक्त शास्त्रपद के अनुसार लक्ष्य या अन्त, जिससे मनुष्य 'रहित है' वह परमेश्वर की महिमा है। कलीसिया के सम्पूर्ण इतिहास में इस वाक्यांश के सही अर्थ के लिये बहुत से अभिमत उपलब्ध थे; किन्तु सबसे अधिक सामान्य और सबसे अधिक माननीय भावार्थ है : मनुष्य का परमेश्वर की महिमा से रहित होने का तात्पर्य है जैसा उसे चाहिये था वैसा परमेश्वर की महिमा करने में वह असफल हो गया, और उसने उस विशेष सौभाग्य को खो दिया जिसके कारण उसमें परमेश्वर की महिमा थी या उसमें प्रदर्शित होती थी।

परमेश्वर की महिमा करना

पवित्रशास्त्र शिक्षा देता है कि परमेश्वर ने मनुष्य को अपने आदर, स्तुति और भले अभिप्राय के लिये बनाया। हम सांस लेते है केवल इसलिए कि वह सांस परमेश्वर के पास उसकी स्तुति और सराहना के साथ लौट सके। हमारे हृदय एक लय के साथ धड़कते हैं ताकि वे परमेश्वर के लिये धड़के और पूर्ण रूप से सन्तुष्ट रहे। हमारे मस्तिष्क की विशाल जटिलता इसलिये है कि हम उसके बारे में महान विचार सोचे और विस्मय में हतप्रभ खड़े रहे। हमारी शारीरिक शक्ति हमें उसकी सेवा करने और उसकी इच्छा पूरी करने के योग्य बनाती है। संक्षेप में, हम उसी की ओर से, उसी के द्वारा और उसी के लिये है।[1] हम अपना summum bonum परमेश्वर से अपने सम्पूर्ण हृदय, आत्मा, मन और बल के साथ प्रेम रखने में पाते हैं, और यह सब करते हुये हम उसकी महिमा करते हैं।[2]

मनुष्य को पागलपन की हद तक अर्थात् सम्पूर्ण सम्मोहन के साथ परमेश्वर से प्रेम करना चाहिये। कोई भी सन्तुष्टि जिसका उद्‌गम परमेश्वर में नहीं है, वह एक मूर्ति है, और यहाँ तक कि सबसे अधिक छोटे और महत्वहीन कार्य जैसे खाना और पीना भी उसकी महिमा के लिये किये जाने चाहिये, अन्यथा न किये जाए।[3] वेस्टमिन्स्टर शार्टर कैटेकिज्म यह घोषणा करते हुये बिल्कुल सही है

कि 'मनुष्य का प्रमुख लक्ष्य परमेश्वर की महिमा करना और उसमें सदैव आनन्द करना है (प्रश्न. 1)। यह मनुष्य का सौभाग्य और कर्त्तव्य है कि वह परमेश्वर को अन्य सब बातों से उपर रखें, उसी में पूरी तरह सन्तुष्ट रहे, और आदर, भक्ति, कृतज्ञता, आज्ञाकारिता और आराधना सहित उसके सम्मुख जीवन जीये। पाप में पतन से पहले मनुष्य की मूल दशा ऐसी ही थी, और वह कभी पूर्णता प्राप्त नहीं करेगा जब तक कि वह वापस उसी दशा में नहीं पहुँच जाता, जैसा वह मूलरूप में था और जिस उद्देश्य के लिये उसे सृजा गया था।

पवित्रशास्त्र की यह स्पष्ट साक्षी है कि परमेश्वर ने मनुष्य को अपनी महिमा के लिये रचा, परन्तु मनुष्य जानबूझकर उस उद्देश्य से पीछे हट गया। रोम की कलीसिया को लिखा पौलुस का पत्र इस भयंकर वास्तविकता को सर्वोत्तम रूप में समझाता है : "इस कारण परमेश्वर को जानने पर भी उन्होंने परमेश्वर के योग्य बड़ाई और धन्यवाद न किया, परन्तु व्यर्थ विचार करने लगे, यहाँ तक कि उनका निर्बुद्धि मन अन्धेरा हो गया वे अपने आप को बुद्धिमान जताकर मूर्ख बन गए और अविनाशी परमेश्वर की महिमा और नाशमान मनुष्य और पक्षियों और चौपायों और रेंगने वाले जन्तुओं की मूरत की समानता में बदल डाला।"[4] इस शास्त्रपद के अनुसार सभी मनुष्य एकमात्र सच्चे परमेश्वर के बारे में पर्याप्त जानकारी रखते है और न्याय में वे उसके समक्ष निरूत्तर है। फिर भी मनुष्य जो सत्य जानते हैं उसे दबाते हैं और जिस उद्देश्य के लिये सृजे गये हैं उसके विरूद्ध बलवा करते है – उद्देश्य है परमेश्वर को महिमा और आदर देना। सत्य से विमुख होकर वे अन्धकार और व्यर्थता में खो गये है। पश्चाताप करने के बदले वे उस सत्य के विरूद्ध लड़ते हैं जिसे वे जानते हैं और नैतिक पतन के अन्धकार, अधोगति और व्यर्थता में गहिरे और अधिक गहिरे समाते चले जाते है।

मनुष्यों के जीवन का प्रमुख पाप परमेश्वर की महिमा के विरूद्ध विचारधारा या जीवन है, और यह प्रगट करता है कि मनुष्य परमेश्वर से कितना पृथक और दूर हो चुका है।[5] उसने स्वयं को झटक कर उस उद्देश्य से अलग कर लिया है जिसके लिये वह रचा गया था और अपने अस्तित्व के एकमात्र कारण से बहक चुका है। उसने अविनाशी परमेश्वर की महिमा को अपने से दूर कर दिया है और स्वयं को आराधना का पात्र बना लिया है।[6] उसने परमेश्वर की इच्छा का इन्कार कर दिया है और स्वयं को स्वयं का प्रभु बना लिया है। क्या इसमें आश्चर्य है कि वह निरर्थक बातों के पीछे भटक रहा है और महत्वपूर्ण ठहरने के उसके बड़े–बड़े प्रयास अति हास्यास्पद जान पड़ते हैं ?

यह महत्वपूर्ण है कि परमेश्वर को महिमा देने में मनुष्य की असफलता न केवल एक अर्थहीन अस्तित्व की ओर ले जाती है परन्तु यह अन्य सभी पापों को जन्म देने वाली जननी है। रोम की कलीसिया को लिखे पौलुस के पत्र के आरम्भ में दी गई चरित्र–पतन एवं दुर्गुणों की लम्बी सूची सब पापों से बढ़कर केवल एक बड़े पाप का परिणाम है – मनुष्य द्वारा परमेश्वर को पहिचानने और उस रूप में उसका आदर करने से इन्कार।[7] यह पवित्रशास्त्र का पेन्डोरा–बॉक्स है और समस्त संसार को गड़बड़ी और विनाश से भर देता है।[8]

जब कभी हम नास्तिकों के मिथकवादी 'भले' या 'अच्छे' पर प्रत्युत्तर देते हैं तब परमेश्वर की महिमा पर संक्षित विचार विमर्श करना विशेष रूप में महत्वपूर्ण है। लोग अकसर मसीहत के दावों का इन्कार करने के लिये नास्तिकों का सन्दर्भ लेते हैं जो परमेश्वर में विश्वास नहीं करते और न ही उसकी स्तुति–प्रशंसा करते हैं, पर नैतिकता के पक्षधर है जो अपने संगी मनुष्यों का भला चाहते हैं। तर्क यह है कि ऐसे व्यक्ति का न्याय करना और उसे दोषी ठहराना अन्याय है केवल इसलिये कि परमेश्वर के अस्तित्व के विषय विश्वास की संपुष्टि के लिये वह पर्याप्त प्रमाण नहीं पाता।

यह तर्क, यद्यपि लोकप्रिय है पवित्रशास्त्र की जाँच में खरा नहीं उतरता। सर्वप्रथम पवित्रशास्त्र का तर्क है कि वास्तव में कोई नास्तिक या अनीश्वरवादी नहीं है। सभी मनुष्यों को उस एकमात्र सच्चे परमेश्वर का ज्ञान है, क्योंकि परमेश्वर के विषय का ज्ञान उनके मनों में प्रगट है, क्योंकि उसके कामों के द्वारा उन पर प्रगट किया है यहाँ तक कि वे निरूत्तर है।[9]

दूसरी बात, पवित्रशास्त्र का तर्क है कि नास्तिकों की समस्या बौद्धिक नहीं किन्तु नैतिक है। भजनकार के अनुसार, वह मूर्ख है जो अपने मन में कहता है कि परमेश्वर है ही नहीं, और वह ऐसा बौद्धिक कारणों से नहीं कहता, परन्तु इसलिये कि उसमें पाप है और वह बुरा करने की लालसा रखता है। वह परमेश्वर को और उसकी नैतिकता को नहीं चाहता, इसलिये वह दोनों का इन्कार करता है।[10] यह नास्तिकों का बौद्धिक शिष्टाचार नहीं है जो उसे परमेश्वर पर विश्वास करने से रोकता है, पर यह उसकी अभक्ति और अधार्मिकता है जो उसे सत्य को दबाने प्रेरित करती है।[11]

तीसरी बात, पवित्रशास्त्र तर्क देता है कि एक नैतिक नास्तिक का होना सम्भव नहीं है क्योंकि परमेश्वर के अनुग्रह के बाहर ''कोई भी धर्मी नहीं, एक भी नहीं।''[12] तथ्य यह है कि मनुष्य का नैतिकता का दावा करना या बढ़चढ़कर बोलना उसे नैतिक नहीं ठहराता। नैतिकता के सुनने वाले या पक्षधर वास्तव में धर्मी नहीं होते, पर वे जो वास्तव में वही करते हैं जिसकी वे वकालत करते है।[13]

चौथी बात, यह तर्क कि किसी नैतिकतावादी नास्तिक को दोषी ठहराना अन्याय है वास्तविकता के सन्दर्भ में एक विशुद्ध मानववादी एवं मानव केन्द्रित विचार धारा है। मानव केन्द्रित विश्व में मनुष्य, मनुष्य के लिये जिम्मेवार है, पर परमेश्वर केन्द्रित विश्व में मनुष्य मुख्यरूप में परमेश्वर के प्रति जिम्मेवार है और मनुष्यों के प्रति उनकी जिम्मेदारी द्वितीयक है। यद्यपि, अनीश्वरवादी की संगी मनुष्य के प्रति धार्मिकता का घमण्ड वास्तविक है, तौभी वह परमेश्वर के प्रति उसकी प्राथमिक जिम्मेदारी और सम्बन्धों का पालन करने में असफल हो चुका है जिसने उसे जीवन और स्वांस और सब बातें दी है।[14] परमेश्वर के विरूद्ध मनुष्य का यह पाप किसी भी अन्य अनैतिकता से असीमित रूप में बढ़कर है जो वह अपने साथी मनुष्यों के प्रति कर सकता है।

अन्त में नैतिक नास्तिक कहलाने वाला व्यक्ति दोषी है क्योंकि वह न केवल परमेश्वर को महिमा देने से इन्कार करता है परन्तु उसकी महिमा की चोरी करने का प्रयास भी करता है। सभी मनुष्य नैतिक पतन और तत्वतः भ्रष्टता के साथ जन्म लेते है। केवल एक बात जो मनुष्यों की बुराई

पर अंकुश लगाती और उन्हें भलाई करने या दर्शाने के लिये प्रेरित करती है, वह है परमेश्वर का आम अनुग्रह। यदि परमेश्वर अपने इस अनुग्रह को हटा ले और मनुष्यों को उनके हृदयों की विकृति के आधीन छोड़ दे तो मानवजाति अतिशीध्र स्वयं का सर्वनाश कर लेगी, पृथ्वी पर शाब्दिक अर्थ में नरक बन जाएगा – कम से कम जब तक पृथ्वी है तब तक। ईश्वरीय अनुग्रह समाज को जोड़कर रखता है ताकि परमेश्वर मानवजाति के नैतिक पतन और नैराश्य के मध्य में छुटकारे के अपने कार्य को सम्पन्न कर सके। यह नास्तिक का मानववाद या नैतिकता का कोई उच्चस्तर नही है जो उसे क्रम से हत्याएँ करने से रोकता हो और आभासी तौर पर जो भले काम वह करता है उन्हें करने के योग्य बनाता हो, परन्तु यह परमेश्वर का परोपकारी प्रयोजन है जो अपनी इच्छा की मत के अनुसार सब कुछ करता है।[15] इस कारण अनीश्वरवादी का अपराध यह है कि वह हठपूर्वक उस परमेश्वर का इन्कार करता हैं जो उसे बुराई करने से रोकता है और अपने अनुग्रह द्वारा भलाई या उसके समकक्ष कार्य की इच्छा प्रदान करता है। अनीश्वरवादी परमेश्वर के कार्य को अपना कार्य बताता है और उस महिमा को अपने लिये ले लेता है जो परमेश्वर को दी जानी चाहिये। वह बुरे से बुरा चोर है, घृणायोग्य पाखण्डी है, उसका दोषी ठहराया जाना उचित है।[16]

परमेश्वर की महिमा लिए हुए चलना

परमेश्वर ने मनुष्य की सृष्टि की ताकि वह परमेश्वर की गौरवशाली समानता में से कुछ धारण करे।[17] हम इस शब्द का सम्पूर्ण अभिप्राय नहीं समझते पर हम यह जानते हैं कि ईश्वरीय संकल्प के द्वारा परमेश्वर ने मनुष्य को मिट्टी से बढ़कर बनाया है – महिमा का प्राप्तकर्ता और उसे प्रतिबिंबित करने वाला। उसने परमेश्वर के साथ सहभागिता में चलने और रूपान्तरित होने के समझ से परे और अवर्णनिय सौभाग्य को पाया है तांकि "जब वह उसके 'उघाड़े हुये चेहरे' के साथ परमेश्वर को देखे तब उसी तेजस्वी रूप में 'अंश अंश करके बदलता जाए'।"[18] परन्तु मनुष्य ने उस दिन सबकुछ खो दिया जब आदम ने स्वयं को ईश्वरत्व से ऊँचा उठाया और एक सीमित प्राणी होकर भी असीम बुद्धिमान और दयालु, कृपालु परमेश्वर के प्रभुत्व को ठुकराकर स्वयं के शासन को चुन लिया। बदले में, आदम निराश्रित और उस महिमा से रिक्त, जो कभी उसमें भरपूरी के साथ थी। पाप ने परमेश्वर की प्रतिकृति को समाप्त कर दिया और मनुष्य के माथे पर ईकाबोद (अर्थात् महिमा जाती रही) लिख दिया गया, क्योंकि परमेश्वर की महिमा उसमें से चली गयी।[19] इस प्रकार, आदम जैसा सृजा गया था उसके ठीक विपरीत बन गया, एक दागदार और क्षतविक्षत दर्पण जिसका अब कोई उपयोग नहीं था।[20] उसका हृदय भीतर से खोखला और खाली हो गया और सख्त चट्टान के बने तहखाने में मानों कैद हो गया। उसका बाहरी व्यक्तित्व भी उसके आन्तरिक व्यक्तित्व का प्रतिरूप दर्शाने लगा, वह विकृति एवं विस्थापना से युक्त प्राणी बन गया जिसने अपना स्थान खो दिया था और जिस कारण वह सृजा गया था उस कारण को विकृत कर दिया।

यही वह विरासत है जो आदम अपने पुत्रों और पुत्रियों के लिये छोड़ गया था। यद्यपि, कई सहस्त्राब्दियाँ बीत चुकी है, मनुष्य अपनी पारिवारिक विरासत को प्राप्त करने में असमर्थ रहा है। सभी मनुष्य उसकी समानता में जन्म लेते हैं जो उस समानता से गिर चुका है जिसमें उसकी सृष्टि हुई थी।[21] मनुष्य जाति अब उस शाप के आधीन जीवन चला रहा है परन्तु फिर भी परमेश्वर का पर्याप्त प्रतिरूप अब भी मनुष्य में बाकी है जिसके कारण वह उस परमेश्वर को छोड़कर जिससे वह दूर भाग रहा है अन्य किसी व्यक्ति या वस्तु से सन्तुष्ट नहीं हो सकता।[22] वह स्वयं को इस संसार की शोहरत और सम्पत्ति से सुसज्जित कर सकता है परन्तु फिर भी वह नग्न ही रहेगा। वह स्व–मूल्यांकन से स्वयं को धा सकता है और सहयोगी समूहों से घिरा रह सकता है जो उसके प्रत्येक विचार और कार्य का समर्थन करे परन्तु फिर भी वह अपने विवेक के न रूकने वाले लगातार आरोपों से बच नहीं सकता। वह चाहे तो संसार को और अन्य हजारों को जीत ले, परन्तु उसकी वास्तविक निर्धनता उसे भीतर ही भीतर लगातार कुरेदती रहेगी। परमेश्वर ने मनुष्य के हृदय को अपने निवास के लिये बनाया है जो उससे कमतर किसी भी वस्तु से भरा नहीं जा सकता। जैसा कि अगस्टीन ने लिखा है : "तू हमें तेरी स्तुति–प्रशंसा में आनन्द करने उभारता है; क्योंकि तू ने हमें अपने लिये बनाया है, और हमारे हृदयों में विश्राम नहीं जब तक वे तुझ में शांति नहीं पाते।"[23]

यद्यपि, मनुष्य की वास्तविकता घोर अन्धकारमय है, इस मानव निर्मित दुर्दशा का एक उज्वल पक्ष भी है। यह कलीसिया को सुसमाचार प्रचार करने का उत्कृष्ट अवसर प्रदान करती है, परन्तु यह तभी होगा जब कलीसिया और उसके संदेश वास्तव में मसीही हो। सर्वप्रथम, हमें इस वर्तमान पीढ़ी के जालफन्दों और परमेश्वर के स्थानापन्न को खोजने के उनके व्यर्थ प्रयासों से छुटकारा पाना होगा। इस खाली संसार में साक्षी बनने के लिये अवश्य है कि परमेश्वर हमें तृप्त करे और उसकी इच्छा पूरी करने में सन्तुष्टि दे। यह चिन्ह हमारे विरोध में है कि भले ही पश्चिमी जगत के मसीही सबसे अधिक धनवान है और कलीसिया के इतिहास में सबसे अधिक सुरक्षित रहे हैं, पर वे खालीपन में भी सबसे अधिक है। हमारे मसीही पुस्तकों के भण्डार हमारे विरूद्ध साक्षी है। हमारे खालीपन के उपचार हेतु कितनी पुस्तकें लिखी गई कि हमारी उद्देश्यहीनता में सुधार करे और हमारे स्व–मूल्यांकन पर रोक लगाये ?फिर भी हम उन सभी बातों में खाली है जिनमें यीशु कभी खाली नहीं था। अकसर वह थका हुआ, भूखा, गलत समझा गया, सतावग्रस्त और अकेला छोड़ा गया, पर वह कभी खाली नहीं था। यीशु ने अपनी भरपूरी के लिये जो कारण बताया, वह हमारे खालीपन का एक स्पष्टिकरण भी है – "परन्तु उसने उनसे कहा, मेरे पास खाने के लिये ऐसा भोजन है जिसे तुम नहीं जानते... मेरा भोजन यह है कि अपने भेजने वाले की इच्छा के अनुसार चलू और उसका काम पूरा करूं।"[24] पश्चिमी देशों का मसीही खाली है क्योंकि वह संसार से भरा है, स्वार्थ में खोया हुआ है, और अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करने समर्पित है। खालीपन से वास्तविक भरपूरी में आने के लिये हमें स्वयं से परमेश्वर की ओर और स्व–इच्छा से परमेश्वर की इच्छा की ओर गम्भीर परिवर्तन करना होगा।

दूसरी बात, कलीसिया को प्रासंगिक होने के स्थान पर बाइबल सम्मत होने का निर्णय करना होगा। हम संस्कृति पर कोई प्रभाव इसलिये नहीं छोड़ेंगे कि हमने उसका अध्ययन किया है और उसके अनुरूप स्वयं को ढ़ाल लिया है। हम केवल उसी सीमा तक प्रभाव एवं प्रकाश छोड़ेंगे, जिस सीमा तक हम परमेश्वर के कार्य करने के तौर तरीकों का अध्ययन करते हैं और संस्कृति की सदा उफनाती और मार्ग बदलती नदी की धारा के बीच उनके प्रति विश्वासयोग्य रहते है। हम संसार के लिये प्रासंगिक नहीं है क्योंकि हम उनके समान है। हम प्रासंगिक बनते है जब संसार को सीधे–सीधे इन्कार करते है और एक ध्रुव से दूसरे ध्रुव जैसे विपरीत रहते है!

वर्तमान युग का अन्धकार कलीसिया को एक बड़ा अवसर प्रदान करता है कि वह पृथ्वी का नमक बनें, परन्तु यदि हम अशुद्धताओं से घुलमिल जाएंगे, जिन्हें हमें उजागर करना है, तो हम आगे किसी काम के नहीं रहेंगे केवल इसके कि बाहर फेंके जाये और जिन मनुष्यों को प्रभावित करने की बुलाहट दी गई हैं उन्हीं के पाँवों तले रौंदे जाये।[25] हमारे पास बहुत बड़ा अवसर है कि पहाड़ पर बसा हुआ नगर बने, पर यदि हम जो प्रकाश देते है संस्कृति के विचारों और अभिलाषाओं के मसीही संस्करण से बढ़कर नहीं है तो हम निरूपयोगी है, जैसा कि हमारी संस्कृति हमारे विषय में पहले से ही ऐसा मानती है।[26] हमें बाइबल–सम्मत सुसमाचार के अथक और समझौता न करने वाले सत्यों के साथ हमारे युग के खालीपन का सामना करना चाहिये। हमें केवल परमेश्वर में सन्तुष्ट, केवल उसकी इच्छा के प्रति समर्पित और उसकी समानता में बदले हुये होना चाहिए। तब हम परमेश्वर की निष्पाप और निर्दोष सन्तान कहलाएँगे। हम इस दुष्ट और विकृत पीढ़ी में निन्दा या बदनामी से बच पाएंगे। जब हम जीवन के वचन को मसीह के दिन तक दृढ़ता से थामे रहेंगे, हम इस संसार में अन्धकार के बीच ज्योति के रूप में खड़े हो पाएंगे।[27]

यह जीवन शैली बड़े साहस की माँग करती है। हमें तैयार रहना होगा कि हम मनुष्यों को बताए कि वे मूल रूप में और तत्व रूप में महत्व, आत्म–सम्मान और आत्मबोध की खोज में गलत है। हमें मानववाद एवं भौतिकवाद की झूठी आशाओं के मुखौटे उतारने होंगे और तथाकथित मसीहत के हर उस स्वरूप को उजागर करना होगा जो मनुष्य को इन सब बातों के बपतिस्मा संस्करण के द्वारा चंगाई की खोज में अग्रसर करता है। हमें यीशु से अधिकाधिक प्राप्त करने, उद्‌देश्य में अन्य उद्‌देश्य ढुँढ़ने या "आज ही सर्वोत्तम जीवन" (Best life now) पाने के सभी प्रयासों का तीव्र विरोध करना होगा। हमें संसार की विचारधारा से समायोजन और उसे बदलकर मसीहत के अनुकूल बनाने का प्रयास नहीं करना चाहिये। हमें बालू में एक रेखा खीचनी होगी और मसीह की शिक्षाओं और उसके सुसमाचार की मूलभूत बातों में दृढ़तापूर्वक बने रहना चाहिये। हमें सत्य का प्रचार करना चाहिये और जो प्रचार करते है उसका एक उदाहरण बनना चाहिये। हमें हमारे प्रभु यीशु मसीह को जानने और पहिचानने के समझ से परे मुल्य के सामने सभी बातों को हानि समझ लेना चाहिये और उन्हें कूड़ा समझना चाहिये ताकि हम मसीह को प्राप्त करे और उस में पाये जाये।[28]

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. रोमियों 11:36
2. summum bonum एक लैटिन वाक्यांश है जिसका अर्थ है – "सबसे महानतम् भलाई।" मनुष्य अपना सर्वोच्च उद्देश्य या लक्ष्य परमेश्वर में पाता है। मत्ती 22:37; 1 कुरिन्थ 10:31.
3. 1 कुरिन्थियों 10:31
4. रोमियों 1:21–23
5. पाप, परमेश्वर की महिमा करने का प्रतिवाद या सीधा विरोध है।
6. रोमियों 1:23
7. रोमियों 1:21–32
8. पौराणिक गाथाओं में पैन्डोरा बॉक्स में मानव जाति की सभी बीमारियाँ बन्द थी, जीयुस ने वह बॉक्स पैण्डोरा को इस आज्ञा के साथ दिया था कि वह उसे कभी न खोले, पर पैन्डोरा ने उसे खोल दिया।
9. रोमियों 1:19–20
10. भजन संहिता 14:1–3; 53:1–3 मूर्ख यह शब्द, इब्रानी भाषा के शब्द nabal का अनुवाद है जिसका अभिप्राय एक मूर्ख या अज्ञानी व्यक्ति से है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि nabal शब्द नैतिकता से संबन्धित शब्द है और उसका आशय अज्ञानता के शिकार व्यक्ति से नहीं है जो बुद्धि प्राप्त करना चाहता है, परन्तु उस व्यक्ति से है जो बुद्धि को तुच्छ जानता और जानबूझकर अज्ञानी बना रहता है।
11. रोमियों 1:18
12. रोमियों 3:10–12
13. रोमियों 2:13; याकूब 1:22
14. प्रेरितों के काम 17:25
15. इफिसियों1:11
16. रोमियों 3:8
17. उत्पत्ति 1:26
18. 2 कुरिन्थियों 3:18
19. 1 शमूएल 4:21
20. रोमियों 3:12 पाप में पतित मनुष्य का एक लक्षण उसका सम्पूर्ण रूप में निरूपयोगी होना है : "वे सबके सब निकम्मे बन गये।"
21. उत्पत्ति 5:3
22. उत्पत्ति 3:16–24; याकूब 3:9
23. Augustine, *The Confessions of St. Augustine, Bishop of Hippo* (London: J. M. Dent, 1950), 1.1.
24. यूहन्ना 4:32, 34
25. मत्ती 5:13
26. मत्ती 5:14–16
27. फिलिप्पियों 2:15–16
28. फिलिप्पियों 3:7–9

अध्याय – 14

मनुष्य पूर्णतः पापी

इसलिए कि सबने पाप किया है और परमेश्वर की महिमा से रहित है – रोमियों 3:23

इस अध्याय में, हम एक महत्वपूर्ण सत्य का सामना करेंगे : मनुष्य इसलिए पाप करते हैं क्योंकि वे जन्म से ही नैतिक रूप से भ्रष्ट हैं।[1] ईश्वर वैज्ञानिक मनुष्य की जन्मजात नैतिक पतन की गहराई का वर्णन करने के लिए जिन महत्वपूर्ण संज्ञाओं का वर्णन करते हैं, उनमें से सबसे महत्वपूर्ण शब्द हैं भ्रष्टता। यह शब्द उपसर्ग *de (de-pravty)*, जो तीव्रता को दर्शाता है, और लैटिन शब्द प्रैवस *(pravus)* से व्युत्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ है विकृत या कुटिल। किसी को नैतिक भ्रष्ट कहने का अर्थ है, उसकी मूल अवस्था या स्वरूप पूर्ण रूप से भ्रष्ट या बिगड़ा हुआ है। यह कहना कि मानवजाति नैतिक भ्रष्ट है यह अभिप्राय रखता है कि वह धार्मिकता की अपनी मूल अवस्था से गिर गया है और सभी मनुष्य स्वभाव से नैतिक रूप में भ्रष्ट पापी के रूप में जन्मे हैं। इस नैतिक भ्रष्टता की हद का वर्णन करने हेतु, ईश्वर वैज्ञानिक अक्सर एक ही सत्य निवेदन करने हेतु समान विभिन्न संज्ञाओं का उपयोग करते है। उन में से सर्वसाधारण ये है : समग्र नैतिक भ्रष्टता, आत्मिक मृत्यु और नैतिक अक्षमता।

समग्र नैतिक भ्रष्टता

मानव की पतित अवस्था का वर्णन करने हेतु सुधारवादी ईश्वरविज्ञानियों (Reformed Thiologians) द्वारा और अन्य लोगों द्वारा समग्र नैतिक भ्रष्टता इस वाक्प्रयोग का लम्बे समय से उपयोग किया जा रहा है। यद्यपि उचित रूप से परिभाषित की जाए तो यह भाषा सन्तोषजनक है, ये व्यापक नैतिक भ्रष्टता और मौलिक नैतिक भ्रष्टता वाक्प्रयोग अधिक योग्य हो सकते हैं।[2] यह कहना कि प्रत्येक मनुष्य पूर्ण रूप से नैतिक भ्रष्ट है, यह अभिप्राय नहीं रखता कि वह हर सम्भव बुरा है या उसके हर काम पूर्ण रूप से या सर्वथा बुरे हैं। बल्कि उसका अर्थ यह है कि पथभ्रष्टता या नैतिक भ्रष्टता ने उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित किया है – शरीर, बुद्धि और इच्छा। निम्निलिखित

अनुच्छेदों में हम विचार करेंगे कि समग्र नैतिक भ्रष्टता का क्या अर्थ है और क्या अर्थ नहीं है।

सबसे पहले, समग्र नैतिक भ्रष्टता का अर्थ यह नहीं है, कि मनुष्य में नीहित परमेश्वर का स्वरूप पतन में पूर्ण रूप से खो गया। कई वचनों में, पवित्रशास्त्र अब भी मनुष्य का उल्लेख "परमेश्वर के स्वरूप में सिरजा हुआ" के रूप में करता है।[3] समग्र नैतिक भ्रष्टता का अर्थ यह अवश्य है कि मनुष्य में परमेश्वर का रूप गम्भीर रूप से विकृत हो गया है या बिगड़ गया है, और यह कि नैतिक भ्रष्टता ने पूर्ण व्यक्तित्व को दूषित कर दिया है – शरीर, बुद्धि, भावनाएं और इच्छा।[4]

दूसरी बात, समग्र नैतिक भ्रष्टता का अर्थ यह नहीं है कि मनुष्य को परमेश्वर के व्यक्तित्व या उसकी इच्छा का ज्ञान नहीं है। पवित्रशास्त्र हमें सिखाता है कि सभी मनुष्य सच्चे परमेश्वर के विषय में और उसकी इच्छा के विषय में पर्याप्त ज्ञान रखते है ताकि न्याय के दिन परमेश्वर के सामने निरूत्तर रहे।[5] इसका अर्थ यह है कि अनुग्रह के विशेष कार्य के बिना सभी मनुष्य अपनी व्यर्थ सोच के पक्ष में परमेश्वर के सत्य का इन्कार करते हैं। वे परमेश्वर के सत्य के प्रति आक्रामक रवैया अपनाते हैं और उसे दबाने का प्रयास करते हैं ताकि उनके विवेक में जो बचा है वह विचलित न होने पाए।[6] मनुष्य परमेश्वर के विषय में पर्याप्त ज्ञान रखता है, फिर भी वह उससे घृणा करता है और उसकी इच्छा का भी पर्याप्त ज्ञान रखता है, फिर भी वह उसका इन्कार करता और उसका विरोध करता है।

तीसरी बात, समग्र नैतिक भ्रष्टता का अर्थ यह नहीं है कि मनुष्य को विवेक नहीं है या वह भले और बुरे के प्रति पूर्ण रूप से अनजान है। पवित्रशास्त्र हमें सिखाता है कि सभी मनुष्यों में विवेक है, जो यदि कठोर न किया जाए, तो उन्हें सच्चरित्र और कार्यों का समादर करने का मार्ग दिखा सकता है।[7] उसका अर्थ यह है कि मनुष्य सम्पूर्ण मन से अपने विवेक के आदेशों के प्रति आज्ञाकारी नहीं होते। मनुष्य इसलिए धर्मी नहीं है क्योंकि वह जानता है कि अच्छा क्या है या जो बुरा है उसका धिक्कार करता है, परन्तु इसलिए कि जो अच्छा वह जानता है, उसे वह करता है।[8]

चौथी बात, समग्र नैतिक भ्रष्टता का अर्थ यह नहीं है कि मनुष्य सद्‌गुण दर्शाने के लिए असमर्थ है। ऐसे भी लोग हैं जो अपने परिवारों से प्रेम करते हैं, दूसरों को बचाने के लिए अपने जीवनों का बलिदान करते हैं, उनके नागरी कर्तव्य पूरे करते हैं और धर्म के नाम में भले काम करते हैं। इसका अर्थ यह है कि ऐसा गुण परमेश्वर के लिए सच्चे प्रेम से या उसकी आज्ञाओं को मानने की सच्ची अभिलाशा से प्रेरित नहीं है। पवित्रशास्त्र की यह गवाही है कि कोई भी व्यक्ति योग्य रीति से या व्यवस्था की आज्ञा के अनुसार परमेश्वर से प्रेम नहीं करता, और न ही ऐसा कोई मनुष्य है जो अपने प्रत्येक विचार, शब्द और कार्य में परमेश्वर को महिमा देता हो।[9] सभी मनुष्य परमेश्वर से अधिक स्वयं को पसन्द करते हैं, और यह खुद के प्रति या दूसरों के प्रति प्रेम होता है – परमेश्वर का प्रेम नहीं – जो मनुष्यों को परोपकारिता, वीरता, नागरी कर्तव्य, और बाहरी धार्मिक कल्याण

के लिए प्रवृत्त करता है।[10]

पाँचवीं बात, समग्र नैतिक भ्रष्टता का अर्थ यह नहीं है कि सभी मनुष्य जितने हो सके उतने अनैतिक हैं, यह कि सभी मनुष्य समान रूप से अनैतिक हैं, या सभी मनुष्य हर प्रकार की विद्यमान बुराई में सहभागी होते हैं। सभी मनुष्य अपचारी, व्यभिचारी, या हत्यारे नहीं होते। इसका अर्थ यह है कि सभी मनुष्य बुराई की ओर प्रवृत्त या झुकाव रखने वाले होते हैं, और सभी मनुष्य अत्यन्त अवर्णनीय अपराध और अत्यन्त लज्जाजनक काम करने में समर्थ है। सारांश में, सभी मनुष्य बडी से बडी नैतिक भ्रष्टता की ओर झुकाव रखते हैं, और यदि उसे रोकने वाला परमेश्वर का आम अनुग्रह न होता, तो यह नैतिक विकृति और तेजी से और अधिकाई से बढ़ती जाती।[11] मनुष्य अपने स्वयं के कामों के द्वारा इस अधोपतन से अपने आप को मुक्त या चंगा नहीं कर सकता।[12]

अन्त में, समग्र नैतिक भ्रष्टता का अर्थ यह नहीं है कि मनुष्यों के पास परमेश्वर की आज्ञा मानने के लिए आवश्यक मानसिक क्षमता नहीं है। मनुष्य वह पीडित नहीं है जो आज्ञा मानने की इच्छा रखता है परन्तु उसके नियंत्रण से परें तथ्यों के कारण वह आज्ञा मानने में असमर्थ है। परमेश्वर ने मनुष्य को बुद्धि, इच्छा और चुनाव करने की स्वतंत्रता बहाल की है। इस कारण, मनुष्य परमेश्वर के समक्ष एक नैतिक अभिकर्ता के रूप में जिम्मेदार है। समग्र नैतिक भ्रष्टता का अर्थ यह है कि मनुष्य खुद को परमेश्वर के आधीन नहीं कर सकता, क्योंकि वह नहीं करेगा, और परमेश्वर के प्रति उसकी शत्रूता के कारण वह ऐसा नहीं करेगा।[13]

आत्मिक मृत्यु

दूसरा महत्वपूर्ण वाक्प्रयोग जिसका उपयोग धर्मशास्त्र के पण्डित मनुष्य की नैतिक भ्रष्टता की गहराई का वर्णन करने के लिए करते हैं, वह है आत्मिक मृत्यु। वाटिका में, परमेश्वर ने आदम को चेतावनी दी कि जिस दिन वह मना किए हुए वृक्ष का फल खाएगा, उस दिन वह अवश्य मरेगा।[14] यद्यपि बाद के कई वर्षों तक आदम की मृत्यु नहीं हुई, फिर भी एक वास्तविक अर्थ से उसी क्षण उसकी आत्मिक रीति से मृत्यु हो गई जब उसने अधीनता के बदले खुद के फैसले को स्थान दिया और परमेश्वर के विरोध में पाप किया।[15] उसके विनाशक चुनाव के कारण, आदम परमेश्वर से दूर हो गया, और मृत्यु उसके व्यक्तित्व के उस अंश पर उतर आई जिसके कारण वह अपने सिरजनहार को जानने और उसके साथ सहभागीता रखने में समर्थ था। संक्षिप्त में, वह आत्मिक शव बन कर रह गया। वह शारीरिक रूप से जीवित, परन्तु आत्मिक रीति से मरा हुआ था। वह हर प्रकार के मानवीय और दुष्टात्माओं के दुष्ट प्रोत्साहन के प्रति प्रतिक्रियाशील हो गया, परन्तु वह परमेश्वर के व्यक्तित्व और इच्छा के प्रति उदासीन बन गया।

पवित्रशास्त्र हमें सिखाता है कि आदम की अनाज्ञाकारिता का यह विनाशकारी परिणाम केवल उस तक सीमित नहीं था, परन्तु आदम के वंश के सारे सदस्यों का जन्म आत्मिक रीति से मृत के रूप में होता है। इफिसियों की पत्री में पौलुस के मौलिक बयान का यही अर्थ है : "और उसने तुम्हें भी जिलाया, जो अपने अपराधों और पापों के कारण मरे हुए थे, जिनमें तुम पहले इस संसार की रीति पर, और आकाश के अधिकार के हाकिम अर्थात् उस आत्मा के अनुसार चलते थे, जो अब भी आज्ञा न माननेवालों में कार्य करता है। इनमें हम भी सब के सब पहले अपने शरीर की लालसाओं मे दिन बिताते थे, और शरीर, और मन की मनसाएं पूरी करते थे, और अन्य लोगों के समान स्वभाव ही से क्रोध की सन्तान थे।"[16] इन वचनों में, हम पाते हैं कि सभी मनुष्य इस संसार में आत्मिक रूप से मृत होकर जन्म लेते हैं, वें सच्चे आत्मिक जीवन से रहित, और परमेश्वर के व्यक्तित्व और इच्छा के प्रति गैर जिम्मेदार है। वे "परमेश्वर के जीवन से अलग हो गए हैं", और ऐसे जीवन बिताते हैं मानो वे उसके लिए मरे हों, और वह उनके लिए।[17] इसी कारण भजन का लेखक हमें बताता है कि पतित मनुष्य परमेश्वर की खोज नहीं करते, और उनके विचारों में उसके लिए कोई स्थान नहीं है।[18] पतित मनुष्य परमेश्वर की सच्चाई पर या उसकी आज्ञाओं के अनुसार चलने की जरूरत पर विचार नहीं करता। वह व्यवहारिक रूप से नास्तिकता का जीवन जीता है। भले ही वह परमेश्वर के अस्तित्व को या किसी प्रकार के देवता को कबूल करते हैं, फिर भी उनके जीवन पर कोई व्यवहारिक या सच्चा प्रभाव नहीं पड़ता। वह जीवित होते हुए भी मरा हुआ है और अपने जीवन पर घमण्ड करता है।[19] परमेश्वर के प्रति उसका ह्रदय पत्थर का है, और वह पतझड़ के फलहीन वृक्ष के समान है, दुगना मरा हुआ और उखाड़ दिया गया।[20] वह जीवित शव है जिसकी धार्मिकता मैले चिथड़ों के समान है और उसके अत्यन्त धार्मिक कर्म निर्जिव काम हैं।[21]

नैतिक अक्षमता

एक और वाक्प्रयोग जो आत्मिक मृत्यु के सिद्धान्त से निकट तौर पर जुड़ा हुआ है, वह है नैतिक अक्षमता। इस वाक्प्रयोग का उपयोग सामान्य तौर पर मनुष्य की नैतिक भ्रष्टता के प्रसार का वर्णन करने के लिए किया गया है, और यह सिद्धान्त हमें सिखाता है कि पतित मनुष्य परमेश्वर से प्रेम करने, उसकी आज्ञाए मानने, और उसे प्रसन्न करने में असमर्थ है।

इस प्रकार की शिक्षा को सुनकर कोई शायद पूछे, "जब मनुष्य परमेश्वर की आज्ञा के अनुसार कुछ भी नहीं कर सकता, तब वह परमेश्वर के सम्मुख कैसे जिम्मेदार सिद्ध होता है ?" उत्तर अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यदि मनुष्य ने परमेश्वर से प्रेम नहीं किया या उसकी आज्ञा नहीं मानी क्योंकि

उसमें ऐसा करने की मानसिक क्षमताएं नहीं होती या किस रीति से शारीरिक रूप से प्रतिबन्धित होता, तब उसे उत्तरदायी मानना परमेश्वर के लिए अन्यायपूर्ण होता – वह एक पीडित होता। परन्तु मनुष्य की समस्या यह नहीं है। उसकी अक्षमता नैतिक समस्या है जो परमेश्वर के प्रति शत्रूता से उत्पन्न हुई है।[22] मनुष्य परमेश्वर से प्रेम नहीं कर पाता, क्योंकि वह उससे घृणा करता है।[23] वह परमेश्वर की आज्ञा का पालन करने में असमर्थ है क्योंकि वह उसकी आज्ञाओं की अवहेलना करता है। वह परमेश्वर को प्रसन्न कर पाने में असमर्थ है क्योंकि वह परमेश्वर की महिमा और उसके भले अभिप्राय को योग्य लक्ष्य नहीं मानता।[24] मनुष्य पीड़ित नहीं है, बल्कि गुनाहगार है। वह नहीं कर सकता क्योंकि वह नहीं करेगा। उसकी भ्रष्टता और परमेश्वर के प्रति उसकी शत्रूता इतनी बड़ी है कि वह परमेश्वर को परमेश्वर करके अंगीकार करने और उसकी सम्प्रभुता के आधीन होने के बजाय अनन्त दण्ड सहना पसन्द करेगा।

इस कारण, नैतिक अयोग्यता को ईच्छापूर्वक शत्रूता भी कहा जा सकता है। यूसुफ और उसके भाईयों के बीच जो रिश्ता था, वह इस सत्य को उत्तम रीति से समझाता है : "परन्तु जब उसके (यूसुफ के) भाईयों ने देखा कि हमारा पिता हम सब भाईयों से अधिक उसी से प्रेम करता है, तो वे उससे बैर रखने लगे और उसके साथ ठीक से बात भी नहीं करते थे।"[25] यह वचन स्पष्ट करता हैं कि यूसुफ के भाई उसके साथ मित्रतापूर्ण बातचीत नहीं कर सकते थे। इसका कारण यह नहीं था कि उनमें बात करने की शारीरिक योग्यता नहीं थी, परन्तु उसके प्रति उनका बैर इतना अधिक था कि वे उसके साथ मित्रता रखने के इच्छुक नहीं थे। उसी तरह परमेश्वर के प्रति पतित मनुष्य का बैर इतनी अधिक है कि वह परमेश्वर से प्रेम कर नहीं सकता या उसकी आज्ञाओं के अधीन नहीं हो सकता।

एक राजनीतिक कैदी की कल्पना करें जिसे अपने राजा और देश के साथ विश्वासघात करने की वजह से उचित ही कालकोठरी में डाल दिया गया है। एक दिन एक न्यायी और दयालू राजा उसकी कोठरी को भेंट देता है और दरवाजा खोल देता है। तब वह उस कैदी को पूर्ण क्षमा का अभिवचन देता है और केवल एक शर्त पर उसकी पूर्ण आजादी लौटाने का वादा करता है कि वह अपने विद्रोह को त्याग दे, राजा का आदर करे, और राजा के कानून के अधीन हो। राजा का शब्द सुनकर कैदी तेजी से दरवाजे के पास जाता है और जोर से दरवाजे को पटककर बंद कर देता है और फिर से खुद को उस भयानक कालकोठरी में कैद कर लेता है। फिर वह गुस्से से राजा पर नाराजगी जाहिर करते हुए चिल्लाता है, "तेरे सामने अपने घुटने टेकने के बजाय, मैं इस कोठरी में सड़कर मरना पसन्द करूंगा।" नया जन्म न पाए हुए हृदय की यही दशा है। परमेश्वर के प्रति मनुष्य की शत्रूता इतनी अधिक है कि परमेश्वर को योग्य आदर और महिमा देने और आज्ञाओं को मानने के बजाय वह नर्क में बर्बाद होना अधिक पसन्द करता है!

यह बाइबल का सत्य है कि मनुष्य की इच्छा उसके स्वभाव के अधीन है। यदि मनुष्य के पास नैतिक रूप से शुद्ध स्वभाव होता, तो उसकी इच्छा नैतिक रूप से पवित्र कार्यों की ओर प्रवृत्त होती; तो वह पवित्र और धर्मी परमेश्वर से प्रेम करता, और वह उसकी आज्ञाओं का आदर करता और उनका पालन करता। परन्तु पतित मनुष्य के पास नैतिक दृष्टि से भ्रष्ट स्वभाव है, और उसकी इच्छा नैतिक रूप से भ्रष्ट कामों की ओर प्रवृत्त है। इस प्रकार, वह पवित्र और धर्मी परमेश्वर से घृणा करता है, उसके सत्य से मुंह फेरता है और उसकी आज्ञाओं के विरोध में विद्रोह करता है।

पतित मनुष्य के स्वभाव और इच्छा के बीच पाए जाने वाले इसी अटूट रिश्ते में हमें बारबार पूछे जाने वाले इस प्रश्न का उत्तर मिलता है कि : "क्या मनुष्य के पास स्वतंत्र इच्छा है ?" पवित्र शास्त्र यह उत्तर देता है : मनुष्य अपनी इच्छा के अनुसार चुनाव करने के लिए स्वतंत्र है, परन्तु क्योंकि वह अधर्मी है, इसलिए वह बुराई का चुनाव करने से प्रसन्न होता है। दूसरे शब्दों में, पतित मनुष्य के पास स्वतंत्र इच्छा है, परन्तु उसके पास सुईच्छा नहीं है। उसकी इच्छा उसके पापी स्वभाव के बन्धन में है, और इसलिए वह हमेशा परमेश्वर के व्यक्तित्व और इच्छा के विरोध में चुनाव करेगा। फरीसियों को यीशु की कटु उलाहना यह बात प्रगट करती है : "हे सांप के बच्चो, तुम बुरे होकर अच्छी बातें कैसे कह सकते हो ?"[26]

नैतिक अयोग्यता के बाइबल–सम्मत सत्य ने मार्टिन लूथर को अपना प्रख्यात प्रबन्ध *The Bondage of the Will** (इच्छा का दासत्व – ed) लिखने की प्रेरणा प्रदान की। यह शिर्षक व्यक्त करता है कि मनुष्य जो है उससे वह बच नहीं सकता। वह स्वभाव से बुरा है, और वह जानबूझकर और स्वतंत्र रूप से बुरे काम करता है। पतित मनुष्य बुरे फल लाता है क्योंकि वह 'बुरा पेड़' है।[27] उसकी इच्छा उसके भ्रष्ट स्वभाव के वश में या बन्धन में है। निम्नलिखित पन्नों में, हम इस सत्य के कुछ भयानक परिणामों पर विचार करेंगे।

पतित मनुष्य परमेश्वर को नहीं जान सकता

परमेश्वर के अनुग्रहमय प्रयोजन से मानव वंश ने विज्ञान, तंत्रविज्ञान और औषधी के क्षेत्र में बड़ी बड़ी बौद्धिक उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं। परन्तु परमेश्वर के विषय में पतित मनुष्य का ज्ञान पाखण्ड और व्यर्थ विचार के उलझे हुए जाल से अधिक नहीं है।[28] यह अज्ञान एक अदृष्य परमेश्वर के कारण नहीं, बल्कि स्वयं को छिपानेवाले मनुष्य का नतीजा है। परमेश्वर ने मनुष्यों को सृष्टि के द्वारा, इतिहास में उसके सम्प्रभुताकारी कार्य के द्वारा, पवित्र शास्त्र के द्वारा, और अन्त में उसके देहधारी पुत्र के द्वारा खुद को स्पष्ट रूप से प्रगट किया है।[29] परन्तु मनुष्य ने अपनी आँखें बन्द करके और अपने कानों को बन्द

करके इस प्रकाशन के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त की। वह सत्य नहीं जान सकता क्योंकि वह सत्य से घृणा करता है और उसे दबाने का यत्न करता है।[30] वह सत्य के विरोध में है क्योंकि वह परमेश्वर का सत्य है। यह सत्य उसके विरोध में बोलता है, और इसलिए उसे सह नहीं सकता।

पतित मनुष्य परमेश्वर से प्रेम नहीं कर सकता

अधिकतर लोग, भले ही वे अधर्मी हो, परमेश्वर के प्रति कुछ अंश में प्रेम या लगाव होने का दावा करते हैं। परन्तु, पवित्र शास्त्र सिद्ध करता है कि पतित मनुष्य परमेश्वर से प्रेम नहीं कर सकता। वस्तुतः, पवित्र शास्त्र सिखाता है कि उद्धार पाने से पहले, आदम का सारा वंश परमेश्वर से घृणा करता है और उसके विरोध में संघर्षरत रहता है।[31] यह शत्रूता इसलिए है क्योंकि नैतिक दृष्टि से भ्रष्ट प्राणी पवित्र और धर्मी परमेश्वर को सह नहीं सकता या उसकी इच्छा के अधीन नहीं रह सकता।

इस बात पर ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि अधिकतर लोग जो परमेश्वर के लिए सच्चा प्रेम होने का दावा करते हैं वें उसके उन गुणों और कामों के विषय में जिनका पवित्र शास्त्र वर्णन करता है, बहुत कम जानते है। इस कारण जिस ईश्वर से वे प्रेम करते हैं, वह उनकी अपनी कल्पना से अधिक नहीं है। उन्होंने अपने स्वरूप में एक ईश्वर को बनाया है, और जो उन्होंने बनाया है उसे वे प्रेम करते हैं। जैसा कि परमेश्वर भजन के लेखक के माध्यम से घोषित करता है, "तू ने समझा कि मैं तेरे ही समान हूँ। मैं तुझे फटकारूंगा।"[32]

अधिकतर मनुष्य जो स्वयं को धर्मी समझते हैं, वे भी अगर पवित्र शास्त्र की जांच करेंगे, तो अवश्य ही वे परमेश्वर को उनकी दृष्टि में प्रिय ईश्वर से अलग रूप में पाएंगे। यदि वे पवित्रता, न्याय, सम्प्रभुता और क्रोध के विषय में पवित्र शास्त्र की शिक्षा को प्रत्यक्ष रूप में ग्रहण करते है, तो वे तिरस्कार के साथ उत्तर देंगे और घोषणा करेंगे, "मेरा परमेश्वर वैसा नहीं है!" या "मैं ऐसे परमेश्वर से कभी प्रेम नहीं कर सकता!" इस प्रकार, हम जल्द ही देखेंगे कि पतित मनुष्य जब पवित्र शास्त्र के परमेश्वर का सामना करता है, तब पीछे हट जाना और उसका इन्कार करना ही उसकी प्रतिक्रिया होती है। इस प्रतिकुल प्रतिक्रिया का कारण क्या है ?एक बार फिर, उसका सम्बन्ध मनुष्य अपने मूल स्वभाव के केंद्रबिन्दू में क्या है, इससे है। यदि मनुष्य स्वभाव से पवित्र और धर्मी होता, तब वह आसानी से पवित्र और धर्मी परमेश्वर से प्रेम करता। परन्तु, मनुष्य स्वभाव से भ्रष्ट है और इसलिए वह ऐसा नहीं कर सकता।

पतित मनुष्य परमेश्वर की खोज नहीं कर सकता

हम ऐसे संसार में रहते हैं जो स्व–घोषित परमेश्वर के खोजियों से भरा पड़ा है, और फिर भी पवित्र

शास्त्र ऐसे सारे घमण्ड को एक सरल घोषणा से नष्ट करता है : "कोई भी नहीं जो परमेश्वर को खोजता है।"[33] अक्सर हम मसीह में नए विश्वासियों को अपनी गवाहियाँ इन शब्दों में आरम्भ करते हुए सुनते हैं, "वर्षों से मैं परमेश्वर की खोज में था," परन्तु पवित्र शास्त्र फिर से उत्तर देता है, "कोई भी नहीं जो परमेश्वर को खोजता है।"[34] मनुष्य पतित प्राणी है। वह परमेश्वर से घृणा करता है क्योंकि परमेश्वर पवित्र है और वह परमेश्वर के सत्य का विरोध करता है क्योंकि वह उसकी भ्रष्टता और विद्रोह को प्रगट करता है।[35] इसलिए वह परमेश्वर के निकट नहीं आएगा, परन्तु अपने हर प्रयास से वह परमेश्वर से दूर रहेगा और अपने विवेक से उसकी व्यवस्था के हर अंश को हटाकर रखेगा। प्राचीन प्रचारक अक्सर इस घोषणा के साथ इस सत्य का सारांश प्रस्तुत करते थे : "मनुष्य की प्रवृत्ति अब परमेश्वर की खोज करना नहीं है जिस प्रकार मुक्त अपराधी कानून के अधिकारी को खोजने हेतु प्रवृत्त नहीं होता।"[36] यीशु इस बात से सहमति जताता है, "और दोष यह है कि ज्योति जगत में आ चुकी है, परन्तु मनुष्यों ने ज्योति की अपेक्षा अन्धकार को अधिक प्रिय जाना क्योंकि उनके कार्य बुरे थे। क्योंकि प्रत्येक जो बुराई करता है, ज्योति से बैर रखता है, और ज्योति के पास नहीं आता, कि कहीं उसके कार्य प्रकट न हो जाए।"[37]

पतित मनुष्य परमेश्वर की आज्ञा नहीं मान सकता या उसे प्रसन्न नहीं कर सकता

एक बड़ा सामान्य विभाजक है जो मसीहत के बाहर के अन्य सभी धर्मों को एकसाथ जोड़ता है : यह विश्वास कि परमेश्वर के सामने धर्मी ठहरना परमेश्वर को प्रसन्न करने की किसी योग्यता पर या आज्ञापालन या व्यक्तिगत् योग्यता पर निर्भर है। केवल मसीहत ही अकेले यह ऐलान करती है कि परमेश्वर के अनुग्रह के विशेष कार्य के अलावा, मनुष्य परमेश्वर की आज्ञा का पालन नहीं कर सकता या उसे प्रसन्न नहीं कर सकता।[38] क्योंकि मनुष्य सचमुच अपवित्र है, इसलिए वह किसी भी योग्यता से रहित हैं। उसके अत्यन्त आदर्श कार्य भी पवित्र और धर्मी परमेश्वर के समक्ष मैले चिथड़ों के समान हैं।[39] यह पवित्र शास्त्र की सबसे दीन करने वाली सच्चाइयों में से एक है – और जिसे आदम का वंश सबसे अधिक तिरस्कृत जानता है और उसका विरोध करता है। परन्तु, यह सुसमाचार का आवश्यक भाग है और जब तक कि मनुष्य इसके सत्य के भार को महसूस न करे, तब तक यह उस पर लादा जाना चाहिए। वह नैराश्य और असहाय दशा में खोया हुआ है। यदि वह उद्धार पाएगा, तो केवल परमेश्वर के द्वारा ही उद्धार पाएगा।

पतित मनुष्य स्वयं को सुधार नहीं सकता

बीसवीं सदी का आरम्भ इस बड़े आशावाद के साथ हुआ कि मनुष्य एक अधिक बेहतर और महान

जीवधारी के रूप में विकास पाने की योग्यता रखता है। इसे सुधार का युग माना गया था, परन्तु निराशा और उलझन के साथ उसका अन्त हुआ। पवित्र शास्त्र स्पष्ट रूप से सिखाता है कि मनुष्य का जन्म आत्मिक रूप से मृत और नैतिक रूप से भ्रष्ट व्यक्ति के रूप में हुआ है। आत्म–सुधार का उसका प्रत्येक प्रयास निराशाजनक है और उसका अन्त भयानक विफलता में होता है।[40] हमारे पुरखा अय्युब ने कहा, "मैं तो दोषी ठहरूंगा; फिर व्यर्थ क्यों परिश्रम करूं ? चाहे मैं हिम के जल में स्नान करूं, और अपने हाथ खार से निर्मल करूं, तौभी तू मुझे गड़हे में डाल ही देगा, और मेरे वस्त्र भी मुझसे घिनाएंगे।"[41] भविष्यद्वक्ता यिर्मयाह के द्वारा परमेश्वर ने घोषणा की, "चाहे तू अपने को सज्जी से धोए और बहुत सा साबुन भी प्रयोग करे, तौभी तेरे अधर्म का धब्बा मेरे सामने बना रहेगा, प्रभु यहोवा की यही वाणी है।"[42] और फिर से, "क्या हबशी अपना चमड़ा, वा चीता अपने धब्बे बदल सकता है ?यदि वे ऐसा कर सकें, तो तू भी, जो बुराई करना सीख गई है, भलाई कर सकेगी।"[43] मनुष्य के लिए केवल एक ही आशा है, परन्तु उसे देखने से पहले उसे अपनी भयानक अयोग्यता को जान लेना होगा और स्वयं के अन्त तक पहुँचना होगा। सुसमाचार प्रचार के कार्य का यह अति आवश्यक तत्व है।

पतित मनुष्य शैतान का गुलाम है

आरम्भ में, आदम परमेश्वर की आज्ञा मानने के लिए और समस्त पृथ्वी पर प्रभुता करने के लिए स्वतंत्र था।[44] परमेश्वर के विरोध में विद्रोह के कारण, वह और उसका वंश भ्रष्ट होकर गुलामी में चला गया। पतन के समय से प्रत्येक मनुष्य अपने भ्रष्ट स्वभाव के बन्धन में और शैतान की गुलामी में जन्म लेता है। यद्यपि कुछ ही लोग स्वयं को शैतान के अनुयायी मानते हैं, फिर भी पवित्र शास्त्र यह प्रमाणित करता है कि सभी मनुष्य "अन्धकार के आत्मा के हाकिम (शैतान) के अनुसार" जीवन बिताते हैं और जो परमेश्वर के प्रति अनाज्ञाकारी हैं उनके द्वारा वह सामर्थ के साथ काम करता है।[45] इसके अलावा, पवित्र शास्त्र यह गवाही देता है कि समस्त संसार उस दुष्ट के अधीन है, सभी मनुष्य उसकी प्रभुता के अधीन जन्म लेते हैं, और वह सब मनुष्यों को अपनी इच्छा के अनुसार चलने हेतु बन्धुवाई में रखता है।[46]

यद्यपि शैतान के साथ मनुष्य के रिश्ते का वर्णन करने हेतु गुलामी इस शब्द का उपयोग सही होगा, फिर भी हमें यह समझना है कि मनुष्य अपनी इच्छा के विपरीत शिकार नहीं बना है। मनुष्य ने परमेश्वर के राजदण्ड का इन्कार किया और उसे शैतान के राज्य के 'अधीन कर दिया गया।' बन्धुवा और बन्धुवाई में ले जाने वाला दोनों ही पतित प्राणी हैं, और उनके मध्य एक बड़ी निकटता है।[47] नैतिक भ्रष्टता में और परमेश्वर के प्रति शत्रुता में दोनों समान हैं। यद्यपि यह कईयो के लिए घृणास्पद हो, फिर भी अत्यन्त सत्य है : उद्धार पाने से पहले पतित मनुष्य और शैतान

के बीच ऐसी बड़ी नैतिक समानता होती है कि सभी मनुष्यों को उचित शब्दों में शैतान की सन्तान कहा जा सकता है।[48]

क्या हम वास्तव में इतने बुरे है ?

हम एक स्थिर आशावादी, परन्तु अत्यन्त भ्रमित युग में हैं जो मनुष्य को विश्व के केंद्र में रखता है और सब वस्तुओं के मूल्यांकन के रूप में उसकी जयजयकार करता है। अपने खुद के क्षतिग्रस्त इतिहास, अपने क्लेशित विवेक, और पवित्र शास्त्र की शिक्षा की गवाही के विपरीत, वह सदाचार और योग्यता का बड़ा दावा करता है और उज्वल भविष्य की डींगें मारता है। वह नैतिकता के नियमों को बदलकर और जिसे पहले बुरा कहा जाता था, उसे नया नाम देकर और उसे अच्छा कहकर अपनी अनगिनत अनैतिकताओं और अखण्डित अधःपतन को छिपाता है।[49] इस सामर्थी भ्रम के कारण, इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि हम पवित्रशास्त्र के इस दोष के प्रति यह प्रश्न पूछ सकते हैं : क्या हम वास्तव में इतने बुरे है ? बाइबल का उत्तर है, "हाँ! हम सचमुच इतने बुरे हैं!"

पवित्र शास्त्र स्पष्ट रूप से प्रमाण देता है कि परमेश्वर ने नूह के दिनों में समस्त जगत पर महाजलप्रलय लाया।[50] इस ईश्वरीय न्याय की वजह मनुष्य की भक्तिहीनता और गम्भीर अनैतिकता थी। पवित्र शास्त्र हमें निम्नलिखित स्पष्टीकरण देता है : "और यहोवा ने देखा, कि मनुष्यों की बुराई पृथ्वी पर बढ़ गई है, और उनके मन के विचार में जो कुछ उत्पन्न होता है वह निरन्तर बुरा ही होता है। और यहोवा पृथ्वी पर मनुष्य को बनाने से पछताया, और वह मन में अति खेदित हुआ।"[51] इस पद में एक विचार जो कि स्पष्ट है वह केवल मनुष्य की दुष्टता नहीं, परन्तु उसका विस्तार है – "उनके मन के विचार में जो कुछ उत्पन्न होता है वह निरन्तर बुरा ही होता है।" जिसे हम मनुष्य की सम्पूर्ण, मौलिक या विकृत भ्रष्टता कहते हैं उसके सम्बंध में पवित्र शास्त्र के सबसे सामर्थी कथनों में से यह एक है। आरम्भ में, यह दोष अतिशयोक्ति दिखाई पड़ता है और केवल इतिहास के कुछ ही कुख्यात लोगों पर लागू पड़ता दिखाई देता है जिनके विवेक पूर्ण रूप से कठोर थे। परन्तु, निकटता से अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि वह हम में से प्रत्येक को लागू होता है।

कल्पना कीजिए कि हमारे पास ऐसा यंत्र होता जो हमारे मनों में प्रवेश करने वाले प्रत्येक विचार को दृश्यमान प्रतिमा में बदल देता और उन सारी प्रतिमाओं की फिल्म बनाकर हमें दिखाता। कल्पना कीजिए कि हमारा परिवार, मित्र और साथी यह फिल्म देखने जा रहे थे। क्या हम अपना सारा बल इकट्ठा करके उन्हें रोकने का प्रयास नहीं करेंगे ?यदि वे फिल्म देख लेते, तो क्या यह हमारे लिए यदि असम्भव नहीं तो मुश्किल नहीं होता कि हम उनकी आँखों में फिर झांककर देखें ? परन्तु यदि सारे कारणों के बावजूद, हम अपने चेहरे पर ढिटाई लेकर यह दावा करते फिरते कि हमें किसी

बात से लज्जित होने की जरूरत नहीं है, तो क्या यह इस बात का प्रमाण नहीं होता कि हम या तो झूठ बोल रहे हैं, भ्रम में हैं या हमारा विवेक पहले से कठोर हो चुका है? सत्य यह है कि हममें से अच्छे से अच्छे लोगों ने भी इतनी बुरी बातों का विचार किया है कि हम अपने निकटतम मित्रों को उनके विषय में बताना नहीं चाहेंगे! ये सब यह दर्शाता है कि हममें ऐसा कुछ है जो सही नहीं है। हमारी प्रवृत्ति बुराई की है और हमारा झुकाव उन्हीं बातों की ओर है जिनका हमारा विवेक विरोध और निन्दा करता है। यह विचारों के इतिहास में सबसे प्रबुद्ध तत्वज्ञानियों, नैतिकतावादियों और धर्म के पण्डितों की दुर्दशा रही है। प्रेरित पौलुस यह विलाप करते हुए मनुष्य की इस दुविधा का सारांश प्रस्तुत करते है, "इसलिए जो मैं करता हूँ उसको समझ नहीं पाता; क्योंकि जो मैं चाहता हूँ वह नहीं किया करता, परन्तु जिससे मुझे घृणा है वही करता हूँ।"[52]

यह समझना महत्वपूर्ण है कि जिस दुष्टता का हमने वर्णन किया है, वह केवल एन्टीडायलूवियन (महाप्रलय के पूर्व के) काल तक सीमित नहीं है।[53] दूसरे शब्दों में, महाप्रलय ने बूराई के प्रति मनुष्य की प्रवृत्ति को मिटाया नहीं, न ही नूह आदम से बेहतर विरासत छोड़ पाया। महाप्रलय थमने के तुरन्त बाद और नूह को परमेश्वर द्वारा जहाज छोड़ने की आज्ञा दिए जाने के बाद, परमेश्वर ने मनुष्य के हृदय में बनी रही अखण्ड भ्रष्टता को उजागर किया और वह इस युग के अन्त तक उसके पाप में मृत चरित्र का चिन्ह होगी : "इस पर यहोवा ने सुखदायक सुगन्ध पाकर सोचा, कि मनुष्य के कारण मैं फिर कभी भूमि को शाप न दूंगा, यद्यपि मनुष्य के मन में बचपन से जो कुछ उत्पन्न होता है वह बुरा ही होता है; तौभी जैसा मैंने सब जीवों को अब मारा है, वैसा उनको फिर कभी न मारूंगा।"[54]

महाप्रलय से पहले, परमेश्वर ने यह घोषणा की कि मनुष्य के हृदय का प्रत्येक विचार लगातार बुरा ही था।[55] जलप्रलय के बाद, कुछ बदलाव जरूर हुआ – मनुष्य के हृदय का विचार न केवल बुरा है, बल्कि उस बुराई का मूल भी प्रगट हो गया है। वह मनुष्य के हृदय में जन्म से ही वास करती है। यह आदम से उसे मिली हुई विरासत है।[56] यद्यपि पवित्र शास्त्र यह रहस्य हमें नहीं समझाता, परन्तु यह उसके सत्य होने की पुष्टि करता है। मनुष्य का जन्म पाप में होता है और वह अपराध में ही जन्म लेता है, वह गर्भ से खोया हुआ है और जन्म से ही गुमराह हो जाता है।[57] इस कारण, बच्चों को स्वार्थी या धूर्त बनना सिखाने की जरूरत नहीं है, बल्कि, माता–पिता को और अन्य लोगों को उन्हें यत्नपूर्वक यह सिखाने के लिए परिश्रम करना पड़ता है कि वह स्वार्थ से दूर रहे, सत्य बोले और दूसरों के हितों का विचार करे। जो कोई यह आशा करता है कि बच्चे एक दिन संसार पर शासन करेंगे उन्होंने कभी दुष्ट और निर्मम प्रभुता की ऐसी दौड़ नहीं देखी है जो छोटे बच्चों में अक्सर पायी जाती है, या जब एक बच्चा दूसरे बच्चे के खिलौने की लालसा करता है, तब क्या हो सकता है।

जो इस विचार से अलग विचार रखता है इतिहास और प्रतिदिन का समाचार उसके विरोध में है!

पवित्र शास्त्र हमें सिखाता है कि मनुष्य इसलिए बुराई करता है क्योंकि उसके अन्दर बुराई वास करती है। यह आन्तरिक विद्यमान नैतिक भ्रष्टता उसके प्रत्येक विचार, शब्द और कार्य में प्रवेश करती है और उन्हें प्रभावित करती है। यशायाह का यह विलाप सामर्थी रूप से इस सत्य को समझाता है : "हम तो सब के सब अशुद्ध मनुष्य के से हैं, और हमारे धर्म के काम सब के सब मैले चिथड़ों के समान हैं। हम सब के सब पत्ते की नाईं मुर्झा जाते हैं, और हमारे अधर्म के कामों ने हमें वायु की नाईं उड़ा दिया है।"[58] मैले चिथड़े, इन शब्दों से यशायाह का क्या अभिप्राय है इस विषय में कई मत हैं। परन्तु कई सोचते हैं कि वह ऐसे वस्त्र का उल्लेख करता है जो मृत के स्पर्श, रक्त के बहाव से, या कोढ़ से, विधि के अनुसार अशुद्ध हो गया है। हम इन तीनों मे से अन्तिम पर विचार करेंगे।

सम्पूर्ण इतिहास में, कोढ़ को सबसे भयावह रोगों में से एक माना गया है; इसलिए वह पाप का सामर्थी और हूबहू चित्र प्रदान करता है। कोढ़ शरीर का तब तक नाश कर देता है जब तक कि वह सड़ा हुआ और बदबू से भरा मांस का गोल नहीं रह जाता। इस रोग से पीड़ित व्यक्ति के लिए यह असहनीय होता है, और इसे देखने वालों के लिए भी यह असहनीय होता है। इस जानकारी के प्रकाश में, कल्पना करें कि स्थानीय आशावादी क्लब एक निर्धन कोढ़ी को लेकर उसे ऐसा बनाने का निर्णय लेता है कि उसे लोगों के सामने प्रस्तुत किया जा सके। वे उसे सावधानी के साथ स्नान कराते हैं और अत्यन्त महंगे इत्र से उसकी बदबू छिपाते हैं। अन्त में, वे उसे उत्तम सिल्क से बने श्वेत वस्त्र पहनाते हैं और उसे सारे संसार को दिखाने के लिए आगे लाते हैं। भले ही उनके परिश्रम से कोढ़ी को कुछ क्षण लाभ होगा और उनकी प्रशंसा होगी, परन्तु उस चमक–दमक को हटने में लम्बा समय नहीं लगेगा। मनुष्य के शरीर की सड़ाहट से बहने वाला खून उसके कपड़ों से बाहर निकलेगा और उसकी बदबू जल्द ही इत्र की खुशबू को दबा देगी। कुछ ही क्षणों में, मनुष्य, वस्त्र और जिसे भी वह छूएगा, वह सब कुछ भ्रष्ट और कोढ़ से पीड़ित हो जाएगा।

पाप के विषय में भी यही कहा जा सकता है। धार्मिक या नैतिक सुधार के बावजूद जिनसे वह खुद को प्रभावशाली बनाता हो, वह अन्दर से वैसा ही बना रहता है। यीशु ऐसे मनुष्य का वर्णन ऐसे प्याले के रूप में करता है जो अन्दर से गन्दगी से भरा है; सफेदी लगाई हुई कब्र जो मृत हड्डियों से भरी है।[59] उस कोढ़ी के समान जिसकी सड़ाहट उसके वस्त्र से रीसकर लोहू के रूप में बहती है और उसे उस के व्यक्तित्व के समान ही घृणित बना देती है, इसी प्रकार, मनुष्य के हृदय की नैतिक भ्रष्टता या स्वभाव उसके प्रत्येक विचार, शब्द और कार्य से बहता है और उसे अशुद्ध बना देता है। इस कारण पापी मनुष्य अपने कामों या गुणों के द्वारा परमेश्वर के सामने खड़े नहीं रह सकता।

उसके द्वारा किया जाने वाला उत्तम से उत्तम काम भी परमेश्वर के सामने घिनौने और तुच्छ वस्त्र के समान है!

मनुष्य के स्वभाव की हमारी समझ सुसमाचार और प्रचार की समझ के लिए बुनियादी है। यदि मनुष्य मूल रूप से अच्छा है, या उसमें कुछ अच्छाई बची है या भलाई की चमक उसमें वास करती है, तो उस प्रचारक में विश्वास दिलाने की और लोगों में उत्तर देने की सामर्थ है। परन्तु यदि मनुष्य मूलतः ही नैतिक भ्रष्ट है, तो केवल परमेश्वर की अलौकिक सामर्थ हृदयों और मनों को खोल सकती है, पश्चाताप प्रदान कर सकती है, और उद्धार की ओर ले जाने वाला विश्वास प्रदान कर सकती है।[60]

मसीही और सुसमाचार के सेवक होने के नाते, परमेश्वर हमें न केवल परमेश्वर की महानता और उसके अनुग्रह के धन की घोषणा करने बुलाता है, बल्कि परमेश्वर के वचन के द्वारा और पवित्र आत्मा की सामर्थ से मनुष्य के हृदय की दशा को उजागर करने के लिए भी बुलाता है। मनुष्य की नैतिक भ्रष्टता को उजागर करने वाला यही उत्तरकालीन काम है जो मनुष्यों को उनकी देह पर भरोसा नहीं रखने देता और यीशु मसीह को महिमा प्रदान करने पर विवश करता है।[61] मनुष्य का नैतिक अन्धकार उस घनी अन्धियारी रात्रि की पृष्ठभूमि है जिस पर परमेश्वर के अनुग्रह और दया के दो सितारे चमक उठते हैं।

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. भजन संहिता 51:5; 58:3; उत्पत्ति 8:21

2. शब्द व्यापक, (Pervade) का अर्थ है, साथ–साथ बढ़ते रहना, हर अंग में फैल जाना (वेबस्टर शब्दकोष) इस प्रकार, नैतिक भ्रष्टता का संबंध उस जड़ या मूल से है जो दर्शाती कि हम स्वभाव में कैसे है, नैतिक–पतन का आरम्भ सीधे हमारी आत्मा की जड़ या मूल से होता है।

3. उत्पत्ति 9:6; 1 कुरिन्थियों 11:7; याकूब 3:9

4. शरीर (रोमियों 6:6, 12; 7:24; 8:10, 13), बुद्धी (रोमियों 1:21; 2 कुरिन्थियों 3:14–15; 4:4; इफिसियों 4:17–19), भावनाएँ (रोमियों 1:26–27; गलातियों 5:24; 2 तिमुथि 3:2–4), और इच्छाएँ (रोमियों 6:17; 7:14–15).

5. रोमियों 1:20

6. रोमियों 1:21–23; 1:18

7. रोमियों 2:15; 1 तिमुथि 4:2

8. रोमियों 3:10–12; 2:13, 17–23; याकूब 4:17

9. व्यवस्थाविवरण 6:4–5;मत्ती 22:37; 1 कुरिन्थियों 10:31; रोमियों 1:21

10. 2 तिमुथि 3:2–4

11. A. A. Hodge, *Outlines of Theology* (Edinburgh: Banner of Truth), 329.
12. यिर्मयाह13:23; रोमियों 7:23–24
13. रोमियों 8:7–8
14. उत्पत्ति 2:17
15. उत्पत्ति 5:5
16. इफिसियों 2:1–3
17. इफिसियों 4:18
18. भजन संहिता 10:4 "दुष्ट अपने अभिमान के कारण परमेश्वर की खोज नहीं करता; उसका तो पूरा विचार है कि कोई परमेश्वर है ही नहीं।" (IBP)
"दुष्ट अपने अभिमान के कारण कहता है कि वह लेखा नहीं लेने का; उसका पूरा विचार यही है कि कोई परमेश्वर है ही नहीं।" (BSI)
19 1 तिमुथि 5 6 ;प्रकाशित वाक्य 3 1
20 .यहेजकेल 11 19 ;यहुदा v 12
21 .यशायाह 64 6 ;इब्रानियों 6 1 ;9 14
22. रोमियों 5:10; 8:7–8
23. रोमियों 1:30
24. रोमियों 1:21
25. उत्पत्ति 37:4
26. मत्ती 12:34
27. मत्ती 7:18
28. रोमियों 1:21–23; इफिसियों 4:17–19
29. रोमियों 1:19–20; 2 तिमुथि 3:16; यूहन्ना 1:18
30. रोमियों 1:18; अय्यूब 21:14–15
31. रोमियों 1:30; 5:10
32. भजन संहिता 50:21
33. रोमियों 3:11
34. रोमियों 3:11
35. यूहन्ना 3:19–20
36. The futile "hiding" of Adam and Eve in Genesis 3:8 clearly illustrates this.
37. यूहन्ना 3:19–20
38. रोमियों 7:14–24; इफिसियों 2:4–5
39. यशायाह 64:6
40. अय्यूब 9:29–31
41. अय्यूब 9:29–31
42. यिर्मयाह 2:22
43. यिर्मयाह 13:23
44. उत्पत्ति 1:27–28
45. इफिसियों 2:2
46. 1 यूहन्ना 5:19; प्रेरितों के काम 26:18; 2 तिमुथि 2:26
47. इसी निकट रिश्ते के कारण युहन्ना 8:44 में यीशु शैतान को अविश्वासीयों का पिता कहता है।
48. 1 यूहन्ना 3:8; यूहन्ना 8:
49. यशायाह 5:20–21 हाय उन पर जो बूरे को भला और भले को बूरा कहते है, जो अंधकार को प्रकाश और प्रकाश को अंधकार ठहराते है, जो कडुवें को मीठा और मीठे को कडुवा मानते है! ळाय उन पर जो अपने लेखे

बुद्धिमान और अपनी दृष्टि में चतुर है।
50. उत्पत्ति 7–9
51. उत्पत्ति 6:5–6
52. रोमियों 7:15
53. The period in history prior to the flood of Noah.
54. उत्पत्ति 8:21
55. उत्पत्ति 6:5–6
56. उत्पत्ति 5:3; रोमियों 5:12
57. भजन संहिता 51:5; 58:3
58. यशायाह 64:6
59. मत्ती 23:25–28
60. प्रेरितों के काम 16:14; लूका 24:45; 2 तिमुथि 2:25; इफिसियों 2:8; रोमियों 12:3
61. फिलिप्पियों 3:3

अध्याय – 15

धर्मी क्रोध

परमेश्वर सच्चा न्यायी है, वरन ऐसा ईश्वर है जो प्रतिदिन कोप करता है – भजन 7:11
अहंकारी तेरी आँखो के सामने खड़े नहीं रह सकेंगे;
तू सब कुकर्मियों से घृणा करता है – भजन 5:5

अधिकतर सुसमाचारकीय समाज उपर्युक्त वचनों को इस हद तक भूल गया है कि वे अब उसे विवादपूर्ण नहीं लगते। कितनी बार प्रचारक पापियों को पापी के विरोध में परमेश्वर के धर्मी क्रोध का प्रचार करते है ? कितनी बार प्रचारमंच से ईश्वरीय क्रोध या पवित्र द्वेष जैसे विषयो को सम्बोधित करते है ?क्या यह इसलिए है कि अब हम पवित्र शास्त्र का अध्ययन नहीं करते ? या क्या हम इस निष्कर्ष पर आए है कि कुछ भाग अब ईश्वर प्रेरित नहीं हैं या रद्द हो गए है ?क्या ऐसा हो सकता है कि हम राजनीतिक सुधार और संस्कृति के रंग की छाया में भयभीत होकर दब गए है ? या क्या हमें यकीन हो गया है कि सत्य का प्रचार कलीसिया की उन्नति का मार्ग नहीं है ?

यह हमारे वर्तमान युग के लिए प्रिय हो या न हो, परमेश्वर का धर्मी क्रोध पवित्र शास्त्र में वास्तविकता है और सुसमाचार की सभी सच्ची घोषणाओं का आवश्यक भाग है। इसलिए हमें इस सिद्धान्त को और उससे सम्बन्धित सच्चाईयों को समझने की आवश्यकता है। हमें यह भी ध्यान में रखने की आवश्यकता है कि एक बार उन्हें समझने के बाद, हमें उनका प्रचार भी करना है। हमारे अध्ययन का लक्ष यह नहीं है कि हम केवल अपने लिए सन्तुलित धर्म–सिद्धान्त प्राप्त करें, परन्तु यह कि जिन सच्चाईयों को हम जान लेते हैं, उन्हें परमेश्वर के लोगों के लाभ के लिए भी घोषित करे। ज्ञान अर्जित करने में थोड़ा जोखिम है, परन्तु जो हमने सीखा है, उसे बताने में अक्सर और भी बड़ा जोखिम होता है। जिन सच्चाईयों को हम जानते हैं, उन्हें यदि हम अपने वाचनालयों में कैद करके रखेंगे तो हमें उससे थोड़ी हानि होगी और कलीसिया को बहुत कम लाभ होगा।

क्या हम एक धर्मी परमेश्वर चाहते हैं ?

पहला प्रश्न जो हमें हमारे संगियों से और अपने आप से पूछना चाहिए वह है, "क्या हम सचमुच एक

धर्मी परमेश्वर चाहते है ?" यह शायद एक असामान्य प्रश्न प्रतित होता हो और अनावश्यक भी, परन्तु वास्तव में वह हमारी मानव दशा के विषय में और परमेश्वर के समक्ष हमारी समस्या के विषय में बहुत कुछ प्रगट करता है।

एक ओर, हम एक धर्मी परमेश्वर चाहते हैं। यह विचार करना भी भयावह है कि हम एक अधर्मी और सर्वशक्तिमान व्यक्तित्व की पूर्ण प्रभुसत्ता के अधीन रहने वाले विश्व में जिएँ। इस संसार के हिटलर इतिहास के रंगमंच पर केवल एक क्षण के लिए आते हैं, और उनकी अपनी बुराई उन्हें जल्द ही मिटा देती है। पर उनके विनाश का परिणाम उनकी पीढ़ियो से होकर दूर दूर तक पहुँचता है। तो फिर अनैतिक और सनातन देवता के अधर्मी राज्य के अधीन रहना कैसा होगा ?इस बात का विचार भी भयावह स्वप्न के समान है। उसकी अधार्मिकता उसे असंगत और स्वेच्छाचारी बना देगी। उसकी सामर्थ उसे डरावना बना देगी। भले ही वह हमारे साथ लम्बे समय तक भलाई का व्यवहार करता, तौभी इस बात की कोई निश्चितता नहीं होती कि उसकी भलाई आगे भी बनी रहेगी। हम शान्त समुद्र में यात्रा करने वाले उन नाविकों के समान होंगे जो आने वाले विनाशक तूफान की सम्भावना की आशा करते हुए बावले हो जाते हैं। विश्वास के लिए कोई निश्चित और उचित आधार नहीं होते। इस वर्तमान संसार के लिए जो अदण्डित अन्याय और चुनौती न दी गई अनैतिकता के भार के नीचे लड़खड़ाता है, अपनी गलतियों को भविष्य में सुधारने की कोई आशा नहीं होगी। इस कारण, यदि इसे राय या मत पर छोड दिया जाए तो मनुष्यों में सब से समझदार और निर्णयशक्ति वाला मनुष्य एक ऐसे सिद्ध धार्मिक परमेश्वर के पक्ष में अपनी मत–परची ड़ालेगा जिस में "कुछ भी कुटिलता नहीं है।"[1] जो परमेश्वर पूर्ण रूप से भरोसेमन्द है, वह धार्मिकता के साथ जगत का न्याय करेगा और सिद्ध और निष्पक्ष न्याय के साथ सब मनुष्यों के बीच न्याय करेगा।[2]

न्यायी परमेश्वर एक ऐसा परमेश्वर है जिसे कई लोग चाहते और उसकी मांग भी करते हैं। जब हमारे संसार में परमेश्वर के स्पष्ट हस्तक्षेप या न्याय के बिना अनियंत्रित रूप से अन्याय बढ़ता जाता है, तब अज्ञानी लोग क्रूर पशुओं की तरह खड़े होकर स्वर्ग से न्याय की मांग करते हैं, परन्तु विचारशील जन शान्ति से अपना सिर अपने हाथों में छिपाकर कोने में बैठा रहता है। वह जानता है कि वह मुश्किल में फंसा हुआ है। अपने ही विवेक के द्वारा दोषी ठहराए जाकर, वह जानता है कि यदि परमेश्वर मनुष्यों का न्याय उनकी मांग के अनुसार करे, तो सभी मनुष्य, जिनमें सबसे अधिक मांग करने वाले भी शामिल हैं, दोषी ठहरेंगे। जैसा कि लिखा है, "कोई भी धर्मी नहीं है।"[3] जो यह मांग करते हैं कि दूसरों को न्यायालय के कटघरे में खड़ा किया जाए, उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि वे उसी न्यायासन के सामने अपना ही न्याय करने की अर्जी दे रहे हैं। भले ही सब ने एक जैसा पाशविक कृत्य नहीं किया हैं, तौभी सब ने पाप किया है, और सभी मृत्यु के दण्ड और पवित्र और धर्मी परमेश्वर

से अनन्त काल के लिए दूर किए जाने के योग्य हैं। जो व्यक्ति खुद को बड़े से बड़े पापी से दूर करने का प्रयास करता है, वह अपनी भ्रष्ट अवस्था और अपने अधर्म के कामों के विषय में अन्धा है।

यही दुविधा इस प्रश्न को जन्म देती है, "क्या हम सचमुच एक धर्मी परमेश्वर चाहते है ?" क्या हम सचमुच चाहेंगे कि वह हमारे जीवनों के प्रत्येक पहलू का सर्वेक्षण करे – विचारों, शब्दों, और कार्यों का – और उसके बाद हमें वही दण्ड दे जिसके हम योग्य है ?केवल वही मनुष्य या संस्कृति जिसका विवेक पहले से ही छेदा गया है, इस प्रकार की जाँच–पड़ताल के समक्ष खड़े रहकर सिद्ध धर्मी परमेश्वर के न्याय के सिंहासन से आने वाले किसी भी निर्णय को स्वीकार कर लेगा।

परमेश्वर धर्मी परमेश्वर है यह सत्य दोधारी तलवार है। यह जानकर तसल्ली होती है कि एक अनैतिक, सर्वशक्तिमान सत्ता संसार पर राज्य नहीं करती। परन्तु, जिनके पास विचार या चिन्तन करने वाला विवेक है, उन लोगों के लिए यह सत्य पूर्ण रूप से डरावना है। यदि परमेश्वर सचमुच धर्मी है, जो उचित है उसे सिद्ध प्रेम करता है और अधर्म से सिद्ध घृणा करता है, तो हमारी अपनी व्यक्तिगत बुराई के प्रति उसकी प्रतिक्रिया क्या होनी चाहिए ?

क्या परमेश्वर क्रोधी है ?

आज के प्रचारकों और सुसमाचार के सेवकों के लिए अपने श्रोताओं को यह आश्वासन दिलाना असामान्य नहीं है कि परमेश्वर क्रोधी परमेश्वर नहीं है, परन्तु यह कथन अत्यन्त गुमराह करने वाला और अत्याधिक पाखण्डपूर्ण है।[4] यह मनुष्यों को सच्ची शान्ति नहीं दे सकता। पवित्र शास्त्र के अनुसार, परमेश्वर क्रोधी परमेश्वर है, और हमारे लिए यह अच्छी बात है कि वह क्रोधी है। पवित्र शास्त्र निम्नलिखित घोषणा करता है : "यहोवा तो जल उठने वाला और बदला लेने वाला परमेश्वर है; यहोवा बदला लेने वाला और कोप करने वाला है, यहोवा अपने विरोधियों से बदला लेता है, और अपने शत्रुओं के लिए क्रोध रखता है।" "परमेश्वर सच्चा न्यायी है, वरन ऐसा परमेश्वर है जो प्रतिदिन कोप करता है"; "तू, केवल तू ही भय योग्य है; और जब तू क्रोध करने लगे, तो कौन तेरे सामाने खड़ा रह सकता है ?"[5]

जब परमेश्वर की पवित्रता, न्याय और प्रेम का सामना अधर्म, अन्याय, और मनुष्य की प्रेमहीनता के साथ होता है तब उसका अटल परिणाम ईश्वरीय क्रोध या प्रकोप होता है, ऐसा भयानक कोप की भजन का लेखक पुकार उठता है : "तेरे क्रोध की शक्ति को और तेरे भययोग्य रोष को कौन समझता है ?"[6] पुराने नियम में जिस शब्द का अनुवाद क्रोध किया गया है, वह तीन इब्रानी शब्दों से आता है। पहला है *qetsep* (क्वॅट्सप), जो क्रोध, रोष और प्रकोप का उल्लेख करता है। दूसरा है *hema* (हेमा), जो क्रोध, गुस्सा, तिरस्कार, कोप, जलजलाहट और जहर को भी दर्शाता है। तीसरा

शब्द है *'aph* (आफ), जिसका शाब्दिक अनुवाद 'नथनों' या 'नाक' है। यह शब्द परमेश्वर के क्रोध को उसी प्रकार दर्शाता है जैसे बड़े जानवर अपने क्रोध को जताने के लिए अपनी नाक फुलाते हैं। यह अभिव्यक्ति शुद्ध तो नहीं है, परन्तु सामर्थी जरूर है।

नए नियम में, क्रोध शब्द का अनुवाद दो ग्रीक शब्दों से किया गया है। पहला शब्द है *orge* (औंर्ग), जो क्रोध या कोप को दर्शाता है। दूसरा शब्द है *thumos* (थुमौस), जो क्रोध, रोष, आवेश और प्रकोप को दर्शाता है। पवित्र शास्त्र की विस्तृत श्रेणी में, ईश्वरीय क्रोध परमेश्वर का पवित्र रोष और न्यायसंगत प्रकोप दर्शाता है जिसका रूख पापी और उसके पाप की ओर है।

परमेश्वर के क्रोध पर विचार करते हुए यह समझना महत्वपूर्ण है कि यह अनियंत्रित, अविवेकी या स्वार्थी भावना नहीं है, परन्तु उसका क्रोध उसकी पवित्रता, धार्मिकता और प्रेम का परिणाम है। यह उसकी सत्ता का एक आवश्यक तत्व भी है। परमेश्वर जो है उस कारण उसे पाप के प्रति प्रतिकूल प्रतिक्रिया व्यक्त करना आवश्यक है। परमेश्वर पवित्र है। इस कारण, पाप उसके मन में घृणा उत्पन्न करता है और वह दुष्ट के साथ अपनी सहभागिता तोड़ देता है। परमेश्वर प्रेम है और वह बड़ी धुन के साथ उन सबसे प्रेम करता है जो अच्छा है। धर्म के लिए ऐसा प्रबल प्रेम सारी बुरी बातों के प्रति प्रबल घृणा के रूप में अपने आप ही प्रगट होता है। इस प्रकार, परमेश्वर का प्रेम परमेश्वर के क्रोध को नहीं नकारता; बल्कि वह उसकी पुष्टि करता है या उसका भरोसा देता है। परमेश्वर धर्मी है। इसलिए उसे दुष्टता का न्याय करना और उसे दण्डित करना आवश्यक है। यदि मनुष्य परमेश्वर के क्रोध का पात्र है, तो यह इसलिए क्योंकि उसने परमेश्वर की संप्रभुता को चुनौती दी है, उसकी पवित्र इच्छा का उल्लंघन किया है और स्वयं को न्याय के लिए उजागर किया है।

अपनी पवित्रता, धार्मिकता और प्रेम के कारण परमेश्वर पाप से घृणा करता है और उसके विरोध में अक्सर भयानक और हिंसक क्रोध प्रगट करता है। उसके क्रोध के सामने, धरती काँप उठती है और चट्टाने चकनाचूर हो जाती हैं। जातियाँ उसके क्रोध को सहन नहीं कर सकती और कोई उसके प्रकोप के सामने खड़ा नहीं रह सकता।[7] बलवान से बलवान पुरुष और स्वर्गदूत भी उसके सामने ऐसे पिघल जाएँगे जैसे छोटा सा मोम आग की भट्टी के सामने पिघलता है।[8]

आज कई लोग परमेश्वर के क्रोध के सिद्धान्त या उसके समकक्ष अन्य किसी भी शिक्षा को नकारते हैं जो यह सुझाती है कि प्रेमी और दयालू परमेश्वर क्रोधी हो सकता है या वह पापी का न्याय और उसे दण्डित करते समय ऐसा क्रोध प्रगट करेगा। वे विवाद करते हैं कि ऐसी कल्पनाएँ आदिम मनुष्य के गलत निष्कर्षों से अधिक कुछ नहीं हैं जिन्होंने परमेश्वर को शत्रूतापूर्ण, बदला लेने वाले और क्रूर के रूप में देखा है। मसीही होने के नाते, हमें ऐसी किसी भी शिक्षा का त्याग करना चाहिए जो परमेश्वर को क्रोधी के रूप में चित्रित करती है या उसकी करूणा को नजरअन्दाज करती है। परन्तु

हमें ईश्वरीय क्रोध और दण्ड के विषय में पवित्र शास्त्र की स्पष्ट शिक्षा को नहीं त्यागना चाहिए। पवित्र शास्त्र में परमेश्वर के क्रोध और प्रकोप के विषय में पर्याप्त वचन हैं जिससे उसे उसके प्रेम, दयालूता और तरस के समान ही महत्वपूर्ण विषय बनाया जा सके।

परमेश्वर दयालू और अनुग्रहकारी है, वह विलम्ब से क्रोध करने वाला और प्रेम और करूणा से परिपूर्ण है परन्तु वह पश्चाताप न करने वाले पापी को दण्ड देगा ताकि उसकी सृष्टि के मध्य न्याय कर सके और अपना नाम पवित्र ठहरा सके।[9] अपनी वैभव की महानता के कारण, वह उसके विरोध में उठ खड़े होने वालों को पराजित कर देगा और अपने क्रोध को उन पर भेजकर उन्हें भूसे की नाई भस्म कर देगा।[10] नए नियम में भी उसका वर्णन भस्म करने वाली आग के रूप में किया गया है और ऐसे परमेश्वर के रूप में किया गया है जो इस हद तक अपने "क्रोध को प्रगट" करेगा कि बड़े से बड़े दुष्ट भी पहाड़ों से और चट्टानों से कहेंगे कि हम पर गिरकर हमें उसके मेम्ने के क्रोध से बचा लें।[11] इस कारण, प्रेरित पौलुस मनुष्यों से आग्रह करते है कि वे धोखा न खाएँ, परन्तु सत्य के प्रकाश में जीवन बिताएँ क्योंकि परमेश्वर का क्रोध आज्ञा न मानने वालों पर प्रगट होगा।[12]

बार बार दोहराया जाने वाला यह कथन कि परमेश्वर क्रोधी परमेश्वर नहीं है, असत्य है और वह मनुष्य को सच्ची तसल्ली नहीं दे सकता! ऐसे परमेश्वर में क्या तसल्ली पायी जा सकती है जो पाप के प्रति तटस्थ है और उसके विरोध में क्रोध प्रगट नहीं करता ?यदि परमेश्वर गुलामों के व्यापार **Auschwitz** के विरोध में या सुविधा के नाम पर लाखों अजन्मे बच्चों के कत्ल के लिए प्रकोप से नहीं जलता, तो वह कैसे एक भला, प्रेमी और नैतिक भी हो सकता है ?जब हम ऐसे अत्याचारों के विषय में सुनते हैं, तब हम अपने अन्दर नैतिक क्रोध या प्रकोप के उबाल को महसूस करते हैं। साथ ही, हम उस मनुष्य को जो ऐसे अनैतिक आतन्क के कृत्यों से अविचलित रहता है, उन्हीं के समान दानव समझेंगे जिन्होंने यह दुष्कर्म किया है। तो फिर जब हम यह ऐलान करते हैं कि परमेश्वर क्रोधी नहीं है, तब हम क्या जताते हैं ?क्या हम अधर्म के विरोध में अपने क्रोध का समर्थन करते हुए परमेश्वर के ऐसे अधिकार का इन्कार करते हैं?

इस शारीरिक संसार के सामने परमेश्वर को प्रिय और स्वीकारयोग्य दिखाने की इच्छा रखने वाले प्रचारकों की काव्यपूर्ण विचारधारा के विपरीत, पवित्र शास्त्र हमें यह सिखाता है कि असीम रूप से पवित्र, धर्मी और प्रेमी परमेश्वर एक क्रोधी परमेश्वर है। वह बुराई के प्रति कभी भी हमदर्दी नहीं रखता; वह उसके विरोध में न बुझने वाली आग से भड़कता रहता है। घड़ी की प्रत्येक टिक–टिक के साथ उसके विरोध में किए जाने वाले प्रायः असीमित असंख्य पापों के प्रति वह अपना धार्मिक क्रोध प्रगट करता है। "देखो, यहोवा दूर से चला आता है, उसका प्रकोप भड़क उठा है, और धूएँ का बादल उठ रहा है; उसके होंठ क्रोध से भरे हुए और उसकी जीभ भस्म करनेवाली आग के समान है।"[13]

"सिय्योन के पापी थरथरा गए हैं; भक्तिहीनों को कंपकंपी लगी है; हम में से कौन प्रचण्ड आग में रह सकता ? हम में से कौन उस आग में बना रह सकता है जो कभी नहीं बुझेगी ?"[14] "देखो, यहोवा की जलजलाहट की आंधी चल रही है! वह अति प्रचण्ड आन्धी है; दुष्टों के सिर पर वह जोर से लगेगी।"[15]

हमें यह सोचकर धोखा नहीं खाना चाहिए कि परमेश्वर की न बुझने वाली और भस्म करने वाली आग केवल अत्यन्त घिनौने अपराधों के विरोध में या केवल हम में से अति जघन्य अपराधीयो पर ही भड़कती है। परमेश्वर के मन में पाप के लिए दो अलग अलग वर्ग नहीं हैं : एक वह जो उसे क्रोधित करता है और दूसरा वह जिस के प्रति वह ऐसी कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करता। पवित्र शास्त्र हमें सिखाता है कि सभी पाप व्यवस्था का विरोध है, और हर प्रकार का विद्रोह जादूटोने के समान हैं, और अनाज्ञाकारिता का प्रत्येक कार्य दुष्ट, अनैतिकता और मूर्तिपूजा है।[16] सभी पापों के लिए परमेश्वर का क्रोध आज्ञा न माननेवालो पर भड़कता है, और किसी भी पाप की मजदूरी मृत्यु है।[17]

हमारे आदि माता–पिता का पाप और उसके कारण परमेश्वर का भड़क उठा क्रोध स्पष्ट रूप से पाप के प्रत्येक रूप या प्रत्येक प्रकार का घिनौना स्वरूप प्रगट करता है। वर्जित फल को खाना मानव इतिहास के अत्याचारों की तुलना में और रात के समाचारों की सुर्खियों में लिखे जाने वाली खबरों की तुलना में हानिरहित लगता है, तौभी इस एक विद्रोह के कृत्य का परिणाम परमेश्वर का क्रोध और संसार पर दण्डाज्ञा के रूप में प्रगट हुआ। यदि कुछ और नहीं, तो यह बात हमें सिखाती है कि पवित्र और धर्मी परमेश्वर के सामने सब प्रकार का पाप घिनौना है और जो कोई ऐसा पाप करते हैं, उसके क्रोध के पात्र हैं।[18]

क्या परमेश्वर घृणा करता है ?

क्या परमेश्वर घृणा करता है ? क्या वह घृणा मनुष्यों के प्रति है ? अधिकतर लोगों ने इस विषय पर कभी कोई संदेश नहीं सुना है या ऐसी कल्पना भी नहीं की है। यह प्रश्न ही विवाद उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त है और एक मामूली धार्मिक व्यक्ति को भी लड़ाई करने के लिए खड़ा करता है। इस प्रकार की सम्भावना का सुझाव भी वर्तमान समय के सुसमाचारीय प्रचारक आज जो सिखाते हैं उनके विरोध में है। परन्तु, पवित्र शास्त्र में, परमेश्वर की घृणा उसके प्रेम के समान ही वास्तविकता है। पवित्र शास्त्र के अनुसार ऐसी कुछ बातें हैं जिनसे पवित्र और प्रेमी परमेश्वर घृणा करता है, उनका तिरस्कार करता है और उन्हें तुच्छ जानता है। साथ ही, यह घृणा अक्सर पतित मनुष्यों के विरोध में होती हैं।

कई लोग परमेश्वर की घृणा के विषय में इस प्रकार की किसी भी शिक्षा का इस झूठी धारणा के आधार पर विरोध करते हैं कि परमेश्वर प्रेम है और इस कारण वह घृणा नहीं कर सकता।

यद्यपि, परमेश्वर का प्रेम एक वास्तविकता है जो समझ से परे है, तौभी यह देखना महत्वपूर्ण है कि परमेश्वर का प्रेम ही उसकी घृणा का कारण है। हमें यह कदापि नहीं कहना चाहिए कि परमेश्वर प्रेम है और इस कारण वह घृणा नहीं कर सकता, बल्कि परमेश्वर प्रेम है और इसलिए उसे घृणा करना आवश्यक है। यदि कोई व्यक्ति सचमुच जीवन से प्रेम करता है, उसकी पवित्रता को स्वीकार करता है, और सभी बच्चों को परमेश्वर की ओर से वरदान मानकर प्रेम करता है, तो उसे गर्भपात से घृणा करना चाहिए। उन बातों के प्रति उदासीन रहना जो बच्चों को गर्भ में नाश कर देती है, और उसके बाद भी उनसे आवेश के साथ और पवित्रता के साथ प्रेम करना असम्भव है। उसी तरह, यदि परमेश्वर जो कुछ सीधा और अच्छा है उससे अत्यन्त तीव्रता के साथ प्रेम करता है, तब उसी तीव्रता के साथ उसे उस प्रत्येक बात से घृणा करना आवश्यक है जो विकृत और बुरी है।

पवित्र शास्त्र हमें सिखाता है कि परमेश्वर न केवल पाप से घृणा करता है, बल्कि वह अपनी घृणा उन लोगों की ओर भी प्रगट करता है जो पाप करते हैं। हम सभों को यह लोकप्रिय घिसी–पिटी उक्ति सिखाई गई है, "परमेश्वर पापी से प्रेम और पाप से घृणा करता है," परन्तु यह शिक्षा पवित्र शास्त्र की शिक्षा का इन्कार है जो स्पष्ट रूप से इसके विपरीत घोषणा करता है। भजन के लेखक ने पवित्र आत्मा की प्रेरणा से लिखा कि परमेश्वर न केवल अपराध से घृणा करता है बल्कि वह "सब कुकर्मियों से" भी "घृणा करता है।"[19]

हमें यह समझना है कि पाप को पापी से अलग करना असम्भव है। परमेश्वर पाप को दण्ड नहीं देता, परन्तु वह पाप करनेवाले को दण्ड देता है। पाप को नरक मे दण्डित नहीं किया जाता, परन्तु पाप करनेवाले उस मनुष्य को दण्डित किया जाता है। इस कारण, भजन के लेखक ने घोषणा की, "अहंकारी तेरी आँखों के सामने खड़े नहीं रह सकेंगे। तू सब कुकर्मियों से घृणा करता है।"[20] साथ ही, "परमेश्वर अपने पवित्र भवन में है; परमेश्वर का सिंहासन स्वर्ग में है; उसकी आँखें मनुष्य की सन्तान को नित देखती रहती हैं और उसकी पलकें उनको जाँचती हैं। यहोवा धर्मी को परखता है, परन्तु वह उनसे जो दुष्ट हैं और उपद्रव से प्रीति रखते हैं अपनी आत्मा में घृणा करता है। वह दुष्टों पर फन्दे बरसाएगा; आग और गन्धक और प्रचण्ड लूह उनके कटोरों में बाँट दी जाएँगी। क्योंकि यहोवा धर्मी है, वह धर्म के ही कामों से प्रसन्न रहता है।"[21]

यह समझना अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि उपर्युक्त वचन पवित्र शास्त्र में अकेले नहीं है, परन्तु अन्य अनुच्छेदों के साथ भी हैं, जो पवित्र परमेश्वर की ओर से ऐसे उत्तर के पक्ष को मजबूत बनाते हैं। लैव्यव्यवस्था की पुस्तक में, प्रभु ने इस्राएलियों को चेतावनी दी कि वे उन राष्ट्रों की प्रथाओं का अनुसरण न करें जिन्हें वह उनके सामने से निकाल देने वाला था और फिर उसने कहा, "क्योंकि उन

लोगों ने जो ये सब कुकर्म किए हैं, इसी कारण मुझे उनसे घृणा हो गई है।"[22] इसके अलावा, उसने व्यवस्थाविवरण की पुस्तक में अपने लोगों को यह चेतावनी दी कि वे कनानियों को निकाल दे क्योंकि उसे उनसे "घृणा है", और जो कोई इस प्रकार के अधर्म के कामों में हिस्सा लेते हैं वे भी उसके सन्मुख "घृणित" थे।[23] भजन की पुस्तक में, परमेश्वर ने वाचा के देश में प्रवेश करने से इन्कार करने वाले विश्वासहीन इस्राएलियों के प्रति अपनी मनोदशा का वर्णन करते हुए कहा है, "चालीस वर्ष तक मैं उस पीढ़ी के लोगों से रूठा रहा।"[24] अन्त में, तीतुस को लिखी पत्री में पौलुस उन लोगों का वर्णन करते है जिन्होंने परमेश्वर के सन्मुख "घृणित" के रूप में विश्वास का खोखला या बाहरी अंगीकार किया, और पतमुस के टापू पर यूहन्ना आग की झील का वर्णन करते हुए उसे उन लोगों का अनन्त स्थान बताते है जो "घिनौने" हैं।[25]

ईश्वरीय घृणा का स्पष्टीकरण

जब पवित्र शास्त्र यह कहता है कि परमेश्वर पापियों से घृणा करता है, तो इसका क्या अर्थ है ?सबसे पहले, वेबस्टर के शब्दकोष में घृणा की परिभाषा इन शब्दों में की गई है – किसी के प्रति चरम शत्रुत्व की भावना, किसी को सक्रिय रूप में शत्रु समझना, या किसी को तीव्रता के साथ टालने का प्रयास करना, तुच्छ जानना, तिरस्कार करना, घृणा करना, या द्वेष करना। यद्यपि ये शब्द कठोर हैं, परन्तु पवित्र शास्त्र में इनमें से अधिकतर शब्दों का उपयोग पाप और पापियों के साथ परमेश्वर के रिश्ते का वर्णन करने के लिए किया गया है। दूसरी बात, हमें यह समझना आवश्यक है कि परमेश्वर की घृणा उसके अन्य गुणों के साथ पूर्ण समन्वय में होती है। मनुष्य के विपरीत, परमेश्वर की घृणा पवित्र, न्यायपूर्ण और उसके प्रेम के परिणाम स्वरूप है। तीसरी बात, हमें यह समझना आवश्यक है कि परमेश्वर की घृणा उसके प्रेम का इन्कार नहीं है। भजन संहिता के 5 वें अध्याय का 5 वा पद, यूहन्ना 3:16 या मत्ती 5:44–45 का इन्कार नहीं है। यद्यपि परमेश्वर का क्रोध पापी पर बना रहता है, यद्यपि वह दुष्ट से प्रतिदिन क्रोधित रहता है, और यद्यपि वह सभी कुकर्मियों से घृणा करता है, तौभी उसके प्रेम का गुण ऐसा है कि वह उन लोगों से भी प्रेम करने में समर्थ है जो उसकी घृणा के पात्र हैं और उनके उद्धार के पक्ष में कार्य करता है।[26] चौथी बात, यद्यपि परमेश्वर अपने घृणा के पात्रों के प्रति धीरजवन्त है और उन्हें उद्धार देना चाहता है, तौभी ऐसा एक समय आएगा जब वह अपने इस अवसर को हटा लेगा और उसके बाद मेल–मिलाप सम्भव न होगा।[27]

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. 2 इतिहास 19:7 NASB
2. व्यवस्थाविवरण 7:9; भजन संहिता 9:8
3. रोमियों 3:10
4. बहुत से प्रचारकों ने अनजाने में जोनाथन एडवर्ड्स के उपदेश "Sinners in the Hands of an Angry God" का शीर्षक बदलकर "Slightly Dysfunctional Individuals in the Hands of a Mildly Disgruntled Deity." कर दिया है।
5. नहूम 1:2; भजन संहिता 7:11; 76:7
6. भजन संहिता 90:11
7. यिर्मयाह 10:10; नहूम 1:6
8. मैंने यह विचार Lake road Chapel, Kirksville, Missouri के पासबान चार्ल्स लैटर से लिया है।
9. निर्गमन 34:6–7
10. निर्गमन 15:7
11. इब्रानियों 12:29; रोमियों 3:5; प्रकाशित वाक्य 6:16
12. इफिसियों 5:6
13. यशायाह 30:27
14. यशायाह 33:14
15. यिर्मयाह 30:23
16. 1 यूहन्ना 3:4; 1 शमूएल 15:23
17. इफिसियों 5:6; रोमियों 6:23
18. इफिसियों 2:3; 5:6; कुलुस्सियों 3:6
19. भजन संहिता 5:5 "तू सब कुकर्मियों से घृणा करता है।" (IBP), "तुझे सब अनर्थकारियों से घृणा है।" (BSI)
20. भजन संहिता 5:5
21. भजन संहिता 11:4–7
22. लैव्यव्यवस्था 20:23
23. व्यवस्थाविवरण 18:12; 25:16
24. भजन संहिता 95:10
25. तितुस 1:16; प्रकाशित वाक्य 21:8
26. यूहन्ना 3:36; भजन संहिता 7:11; 5:5
27. रोमियों 10:21

अध्याय – 16

पवित्र युद्ध

परन्तु उन्होंने बलवा करके उसके पवित्र आत्मा को खेदित किया; इस कारण वह पलटकर उनका शत्रु बन गया, वह स्वयं उनके विरूद्ध लड़ा। – यशायाह 63:10

यहोवा तो जल उठनेवाला और बदला लेनेवाला परमेश्वर है; यहोवा बदला लेनेवाला और कोप करनेवाला है। यहोवा अपने विरोधियों से बदला लेता है, और अपने शत्रुओं के लिए क्रोध रखता है। – नाहूम 1:2

परमेश्वर का धर्मी प्रकोप जो उसके क्रोध और जलजलाहट में प्रगट होता है, यह समझने के बाद, अब हम अपना ध्यान उससे सम्बंधित विषय की ओर लगाएँगे – परमेश्वर और पश्चाताप न करने वाले पापी के मध्य विद्यमान शत्रुता। यह सुसमाचार प्रचारक का कर्तव्य है कि वह मनुष्यों को उस पवित्र युद्ध के विषय में चेतावनी दे जिसकी घोषणा परमेश्वर ने अपने शत्रुओं के विरोध में की है और पापियों से निवेदन करे कि अधिक विलम्ब होने से पहले वे परमेश्वर के साथ मेल कर ले। विद्रोही के लिए परमेश्वर द्वारा क्षमा की प्रतिज्ञा सच्ची है, परन्तु हम उसे मानकर नहीं चल सकते। ऐसा एक दिन आने वाला है जब जैतून की पत्ती हटा दी जाएगी और मेल–मिलाप का अवसर दूर कर दिया जाएगा। उस समय, पापी के लिए जो शेष है वह केवल, "दण्ड की भयानक प्रतीक्षा और अग्नि–ज्वाला..... जो विरोधीयों को भस्म कर देगी... जीवते परमेश्वर के हाथों में पड़ना भयंकर बात है।"[1]

कौन किसके साथ युद्धरत् है ?

यह लोकप्रिय उद्‌घोषणा कि ''परमेश्वर पापी से प्रेम और पाप से घृणा करता है'', अक्सर इस समान्तर उक्ति के साथ आती है : "मनुष्य परमेश्वर के साथ युद्धरत् है, परन्तु परमेश्वर कभी मनुष्य के साथ युद्ध नहीं करता।" परिणामस्वरूप, परमेश्वर के विरोध में पापी की शत्रुता और निरन्तर युद्ध के विषय में बहुत कहा जाता है, परन्तु पापी के विरोध में परमेश्वर के निरन्तर युद्ध के विषय में शायद ही कुछ कहा जाता है।

सुसमाचारीय विचारधारा में इस वर्तमान प्रवृत्ति के बावजूद, यह समझना अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि परमेश्वर और पापी के मध्य शत्रुता एक पक्षीय नहीं है – वह परस्पर है। जब मनुष्य परमेश्वर के विरोध में युद्ध की घोषणा करते हैं, तब परमेश्वर उनका शत्रु बनकर उनके विरोध में लड़ता है।[2] यद्यपि यह हतोत्साह करनेवाला सत्य है, पवित्र शास्त्र स्पष्ट रूप से सिखाता है कि परमेश्वर पश्चाताप न करने वाले पापी को अपना शत्रु मानता है और उसके विरोध में युद्ध का घोषणा पत्र लिख चुका है। पापी की एकमात्र आशा यह है कि वह अपने हथियार डाल दे और इस से पहिले कि युगानुयुग के लिए बहुत देर हो जाए वह शरणागती का श्वेत ध्वज उठा ले।[3]

नहूम की पुस्तक में हमें बताया गया है, "यहोवा अपने विरोधियों से बदला लेता है, और अपने शत्रुओं के लिए क्रोध रखता है।"[4] पहला सत्य जो यह पद हमें सिखाता है वह यह कि परमेश्वर दुष्ट को अपना शत्रु मानता है। मनुष्य ने उसे अपना शत्रु बनाया है इस पर वह विलाप नहीं करता, बल्कि वह मनुष्य के विरोध में अपने स्वयं के पक्ष की घोषणा करता है। परमेश्वर ही है जो युद्ध रेखा खींचता है और अपनी सेना को बुलाता है। दूसरा सत्य जो हमें सीखना है वह यह है कि परमेश्वर आक्रमणकारी पक्ष में है। वह केवल दुष्ट मनुष्यों के आक्रमण का सामना करने खड़ा नहीं रहता, परन्तु वह स्वयं युद्ध का नारा लगाता है और अपने क्रोध के पूर्ण बल के साथ उन पर धावा बोल देता है। जैसा कि भजन का लेखक चेतावनी देता है, परमेश्वर ने युद्ध के लिए अपनी तलवार पर धार चढ़ाई है, अपना धनुष चढ़ाकर तीर सन्धान चुका है और अपने घातक हथियारों को भी तयार कर लिया है। यदि दुष्ट पश्चाताप नहीं करेंगे, तो वे उसके क्रोध से नाश हो जाएँगे।[5]

हमें यह समझ लेना और स्वीकार करना अनिवार्य है कि 'पवित्र युद्ध' का यह सत्य पुरानी वाचा का स्मृति–चिन्ह या परमेश्वर का कोई आदिम दृष्टिकोण नहीं है जिसे नए नियम के क्रम क्रम से आए प्रकाशन के द्वारा रद्द किया गया हो। बल्कि यह बाइबल आधारित और स्थीर सत्य है जो सम्पूर्ण पवित्र शास्त्र में पाया जाता है। रोमियों की पुस्तक में, प्रेरित पौलुस लिखते है : "क्योंकि जब हम शत्रु ही थे, हमारा मेल परमेश्वर के साथ उसके पुत्र की मृत्यु के द्वारा हुआ।"[6] यद्यपि यह वचन परमेश्वर और मनुष्य के बीच की परस्पर शत्रुता के विचार को व्यक्त करता है, तौभी परमेश्वर के प्रति पापी की शत्रुता पर नहीं, किन्तु पापी के प्रति परमेश्वर के विरोध पर अधिक बल दिया गया है। यह जानकर कि यह विचार समकालीन बहुसंख्य सुसमाचारीय विश्वासियों के लिए अपरिचित है, निचे वर्णित विद्वानों ने इस पर अधिक पुष्टि की है : चार्ल्स हॉज ने कहा है, "पापी व्यक्ति का न केवल परमेश्वर के प्रति एक दुष्ट विरोध है, परन्तु पापी के प्रति भी परमेश्वर का पवित्र विरोध है।"[7] लुईस बरखॉफ ने कहा, "केवल मनुष्य का ही परमेश्वर के प्रति शत्रुत्व नहीं, परन्तु वें भी परमेश्वर के पवित्र क्रोध के पात्र हैं।"[8] और रॉबर्ट एल. रेमण्ड ने समझाया है, "'शत्रु' इस शब्द का अर्थ सम्भवतः निष्क्रिय

अर्थ से नहीं ('परमेश्वर द्वारा घृणित') बल्कि सक्रिय अर्थ से ('परमेश्वर से घृणा करना') है। दूसरे शब्दों में, 'शत्रु' यह शब्द परमेश्वर के प्रति हमारी अपवित्र घृणा को नहीं बल्कि हमारे प्रति परमेश्वर की पवित्र घृणा को अधोरेखित करता है।"[9]

हमारे सन्दर्भ पद के अनुसार मनुष्य ने पाप किया है और परमेश्वर खेदित और अपमानित पक्ष था। मेल–मिलाप होने के लिए, मनुष्य के अपराध को हटाया जाना अवश्य था, परमेश्वर के न्याय को सन्तुष्ट किया जाना अवश्य था और मनुष्य के विरोध में परमेश्वर के क्रोध को शान्त करना अवश्य था। हम जानते हैं कि मसीह की मृत्यु ने सब मनुष्यों को परमेश्वर के प्रति अनुकूल रूप से प्रवृत्त नहीं किया, क्योंकि अधिकतर लोग परमेश्वर के व्यक्तित्व और इच्छा के प्रति निरन्तर द्वेषपूर्ण विरोध रखते हैं। परन्तु, मसीह की मृत्यु ने पवित्र परमेश्वर की धार्मिकतापूर्ण मांगों को सन्तुष्ट किया ताकि वह अपने शत्रु के प्रति अनुकूल हो सके और सुसमाचार के द्वारा उनकी ओर शान्ति का जैतून पत्र आगे बढ़ा सके। जो पश्चाताप करेंगे और मसीह पर विश्वास करेंगे वे उद्धार पाएँगे, परन्तु जो इन्कार करते हैं, वे परमेश्वर के क्रोध के दिन के लिए अपने लिए क्रोध संचित कर रहे हैं जब अन्त में उसका धर्मी न्याय प्रगट होगा।[10]

हमें कभी इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि जिस मसीह ने देश देश के लोगों के लिए अपना प्राण दिया वही उन का संहार करेगा और लोहे के राजदण्ड से उन पर राज्य करेगा।[11] दुख उठाने वाला सेवक जो कल्वरी के मार्ग पर चला, वही एक दिन सर्वशक्तिमान परमेश्वर के प्रकोप और क्रोध के रसकुण्ड को रौंदेगा।[12] जिस उद्धारकर्ता ने अपने शत्रुओं के लिए अपना लोहू बहाया वही दूसरी बार अपने शत्रुओं के लोहू में डुबा हुबा वस्त्र पहनकर प्रगट होगा।[13] जिस मेम्ने ने कांठ पर परमेश्वर के क्रोध को सहा, वही उसके विरोध में इकट्ठा लोगों पर इस हद तक परमेश्वर का क्रोध उण्डेलेगा कि वे पर्वतों को पुकारकर कहेंगे कि उन पर गिर पड़े और उन्हें परमेश्वर की उपस्थिति से छिपाए।[14] जिस शान्ति के राजकुमार ने प्रभु के करूणा करने के वर्ष का प्रचार किया, वही एक दिन पलटा लेने के दिन का प्रचार करेगा।[15] वही है जो परमेश्वर के शत्रुओं का न्याय करेगा, उनसे युद्ध करेगा और उनके विरोध में स्वर्ग की सेनाओं की अगुवाई करेगा।[16] इसी कारण, भजन का लेखक देश देश के लोगों को उलाहना देता है कि वे पुत्र को चुमें, ऐसा न हो कि वह क्रोध करे, और वें मार्ग ही में नाश हो जाएँ, क्योंकि क्षण भर में उसका क्रोध भड़कने को है।[17]

सुसमाचार प्रचारकों के रूप में, हमें मनुष्यों के लिए परमेश्वर के प्रेम और उद्धार करने की उसकी इच्छा का प्रचार तो करना चाहिए, परन्तु हमें उन चेतावनियों को हटाकर नहीं रखना है जो पवित्र शास्त्र में इतनी स्पष्ट और बार बार आई हुईं हैं। मनुष्यों को अपने परमेश्वर के सामने आने के लिए तैयार होना है।[18] जब वे शत्रु (परमेश्वर) के साथ मार्ग पर ही हैं, तभी उन्हें "उससे शीघ्र मित्रता

कर" लेना आवश्यक है।[19] क्योंकि, "यदि मनुष्य न फिरे तो वह अपनी तलवार पर सान चढ़ाएगा; वह अपना धनुष चढ़ाकर तीर सन्धान चुका है।"[20] जो लोग विश्वास करते हैं उन्हें पूर्ण प्रतिफल और शान्ति की निश्चितता की प्रतिज्ञा का प्रचारक को प्रचार करना आवश्यक है। परन्तु, जो सुसमाचार को मानने से इन्कार करते हैं, उन्हें विश्वासयोग्य दूतों को यह बताना है कि परमेश्वर का क्रोध उन पर अब भी बना है।[21]

यह कैसी अद्भुत और भयानक बुलाहट है जो सुसमाचार के सेवक को दी गई है। कुछ लोगों के लिए तो वह जीवन की सुगन्ध है, परन्तु औरों के लिए वह मृत्यु की गन्ध है। इन बातों के करने योग्य कौन है ?[22]

क्या बदला लेना परमेश्वर के लिए अशोभनीय है ?

परमेश्वर का पलटा लेना उसके क्रोध के साथ निकटता से जुड़ा है। भजन का लेखक उसे "बदला लेनेवाले परमेश्वर" कहता है, और नहूम भविष्यद्वक्ता उसका परिचय बदला लेने वाले और क्रोधी प्रभु के रूप में देता है जो "अपने विरोधियों से बदला लेता है, और अपने शत्रुओं के लिए क्रोध रखता है।"[23] मूसा के गीत में परमेश्वर के प्रतिशोध को उँचा उठाया गया है। पवित्र शास्त्र में यह परमेश्वर का सबसे भयावह वर्णन है : "अब देख, मैं, हाँ, मैं ही वह हूँ, और मेरे सिवाय कोई ईश्वर नहीं; मृत्यु और जीवन का देने वाला मैं ही हूँ। मैंने घायल किया है, तथा मैं ही चंगा करता हूँ; कोई नहीं है जो मेरे हाथ से छुड़ा सके। निःसंदेह, मैं अपना हाथ स्वर्ग की ओर उठाकर कहता हूँ; मेरे जीवन की सौगंध, यदि मैं अपनी चमचमाती तलवार पर सान चढ़ाऊँ, और न्याय अपने हाथ में लूं, मैं अपने द्रोहियों से प्रतिशोध लूंगा, और अपने बैरियों को बदला दूंगा। मैं अपने तीरों को लहू से मतवाला करूंगा, मेरी तलवार मांस खाएगी।"[24]

ऐसे वचन को पढ़कर हम क्योंकर भय से कांप नहीं उठेंगे ?इस सत्य पर विश्वास करके हम क्योंकर उसका प्रचार नहीं करेंगे ?आमोस भविष्यद्वक्ता ने घोषणा की, "सिंह गरजा; कौन न डरेगा ? परमेश्वर यहोवा बोला; कौन भविष्यवाणी न करेगा ?"[25] प्रेरित पौलुस ने लिखा, "सो हम भी विश्वास करते हैं, और इसीलिए बोलते हैं।"[26] उसी तरह, यदि हम विश्वास करते हैं कि पवित्र शास्त्र अचुक और परमेश्वर न बदलने वाला है, तो हम इन बातों का कैसे प्रचार नहीं कर सकते ?क्या नाहूम की चेतावनी अर्थहीन कविता से बढ़कर कुछ नहीं है जिसमें कोई व्यवहारिक लागुकरण न हो ?क्या यह रूपक मात्र है जिसका कोई मूर्तभाव नहीं ?क्या इन बातों को हम से अधिक प्रबल सभ्यता के लिए लिखा गया था, जो आधुनिक मनुष्य के निर्बल प्राण के लिए सहनशीलता के बाहर है ?यदि नाहूम के समय में, यह परमेश्वर के विषय में सत्य वचन था और मनुष्य के लिए आवश्यक वचन था, तो यही

बात आज के लिए भी है। यह वही सत्य है – सुसमाचार के हमारे प्रचार में आवश्यक तत्व!

पवित्र शास्त्र के अनुसार, मनुष्यों को चेतावनी दी जानी चाहिए कि परमेश्वर बदला लेने वाला परमेश्वर है। तौभी हम ऐसे सत्य का पवित्र शास्त्र के अन्य वचनों के साथ कैसे मेल करते हैं जो स्पष्ट रूप से बदले को दुष्ट मनुष्य की दुष्टता के रूप में वर्णन करते है ?[27] पवित्र और प्रेमी परमेश्वर कैसे बदला लेने वाला परमेश्वर भी हो सकता है ? सबसे पहले हमें यह समझना आवश्यक है कि ईश्वरीय बदला पवित्र शास्त्र का एक अखण्डित विषय है और इसलिए उसे नकारा नहीं जा सकता। दूसरी बात, हमें यह समझना है कि परमेश्वर का बदला पतित मनुष्य के बदले से अलग है; पवित्रता, धार्मिकता और न्याय के लिए उसकी धुन उसके बदले को प्रेरित करती है। परमेश्वर तरस से भरा, अनुग्रहकारी, क्रोध करने में धीमा और प्रेम से परिपूर्ण है, परन्तु वह न्यायी परमेश्वर भी है। वह अपना नाम पवित्र ठहराने और अपनी सृष्टि में न्याय की स्थापना करने के लिए पापी को दण्ड देगा।[28] मनुष्य के पाप के भयावह स्वभाव के प्रकाश में, परमेश्वर उचित ही अपना बदला लेता है। यिर्मयाह की पुस्तक में तीन बार परमेश्वर पूछता है, "क्या मैं ऐसे ऐसे कामों का उन्हें दण्ड न दूं... क्या मैं ऐसी जाति से अपना पलटा न लूं ?"[29] व्यवस्था और भविष्यद्वक्ताओं की पुस्तक में अन्य स्थानों में हम इस प्रश्न का उत्तर पाते हैं : मूसा इस बात की पुष्टि करता है कि परमेश्वर उससे घृणा करने वालों से बदला लेने में विलम्ब नहीं करेगा, और यशायाह घोषणा करता है कि, वह अपने शत्रुओं को दूर करके शान्ति पाएँगा, और अपने बैरियों से पलटा लेगा।[30]

आज कई लोग ईश्वरीय प्रतिशोध या इस प्रकार की अन्य शिक्षाओं का, जो यह सूचित करती है कि प्रेमी और दयालु परमेश्वर बदला ले सकता है, इन्कार करते हैं। यहाँ तक कि जो इस सिद्धान्त को पवित्र शास्त्र की स्पष्ट शिक्षा के रूप में स्वीकार करते हैं वे सेवक भी प्रचार–मंच से शायद ही इसका प्रचार करते हैं। परिणामस्वरूप, अविश्वासी संसार और सच्चे मसीही भी परमेश्वर के सच्चे चरित्र और मनुष्य के पापमय कार्यों के प्रति उसकी मौलिक प्रतिक्रिया के विषय में अनजान रहते हैं।

पवित्र शास्त्र हमें चेतावनी देता है कि परमेश्वर का क्रोध मनुष्य के पुत्रों पर प्रगट हो रहा है और हमें उलाहना देता है कि हम अपने परमेश्वर के सामने आने के लिए तैयार रहे।[31] पापी मनुष्यों को इन सच्चाइयों पर भय के साथ और काँपते हुए विचार करना चाहिए, परन्तु प्रचारकों के लिए आवश्यक है कि वें पहले इन सत्यों का प्रचार करे। तुरही की पुकार के साथ, लोगों को आने वाले क्रोध के विषय में चेतावनी देना हमारी जिम्मेदारी है।[32] यदि हम हमारी सेवकाई के इस अनर्थकारी पहलू को उजागर करने के हमारे कर्तव्य को पूरा करने से इन्कार करते है, तो हम जिम्मेदार ठहराए

जाएँगे और हमारे सुनने वालों के खून का लेख हम से लिया जाएगा। जैसा कि भविष्यद्वक्ता यहेजकेल की पुस्तक में परमेश्वर चेतावनी देता है : "यदि मैं दुष्ट से कहूँ, हे दुष्ट, तू निश्चय मरेगा, तब यदि तू दुष्ट को उसके मार्ग के विषय न चिताए, तो वह दुष्ट अपने अधर्म में फँसा हुआ मरेगा, परन्तु उसके खून का लेखा मैं तुझी से लूंगा।"[33]

परमेश्वर के प्रतिशोध के विषय में हमने जिन थोडे वचनों पर विचार किया उनके प्रकाश में, कोई केवल यह सोचकर विलाप कर सकता हैं कि हमारा प्रचार कितना कुरूप और असन्तुलित हो चुका है! हमारे अपने सन्देश हमें गुमराह करते हैं और प्रगट करते हैं कि हम कुछ सच्चाइयों के विषय में कितने पक्षपाती हैं और दूसरों के प्रति कितने पूर्वग्राही हैं! हमें परमेश्वर के सम्पूर्ण अभिप्राय का प्रचार करने के लिए बुलाया गया है, और हमें उससे पीछे नहीं हटना है![34] हम आधुनिक मनुष्य की जरूरतों के विषय में जो जानते हैं उसके अनुसार हमें क्या प्रचार करना चाहिए और क्या प्रचार नहीं करना चाहिए यह चुनने का और फैसला करने का अधिकार हमें नहीं दिया गया है। हम में से जिन लोगों को दूसरों को सिखाने का विशेष सौभाग्य दिया गया है, उन्हें अपने आप से यह प्रश्न पूछना चाहिए कि हम कितनी बार उस बात की घोषणा करते हैं जिसे समझने की मनुष्य को ज्यादा आवश्यकता है और तौभी सुनने की कम इच्छा रखते हैं : अर्थात् परमेश्वर का न्याय। हमें यह समझने की आवश्यकता है कि इस प्रकार के प्रचार का अभाव हमारे प्रचारमंचों की असंगतीयों को उजागर करता है और परमेश्वर के चरित्र और मनुष्य के साथ उसके व्यवहार से सम्बन्धित अत्यन्त बुनियादी सत्यों में से कुछ के विषय में सामान्य विश्वासियों की अज्ञानता का कारण स्पष्ट करता है।

हम एक बड़े धर्मसैद्धान्तिक असन्तुलन के दौर में जी रहे हैं। परमेश्वर के प्रेम के विषय में बहुत कुछ कहा जाता है, और यह सही भी है, परन्तु उसके क्रोध के विषय में लगभग कुछ भी नहीं कहा जाता। यदि प्रचारक एक बार भी परमेश्वर के क्रोध का उल्लेख किए बगैर परमेश्वर के प्रेम पर पूरा सन्देश प्रचार करता है, तो सम्भव है कि ऐसे प्रचारक से कोई प्रश्न नहीं करेगा। परन्तु, यदि वह अपने प्रचार के केवल एक भाग में परमेश्वर के क्रोध पर प्रचार करता है, तो सम्भवतः उसे असन्तुलित, संकुचित मन का, और प्रेमरहित कहकर उसकी भर्त्सना की जाएगी। हम ऐसे ही युग में जी रहे हैं। "क्योंकि ऐसा समय आएगा जब लोग खरा उपदेश न सह सकेंगे, पर अपनी अभिलाषाओं के कारण..... अपने कान सत्य से फेरकर कथा कहानियों पर लगाएँगे।"[35]

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. इब्रानियों 10:27, 31
2. यशायाह 63:10
3. पास्टर चार्ल्स लैटर ने सबसे पहले इस विचार की ओर मेरा ध्यान खीचा।
4. नहूम 1:2
5. भजन संहिता 7:12–13
6. रोमियों 5:10
7. Charles Hodge, *A Commentary on the Epistle to the* रोमियों (London: Banner of Truth, 1989), 138.
8. Louis Berkhof, *Systematic Theology* (Edinburgh: Banner of Truth, 1993), 374.
9. Robert L. Reymond, *A New Systematic Theology of the Christian Faith* (Nashville: Thomas Nelson, 1998), 646.
10. रोमियों 2:5
11. प्रकाशित वाक्य 19:15
12. प्रकाशित वाक्य 19:15
13. प्रकाशित वाक्य 19:13
14. प्रकाशित वाक्य 6:16–17
15. यशायाह 9:6; 61:2; लूका 4:19
16. प्रकाशित वाक्य 19:11, 14
17. भजन संहिता 2:12
18. आमोस 4:12
19. मत्ती 5:25
20. भजन संहिता 7:12–13
21. यूहन्ना 3:36
22. 2 कुरिन्थियों 2:16
23. भजन संहिता 94:1; नहूम 1:2
24. व्यवस्थाविवरण 32:39–42
25. आमोस 3:8
26. 2 कुरिन्थियों 4:13
27. लैव्यव्यवस्था 19:18; 1 शमूएल 25:25, 30–33
28. निर्गमन34:6
29. यिर्मयाह 5:9, 29; 9:9
30. व्यवस्थाविवरण 7:10; यशायाह 1:24
31. आमोस 4:12
32. इफिसियों 5:6
33. यहेजकेल 33:8
34. प्रेरितों के काम 20:27
35. 2 तिमुथि 4:3–4

अध्याय – 17

एक मूल्यवान वरदान

वे उसके अनुग्रह ही से उस छुटकारे के द्वारा जो मसीह यीशु में हैं, सेंत–मेंत धर्मी ठहराए जाते हैं।
रोमियों 3:24

पिछले कुछ अध्यायों में हम ने पतित मनुष्य की नैतिक दशा, परमेश्वर के विरोध में उसका विश्वव्यापी विद्रोह और ईश्वरीय दण्ड के भयानक परिणामों पर विचार किया है : सभी मनुष्य परमेश्वर के सम्मुख दोषी ठहराए जाते हैं। परन्तु हमारे सामने जो वचन है, उसमें हम पाएँगे कि परमेश्वर के सामने मसीही व्यक्ति की स्थिति में एक मौलिक बदलाव हुआ है – उसे अब पापी नहीं माना जाता, परन्तु प्रभु यीशु मसीह में विश्वास के द्वारा उसे धर्मी ठहराया गया है।

धर्मी ठहराया जाना

पवित्र शास्त्र से हम सीखते हैं कि परमेश्वर धर्मी परमेश्वर है।[1] उसके काम सिद्ध हैं, और उसके सब मार्ग न्यायपूर्ण हैं। वह विश्वासयोग्य परमेश्वर है जो उचित को अनुचित नहीं ठहराएगा।[2] धर्मी होने के कारण, वह नैतिक रूप से उदासीन या तटस्थ नहीं रह सकता। वह धार्मिकता से प्रेम करता है और बुराई से घृणा करता है।[3] उसकी आँखें इतनी शुद्ध हैं कि वह बुराई को देख नहीं सकता, और वह दुष्टता को कृपा–दृष्टि से नहीं देख सकता।[4] उसने अपना सिंहासन न्याय के लिए स्थापित किया है, और वह जगत का न्याय धर्म से करेगा।[5] वह ऐसा परमेश्वर है जो प्रतिदिन क्रोध करता है। यदि मनुष्य न फिरे तो वह अपनी तलवार पर सान चढ़ाएगा; और वह न्याय के लिए अपना धनुष चढ़ाकर तीर सन्धेगा।[6]

परमेश्वर की धार्मिकता और मनुष्य की बुराई के विषय में पवित्र शास्त्र की गवाही हमें एक बड़ी धर्मसैद्धान्तिक और नैतिक समस्या की ओर ले जाती है : पापी मनुष्य परमेश्वर की धार्मिकता के सामने कैसे खड़े रह सकता है ? धर्मी परमेश्वर अनर्थकारियों के साथ कैसे संगति कर सकता है ? भजन के लेखक ने इस समस्या का वर्णन इस प्रकार किया है, "यहोवा के पर्वत पर कौन चढ़ सकता

है ? और उसके पवित्र स्थान में कौन खड़ा हो सकता है ? वही जिसके हाथ निर्दोष है और हृदय शुद्ध है, जिस ने अपने मन को झूठी बात की ओर नहीं लगाया, न कपट से शपथ खाई है। उसे यहोवा की ओर से आशीष, हाँ, अपने उद्धार करनेवाले परमेश्वर से धार्मिकता मिलेगी।"[7]

परमेश्वर की उपस्थिति में धर्मी जन के रूप में खड़े रहने के लिए पूर्ण, निरन्तर और नैतिक सिद्धता की आवश्यकता है। जन्म से लेकर मृत्यु के क्षण तक प्रत्येक विचार, शब्द और कार्य परमेश्वर के स्वभाव और इच्छा के सिद्ध अनुरूप होना आवश्यक है। थोड़ासा दोष या इस मानक से थोड़ासी भिन्नता का परिणाम तुरन्त अयोग्य ठहराता है। परमेश्वर की धार्मिकता में बड़ी सख्ती और कड़ाई है यह सीखने के लिए हमें पाप की ओर और आदम के पतन की ओर देखने की जरूरत है। इस कारण जब नैतिकतावादी पूछता है, "उद्धार पाने के लिए मुझे क्या करना चाहिए ?" तब हमें उसके सामने सिद्ध आज्ञाकारिता की मांग को रखना चाहिए। यदि परमेश्वर के अनुग्रह से वह उलझन में पड़ जाता है और निराश हो जाता है, तब हमें मसीह की ओर उसकी अगुवाई करनी चाहिए।

जो मनुष्य परमेश्वर की उपस्थिती में धर्ममय स्थान कमाने का प्रयास करता है वह सारी सृष्टि में सर्वाधिक दयनीय और आशाविहीन है। आदम के पतन के समय से कोई भी मनुष्य कभी परमेश्वर की धार्मिकतापूर्ण मांगों को पूरा नहीं कर पाया है। हमारे हाथ मैले और हमारे हृदय अशुद्ध है।[8] हम गर्भधारणा से ही झूठ की ओर दौड़ लगाते हैं, और हमारे हृदय की बहुतायत से हमने छल की बातें कही हैं।[9] हमें उसके सामने खड़े रहने का बल या अधिकार नहीं है। हम स्वयं को पूर्ण अयोग्य साबित करते हैं। यदि इस अन्तर को सुधारने के लिए कुछ किया जाना चाहिए, तो वह परमेश्वर को ही करना होगा। धर्मी ठहराया जाना उसके अनुग्रह से दिया गया वरदान है।[10]

धर्मी ठहराया जाना यह शब्द ग्रीक क्रियापद *dikaióo* (डिक्कायु) से आता है, जिसका अर्थ है किसी को धर्मी या उसे जैसा होना चाहिए वैसा साबित करना या ठहराना। पवित्र शास्त्र और उद्धार की शिक्षा के सन्दर्भ में, धर्मी ठहराया जाना एक न्यायिक या कानूनी घोषणा है।[11] जो मनुष्य परमेश्वर पर विश्वास करता है वह धर्मी ठहराया गया है अर्थात् उसका विश्वास उसके लिए धार्मिकता गिना गया। उसे परमेश्वर के सामने सही माना गया, या घोषित किया गया, और परमेश्वर उसके साथ ऐसा ही व्यवहार करता है। रोमियों की कलीसिया को लिखी हुई अपनी पत्री में प्रेरित पौलुस ने लिखा है, "पवित्र शास्त्र क्या कहता है ? अब्राहाम ने परमेश्वर पर विश्वास किया, और वह उसके लिए धार्मिकता गिना गया।"[12]

यह ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि धर्मी ठहराया जाना इस संज्ञा का अर्थ यह नहीं है कि जिस क्षण मनुष्य परमेश्वर पर विश्वास करता है, उसे धर्मी बनाया जाता है। यदि ऐसा होता, तो विश्वास करने वाला सिद्ध रूप से ऐसा धर्मी व्यक्ति बन जाता जो अब पाप नहीं करता है या ऐसा करने में

असमर्थ है। न ही इस शब्द का यह अर्थ है कि विश्वास करने वाले मनुष्य को एक ऐसे विशेष अनुग्रह से भर दिया गया है जो उसे अधिक धर्मी जीवन जीने योग्य बनाता है और इस प्रकार उसके कामों के आधार पर परमेश्वर के समक्ष धर्ममय स्थान पाता है। यदि ऐसा होता, तो उद्धार विश्वास से नहीं होता, और अनुग्रह, अनुग्रह न होता।[13] पवित्र शास्त्र और कलीसिया के इतिहास के अत्यन्त सार्थक अंगीकार और सेवक गवाही देते हैं कि धर्मी ठहराया जाना परमेश्वर के सिंहासन के समक्ष एक विधिसम्मत पद है। जो मनुष्य परमेश्वर के पुत्र के विषय में परमेश्वर की गवाही पर विश्वास करता है उसके सारे पाप क्षमा हो जाते हैं और उसे परमेश्वर के न्यायासन के सामने धर्मी ठहराया जाता है।[14] वेस्टमिन्स्टर अंगीकार (11.1) में इस बात को इस प्रकार लिखा गया है : "वे जिन्हें परमेश्वर प्रभावपूर्णता से बुलाता है, उन्हें वह सेंतमेंत धर्मी भी ठहराता है : उनमें धार्मिकता प्रविष्ट करके नहीं, बल्कि उनके पापों को क्षमा कर, और उन्हें धर्मी ठहराकर उन्हें धर्मी जन के रूप में स्वीकार करने के द्वारा, उनमें हुए किसी कारण से या उनके द्वारा किए गए किसी कार्य के कारण नहीं, परन्तु केवल मसीह के कारण... मसीह की आज्ञाकारिता और न्याय की संतुष्टी उसके नाम ठहराकर।"

धर्मी ठहराए जाने के लाभ

सो अब, धर्मी ठहराया जाना यीशु मसीह के व्यक्तित्व और कार्य में विश्वास के द्वारा प्राप्त की जानेवाली एक अद्‌भुत और बहुआयामी आशीश है। एक मसीही के विषय में, जो धर्मी ठहराया जा चुका है, हम निम्नलिखित बातों को कह सकते हैं – सर्वप्रथम, उसके पुराने, वर्तमान, और भविष्य के सभी पाप क्षमा किए जा चुके हैं और परमेश्वर के न्यायासन के समक्ष उनका कभी भी लेखा नहीं लिया जायेगा। प्रेरित पौलुस दाऊद का यह कहते हुए सन्दर्भ लेते है : "धन्य वे हैं, जिनके अधर्म क्षमा हुए, और जिनके पाप ढांपे गए। धन्य हैं वह मनुष्य जिसे परमेश्वर पापी न ठहराए।"[15]

जो सोचते है कि परमेश्वर उनसे अधिक भिन्न नहीं है, उनमें यह सत्य केवल एक निस्तेज एवं स्वयं को सुरक्षित समझने वाली भावना जगा सकता है।[16] जो स्वयं के विषय में बहुत कुछ सोचते है और समग्र नैतिक भ्रष्टता के प्राचीन और भयावह सिद्धान्त को नहीं समझते अथवा उस पर विश्वास नहीं करते, उनके लिये यह सत्य सुहावना है, परन्तु आश्चर्यकारक नहीं। परन्तु जिस व्यक्ति ने पवित्र परमेश्वर के सामने उसके ह्रदय की पतितावस्था और अपने लज्जास्पद कर्मों को देखा है, उसके लिए यह सत्य आश्चर्य से परे है। यह विस्मयकारी, आश्चर्यजनक, अद्‌भुत, अनोखा, चमत्कारपूर्ण, असाधारण, चौंका देने वाला, निःशब्द करने वाला, लगभग अविश्वसनीय और पूर्णतः अचम्भित करने वाला है। उसके लिए आनन्द का ध्वनी होना चाहिए, आनन्द के आँसू निकलने चाहिए, और महिमा का नारा होना चाहिए! यह बात फिर एक बार गूढ़ बातों की शिक्षा देने की जरूरत को प्रदर्शित करती

है, ताकि जब ज्योति प्रगट हो तब वह पूर्ण रूप से सुन्दर दिखाई दे।

दूसरी बात, मसीह की धार्मिकता मसीही में अध्यारोपित करने का अर्थ यह है कि मसीही व्यक्ति परमेश्वर के सामने धर्मी ठहराया गया है। अभ्यारोपित करना यह शब्द अत्यन्त महत्वपूर्ण धर्मसैद्धिान्तिक या ईश्वर विज्ञान सम्बंधी संज्ञा है जो ग्रीक शब्द *logízoma* (लोगीजोमा) से लिया गया है, जिसका अर्थ है मानना या किसी के नाम गिना जाना। विश्वासी के सम्बंध में, इसका अर्थ यह है कि मसीह की धार्मिकता उसकी धार्मिकता के रूप में मानी गई है या उसके लिए गिनी गई है। इस प्रकार विश्वासी परमेश्वर के सामने धर्मी है – अपने सद्‌गुण या योग्यता के कारण नहीं, बल्कि प्रभु यीशु के सिद्ध जीवन और प्रायश्चितकारी मृत्यु के द्वारा। प्रेरित पौलुस लिखते है, "परन्तु उसी के कारण तुम मसीह यीशु में हो, जो हमारे लिए परमेश्वर की ओर से, ज्ञान, धार्मिकता, पवित्रता, और छुटकारा ठहरा।"[17]

पृथ्वी पर अपने जीवन और सेवकाई के दौरान, प्रभु यीशु मसीह परमेश्वर के समक्ष सिद्ध आज्ञाकारिता में चला। प्रेरित पौलुस गवाही देते है कि मसीह "पाप से अज्ञात था।"[18] इब्रानियों का लेखक हमें बताता है कि हमारे समान ही सब बातों में उसकी परीक्षा हुई, तौभी निष्पाप निकला।[19] यीशु के व्यक्तित्व के सम्बंध में यह पवित्र शास्त्र में पाए गए अद्‌भुत सत्यों में से एक है। तुलना के द्वारा उसके व्यक्तित्व के विषय में कुछ समझना एक उत्तम तरीका होगा : हमारे जीवनों में एक क्षण भी ऐसा नहीं रहा है जब हमने हमारे प्रभु परमेश्वर से वैसा प्रेम किया जिसके वह योग्य है। परन्तु यीशु के जीवन में ऐसा एक भी क्षण नहीं था जब उसने अपने प्रभु परमेश्वर से अपने सम्पूर्ण हृदय, प्राण, बुद्धि और बल से प्रेम न किया हो।[20] साथ ही, हमारे जीवन में ऐसा एक भी क्षण नहीं था जब हमने अपने विकृत इरादे के बगैर परमेश्वर की महिमा के लिए कुछ किया हो। परन्तु, यीशु के जीवन में एक भी क्षण ऐसा नहीं था जिसमें वह परमेश्वर को सिद्ध रूप से और पूर्ण रूप से अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व के साथ महिमा देने से चुका हो। इसी कारण, उसके विषय में पिता की यह गवाही कभी डगमगाई नहीं, "यह मेरा प्रिय पुत्र है, जिससे मैं अति प्रसन्न हूँ।"[21]

धर्मी ठहराए जाने के विषय में अद्‌भुत बात यह है कि यह सिद्ध जीवन जो मसीह ने जिया उसे विश्वासी में अध्यारोपित किया जाता है – लेखे में गिना गया। इसके अलावा, यह पिता और पुत्र की इच्छा के अनुसार है। मसीह उसकी धार्मिकता विनामूल्य, बहुतायत से और असीमित आनन्द के साथ देता है। पूर्वज यूसुफ, जो मसीह का प्रतीक था, उसके पास विविध रंगों की सुन्दर पोशाक थी जो वह अपने भाईयों को नहीं देता था। परन्तु, मसीह, जो यूसुफ से महान है, अपने भाईयों को अपनी अवर्णनीय पोशाख धार्मिकता की बहुरंगी पोशाख से विभुषित करने में आनन्दित होता है। यह सुन्दरता का वस्त्र है जो अति दरिद्र पापी को महिमा प्रदान करता है, और वह झिलम है जो दुष्ट के जलते हुए

तीरों के विरोध में खड़ा करती है।[22] मसीह को पहनने के बाद, अब परमेश्वर प्रत्येक विश्वासी की ओर देखकर बिना डगमगाए घोषणा करता है, "यह मेरा प्रिय पुत्र है, जिससे मैं अति प्रसन्न हूँ।"

तीसरी बात, परमेश्वर के सिंहासन के सामने धर्मी ठहराए जाने के बाद, अब विश्वासी के साथ एक धर्मी जन के रूप में व्यवहार किया जाता है। पवित्र शास्त्र घोषणा करता है कि मसीह हमारे बदले में पाप बन गया ताकि हम उसमें परमेश्वर की धार्मिकता बनें।[23] क्रूस पर परमेश्वर ने हम सभों का अधर्म उस पर लाद दिया[24] और परमेश्वर ने उसके साथ कठोरता से व्यवहार किया, मानो वही उन पापों के लिए जिन्हें उसने उठा लिया, दोषी हो। वह परमेश्वर का त्यागा हुआ, परमेश्वर का कुचला हुआ और क्लेषित था, वह हमारे अपराधों के कारण कुचला गया और हमारी भलाई के लिए उसे ताड़ना मिली।[25] उसने ईश्वरीय शाप को उठा लिया और परमेश्वर के क्रोध को सह लिया जिसे हमने अपने पाप के कारण भड़काया था, और फिर भी, उसके दुख उठाने से जो कर्ज हम चुकता नहीं कर सकते थे, पूर्ण रूप से चुका दिया गया।[26] परिणामस्वरूप अब विश्वासी को धर्मी ठहराया गया है और वह उस धार्मिकता के असीमित और बेपरिमाण लाभों को प्राप्त करता है – परमेश्वर हमारे साथ अपने पुत्रों के समान व्यवहार करता है! यह एक ऐसा अद्‌भुत सत्य है जो विश्वासी के अपने आप को देखने के दृष्टीकोण को बदल देगा। हम इस महान अदलाबदल के लाभार्थी हैं, "अधर्मीयों के लिए धर्मी।"[27]

चौथी और अन्तिम बात यह है कि मसीह के प्रायश्चितकारी कार्य में विश्वास के द्वारा मसीही व्यक्ति का परमेश्वर से मेल हुआ है। प्रेरित पौलुस लिखते है, "इसलिए विश्वास से धर्मी ठहराए जाकर परमेश्वर से हमारा मेल अपने प्रभु यीशु मसीह के द्वारा है।"[28] पूर्वकाल में विद्यमान शत्रुता के प्रकाश में, यह प्रायः अकल्पिनीय आशीष है। धर्मी ठहराए जाने के वरदान के द्वारा, मसीही व्यक्ति अब क्रोध की सन्तान नहीं है, परन्तु परमेश्वर का पुत्र है।[29] मसीह की प्रायश्चितकारी मृत्यु के द्वारा धर्मी ठहराए जाने के बाद, हम उसके द्वारा परमेश्वर के क्रोध से बचाए जाएँगे।[30] इसी महिमामय सत्य के कारण प्रेरित पौलुस ने मसीही व्यक्ति का वर्णन इस प्रकार किया है : "तुम कैसे मूरतों से परमेश्वर की ओर फिरे ताकि जीवित और सच्चे परमेश्वर की सेवा करो, और उसके पुत्र के स्वर्ग पर से आने की बाट जोहते रहो जिसे उसने मरे हुओं में से जिलाया, अर्थात् यीशु की, जो हमें आनेवाले प्रकोप से बचाता है।"[31]

अनुग्रह

सम्भवतः, धर्मी ठहराए जाने के विषय में सबसे अद्‌भुत बात यह है कि यह परमेश्वर के अनुग्रह से है, या ऐसी कृपा जिसके हम योग्य नहीं हैं। इस सच्चाई के मद्‌देनजर, सम्पूर्ण पवित्र शास्त्र एक मत से सहमत है : विश्वासी "उसके अनुग्रह से सेंतमेंत धर्मी ठहराया गया है।"[32] सेंतमेंत यह शब्द यूनानी

भाषा के *doreán* (डोरेयन) इस क्रियाविशेषण से आया है, जिसका अक्षरशः अर्थ है "निशुल्क, उदारता से, योग्यता न रहते हुए, बिना कारण।" इसी शब्द का उपयोग प्रभु यीशु ने अपने शिष्यों को उसके प्रति संसार की शत्रुता दर्शाने के लिए किया जो पूर्णतः अयोग्य थी : "परन्तु उन्होंने ऐसा इसलिए किया कि वह वचन पूरा हो जो उनकी व्यवस्था में लिखा है : उन्होंने बिना कारण मुझ से धृणा की।"[33]

मसीह पापरहित था।[34] उसके शत्रू भी उसके विरोध में न्यायसंगत आरोप नहीं लगा सकते थे। उसने कभी किसी को उससे द्वेष करने का कारण नहीं दिया। उसी तरह, हमने कभी परमेश्वर को उसके समक्ष हमें धर्मी ठहराने का कोई निमित्त या कारण नहीं दिया। यदि हम हमारे जीवन परिवर्तन के पहले के हमारे जीवनों का जरा भी परिक्षण करते है तो इस से यह असम्भवता साबित होगी कि हमने अपने गुणों से हमारा धर्मी ठहराया जाना मोल लिया या हमारा उद्धार उसके अनुग्रह के बिना और किसी वजह से था। परमेश्वर ने हमारे कारण हमें उसके समक्ष धर्मी घोषित नहीं किया, परन्तु हम जैसे है उसके बावजूद उसने हमें धर्मी ठहराया। न तो उन में जन्म–निहित किसी योग्यता के कारण और न ही उनके व्यक्तिगत गुण के कारण परमेश्वर उनका उद्धार करने प्रेरित हुआ। यह केवल अनुग्रह और अनुग्रह ही था!

विश्वास के द्वारा अनुग्रह ही से धर्मी ठहराए जाने का सिद्धान्त मसीहत को संसार के बाकी सारे धर्मों से अलग करता है। एक धर्मनिरपेक्ष अखबार का संवाददाता और विश्व के तीन मुख्य धर्मों, यहूदी, इस्लाम और मसीहत के प्रतिनिधियों के बीच होने वाले साक्षात्कार की कल्पना करें। सबसे पहले, वह संवाददाता कट्टर यहूदी के पास जाता है और उससे पूछता है, "यदि इसी क्षण आपकी मृत्यु हुई, तो आप कहाँ जाएँगे और आपकी आशा का कारण क्या है ?"

यहूदी उत्तर देगा, "मैं स्वर्ग जाऊँगा, मैं तोरा या परमेश्वर की व्यवस्था से प्रेम करता हूँ और उसका पालन करता हूँ। मैं धर्म के मार्ग में चला। मेरे काम मेरी गवाही देते हैं।"

आगे, वह संवाददाता मुस्लिम की ओर फिर कर वही प्रश्न पूछता है, "यदि इसी क्षण आपकी मृत्यु हुई, तो आप कहाँ जाएँगे और आपकी आशा का कारण क्या है ?"

मुस्लिम उत्तर देगा, "मैं स्वर्ग जाऊँगा, मैं कुरान से प्रेम करता हूँ। मैंने अल्लाह के सबसे बड़े नबी की आज्ञाओं को माना। मैं पवित्र हज पर गया, मैं प्रार्थना में विश्वासयोग्य रहा, और मैंने गरीबों को दान दिया। मैं धर्मी व्यक्ति हूँ।"

अन्त में वह संवाददाता वही प्रश्न लेकर मसीही व्यक्ति के पास आता है : "यदि इस क्षण तुम्हारी मृत्यु हुई, तो तुम कहाँ जाओगे, और तुम्हारी आशा का क्या कारण है ?"

मसीही व्यक्ति उत्तर देगा, "मैं स्वर्ग जाऊँगा।" परन्तु फिर, आनन्द और दुख की नजर से

वह ऐलान करता है, "देख, मैं अधर्म के साथ उत्पन्न हुआ और पाप के साथ अपनी माता के गर्भ में पड़ा। मैंने परमेश्वर की सारी व्यवस्था तोड़ी और मैं सबसे बड़े दण्ड के योग्य हूँ।"

इस पर उस संवाददाता ने उसे बीच में ही टोककर पूछा, "आपकी जो आशा है उसका कारण मैं नहीं समझ पाया। कट्टरवादी यहूदी और भक्तिमान मुसलमान की बात मैं समझता हूँ। वे स्वर्ग जा रहे हैं और वे अपने ही सद्गुणों की योग्यता और कामों से परमेश्वर की उपस्थिति में खड़े रहेंगे, परन्तु आप इन सारी आवश्यक बातों से वंचित होने का दावा करते हैं। तो आप परमेश्वर के समक्ष कैसे धर्मी ठहर सकते हैं ?आपकी आशा की बुनियाद क्या है ?"

मसीही व्यक्ति मुस्कराकर उत्तर देता है, "परमेश्वर की उपस्थिति में प्रवेश करने की मेरी आशा दूसरे व्यक्ति के सद्गुण और योग्यता पर आधारित है, अर्थात्, मेरे प्रभु यीशु मसीह के।"

प्रेरितों के पहले दिन से अब तक यह उस प्रत्येक मसीही की गवाही रही है जो इस पृथ्वी पर चला है, और यह इस युग के अन्त तक मसीहियों की एकमात्र गवाही रहेगी। प्रेरित पौलुस ने लिखा है, "इससे भी बढ़कर मैं अपने प्रभु यीशु मसीह के ज्ञान की श्रेष्ठता के कारण सब बातों को तुच्छ समझता हूँ, जिस के कारण मैंने सब वस्तुओं की हानी उठाई है और उन्हें कूडा समझता हूँ, जिस से मैं मसीह को प्राप्त करू और मैं मसीह में पाया जाऊ। यह अपनी उस धार्मिकता से नही जो व्यवस्था से उत्पन्न होती है, परन्तु उस धार्मिकता से जो मसीह पर विश्वास करने से मिलती है, अर्थात उस धार्मिकता से जो केवल विश्वास के आधार पर परमेश्वर से प्राप्त होती है।"[36]

प्रख्यात पासबान और भजन लेखक ऑगस्टस टॉप्लेडी अपने सुविख्यात गीत Rock of Ages ('सनातन चट्टान') में प्रेरित पौलुस की इन्हीं ओजस्वी भावनाओं को प्रतिध्वनित करते है :

मेरे हाथों का परिश्रम
तेरी व्यवस्था की आज्ञाओं को पूरा नहीं कर सकता।
मेरा उत्साह विराम न जाने, मेरे आँसू सदा बहते रहें,
ये पापों का प्रायश्चित नहीं कर सकते,
तुझे उद्धार देना होगा, केवल तुझे।
मैं अपने हाथों में कुछ नहीं लाता;
मैं मात्र क्रूस से लिपटता हूँ।
मैं नग्न आता हूँ तेरे पास वस्त्र के लिए,
असहाय तेरी ओर ताकता हूँ अनुग्रह के लिए;
मैं अशुद्ध, सोते की ओर दौड़ता हूँ,
मुझे धो, उद्धारक, या मैं मरा।

जो लोग अपने व्यक्तिगत सद्‌गुण या योग्यता के आधार पर परमेश्वर के समक्ष योग्य स्थान होने का घमण्ड करते हैं, वे नहीं समझते कि परमेश्वर कौन है और वे कौन हैं। परमेश्वर की धार्मिकता या मनुष्य की नैतिक भ्रष्टता की छोटी भी झलक योग्यता के आधार पर कमाए गए उद्धार की किसी भी आशा को कुचलने के लिए पर्याप्त है। उसकी उपस्थिति में प्रवेश के लिए सिद्ध नैतिक पूर्णता चाहिए। उसकी पवित्रता ऐसी है कि वह बुराई को देख नहीं सकता और न दुष्टता पर दृष्टी कर सकता है।[37] आदम के एकमात्र पाप का परिणाम यह हुआ कि उसे वाटिका से निकाल दिया गया और समस्त संसार को दण्ड और मृत्यु से व्याप्त कर दिया। तो फिर हम जिन्होंने बेहिसाब पाप किया है, कैसे धर्मी ठहराए जाने की आशा से उसकी उपस्थिती में आ सकते हैं ?हममें से प्रत्येक ने इतना पाप किया है कि हम हजारों जगत को विनाश में पहुँचा सकते हैं। यदि हमें उद्धार पाना है, तो यह उसके द्वारा होगा। यदि हमारे उद्धार का कारण ढूंढ़ निकालना है, तो वह उसकी ओर से आना चाहिए। यदि कुछ करना है, तो वह उद्धारक परमेश्वर के अनुग्रहपूर्ण काम से पूरा किया जाना अवश्य है।

छुटकारा

कुछ शब्द ऐसे हैं जिन्हें धीरे, आदर के साथ, और काँपते हुए होंठों से कहने की जरूरत है। छुटकारा ऐसा ही एक शब्द है। यह शब्द ग्रीक भाषा के शब्द *apolútrosis* (अपौलट्रौसिस) से अनुवादित किया गया है जो ऐसे छुटकारे की ओर संकेत करता है जो फिरौती का दाम देकर या किमत चुकाकर सम्भव बनाया गया हो। प्राचीन साहित्य में अक्सर इस शब्द का उपयोग गुलामों या युद्ध कैदियों के छुटकारे के सम्बंध में उपयोग किया जाता था। नये नियम में, छुटकारा शब्द यीशु मसीह के लोहू के बलिदान के द्वारा पाप के दण्ड और गुलामी से मनुष्य के छुटकारे का उल्लेख करता है।

लोग अक्सर पूछते है, " फिरौती का दाम किसे दिया गया ?" और "हम किस बात से छुड़ाए गए ?" यद्यपि कई कौशल्यपूर्ण परन्तु गलत मत प्रस्तुत किए गए हैं, तौभी नए नियम में यह स्पष्ट है : हमारे पापों के कारण परमेश्वर के न्याय पर आक्रमण हुआ और उसका क्रोध भड़क उठा। हमें न्याय और दण्ड के लिए "कैद कर रखा गया था" और हमारी स्वतंत्रता का कोई उपाय नहीं था।[38] परमेश्वर के न्याय ने अपराधी की मृत्यु के द्वारा सन्तुष्टि की मांग की, क्योंकि "पाप की मजदूरी मृत्यु है," और "जो प्राणी पाप करे, वही मरेगा।"[39] परन्तु "परमेश्वर ने, जो दया का धनी है, अपने उस महान प्रेम के कारण जिससे उसने हम से प्रेम किया," हस्तक्षेप कर अपने एकलौते पुत्र को हमारे पापों के लिए मरने और हमारा दाम चुकाने भेज कर हमें छुडा लिया।[40]

यद्यपि हम परमेश्वर के उस राज्य की निष्ठावान प्रजा होते, जो अपने किसी अपराध के

बिना ही बन्धुवाई में जाते, तो भी यह साहसी और परोपकारी कार्य होता, परन्तु ऐसा नहीं था। हालांकि हम पीड़ित नहीं परन्तु अपराधी थे, तौभी उसने हमें छुड़ा लिया। अपराध हमारा था। हमने अपने परमेश्वर के विरोध में विद्रोह किया। उसके न्याय और क्रोध के अधीन हमारा दण्ड और कैद हमारी अपनी करनी का फल था। हमारे पाप ने बेड़ियाँ तैयार की और दण्ड देने वाले की कुल्हाड़ी को उकसाया।

हमारे अपराध की गम्भीर सच्चाई ही हमारे छुटकारे के सत्य को और अधिक दर्षनीय और भव्य बनाता है। यदि वह उत्तम सेवकों के लिए मर जाता, तौभी यह अनुग्रह का एक अबोधगम्य कार्य होता, परन्तु वह अत्यन्त अयोग्य और दीन लोगों के लिए मर गया। जैसा कि प्रेरित पौलुस लिखते है : "किसी धर्मी जन के लिए कोई मरे, यह तो दुर्लभ है, पर हो सकता है कि किसी भले मनुष्य के लिए कोई मरने का भी साहस करे। परन्तु परमेश्वर हम पर अपने प्रेम की भलाई इस रीति से प्रकट करता है, कि जब हम पापी ही थे, तभी मसीह हमारे लिए मरा।"[41]

विश्वासी का धर्मी ठहराया जाना एक वरदान है जो छुटकारे के द्वारा आता है जिसे यीशु मसीह के व्यक्तित्व और कार्य के द्वारा सम्भव बनाया गया। यद्यपि यह विश्वासी को सेंतमेंत दिया गया, फिर भी जो मूल्य मांगा गया और यीशु ने जो किमत चुकाई उसे हम समझ नहीं सकते। वस्तुतः, स्वर्ग में सन्त का मुख्य कार्य उस बलिदान के मूल्य को खोज निकालना होगा। अपने लोगों के लिए मसीह के छुटकारे के कार्य के ज्ञान से बढ़कर दूसरा कोई ज्ञान अद्भुत या खोजने योग्य नहीं है। प्रेरित पौलुस लिखते है, "क्योंकि तुम जानते हो कि तुम्हारा निकम्मा चालचलन जो बापदादों से चला आता है, उससे तुम्हारा छुटकारा चान्दी, सोने अर्थात् नाशमान वस्तुओं के द्वारा नहीं हुआ, परन्तु निर्दोष और निष्कलंक मेम्ने अर्थात् मसीह के बहुमूल्य लोहू के द्वारा हुआ।"[42]

हमारे छुटकारे के लिए जो किमत चुकाई गई उसका अत्यन्त कम ज्ञान भी पापी और सन्त दोनों को विश्वास, भक्ति और प्रेम से प्रतिक्रिया देने हेतु प्रेरित करने पाए। जो इस समय विश्वास नहीं करते, उन्हें अपने अविश्वास के लिए पश्चाताप करना और मसीह की ओर दौड़ना चाहिए, क्योंकि वें ऐसे महान उद्धार की उपेक्षा करके कैसे बच सकेंगे ?[43] हम में से जो लोग विश्वास करते हैं, उन्हें अब अपने आप के लिए नहीं जीना है, परन्तु उसके लिए जीना है जो हमारे लिए मर गया। जैसा कि प्रेरित पौलुस तर्क करते है, "क्योंकि मसीह का प्रेम हमें विवश कर देता है; इसलिए कि हम यह समझते हैं कि जब एक सब के लिए मरा, तो सब मर गए। और वह इस निमित्त सब के लिए मरा कि जो जीवित हैं, वे आगे को अपने लिए न जीएँ, परन्तु उसके लिए जो उनके लिए मरा और फिर जी उठा।"[44]

विश्वासी के छुटकारे के लिए मसीह ने जो किमत चुकाई है उसका कोई भी वास्तविक

गहन विचार उसे प्रशन्सा में दण्डवत् करने हेतु और यह पुकारने हेतु प्रेरित करेगा कि, "अब मुझे कैसा जीवन जिना चाहिए ?" मसीही होने के नाते, हम कई काम मात्र इसलिए नहीं करेंगे क्योंकि वे अच्छे या बुद्धिमानीपूर्ण हैं या समृद्ध जीवन की ओर ले जाते हैं, हम उन्हें मसीह के लिए करेंगे, क्योंकि उसने हमारे प्राणों के लिए अपना लोहू बहाया। मसीही जीवन की यह सबसे बड़ी प्रेरणा है और इसी कारण हम हमारी संसारिक यात्रा के दौरान भययोग्य आदर के साथ आचरण करने का यत्न करेंगे।[45]

केवल मसीह में

प्रेरित पौलुस के लिए धर्मी ठहराए जाने या छुटकारे का उल्लेख करना कठिन होता यदि वह यह न कहता कि यह सबकुछ केवल मसीह में है। इफिसियों की पत्री के पहले तेरह वचनों में पौलूस "मसीह में" या उसके सदृश्य शब्दों का ग्यारह बार उल्लेख करते है ताकि यह साबित करे कि परमेश्वर के सामने विश्वासी के पास जो कुछ भी है, वह मसीह में है। इस सत्य को बढ़ा चढ़ाकर नहीं बताया जा सकता और न ही बार बार दोहराया जा सकता है।

हम अक्सर कहते हैं कि यीशु ही वह सबकुछ है जिसकी हमें जरूरत है, परन्तु यह कहना और भी उचित होगा कि हमारे पास केवल वही है। उसके अलावा, हमारा परमेश्वर के साथ कोई भाग नहीं है![46] पवित्र शास्त्र की यह गवाही है कि सारी वस्तुएँ उसी में, उसी के द्वारा, और उसी के लिए सृजी गई, और यही बात हमारे उद्धार के विषय में भी कही जा सकती है।[47] बन्धुवाई से हमारा छुटकारा और परमेश्वर के समक्ष धार्मिकता केवल मसीह में, उसी के द्वारा, और उसी के लिए हैं। इस पृथ्वी का प्रत्येक मनुष्य या तो आदम में है और दोषी ठहराया गया है, या फिर मसीह में है और धर्मी ठहराया गया है। एक बच्चा धर्मी परिवार से हो सकता है, और मनुष्य बाइबल सम्मत कलीसिया का सदस्य हो सकता है, परन्तु जब तक वे मसीह में नहीं हैं, वे आशाहीन और संसार में परमेश्वर–रहित हैं। केवल मसीह मार्ग, सत्य और जीवन है, और बिना उसके द्वारा कोई पिता के पास नहीं आ सकता।[49] उसे छोड़ किसी और में उद्धार नहीं है, क्योंकि स्वर्ग के नीचे मनुष्यों में कोई दूसरा नाम नहीं दिया गया है जिसके द्वारा मनुष्य उद्धार पाए।[50]

यही सत्य मसीह को विश्वासियों के लिए अनमोल ठहराता है जो कि संसार के लिए "ठेस लगने का पत्थर और ठोकर खाने की चट्टान" है।[51] हम, जो विश्वास करते हैं, हमारे लिए मसीह सबसे मूल्यवान और हमारी परम–भक्ति के योग्य है। हम व्यक्तिगत् गुण के किसी भी दावे को फौरन धिक्कारते हैं और आनन्दपूर्ण इस घोषणा के साथ मसीह की ओर संकेत करते हैं, "पर ऐसा न हो, कि मैं अन्य किसी बात का घमण्ड करूं, केवल हमारे प्रभु यीशु मसीह के क्रूस का।"[52] हम अपने कार्यों से

धर्मी ठहराए गए हैं या हमने हमारी ओर से मसीह के कार्य में कुछ जोड़ा है, ऐसे लेशमात्र संकेत का भी हमें विरोध करना चाहिए। हम भजनकार के साथ खड़े होकर यह घोषणा करते हैं : "हे यहोवा, हमारी नहीं, हमारी नहीं, वरन अपने ही नाम की महिमा, अपनी करूणा और सच्चाई के निमित्त कर।"[53]

जो विश्वास करने से इन्कार करते हैं, उनके लिए यीशु मसीह अहंकार और असहिष्णुता का प्रतीक है। वह संसार के सामने और विशेष कर उस पद के लिए दौड़ लगाने वाले अन्य कई खरे उम्मीदवारों के मध्य खड़े होकर हमारे मध्य में एकमात्र उद्धारकर्ता होने का दावा कैसे कर सकता है ? कलीसिया संस्कृति में बचे हुए इस एकमात्र परम सत्य के विरोध में खड़े रहने का साहस कैसे कर सकती है – इस विश्वास के विरोध में कि कोई गलत नहीं है, केवल उसे छोड़कर जो सही होने का दावा करता है ? मसीही व्यक्ति यह विश्वास करने का कैसे साहस कर सकता हैं कि अन्य सभी धर्मों को छोड़ केवल उसका मार्ग ही एकमात्र मार्ग है ? उत्तर–आधुनिक संसार के लिए ऐसा दावा मूर्खता और धर्मान्धता के पाश्विक प्रदर्शन से अधिक कुछ नहीं।

इसी कारण मसीहत हमेशा संसार के लिए विक्षोभ का कारण रही है। रोमी साम्राज्य के प्रारम्भिक मसीहियों पर नास्तिक होने का आरोप था और नास्तिक के रूप में उन्हें सताया गया क्योंकि उन्होंने अन्य सभी देवताओं के अस्तित्व का इन्कार किया और केवल मसीह के प्रति अपनी निष्ठा और समर्थन का दावा किया। आधुनिक मसीही जब केवल मसीह के पक्ष में खड़ा रहकर यह घोषित करता है कि वही संसार की एकमात्र आशा है, तो वह इसी विक्षोभकारी परम्परा का अनुसरण करता है। परन्तु, यदि मसीही सन्देश की यह अद्वितीयता खो जाती है, तो फिर वह मसीहत नहीं, और उसमें उद्धार करने की सामर्थ नहीं बचती।

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. भजन संहिता 7:9
2. व्यवस्थाविवरण 32:4; अय्यूब 8:3
3. भजन संहिता 11:7; 5:5
4. हबक्कूक 1:13
5. भजन संहिता 9:7
6. भजन संहिता 7:11–12
7. भजन संहिता 24:3–5
8. यिर्मयाह 17:9
9. भजन संहिता 58:3; मत्ती 15:18–19
10. रोमियों 3:24
11. forensic की उत्पत्ति लैटिन शब्द forensis से है जिसका संबंध मार्केट (बाजार) या मंच (निकाय) से है। शब्द

forensic किसी ऐसी बात को दर्शाता है जो न्यायालयों या न्यायिक मसलों से संबंधित है, जैसे कि forensic Medicine अर्थात् न्यायिक मसलों से जुड़े औषधीय तथ्य।

12. रोमियों 4:3; गलातियों 3:6; यहुदा 2:23
13. रोमियों 11:6
14. 1 यूहन्ना 5:11
15. रोमियों 4:7–8
16. भजन संहिता 50:21
17. 1 कुरिन्थियों 1:30
18. 2 कुरिन्थियों 5:21
19. इब्रानियों 4:15
20. मरकूस 12:30; लूका 10:27
21. मत्ती 3:17; 17:5; मरकूस 1:11; 9:7; लूका 3:22; 2 पतरस 1:17
22. इफिसियों 6:16
23. 2 कुरिन्थियों 5:21
24. यशायाह 53:6
25. भजन संहिता 22:1; मत्ती 27:46; मरकूस 15:34; यशायाह 53:5
26. यूहन्ना 19:30
27. 1 पतरस 3:18
28. रोमियों 5:1
29. इफिसियों 2:3; गलातियों 4:5
30. रोमियों 5:9
31. 1 थिस्सलुनियों 1:9–10
32. रोमियों 3:24
33. यूहन्ना 15:25
34. इब्रानियों 4:15; 2 कुरिन्थियों 5:21
35. यूहन्ना 8:46
36. फिलिप्पियों 3:8–9
37. हबक्कूक 1:13
38. रोमियों 11:32 NASB
39. रोमियों 6:23; यहेजकेल 18:4
40. इफिसियों 2:4
41. रोमियों 5:7–8
42. 1 पतरस 1:18–19
43. इब्रानियों 2:3
44. 2 कुरिन्थियों 5:14–15
45. 1 पतरस 1:17–18
46. 1 यूहन्ना 5:12
47. कुलुस्सियों 1:16 ''सारी वस्तुएँ उसी के द्वारा सृजी गई'', यहाँ वाक्यांश (by Him) उसी के द्वारा, ग्रीक वाक्यांश en auto से है जिसका अनुवाद ''उसी में'' (in Him) भी किया जा सकता है। यदि अर्थ ''उसी के द्वारा'' लिया जाये, तो यह दर्शाता है कि पुत्र सृष्टि की उत्पत्ति करने 'अभिकर्त्ता' या 'साधन' था। अधिक संभावित अर्थ 'उसमें' है, जो दर्शाता है कि पुत्र वह परिक्षेत्र है जिसमें सृष्टि की गई। स्वर्ग और पृथ्वी में जो भी है, उसका संबंध उस से था और सभी वस्तुएँ सीधे तौर पर उससे संबंधित है और उसके संबंध में है।
48. इफिसियों 2:12
49. यूहन्ना 14:6

50. प्रेरितों के काम 4:12
51. 1 पतरस 2:7–8
52. गलातियों 6:14
53. भजन संहिता 115:1

अध्याय – 18

ईश्वरीय दुविधा

उसी को परमेश्वर ने उसके लोहू में विश्वास के द्वारा प्रायश्चित ठहराकर खुल्लमखुल्ला प्रदर्शित किया। – रोमियो 3:25

यदि रोमियो 3:23–27 मसीही विश्वास का शिखर है, तो 25 वां वचन नगर का गढ़ है। यह एक वचन ही यीशु मसीह के क्रूस को अन्य वचनों की तुलना में बेहतर समझाता है। यहाँ हम क्रूस की वजह को खोजने हेतु पर्दे के पीछे देख सकते हैं। यहाँ पर हमें मसीह के क्लेशों का स्वरूप दिखाई देता है। यहाँ, हम समझ सकते हैं कि क्या पूरा किया जाना अवश्य था, और मसीह की मृत्यु के द्वारा क्या पूरा किया गया था। आधुनिक समय के सुसमाचार प्रचार में यह खोई हुई कड़ी है, और इस बात का कारण है कि गिने–चुने लोग ही जिन में परमेश्वर के लोग भी शामिल है, क्रूस को नहीं समझते।

बीते युगों के कई धर्मविज्ञानी और प्रचारक इस बात से सहमत होंगे कि रोमियों 3:25 पवित्र शास्त्र में सबसे महत्वपूर्ण वचन है। यह ऊँची राय इस सच्चाई से आती है कि इसमें सुसमाचार का मर्म है : मसीह प्रायश्चित के रूप में मरा। सम्पूर्ण मसीही विश्वास इसी सत्य पर खाड़ा है, और फिर भी आज के सुसमाचार प्रचारक इस सत्य से अज्ञात है। कितने सुसमाचारीय विश्वासियों ने प्रायश्चित शब्द सुना है ? जिन्होंने वह सुना है, उनमें से कितने उसका अर्थ समझ सकते हैं या उसके बड़े महत्व के विषय में समझ सकते हैं ?ज्ञान का यह अभाव हमारे युग के विरोध में एक कलंक है, और यह प्रमाणित करता है कि हम सुसमाचार के विषय में सचमुच कितना कम समझते हैं। प्रति वर्ष सुसमाचार के अनगिनत सन्देश प्रचार किए जाते हैं और हजारों सुसमाचार की पर्चियाँ और पुस्तके लिखी जाती हैं, और इसके बावजूद यह महत्वपूर्ण वचन बिरले ही उनके बीच पाया जाता है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि सुसमाचार के वर्तमान प्रचार में बहुत कम सामर्थ पायी जाती है।

सार्वजनिक प्रदर्शन

रोमियों 3:25 हमें बताता है कि परमेश्वर ने अपने पुत्र को ''प्रायश्चित ठहराया'' या उसका "खुल्लमखुल्ला प्रदर्शन किया।" प्रदर्शन किया यह शब्द ग्रीक भाषा के *protithemai* (प्रौटिथैमैय) शब्द से आता है जिसका अर्थ है लोगों के सामने खुलेआम प्रदर्शन करने या दिखाने के लिए प्रगट

करना। कल्वरी के क्रूस पर, परमेश्वर ने अक्षरशः अपने "पुत्र का विज्ञापन द्वारा प्रचार किया।"[1] इतिहास के उस निश्चित क्षण में, उसने उसे विश्व के धार्मिक केन्द्र के चौराहे पर सबको दिखाने के लिए वृक्ष पर टांग दिया।[2]

यद्यपि यह पवित्र शास्त्र में स्पष्ट रूप से नहीं बताया गया है, परन्तु यह मानना गलत नहीं होगा कि परमेश्वर पाप को कोठरी में छिपाकर रख सकता था या मसीह और निजी तरीके से मर सकता था। संसार के सामने उसका सार्वजनिक प्रदर्शन किया गया, यह वास्तविकता इस बात का प्रमाण है कि परमेश्वर का उद्देश्य यह था कि उसका क्लेश और मृत्यु प्रकाशन के साधन या माध्यम हों। क्रूस के माध्यम से परमेश्वर ने मनुष्यों और स्वर्गदूतों पर अपने विषय में विभिन्न प्रकार के सत्यों को प्रगट करने का निश्चय किया जिन्हें और किसी रीति से प्रगट नहीं किया जा सकता था।[3] यह कलीसिया की स्थायी गवाही है की यीशु मसीह का क्रूस परमेश्वर का और सच्चाई का सबसे बड़ा प्रकाशन है। क्रूस मानव के लिए परमेश्वर का महान और निर्णायक उत्तर है जो उस प्रत्येक बात को समझाता है जिसे समझाना आवश्यक है और मनुष्यों के मध्य परमेश्वर के उद्देश्य और कार्य से सम्बंधित दीर्घकालीन प्रश्न का उत्तर देता है।

मसीह का क्रूस जो कुछ प्रगट करता है उन सारी बातों का विस्तार से विश्लेषण करना इस अध्याय में सम्भव नहीं है। प्रेरित यूहन्ना की भाषा से कुछ बातें लेकर हम कह सकते हैं कि यदि क्रूस के माध्यम से जो कुछ प्रगट किया गया उसे एक एक करके लिखा जाए, तो जो पुस्तकें लिखी जाएगी वे संसार में नहीं समाएँगी।[4] इसलिए हमें हमारे वचनों तक ही सीमित रहना होगा और निकटता के साथ पौलुस का अनुसरण करना होगा। पवित्र आत्मा के प्रत्यक्ष एवं अचूक मार्गदर्शन में, वह क्रूस के द्वारा प्रगट अन्य अनगिनत अनमोल रत्नों को लांघकर सुसमाचार की सर्वोत्तम सच्चाइयों में से एक की ओर संकेत करता है : परमेश्वर ने अपने पुत्र का सार्वजनिक प्रदर्शन किया ताकि यह दिखा सके कि वह एक धर्मी परमेश्वर है।[5]

आरम्भ में, उन लोगों को जिन्होंने पवित्र शास्त्र का अध्ययन किया यह सत्य शायद उतना लक्ष्यनिय या विस्मयकारी न लगे। आरम्भ से अन्त तक, पवित्र शास्त्र इस बात की गवाही देता है कि परमेश्वर धर्मी परमेश्वर है और उसके सारे काम सिद्ध हैं, और उसके सारे मार्ग न्यायपूर्ण हैं।[6] तो फिर, परमेश्वर को क्यों मनुष्यों और स्वर्गदूतों पर यह सार्वजनिक तौर पर प्रदर्शित करना पड़ा कि वह धर्मी है ?उसने अपने न्याय के विषय में सन्देह उत्पन्न करने वाला ऐसा क्या कर दिया कि उसे अपने मार्गों का स्पष्टीकरण देना पड़े या स्वयं की निर्दोषता प्रमाणित करनी पड़े ? प्रेरित पौलुस स्पष्ट करते है कि यह आवश्यक था कि परमेश्वर सदा के लिए अपने न्याय की सच्चाई प्रमाणित करे और अपनी धार्मिकता प्रगट करे, "क्योंकि परमेश्वर ने अपनी सहनशीलता में, पहिले किए गए पापों को भूला

दिया।"[7] दूसरे शब्दों में, परमेश्वर ने मनुष्यों और स्वर्गदूतों के सामने अपनी धार्मिकता को साबित करना आवश्यक समझा क्योंकि सम्पूर्ण मानव इतिहास में उसने पापियों के दण्ड को रोक लिया और दुष्ट मनुष्यों को क्षमा की है। यद्यपि यह पापी मनुष्य के लिए खुशखबरी है, तौभी यह पवित्र शास्त्र की सबसे बड़ी ईश्वर विज्ञान सम्बंधी और नैतिक समस्या प्रस्तुत करता है : जिन्हें दण्ड देने की आवश्यकता है उनके न्याय को रोककर और उन्हें क्षमादान देकर, परमेश्वर कैसे धर्मी हो सकता है ? परमेश्वर धर्मी होकर भी अधर्मी लोगों को धर्मी ठहराने वाला कैसे हो सकता है ?

ईश्वरीय दुविधा

वेब्स्टर के शब्दकोष में दुविधा *(dilemma)* शब्द की परिभाषा करते हुए लिखा गया है कि वह "ऐसी परिस्थिति है जिसमें समान रूप से असन्तोषकारक विकल्पों के बीच चुनाव होता है," या "ऐसी समस्या जिसका सन्तोषकारक समाधान निकालना असम्भव प्रतीत होता है।" पवित्र शास्त्र में प्रायः प्रत्येक पृष्ठ पर सबसे बड़ी दुविधाओं में से एक प्रस्तुत की गई है : धर्मी परमेश्वर कैसे दुष्ट को क्षमा कर सकता है ?

पिछले अध्याय में हम ने यह साबित करने के लिए विस्तार से अध्ययन किया कि परमेश्वर उन अति अनर्थकारी और दुष्ट मनुष्यों को भी सेंतमेंत धर्मी ठहराता है जो पश्चाताप करके उस पर विश्वास करते है। यह सत्य कलीसिया का सबसे बड़ा आनन्द और उसकी सबसे अधिक महिमामंडित और प्रिय गीतों का विषय है। हम दाऊद के साथ आनन्द मनाते हैं : "क्या ही धन्य हैं वह जिसका अपराध क्षमा किया गया, जिसका पाप ढाँपा गया हो।"[8] इसके बावजूद, यह समस्या बनी रहती है – परमेश्वर धर्मी होकर भी कैसे दुष्ट मनुष्यों को उनके अपराध क्षमा कर सकता है ?क्या समस्त पृथ्वी का न्यायी उचित न्याय न करेगा ?[9] क्या धर्मी परमेश्वर पाप के प्रति हमदर्दी रख सकता है या उसे ऐसे छिपाएगा जैसे वह कभी हुआ ही न हो ?क्या एक पवित्र परमेश्वर दुष्ट मनुष्यों को अपनी संगति में लाकर भी पवित्र रह सकता है?

पवित्र शास्त्र के नीतिवचन की पुस्तक में एक नीतिसुत्र है जो पापी मनुष्यों के लिए परमेश्वर की क्षमा या उसे धर्मी ठहराने की किसी भी सम्भावना का इन्कार करता है। वहाँ लिखा है, "जो दोषी को निर्दोष, और जो निर्दोष को धर्मी ठहराता है, उन दोनों से यहोवा घृणा करता है।"[10] इस वचन के अनुसार, जो कोई दोषी को निदोष ठहराता है, उनसे परमेश्वर घृणा करता है। घृणा यह शब्द इब्रानी भाषा के *tow`ebah* (टोहेबाह) से आता है जिसका अभिप्रय कुछ ऐसा दर्शाना है जो घृणास्पद, नीचतापूर्ण, तुच्छ या निन्दनीय है। यह इब्रानी पवित्र शास्त्र के सबसे कठोर शब्दों में से एक है! यहाँ जो सत्य बताया गया है वह यह है कि परमेश्वर उस हर व्यक्ति से, विशेषकर किसी अधिकारी

या न्यायाधीश से घृणा या तिरस्कार करता है जो अपराधी व्यक्ति को धर्मी ठहराता है या उसे दोषमुक्त करता है। तौभी सुसमाचार के सन्देश का यही विषय है! सम्पूर्ण इतिहास में, परमेश्वर ने यही किया है। उसने दुष्टों को धर्मी ठहराया है, उनके अधर्म के कामों को क्षमा की है, और उनके पापों को ढाँपा है।

तो अब वह कैसे न्यायी रह सकता है ? निम्नलिखित उदाहरण इस समस्या को और भी स्पष्ट रूप से समझाने में सहायता कर सकते है : मान लिजिए, एक व्यक्ति एक शाम अपने घर लौटकर यह पाता है कि उसके पूरे परिवार की हत्या हुई है और वे बैठक के कमरे में फर्श पर मृत पड़े हैं और हत्यारा अब भी खून से सने हाथों से उनके शव के पास खड़ा है। मान लिजिए कि वह व्यक्ति उस आक्रमणकारी को पकड़ लेता है और उसके विरोध में सारे प्रमाणों के साथ उसे अधिकारियों के हाथ सौंप देता है। मान लिजिए, हत्यारे की सजा के दिन, न्यायाधीश निम्नलिखित घोषणा करता है : "मैं अत्यन्त प्रेमी न्यायाधीश हूँ, मैं तरस और करूणा से भरा हूँ। इसलिए मैं इस न्यायपीठ के सामने तुझे 'निर्दोष' घोषित करता हूँ और कानून की हर सजा से मुक्त करता हूँ।"

ऐसे निर्णय के विषय में पीड़ित व्यक्ति की क्या प्रतिक्रिया होगी ? क्या वह दिए गए न्याय से सहमत होगा ? बिल्कुल नहीं! इस दुष्ट मनुष्य के धर्मी ठहराए जाने के न्यायाधीश के आदेश पर वह विस्मित रह जाएगा और उसे तुरन्त हटाने की मांग करेगा। वह अपने राज्य के प्रतिनिधी को पत्र लिखेगा, अखबार में सम्पादकीय में लिखेगा, और सुनने वाले प्रत्येक को बताएगा कि न्यायपीठ पर एक ऐसा न्यायाधीश है जो उस गुनाहगार से भी जिसे वह छोड़ रहा है, अधिक भ्रष्ट और घृणास्पद है! स्वभावतः हम सभी उसके मूल्यांकन से सहमत होंगे; परन्तु समस्या यहाँ पर है। यदि हम अपने संसारिक न्यायाधीशों से ऐसे न्याय की मांग करते हैं, तो समस्त पृथ्वी के न्यायी से क्या हमें इससे कमतर अपेक्षा करनी चाहिए ?एलिहू के व्याख्यान से हम कहना चाहेंगे, "निश्चय परमेश्वर दुष्टता नहीं करेगा, और सर्वशक्तिमान न्याय नहीं बीगाड़ेगा।"[11]

क्षमा करे और भूल जाए ?

अब भी कोई पूछेगा, "परमेश्वर क्यों युहीं मनुष्य के पाप क्षमा कर मसले को सुलझा नहीं देता ?पवित्र शास्त्र हमें आज्ञा देता है कि हम सेंतमेंत क्षमा करें, तो फिर, ऐसा करना परमेश्वर के लिए गलत क्यों होगा ?" इस प्रश्न के तीन उत्तर हैं।

सबसे पहले, परमेश्वर हमारे जैसा नहीं है, परन्तु समस्त सृष्टि को जोड़कर भी उसका मूल्य असीम रूप से अधिक है। इस कारण यह न केवल सही है बल्कि अपनी महिमा करना और

उसकी प्रतिरक्षा करना उसके लिए आवश्यक भी है। वह जो है उसे देखते हुए, छोटा सा विद्रोह भी उसके व्यक्तित्व के प्रति गम्भीर अपराध है, भयानक विद्रोह का गुनाह है जिसके लिए कड़ी से कड़ी सजा दी जानी चाहिए। उसके व्यक्तित्व के विरोध में किए गए किसी प्रकार के अपराध को दण्ड न देना दोहरा अन्याय होगा। उसकी अपनी ही महिमा जो यथोचित उसकी मिल्कियत है, उसका इन्कार करने के द्वारा वह अपने ही ईश्वरत्व के प्रति अन्याय करेगा। साथ ही सृष्टि के अस्तित्व के मुख्य उद्धेश्य (अर्थात परमेश्वर की महिमा करना) का ही इन्कार करने के द्वारा वह अपनी सृष्टि पर भी अन्याय करेगा और इस कारण वह उद्धेश्य व्यर्थ ठहरेगा। यदि यह आधुनिक मनुष्य के लिए स्वीकार करना अति कठिन है, तो इसका कारण केवल यह है कि परमेश्वर के विषय में उसका यह अत्यन्त निम्न दृष्टिकोण है।

दूसरी बात, परमेश्वर युहीं मनुष्य के पाप क्षमा नहीं कर सकता और उन्हें दूर नहीं कर सकता क्योंकि उसके चरित्र में किसी प्रकार के अन्तर्विरोध नहीं है। दुष्ट को युहीं क्षमा करके अपने प्रेम को प्रगट करने हेतु वह अपने न्याय का इन्कार नहीं कर सकता। उसे न्यायी और प्रेमी दोनों होना अवश्य है, वह एक की क्षति उठाकर दूसरा नहीं हो सकता। कई नेकनियत सुसमाचार प्रचारकों ने खोए हुओं की भीड़ को यह बताया है कि पापी व्यक्ति के साथ न्यायी होने के बजाय, परमेश्वर ने प्रेमी होने का संकल्प किया है। तर्कसंगत निश्कर्ष यह है कि परमेश्वर का प्रेम अन्यायपूर्ण है या यह कि वह प्रेम के नाम पर अपने ही न्याय से पीठ फेर लेता है। ऐसा कथन सुसमाचार की और परमेश्वर के गुणों के प्रति अज्ञानता दर्शाता है। सुसमाचार का चमत्कार यह नहीं है कि परमेश्वर ने न्याय के बदले प्रेम को चुना, बल्कि यह कि प्रेम में क्षमा प्रदान करते समय वह न्यायी बना रहा।

तीसरी बात, परमेश्वर समस्त पृथ्वी का न्यायाधीश है। न्याय करना, बुराई को दण्ड देना, और जो सही है उसकी निर्दोषता प्रमाणित करना उसके अधिकार क्षेत्र में है। जिस प्रकार संसारिक न्यायाधीश के लिए उसके सामने अदालत में खड़े गुनहगार को क्षमा करना उचित नहीं होगा, उसी प्रकार स्वर्गीय न्यायाधीश के लिए दुष्ट को क्षमा करना उचित नहीं होगा। यह हमारी निरन्तर शिकायत है कि हमारी न्याय प्रणाली भ्रष्ट है, और जब दोषी अपराधियों को क्षमा की जाती है, तब हम दुबक जाते हैं। क्या हमें अपने न्यायाधीशों की तुलना में परमेश्वर से कम न्याय की अपेक्षा करना चाहिए ?यह एक अत्यन्त मजबूत सत्य है कि न्याय के अमल के बगैर, सारे राष्ट्र, लोग, और संस्कृतियों में अराजकता मच जाएगी और वे आत्म–विनाश का कारण बनेंगे। यदि परमेश्वर अपनी स्वयं की धार्मिकता को नजरअन्दाज करता, न्याय को सन्तुष्ट किए बिना क्षमा करता, और बुराई को अन्तिम दण्ड नहीं देता, तो सृष्टि यह सह नहीं पाती।

प्रायश्चित

दुष्ट के प्रति परमेश्वर के न्याय और उसके दण्ड की पूर्ण आवश्यकता को दिखाने के बाद, यह प्रश्न बना रहता है : "परमेश्वर न्यायी होकर कैसे अधर्मी को धर्मी ठहराता है ?" इसका उत्तर पवित्र शास्त्र के सबसे महान शब्दों में से एक में पाया जाता है – प्रायश्चित। यह शब्द लैटिन भाषा के *propicio* (प्रौपिसीयो) से लिया गया है जिसका अर्थ है 'अनुग्रह।' नए नियम में इसका अनुवाद ग्रीक भाषा के *hilastérion* (हिल्लास्टेरिओन) से किया गया है जो ऐसी बात की ओर सन्केत करता है जो प्रायश्चित करती है, शान्त करती है, या सन्तुष्ट करती है।

नए नियम में जहाँ *hilastérion* (हिल्लास्टेरिओन) यह शब्द दूसरी बार पाया जाता है वह इब्रानियों की पुस्तक में है जहाँ पर यह प्रायश्चित के ढ़कने का उल्लेख करता है जो वाचा के सन्दूक को ढ़ाँकता था।[12] प्रायश्चित के ढ़कने पर करूब छाया करते थे, और यह सोने से बना हुआ था।[13] पुराने नियम की व्यवस्था में, परमेश्वर की उपस्थिति बादल के रूप में महापवित्र स्थान में प्रायश्चित के ढ़कने के ऊपर उतरती थी, और इसी स्थान में परमेश्वर ने अपने लोगों से भेंट करने और उन्हें अपनी आज्ञाएँ देने की प्रतिज्ञा की थी।[14] सबसे महत्वपूर्ण बात, इसी प्रायश्चित के ढ़कने के उपर और सामने महायाजक साल में एक बार प्रायश्चित के दिन सात बार बैलों का लोहू छिड़कता था।[15] इसी प्रायश्चित के ढ़कने से परमेश्वर अपने लोगों के लिए क्षमा की घोषणा करता था और बलि पशु के रक्त से सनी मृत्यु के द्वारा उनके साथ अपने मेलमिलाप को घोषित करता था। इसी कारण वाचा के सन्दूक के ढ़कने को प्रायश्चित का ढ़कना कहा जाता था, क्योंकि यहीं पर पाप का प्रायश्चित किया जाता था और अनुग्रह को सम्भव बनाया जाता था।

हमारे सन्दर्भपद में प्रायश्चित शब्द विशिष्ट तौर पर कल्वरी के क्रूस पर यीशु मसीह के बलिदान की ओर संकेत करता है।[16] उससे यह स्पष्ट होता है कि यीशु की मृत्यु ने हमारे पापों को उठा लिया, परमेश्वर के ईश्वरीय न्याय को सन्तुष्ट कर दिया, और उसके क्रोध को शान्त कर दिया। यीशु ने सदा के लिए अपने लोगों के पापों का दाम चुका दिया, इसलिए परमेश्वर अपराधी को न्यायसंगत अनुग्रह प्रदान कर सकता है और उसके पुत्र पर जो कोई विश्वास करे उसके लिए 'धर्मी और धर्मी ठहराने वाला' दोनों ही बन सकता है।[17] पवित्र शास्त्र के अनुसार, मनुष्य ने पाप किया है, और पाप की मजदूरी मृत्यु है।[18] परमेश्वर न्यायी है और अपराधी को तब तक क्षमा नहीं मिल सकती जब तक उसकी व्यवस्था की मोंगें पूरी नहीं होती।[19] परन्तु जब समय पूरा हुआ, तब परमेश्वर का पुत्र मनुष्य बन गया और परमेश्वर की व्यवस्था का सिद्ध रूप से पालन करते हुए इस पृथ्वी पर चला–फिरा।[20] अपने जीवन के अन्त में, और पिता की इच्छा के अनुसार, उसे दुष्ट मनुष्य के हाथों क्रूस पर चढ़ाया गया।[21] क्रूस पर, वह अपने अपराधी लोगों के बदले खड़ा रहा, और उनके पाप उस

पर लादे गए।[22] पापों को उठाने वाले के रूप में वह परमेश्वर द्वारा शापित, परमेश्वर का त्यागा हुआ और परमेश्वर के क्रोध के भार के नीचे कुचला हुआ ठहरा।[23] उसकी मृत्यु ने पाप का दाम चुका दिया, परमेश्वर के न्याय की मांगों को सन्तुष्ट किया, और उसके क्रोध को शान्त किया। इस प्रकार, परमेश्वर ने इस बड़ी दुविधा को हल किया। उसने अपने एकलौते पुत्र की मृत्यु में अपने लोगों के पापों को धर्म के साथ योग्य दण्ड दिया और इसलिए वह उन्हें सेंतमेंत धर्मी ठहरा सकता है जो उस पर आशा रखते हैं। हम अगले कुछ अध्याय इसी महान सत्य की छानबीन करने में बिताएंगे।

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. घोषणा पत्र (Placard) एक पोस्टर, विज्ञापन, या सूचना है। घोषणा–पत्र लगाने का अर्थ है किसी जानकारी को सार्वजनिक स्थल में रखना ताकि लोग उसे देख सके, पढ़ सके।
2. गलातियों 4:4
3. इफिसियों 3:10; 1 पतरस 1:12
4. यूहन्ना 21:25
5. शब्द demonstrate (दिखाना) ग्रीक भाषा के वाक्यांश eis endeixin से निकला है, शब्दशः उसका अर्थ 'प्रदर्शन के लिये' या 'प्रमाण के लिये' है।
6. व्यवस्थाविवरण 32:4
7. रोमियों 3:25
8. भजन संहिता 32:1; रोमियों 4:7
9. उत्पत्ति 18:25
10. नीतिवचन 17:15
11. अय्यूब 34:12
12. इब्रानियों 9:5 : "उसके उपर दोनों तेजोमय करूब थे जो प्रायश्चित के ढ़ँकने (hilasterion) पर छाया किये हुए थे, इनका एक–एक करके वर्णन करने का अभी अवसर नहीं है।" यह ध्यान देना आवश्यक है कि यही ग्रीक शब्द 'प्रायश्चित के ढ़ँकने' के लिए सेप्टुआजिन्ट (इब्रानी के पवित्र शास्त्र का ग्रीक अनुवाद) में भी आया है।
13. निर्गमन 25:17–18
14. लैव्यव्यवस्था 16:2; निर्गमन25:22
15. लैव्यव्यवस्था 16:14–15
16. 1 युहन्ना 2:2 "वह स्वयं हमारे पापों का प्रयश्चित्त (hilasmós) है, और हमारा ही नहीं वरन् समस्त संसार के पापों का भी।"
17. रोमियों 3:26
18. रोमियों 3:23; 6:23
19. नीतिवचन 17:15
20. गलातियों 4:4
21. प्रेरितों के काम 2:23
22. 2 कुरिन्थियों 5:21
23. गलातियों 3:13; मत्ती 27:46; यशायाह 53:10

अध्याय – 19

सुयोग्य उद्धारकर्ता

और वचन देहधारी हुआ........ और हमारे बीच में ड़ेरा किया। – युहन्ना 1:14
उसी को परमेश्वर ने उसके लोहू में विश्वास के द्वारा प्रायश्चित ठहरा कर खुल्लमखुल्ला प्रदर्शित किया। – रोमियो 3:25

मसीह जो हमारा प्रायश्चित है, उसके विषय में अधिक गहन अध्ययन की ओर अपना ध्यान लगाने से पहले, ऐसे कार्य के लिए आवश्यक शर्तों पर विचार करने पर सहायता मिलेगी। स्पष्ट शब्दों में कहे तो, जब प्रायश्चित करने के लिए अपने प्राण अर्पण करने वाला, सचमुच ऐसा करने के योग्य न हो, तब तक बलिदान की मृत्यु पूर्ण रूप से अर्थहीन है। अर्थात, किसी कार्य का मूल्य उसे करने वाले के चरित्र पर निर्भर है। कई सुसमाचारीय विश्वासी मसीह के क्रूस को और उसने जो कुछ किया उसे अत्याधिक महत्व देते हैं, और यह उचित ही है, परन्तु वह कौन है और उसका व्यक्तित्व क्या है इस बात पर हम अक्सर बहुत ही कम जोर देते हैं। यीशु परमेश्वर और मनुष्य दोनों ही था, दोनों निर्दोष – अर्थात पाप करने में असमर्थ (पापरहित) और असीम मूल्यवान। यदि वह इन सारी योग्यताओं को पूरा नहीं करता, तो हमारे लिए उसका बलिदान कुछ भी हासिल नहीं कर पाता। फिर भी, हम देखेंगे कि वह इन सब बातों से सुसज्ज और उनसे अधिक था। इसलिए, यीशु में प्रायश्चितकारी बलिदान के रूप में अपना जीवन अर्पण करने की और संसार का उद्धारकर्ता बनने की अद्वितीय योग्यता थी।[1]

चेतावनी

जब कभी हम यीशु मसीह के व्यक्तित्व के विषय में बोलते या लिखते हैं, तब हमें बहुत सावधान रहने की आवश्यकता है। हम देहधारी परमेश्वर के रहस्य को और हमारे छुटकारे में उसके ईश्वरीय स्वभाव और मानव स्वभाव की वास्तविक भूमिका को कभी पूर्ण रूप से समझ नहीं सकते। जैसे कि पौलुस लिखते है, "और इसमें सन्देह नहीं कि भक्ति का भेद गम्भीर है अर्थात् वह जो शरीर में प्रगट हुआ, आत्मा में धर्मी ठहरा, स्वर्गदूतों को दिखाई दिया, अन्यजातियों में उसका प्रचार हुआ, जगत में उस पर विश्वास किया गया, और महिमा में ऊपर उठाया गया।"[2]

कलीसिया के इतिहास में, यीशु मसीह के व्यक्तित्व में ईश्वरीय और मानवीय स्वभाव के मध्य सटीक रिश्ते के सम्बंध में कई पाखण्डी और झूठी विचारधाराएँ रही हैं। इनमें से कुछ झूठी शिक्षाएँ उन झूठे शिक्षकों की ओर से आई जिन्होंने या तो मसीह के परमेश्वरत्व को या उसकी मानवता को नकराना चाहा। परन्तु, अन्य गलत शिक्षाएँ उन विश्वासयोग्य मसीही लोगों की ओर से भी आई हैं जिन्होंने इसे समझाने की जिम्मेदारी खुद पर ली है और रहस्य के लिए कोई जगह ही नहीं छोड़ी। इसलिए हमें सावधानी के साथ बोलने और लिखने का प्रयास करना चाहिए। इस मसले पर बहुत अधिक बोलने के बजाय बहुत कम बोलना उत्तम है, पवित्र शास्त्र में जोड़कर सारे रहस्यों को हटाने का प्रयास करने के बजाय इसे एक भेद कह देना बेहतर है। जैसा कि मूसा हमें सावधान करते है, "गुप्त बातें हमारे परमेश्वर यहोवा के वश में हैं, परन्तु जो प्रगट की गई हैं वे सदा के लिए हमारे और हमारे वंश के वंश में रहेंगी, इसलिए कि इस व्यवस्था की सारी बातें पूरी की जाएँ।"[3]

दो स्वभाव और उद्धार का कार्य

पवित्र शास्त्र की यह चिरस्थायी गवाही है कि केवल परमेश्वर ही एकमात्र उद्धारकर्ता है और वह इस महिमामय ईश्वरीय वरियता में किसी को भागी नहीं बनाता। यशायाह भविष्यद्वक्ता के द्वारा बोलते हुए परमेश्वर ने घोषणा की, "मैं ही यहोवा हूँ और मुझे छोड़ कोई उद्धारकर्ता नहीं।"[4] इस धर्मनिरपेक्ष युग में भी देवताओं या उद्धारकर्ताओं की कमी नहीं है। परन्तु देवताओं और छुड़ाने वालो की विविधता के बाढ़ के विरोध में केवल पवित्र शास्त्र ही एकमात्र है जो इस बात की घोषणा करता है कि उद्धार केवल उस एकमात्र सच्चे परमेश्वर का कार्य है जिसने आकाश और पृथ्वी को बनाया है। जैसे कि भविष्यद्वक्ता योना ने बड़ी मछली के पेट से कहा कि, "उद्धार यहोवा ही से होता है।"[5] इसलिए परमेश्वर को छोड़ किसी और को उद्धार के कार्य का श्रेय देना या उसे उद्धारकर्ता कहना, बड़ी गम्भीर ईश्वरनिन्दा होगी।

यीशु मसीह के व्यक्तित्व और कार्य के विषय में नए नियम में निहीत बातों को जो कोई मानता है, उसके लिए यह बाइबल–सम्मत सत्य एक समस्या खड़ी करता है। उद्धार परमेश्वर का अद्वितीय कार्य है इस विषय में हमारे ज्ञान के प्रकाश में, और उद्धारकर्ता के रूप में यीशु मसीह के असंख्य सन्दर्भों के प्रकाश में, निम्नलिखित निष्कर्ष बने रहते है : यदि यीशु उद्धारकर्ता है, तो वह सचमुच इस अर्थ से परमेश्वर है। यदि यीशु इस अर्थ से परमेश्वर नहीं है, तो वह उद्धारकर्ता नहीं है।

जो मसीह के ईश्वर होने का इन्कार करते हैं और फिर भी उसकी मृत्यु से लाभ होने का दावा करते हैं, बड़ा विरोधाभास प्रगट करते हैं। यदि वह परमेश्वर नहीं है, तो वह बचा नहीं सकता। परन्तु, यदि यीशु सचमुच परमेश्वर है, तो जब भविष्यद्वक्ता यशायाह यह घोषणा करते है कि यहोवा

को छोड़ और कोई उद्धारकर्ता नहीं है और प्रेरित पतरस यह घोषित करते है कि यीशु को छोड़ किसी दूसरे के द्वारा उद्धार नहीं है, तब इसमें कोई विरोधाभास नहीं है।[6] साथ ही, यशायाह उचित ही पृथ्वी के छोर तक के लोगों को उपदेश दे सकते है कि उद्धार के लिए वे केवल परमेश्वर की ओर फिरें, और प्रेरित पौलुस यह पुकारकर कह सकते है कि "जो कोई प्रभु का नाम लेगा, वह उद्धार पाएगा।"[7]

संसार का उद्धारकर्ता बनने के लिए मसीह परमेश्वर हो अपरिहार्य था, और फिर भी यह भी सच है कि परमेश्वर के न्याय के लिए यह अनिवार्य था कि पाप को उसी स्वभाव में दण्ड दिया जाए जिसमें वह किया गया था।[8] इसलिए जो मरने वाला था, उसका मनुष्य होना जरूरी था। मनुष्य ने परमेश्वर की व्यवस्था को तोड़ा था, और इस कारण मनुष्य ही को मरना जरूरी था। जैसा कि परमेश्वर ने यहेजकेल भविष्यद्वक्ता के द्वारा कहा, "जो प्राणी पाप करे, वही मरेगा।"[9] ऐसे प्राणी को परमेश्वर के धार्मिकतापूर्ण दण्ड से छुड़ाने के लिए आवश्यक था कि उसी प्रकृति का दूसरा प्राणी उसके बदले मर जाए। इब्रानियों का लेखक इस कथन के साथ इस सत्य का समर्थन करता है कि बैलों और बकरों का लोहू, उच्च श्रेणी के मानवजाति के पापों को दूर करे यह अनहोना है।[10] केवल वही मनुष्य जो सच में आदम के वंश से था, अपराधी मनुष्य का स्थान लेकर उसके पापों के लिए प्रायश्चित कर सकता था।

पवित्र शास्त्र सिखाता है कि नासरत का यीशु वह मनुष्य था। इब्रानियों का लेखक हमें बताता है कि क्योंकि वह अब्राहम के वंश की 'सहायता करने' के लिए आया, यह आवश्यक था कि वह सारी बातों में अपने भाईयों के समान बने और चुंकि लड़के लोहू और मांस के भागी हैं, तो वह आप भी उनके समान उनका सहभागी हो गया।[11] इसी कारण, जब प्रेरित पौलुस ने मसीह को परमेश्वर और मनुष्य के बीच में एक ही मध्यस्थ कहा, तब उसने उसे – मसीह यीशु जो 'मनुष्य' कहा।[12] परमेश्वर की प्रजा का उद्धारकर्ता बनने के लिए, यह आवश्यक था कि वचन देहधारी हो और हमारे मध्य में डेरा करे, और "परमेश्वर के स्वरूप में होकर भी" वह मनुष्य की समानता में बने।[13] पिलातुस की सुविख्यात घोषणा "*Ecce Homo* ("देखो यह मनुष्य") एक और बार याद दिलाती है कि यीशु मसीह वह मनुष्य था![14]

दो स्वभाव और परमेश्वर का क्रोध

पवित्र शास्त्र के अनुसार, परमेश्वर के क्रोध और प्रकोप की सामर्थ हमारी सारी समझ से परे है।[15] उसके न्याय के सामने पृथ्वी भी काँप उठती है, और सारे राष्ट्रों की सामर्थ मीलकर भी उसके प्रकोप को सहन नहीं कर सकती।[16] इसी कारण, अति बलवान मनुष्य भी एक दिन पहाड़ों से कहेंगे कि उन पर गिरकर उन्हें परमेश्वर के क्रोध से छिपा लें।[17] भजन के लेखक और परमेश्वर की उपस्थिति में

रहने वाले भविष्यद्वक्ता भी उसके प्रकोप की विनाशकारी सामर्थ के कारण मरणासन्न हो गए थे। उसका अवलोकन करते हुए उन्होंने पूछा, "जब तू क्रोध करने लगे, तब तेरे सामने कौन खड़ा रहेगा ?"[18] "उसके क्रोध का सामना कौन कर सकता है ?और जब उसका क्रोध भड़कता है, तब कौन ठहर सकता है?"[19] अपने भयावह विचारों का उत्तर न पाकर वे केवल इसी नतीजे पर पहुँचे : "तू, केवल तू ही, भययोग्य है।"[20]

परमेश्वर के क्रोध के विषय में जो कुछ हम जानते हैं उस पर विचार करते हुए, इस नतीजे पर पहुँचना उचित होगा कि यदि नासरत का यीशु केवल मनुष्य या सृष्ट प्राणी होता, तो वह अपने लोगों के पापों के विरोध में भड़क उठा परमेश्वर का क्रोध कभी सहन नहीं कर सकता था। तौभि वह अन्त तक उसे सह सका और विजयी होकर आया क्योंकि वह देहधारी परमेश्वर था और वह अपनी ही ईश्वरीय सामर्थ्य के कारण ड़टा रहा। वेस्टमिन्स्टर लार्जर कैटेकिजम इस बात से सहमत है : "प्रश्न 38 : यह आवश्यक क्यों था कि मध्यस्थ परमेश्वर ही हो ?उत्तर : यह आवश्यक था कि मध्यस्थ परमेश्वर हो ताकि वह मानव प्रकृति को परमेश्वर के असीम क्रोध और मृत्यु की सामर्थ के नीचे डूबने से बचा सके और सम्भाल सके।"

परमेश्वर के क्रोध की सामर्थ्य के प्रकाश में, हमें मसीह के ईश्वरत्व के सत्य को कबूल करना आवश्यक है, पर फिर भी हमें इस विषय में अत्यन्त सचेत रहने की आवश्यकता है कि हम इस समतुल्य आवश्यक सत्य का इन्कार न करें या उसके महत्व को कम न करें कि – मसीह ने मनुष्य के रूप में सर्वशक्तिमान परमेश्वर के क्रोध को सह लिया। हमें इस मानक को बनाए रखने के लिए सावधान रहने की आवश्यकता है कि कल्वरी के क्रूस पर, वास्तविक मनुष्य पर, वास्तविक क्रोध प्रगट हुआ और अति भयानक क्लेश वास्तव में उस पर आ पड़ा। यद्यपि मसीह के ईश्वरत्व ने उसे सम्भाले रखा, फिर भी उसके ईश्वरत्व ने किसी रीति से उस क्रोध के विरोध में प्रतिरोधक प्रदान नहीं किया जो उस पर उण्डेला गया था। उसने उस ईश्वरीय क्रोध को 'अपनी देह में'[21] उतने ही परिमाण में सहन किया जो ईश्वरीय न्याय को सन्तुष्ट करने और परमेश्वर और उसके लोगों के मध्य मेल करने के लिए आवश्यक था। इसी कारण, वह सचमुच "दुखी पुरूष था, और पीड़ा से उसकी जान पहिचान थी।"[22]

दो स्वभाव और बलिदान का मूल्य

संशयवादी लोग अक्सर पूछते हैं, "क्रूस पर कुछ घण्टों के लिए दुख उठाने वाला व्यक्ति कैसे मनुष्यों की एक भीड़ के पापों का दण्ड चुकाकर उन्हें सनातन क्लेश से बचा सकता है ?एक व्यक्ति का जीवन कैसे कईयों का न्याय सन्तुष्ट कर सकता है ?" पवित्र शास्त्र का एक अत्यन्त सुन्दर और अनमोल सिद्धान्त है जिसमें इन प्रश्नों का उत्तर समाहित है : परमेश्वर के पुत्र का असीम मूल्य और

सिद्ध आज्ञाकारिता।

वह जिसे कल्वरी के क्रूस पर कीलों से लटका दिया गया था, परमेश्वर था, और अपने लोगों के लिए उसने जो जीवन दिया उसका मूल्य असीम था। जो पेड़ पर लटकाया हुआ था वह ऐसा मनुष्य था जिसकी परमेश्वर की व्यवस्था के प्रति सिद्ध आज्ञाकारिता ने उसके बलिदान को मूल्य प्रदान किया और अपने लोगों पर अध्यारोपित करने एक सिद्ध धार्मिकता का प्रयोजन किया। इसलिए हम यीशु मसीह की ओर संकेत कर उस संशयवादी के प्रश्न का उत्तर दे सकते हैं कि किस प्रकार एक मनुष्य कईयों के पापों का दाम चुका सकता है, जो परमेश्वर के रूप में उसके असीम मूल्य और मनुष्य के रूप में उसकी सिद्ध आज्ञाकारिता के कारण असंख्य लोगों को छुटकारा दे सका।

यीशु मसीह के ईश्वरत्व के सम्बन्ध में, हमें एक बार फिर इस बात की पुष्टि करने की आवश्यक है कि वह पूर्ण अर्थ से, अक्षरशः परमेश्वर था। और यह 'परमेश्वरत्व की समस्त परिपूर्णता' थी जिसने उसके व्यक्तित्व को असीम गरीमा और उसके बलिदान को अनन्त मूल्य प्रदान किया।[23] एक महान जिनेवी सुधारक फ्रान्सिस टुरेटिन ने इस सत्य को बड़ी ही सुन्दर रीति से समझाया है : "यद्यपि कैदी के हाथ में पैसों का जितना मूल्य होता है, उसका मूल्य राजा के हाथ में उतना नहीं होता, फिर भी राजा की प्रधानता और जीवन एक तुच्छ गुलाम के जीवन से अधिक मूल्यवान होता है (जिस प्रकार दाऊद के जीवन को इस्राएल की आधी सेना से अधिक मूल्यवान माना गया था – 2 शमु. 18:3)। उसी तरह, यीशु मसीह का मूल्य सारे मनुष्यों को एक साथ मिलाकर भी अधिक आंका जाना चाहिए। एक असीम व्यक्ति का गौरव उस दण्ड की सारी असीमितताओं को निगल लेता है और सोख लेता है जिसके हम लायक थे।"[24] और जॉन न्यूटन ने प्रतिध्वनि में कहा :

> यदि मसीह निष्पाप और सिद्ध मनुष्य था, और उससे अधिक नहीं, तो वह पूर्ण रूप से परमेश्वर की इच्छा की आज्ञाकारीता में रहा होता, परन्तु यह केवल उसके लिए होता। अत्यन्त श्रेष्ठ और गौरवी प्राणी उसकी सृष्टि की व्यवस्था से श्रेष्ठ नहीं हो सकता। सृष्ट प्राणी होने के नाते, वह अपने सर्वस्व से परमेश्वर की सेवा करने के लिए विवश है, और उसके कर्तव्य हमेशा उसकी योग्यता की बराबरी में होंगे। परन्तु दूसरों के लिए स्वीकारणीय और उपलब्ध आज्ञाकारिता, हजारों और लाखों के लिए, जो उसकी याचना करते हैं, उस (ईश्वरीय) स्वभाव से जुड़ा हुआ हो जो जरूरी नहीं कि इस प्रकार बाध्य हो।[25]

हम फिर से पूछते हैं, "एक ही मनुष्य का जीवन कैसे कई मनुष्यों के लिए ईश्वरीय न्याय को सन्तुष्ट कर सकता है ?" इसका कारण यह है कि वह सच्चा परमेश्वर था और उसका एक ही जीवन अन्य

सभी लोगों के जीवनों को इकट्ठा भी किया जाए तो उनसे अधिक मूल्यवान था! पल भर के लिए कल्पना कीजिए कि समस्त सृष्टि को तराजू के एक पलड़े में रखा जाता है – पहाड़ियाँ और मिट्टी के ढ़ेर, धूल और तारे, चूहे और मनुष्य, वह सबकुछ जो है और होगा। उसके बाद कल्पना करें कि मसीह तराजू के दूसरे पलड़े पर कदम रखता है। तराजू का काँटा फौरन उसके पक्ष में झुक जाता है, क्योंकि उसके मूल्य का तोल असीमित रूप से बाकी सबसे भारी है।

यदि कोई निष्पाप मनुष्य होता या निर्दोष स्वर्गदूत होता, जो मरने के लिए तैयार होता, तो उसकी मृत्यु का हमारे पाप के विरोध में कोई लाभ नहीं होता। यदि असंख्य में स्वर्गदूत अपने निष्कलंक शरीर उस कांठ पर बलिदान कर देते, तौभी उनका बलिदान आवश्यक भुगदान के बराबर नहीं होता। हमारे उद्धार के लिए असीम मूल्य के बलिदान की आवश्यकता थी, और 'हमारे महान परमेश्वर और उद्धारकर्ता यीशु मसीह' का ऐसा बड़ा मूल्य है।[26] हमारा छुटकारा चान्दी, सोने अर्थात् नाशमान वस्तुओं के द्वारा नहीं हुआ, परन्तु निर्दोष और निष्कलंक मेम्ने अर्थात् मसीह के बहुमूल्य लोहू के द्वारा हुआ – मसीह का लोहू, अर्थात् प्रत्यक्ष परमेश्वर का लोहू![27]

मसीह के व्यक्तित्व का असीमित मूल्य और उसके बलिदान की असीम योग्यता सिद्ध करके उसके ईश्वरत्व की आवश्यकता दिखाने के बाद, हमें अत्यन्त सचेत रहना चाहिए कि हमें इस समतुल्य आवश्यक सत्य को नजरअन्दाज नहीं करना चाहिए : मसीह मनुष्य था और परमेश्वर की व्यवस्था के प्रति उसकी सिद्ध आज्ञाकारिता उसे लोगों के पापों के लिए मरणे योग्य बना सकी और वह उन पर सिध्द धार्मिकता अध्यारोपित कर सका।[28] सबसे पहले, हमें यह समझना आवश्यक है कि जो मनुष्य दूसरों के पापों के लिए मर गया वह स्वयं सिद्ध मनुष्य और पापरहित हो यह अवश्य है। अन्यथा, वह अपना ही जीवन खो बैठेगा, और वह अपने ही दुराचार के लिए मृत्यु और सनातन दण्ड के लिए दोषी ठहरेगा। इसलिए, मसीह की सक्रिय आज्ञाकारिता ने (परमेश्वर की व्यवस्था के प्रति उसके सिद्ध आज्ञापालन ने) उसकी निष्क्रिय आज्ञाकारिता (पापों के लिए बलिदान के रूप में अपने आप को अर्पण करना) को परमेश्वर के सामने ग्रहणीय बनाया। सरल शब्दों में, एक पापी व्यक्ति दूसरों के पापों के लिए अपना जीवन नहीं दे सकता, परन्तु अपने ही अपराध के लिए वह मरने हेतु कर्जदार है। क्योंकि यीशु मसीह पापरहित मनुष्य था, इसलिए वह अपनी प्रजा के पापों के लिए खुद को सेंतमेंत बलिदान कर सका।[29]

दूसरी बात, हमें यह समझना आवश्यक है कि मनुष्य के उद्धार के लिए केवल उसके पाप को हटाना ही पर्याप्त नहीं है, उसे और एक बात की आवश्यकता है – अर्थात् धर्मी ठहराया जाना। परमेश्वर के साथ मेल करने के लिए, मनुष्य को क्षमा या दोषमुक्ति से अधिक की जरूरत है – उसे

परमेश्वर के सामने धर्मी होना अवश्य है। प्रभु के पर्वत पर कौन चढ़ेगा और उसके पवित्र स्थान में कौन खड़ा रहेगा इस विषय में प्राचीनतम प्रश्न का उत्तर देते हुए दाऊद इस सत्य को स्पष्ट रूप से समझाते है : " वही जिसके हाथ निर्दोष है और जिसका हृदय शुद्ध है, जिसने अपने मन को झूठी बात की ओर नहीं लगाया, न कपट से शपथ खाई है।"[30]

परमेश्वर की उपस्थिति में प्रवेश करने की एक बड़ी शर्त है, धार्मिकता – परमेश्वर की व्यवस्था के प्रति समग्र समानता, अपने हृदय या कार्य में जरा भी विचलित न होते हुए सम्पूर्ण आज्ञाकारिता। यह सत्य पतित मनुष्य के सामने एक अपरास्त बाधा उत्पन्न करता है। पवित्र शास्त्र स्पष्ट शब्दों में गवाही देता है कि कोई भी धर्मी नहीं है, सबने पाप किया है, और हमारे अनवरत नैतिक असफलता ने व्यवस्था के द्वारा धार्मिकता को असम्भव बना दिया है।[31] सरल शब्दों में, हम पूर्ण रूप से अधर्मी प्राणी हैं जो नैतिक रूप से बर्बाद हो चुके हैं और परमेश्वर की उपस्थिति में खड़ें रहने पूरी तरह से अयोग्य ठहरे हैं। हम अपने आप में निर्बल और आशाहीन हैं।[32]

सुसमाचार का शुभ संदेश यह है कि नासरत के यीशु ने परमेश्वर के समक्ष सिद्ध धार्मिकता का जीवन बिताया। उसके प्रत्येक विचार, शब्द और आचरण परमेश्वर की इच्छा की समानता में थे, जिसमें लेशमात्र भी भटकाव या अन्तर नहीं था। अपने जीवन का प्रत्येक क्षण, उसने अपने सम्पूर्ण हृदय, प्राण, मन और शक्ति से प्रभु अपने परमेश्वर से प्रेम किया।[33] जो कुछ भी उसने किया, खाने और पीने जैसा छोटा काम भी अपने परमेश्वर की महिमा के लिए किया।[34] इस प्रकार, पिता हमेशा उसके विषय में गवाही दे पाया, "यह मेरा प्रिय पुत्र है, जिससे मैं अति प्रसन्न हूँ।"[35]

हमें जो समझने की आवश्यकता है वह यह कि मसीह न केवल अपने लोगों के लिए मर गया, बल्कि उसने उनके लिए सिद्ध जीवन भी जिया। और यह सिद्ध जीवन विश्वास करने वाले हर एक मनुष्य के लिए गिना गया।[36] इसी कारण, प्रेरित पौलुस हमें बताते है कि हम "उसमें परमेश्वर की धार्मिकता हैं।"[37] पौलुस इस प्रकार समझाते है, "पर अब बिना व्यवस्था परमेश्वर की वह धार्मिकता प्रगट हुई है, जिसकी गवाही व्यवस्था और भविष्यद्वक्ता देते हैं, अर्थात् परमेश्वर की वह धार्मिकता, जो यीशु मसीह पर विश्वास करने से सब विश्वास करनेवालों के लिए है, क्योंकि कुछ भेद नहीं।"[38]

धर्मी ठहराए जाने का यह प्रिय सिद्धान्त स्पष्ट रूप से पहले और दूसरे आदम के बीच रिश्ते को दर्शाता है।[39] पहला आदम अपने वंश के प्रधान के रूप में खड़ा रहा। वाटिका में, वह स्वयं के लिए और अपने वंश के लिए जिया और पाप में गिर गया। इस प्रकार, प्रेरित पौलुस समारोप करते है कि "क्योंकि जैसे एक मनुष्य के आज्ञा न मानने से बहुत लोग पापी ठहरे" और "एक मनुष्य के अपराध के कारण मृत्यु ने उस एक ही के द्वारा राज्य किया।"[40] इसी के समान परन्तु बड़े पैमाने पर, दूसरा

आदम, यीशु मसीह अपने लोगों के प्रधान के रूप में खड़ा रहा और वह न केवल उनके लिए मर गया बल्कि उनके लिए जिया भी ताकि आज्ञाकारिता का उसका सिद्ध जीवन विश्वास के द्वारा वरदान के रूप में उन पर अध्यारोपित किया जाए। इस कारण, प्रेरित पौलुस इस नतिजे पर पहुँचते है कि एक मनुष्य की आज्ञाकारीता से अनेक मनुष्य धर्मी ठहराए गए।[41]

यह आवश्यक था कि मसीह परमेश्वर हो तांकि उसके परमेश्वर होने से उसके लोगों के लिए उसका बलिदान असीम रूप से मूल्यवान ठहर सके। उसी तरह, यह भी आवश्यक था कि मसीह मानव हो तांकि वह आज्ञाकारिता का सिद्ध जीवन बिता सकें, पापियों के बदले मर सकें और तब अपने धार्मिक जीवन के द्वारा वह उस पर विश्वास करने वाले सभी को धर्मी ठहरा सके।

दो स्वभाव और योग्य मध्यस्थ

वेब्स्टर के शब्दकोष ने मध्यस्थ या बिचवई की परिभाषा इस तरह की है : ऐसा व्यक्ति जो दो पक्षों में मेलमिलाप करने या एक दूसरे का अनुवाद करने हेतु हस्तक्षेप करने की योग्यता और सामर्थ रखता है। परमेश्वर और मनुष्य के बीच योग्य मध्यस्थ बनने के लिए, यह आवश्यक था कि नासरत का यीशु एक ही व्यक्ति के रूप में परमेश्वर और मनुष्य दोनों ही हो। वास्तविक मानव स्वभाव आवश्यक था तांकि वह मनुष्य के उद्धार और शान्ति के लिए उस पर अपना हाथ रख सके। वास्तविक ईश्वरत्व आवश्यक था तांकि वह परमेश्वर को पा सके और उसके साथ सौदा कर सके – क्या कोई प्राणी मात्र ऐसा कर सकता या ऐसा करने का प्रयास करेगा और फिर भी उस में से बच निकलेगा ?पवित्र शास्त्र से हम समझते हैं कि अति सामर्थी सेराफीम भी अपना हाथ बढ़ाकर उस परम प्रधान को छूने का साहस नहीं करते जो भस्म करने वाली आग है और जो अगम्य ज्योति में वास करता है।[42] परमेश्वर की उपस्थिति में मात्र सिर झुकाकर और मुँह ढाँककर खड़े रहने के लिए सारे सेराफीमों का बल चाहिए।[43] यह इस बात का अतिरिक्त प्रमाण है कि यद्यपि हमारा मध्यस्थ मनुष्य हो यह अवश्य है, फिर भी वह सबसे शक्तिमान स्वर्गदूतों या महानतम सृष्ट जीवों से बढ़कर हो यह भी अवश्य है। उसे परमेश्वर होना अवश्य है तांकि वह हमारे लिए परमेश्वर के साथ सौदा कर सकें।

नासरत का यीशु इन दोनों योग्यताओं को पूरा करता है। वह हमारे मांस और लोहू में भागी हुआ, इस दृष्टि से वह हमारे समान है और हमें भाई कहलाने से नहीं लजाता।[44] "क्योंकि हमारा ऐसा महायाजक नहीं, जो हमारी निर्बलताओं में हम से सहानुभूती न रख सके; वह तो सब बातों में हमारे ही समान परखा गया, फिर भी निष्पाप निकला।"[45] उस के साथ साथ वह परमेश्वर का पुत्र, पवित्र, निष्पाप, निष्कलंक, पापियों से अलग किया हुआ और स्वर्ग से भी ऊँचा किया गया है।[46] हमारे पापों को धोकर वह ऊँचे स्थानों पर महामहिमन की दाहिनी ओर बैठा गया।[47] हमारे लिए वह स्वर्गों से

होकर गया और उसने सर्वशक्तिमान परमेश्वर को पा लिया।[48]

इन कुछ पन्नों में मसीह के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में जो वर्णन किया गया, एक अत्यन्त विशाल पर्वत की तलहटी भी नहीं है। परन्तु, जो कुछ भी कहा गया है उसे कहने का उद्देश्य यह है कि सेवकों और विश्वासियों को मसीह के व्यक्तित्व की महिमाओं की खोज करने और सुसमाचार के माध्यम से उनका प्रचार करने हेतु आव्हान किया जा सके। हमें हमेशा इस सत्य को स्मरण रखने और अपने हृदयों में संजोकर रखने की आवश्यकता है कि हमारा उद्धार मसीह ने हमारे लिए जो कुछ किया केवल उसके द्वारा नहीं हुआ है, परन्तु वह जो है, और युगानुयुग रहेगा, उसके द्वारा भी हुआ है!

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

2. 1 तिमुथि 3:16
3. व्यवस्थाविवरण 29:29
4. यशायाह 43:11; see also होशे 13:4
5. योना 2:9
6. प्रेरितों के काम 4:12
7. यशायाह 45:22; रोमियों 10:13
8. Francis Turretin, *Institutes of Elenctic Theology* (Phillipsburg, N.J.: P&R, 1994), 2:303.
9. यहेजकेल 18:4
10. इब्रानियों 10:4
11. इब्रानियों 2:14–17
12. 1 तिमुथि 2:5
13. यूहन्ना 1:1, 14; फिलिप्पियों 2:6–8
14. यूहन्ना 19:5
15. भजन संहिता 90:11
16. यिर्मयाह 10:10
17. प्रकाशित वाक्य 6:16
18. भजन संहिता 76:7
19. नहूम 1:6
20. भजन संहिता 76:7
21. 1 पतरस 2:24
22. यशायाह 53:3, emphasis added
23. डैबनी लिखते हैं, "यदि उसके व्यक्तित्व की असीमित प्रतिष्ठा को दर्शाने वाला उसका ईश्वरीय चरित्र (स्वभाव) न होता, तो कुछ वर्षों के लिये उसके द्वारा पाप का शाप भोगना, परमेश्वर के समक्ष जगत के पापों के लिए प्रायश्चित्त पर्याप्त रूप में संतोष जनक नहीं होता।" राबर्ट लेविस डैबनी (सिस्टमैटिक थियोलॉजी, एडिनबर्ग : बैनर ऑफ ट्रूथ, 1985), 201
24. Turretin, *Elenctic Theology*, 2:437.
25. यूहन्ना Newton, *The Works of* यूहन्ना *Newton* (Edinburgh: Banner of Truth, 1985), 4:60.

26. तितुस 2:13
27. 1 पतरस 1:18–19; प्रेरितों के काम 20:28
28. शब्द अध्यारोपित (impute) का अर्थ ''मानना' या 'किसी के नाम गिनना' है, या किसी के काम को किसी और पर प्रभावी रीति से लागू करना, या किसी एक का काम दूसरे पर रख देना। विश्वासी के संबंध में इसका अर्थ यह हुआ कि मसीह की धार्मिकता (उसकी सिद्ध आज्ञाकारिता) को विश्वासी पर अध्यारोपित कर दिया गया है अर्थात् उसके लिये मान लिया गया है, या उसके लिए गिना गया है। इस प्रकार परमेश्वर विश्वासी को मान लेता है।
29. इब्रानियों 4:15
30. भजन संहिता 24:4
31. रोमियों 3:10, 20–23; गलातियों 2:16
32. रोमियों 5:6; इफिसियों 2:12
33. मरकुस 12:30
34. 1 कुरिन्थियों 10:31
35. मत्ती 3:17; 17:5
36. रोमियों 4:22–24; 5:1
37. 2 कुरिन्थियों 5:21
38. रोमियों 3:21–22
39. Scripture portrays Adam and Christ as the first and last Adam. See रोमियों 5:14 and 1 कुरिन्थियों 15:45.
40. रोमियों 5:15–19
41. रोमियों 5:19
42. इब्रानियों 12:29; 1 तिमुथि 6:16
43. यशायाह 6:2–3
44. इब्रानियों 2:11, 14
45. इब्रानियों 4:15
46. इब्रानियों 7:26
47. इब्रानियों 1:3
48. इब्रानियों 4:14

अध्याय –20

यीशु मसीह का क्रूस

तीसरे पहर यीशु ने बड़े शब्द से पुकार कर कहा, ''इलोई, इलोई, लमा शबक्तनी ?'' जिसका अर्थ यह है, ''हे मेरे परमेश्वर, हे मेरे परमेश्वर, तू ने मुझे क्यों छोड़ दिया ?'' – मरकुस 15:34

वह उन से अलग लगभग पत्थर फेंकने की दूरी तक गया, और घुटने टेककर प्रार्थना करने लगा, ''हे पिता, यदि तू चाहे तो इस प्याले को मुझ से हटा ले; फिर भी मेरी इच्छा नही पर तेरी इच्छा पूरी हो।'' तब स्वर्ग से एक दूत उसे दिखाई दिया जो उसे सामर्थ्य देता था। यीशु व्याकुल होकर आग्रहपूर्वक प्रार्थना कर रहा था; और उसका पसीना रक्त की बूँद के समान भूमि पर गिर रहा था। – लूका 22:41–44

जब यीशु ने सिरका लिया, तो कहा ''पूरा हुआ'', और उसने सिर झुकाकर प्राण त्याग दिया। – युहन्ना 19:30

अब हमारे सामने इस पुस्तक का सबसे महत्वपूर्ण अध्याय है और जैसे कि अधिकतर मसीही सहमत होंगे, यह मानव इतिहास का सबसे महत्पूर्ण अध्याय है। इस विषय को छोटे छोटे हिस्सों में बाँटा नहीं जा सकता, पाठक की सुविधा के लिए भी नहीं। यह सुसमाचार का हृदय–स्थल है, और यदि हमें उस में परिश्रम से आगे बढ़ना है, तो यह अध्याय परिश्रम के सचमुच योग्य है!

समकालीन सुसमाचार प्रचार की सबसे बड़ी बुराईयों में से एक यह है कि इसमें विरले ही मसीह के क्रूस पर गहराई से स्पष्टीकरण दिया जाता है। वह मर गया यह कहना ही पर्याप्त नहीं होगा – सभी मनुष्य मरते हैं। उसकी मृत्यु महान थी यह कहना ही पर्याप्त नहीं होगा – शहीद भी ऐसे ही मरते हैं। हमें यह समझना आवश्यक है कि जब तक हम मसीह की मृत्यु से सम्बन्धित भ्रान्ति को दूर नहीं कर देते और हमारे श्रोताओं के सामने उसके सच्चे अभिप्राय को स्पष्ट नहीं करते, तब तक हमने उद्धार की सामर्थ के साथ मसीह की मृत्यु को पूर्ण रूप से घोषित नहीं किया है : वह अपने लोगों के

अपराधों को लेकर और उनके पापों के लिए ईश्वरीय दण्ड को सहता हुआ मर गया। वह परमेश्वर का त्यागा हुआ और हमारे बदले में परमेश्वर के क्रोध के नीचे कुचला गया था।

परमेश्वर का त्यागा हुआ

पवित्र शास्त्र के सबसे अधिक विचलित करने वाले, और बार बार याद आने वाले अनुच्छेदों में से एक मरकुस का वह विवरण है जिसमें रोमी क्रूस पर लटके हुए मसीह बड़ा प्रश्न पूछते है। उन्होंने ऊँची आवाज में पुकारकर कहा, "एलोई एलोई लमा शबक्तनी ?" जिसका अर्थ है, "हे मेरे परमेश्वर, हे मेरे परमेश्वर, तूने मुझे क्यों छोड दिया ?"[1]

परमेश्वर के पुत्र के निष्कलंक स्वभाव और पिता के साथ उसकी सिद्ध संगति के विषय में जो कुछ हम जानते हैं उस पर विचार करते हुए, मसीह के शब्दों को समझना कठिन है और फिर भी वे क्रूस के अर्थ को और जिस उद्देश्य के लिए वे मरे उस कारण को प्रकट करते हैं। यह सच्चाई कि उनके शब्द मूल इब्रानी भाषा में भी लिखे हुए हैं, उनके बड़े महत्व के विषय में हमें बताते हैं। लेखक नहीं चाहते थे कि हम किसी बात को गलत तरीके से समझें!

इन शब्दों में, मसीह न केवल परमेश्वर को पुकार रहे है, बल्कि सिद्ध शिक्षक के रूप में अपने दर्शकों और भविष्य के सारे पाठकों को पुराने नियम की उन सबसे महत्वपूर्ण मसीह–विषयक भविष्यद्वाणियों में से एक की ओर निर्देशित करते है : भजन 22। यद्यपि पूरे भजन में क्रूस की विस्तृत भविष्यद्वाणियाँ हैं, फिर भी हम केवल पहले छः पदों का अध्ययन करेंगे :

> "हे मेरे परमेश्वर, हे मेरे परमेश्वर, तूने मुझे क्यों छोड दिया ?तू मेरी सहायता करने से, मेरे कराहने के शब्दों से इतना दूर क्यों है ?हे मेरे परमेश्वर, मैं दिन को पुकारता हूँ, पर तू उत्तर नहीं देता, रात को पुकारता हूँ, परन्तु चैन नहीं पाता। पर तू तो पवित्र है, तू जो इस्राएल की स्तुति में विराजमान है। तुझ ही पर हमारे पूर्वजों ने भरोसा रखा; उन्होंने भरोसा रखा और तू ने उन्हें छुडाया। उन्होंने तेरी दुहाई दी, और वे छुडा लिए गए; तुझ पर उन्होंने भरोसा किया; और वे लज्जित न हुए। परन्तु मैं तो कीडा हूँ, मनुष्य नहीं, मनुष्यों द्वारा निन्दित और लोगों द्वारा तिरस्कृत।

मसीह के दिनों में, इब्रानी पवित्र शास्त्र को अध्यायों और वचनों में विभाजित नहीं किया गया था जैसा कि आज देखा जाता है। इसलिए, जब रब्बी अपने श्रोताओं को कोई भजन या पवित्र शास्त्र का भाग निकालने के लिए कहते थे, तो वे उस पाठ की पहली पंक्तियाँ दोहराया करते थे। क्रूस की इस पुकार में, यीशु हमें भजन 22 की ओर निर्देशित करते है और अपने क्लेशों के चरित्र और

उद्देश्य की किसी बात को हम पर प्रकट करते है।

पहले और दूसरे वचन में, हम मसीह की शिकायत सुनते हैं : वे स्वयं को परमेश्वर का त्यागा हुआ मानते है। मरकुस ग्रीक शब्द *egkataleípo* (एकाटेलैपो) का उपयोग करते है जिसका अर्थ है त्यागना, छोड़ देना, परित्याग करना।[2] भजनकार इब्रानी शब्द *azab* (एझाब) का प्रयोग करते है जिसका अर्थ छोड़ देना या त्याग देना है।[3] दोनों उदाहरणों में, उद्देश्य स्पष्ट है : मसीह स्वयं जानते है कि परमेश्वर ने उन्हें त्याग दिया है और उनकी पुकार को अनसुना किया है। यह सांकेतिक या अलंकारिक परित्याग नहीं है। यह वास्तविक है! यदि कभी किसी व्यक्ति ने परमेश्वर के त्यागे जाने को महसूस किया होगा, तो वह कल्वरी के क्रूस पर परमेश्वर का पुत्र था!

इस भजन के चौथे और पाँचवें वचनों में, मसीह द्वारा सहन की जाने वाली पीड़ा तब और अधिक तीव्र हो जाती है जब वे परमेश्वर के लोगों के प्रति उसकी वाचा की विश्वासयोग्यता को स्मरण करते है। उन्होंने कहा, "तुझ ही पर हमारे पूर्वजों ने भरोसा रखा; उन्होंने भरोसा रखा और तू ने उन्हें छुडाया। उन्होंने तेरी दुहाई दी, और वे छुडा लिए गए; तुझ पर उन्होंने भरोसा किया; और वे लज्जित न हुए।" यहाँ स्पष्ट विरोधाभास प्रकट है। परमेश्वर के वाचा के लोगों के इतिहास में ऐसा एक भी उदाहरण नहीं है जब किसी धर्मी व्यक्ति ने परमेश्वर को पुकारा और उसका छुटकारा नहीं हुआ। परन्तु, अब निष्पाप मसीह पूर्ण रूप से त्यागा हुआ कांठ पर लटका हुआ है। परमेश्वर के परित्याग का क्या कारण हो सकता है ?उसने अपने ही एकलौते पुत्र से क्यों मुँह फेर लिया ?

इन विचलित करने वाले प्रश्नों के उत्तर को यीशु शिकायत में बदल देते है। 3 रे पद में, वे अटल घोषणा करते है कि परमेश्वर पवित्र है और उसके बाद 6 वें पद में, वे अवर्णनिय बात को कबूल करते है : वह कीड़ा बन गए है और अब मनुष्य नहीं रहें। मसीह स्वयं के विरोध में इस प्रकार प्रतिष्ठा कम करने वाली और उपहासपूर्ण भाषा का उपयोग क्यों करते है ?क्या वे स्वयं को कीड़े के रूप में इसलिए देखते है क्योंकि वे "मनुष्यों द्वारा निन्दित और लोगों द्वारा तिरस्कृत है।" या उनकी इस प्रकार की आत्म–निन्दा का और भी बड़ा और अधिक भयावह कारण था ?[4] क्योंकि उन्होंने पुकारकर यह नहीं कहा, "हे मेरे परमेश्वर, मेरे परमेश्वर, लोगों ने मुझे क्यों त्याग दिया ?" बल्की उन्होंने यह जानने का प्रयास किया कि परमेश्वर ने ऐसा क्यों किया था। इसका उत्तर केवल एक ही कड़वी सच्चाई में पाया जा सकता है : यहोवा ने हम सभों के अधर्म का बोझ उसी पर लाद दिया और कीड़े के समान वह हमारे बदले में त्यागा और कुचला गया।[5]

साँप और अजाजेल का बकरा

एक कीड़े के समान मरने वाले मसीह का यह गहरा रूपक पवित्र शास्त्र में एकमात्र नहीं है। और भी रूपक हैं जो हमें और गहराई में क्रूस के हृदय की ओर ले जाते हैं और हमारे लिए प्रकाशित करते हैं कि अपने लोगों का छुटकारा प्राप्त करने के लिए उन्हें क्या क्या सहना आवश्यक था।[6] यदि हम भजन के लेखक के शब्दों को पढ़कर कम्पित होंगे, तो हम यह पढ़कर और भी अचम्भित हो ऊठेंगे कि परमेश्वर के पुत्र की तुलना जंगल में ऊँचे पर उठाए गए साँप से और पाप उठाने वाले दो बकरों से की गई है –जिन में से एक का वध किया जाता है और दूसरे को दूर कर दिया जाता है।

पहिला रूपक गिनती की पुस्तक में है। परमेश्वर के विरोध में इस्राएलीयों के लगातार विद्रोह करने की वजह से और उसके अनुग्रहपूर्ण प्रयोजन का इन्कार करने की वजह से, परमेश्वर ने लोगों के मध्य "तेज विष वाले साँपों" को भेजा और कई लोग मर गए।[7] हालांकि लोगों के पश्चाताप के परिणामस्वरूप और मूसा की मध्यस्थता के कारण, परमेश्वर ने फिर एक बार उनके उद्धार का प्रयोजन किया। उसने मूसा को आज्ञा दी कि वह "विष वाले सांप की प्रतिमा बनाकर उसे काठ पर लटकाए" और फिर उसने प्रतिज्ञा की कि "जो साँप से डंसा हुआ उसको देख ले वह जीवित बचेगा।"

शुरू में, यह तर्क करना विपरीत लगता है कि "जिसका उपचार हुआ उसका आकार घायल करने वाले के समान ही था।"[8] परन्तु यह क्रूस का सामर्थी चित्र प्रस्तुत करता है। इस्राएली लोग तेज विष वाले साँपों के जहर से मर रहे थे। लोग अपने ही पाप के जहर से मरते हैं। परमेश्वर ने मूसा को आज्ञा दी कि वह मृत्यु की वजह (जड़) को खम्भे पर ऊँचा लटकाए। परमेश्वर ने हमारी मृत्यु की वजह (जड़) को अपने निज पुत्र पर रखा जब वह क्रूस पर ऊँचा लटका था। वह "हमारे पापमय शरीर की समानता में आया था" और हमारे बदले में पाप बन गया।[9] जिस–जिस इस्राएलीं ने परमेश्वर पर विश्वास किया और पीतल के साँप की ओर देखा, वह बच गया। जो मनुष्य परमेश्वर के पुत्र के सम्बन्ध में उसकी गवाही पर विश्वास करता है और उसकी ओर विश्वास से देखता है, वह बच जाएगा।[10] जैसा कि लिखा है : "हे पृथ्वी के दूर दूर के देश के रहनेवालो, तुम मेरी ओर फिरों और उद्धार पाओं! क्योंकि मैं ही ईश्वर हूँ और दूसरा कोई और नहीं है।"[11]

लैव्यव्यवस्था की याजकीय पुस्तक में दूसरा रूपक है। क्योंकि एक ही बलिदान के लिए मसीह की प्रायश्चितकारी मृत्यु को दर्शाने या पूर्ण रूप से उसका चित्रण करने हेतु असम्भव था, इसलिए परमेश्वर लोगों से पापबलि के दो बकरों की भेंट चाहता था।[12] पहला बकरा परमेश्वर के समक्ष पापबलि के रूप में वध किया जाता था और उसका लोहू महापवित्र स्थान में परदे के पीछे

प्रायश्चित के ढ़कने पर और उसके सामने छिड़का जाता था।[13] यह मसीह का प्रतीक था, जिन्होंने अपने लोगों के पापों के लिए प्रायश्चित करने हेतु क्रूस पर अपना लोहू बहाया। प्रायश्चित के रूप में मसीह की मृत्यु का यह अद्भुत उदाहरण है – उन्होंने परमेश्वर के न्याय को सन्तुष्ट करने हेतु, उसके क्रोध को शान्त करने हेतु और मेलमिलाप करने के लिए अपना लोहू बहाया। महायाजक परमेश्वर के सामने दूसरे बकरे को अजाजेल* के बकरे के रूप में अर्पण करता था।[14] महायाजक "अपने दोनों हाथों को जीवित बकरे पर रखकर इस्राएलियों के सब अधर्म के कामों, और उनके सब अपराधों, अर्थात् उनके सारे पापों को अंगीकार" करता था।[15] उसके बाद महायाजक उस अजाजेल के बकरे को जंगल में छोड़ देता था जो लोगों के सारे अधर्म निर्जन स्थान में ऊठा ले जाता था। वहाँ पर वह अकेले भटकता रहता था, परमेश्वर का त्यागा हुआ और परमेश्वर के लोगों से दूर किया गया। अजाजेल का बकरा मसीह का प्रतीक था, जो "आप ही हमारे पापों को अपनी देह पर लिए हुए क्रूस पर चढ़ गया," और जो "छावनी के बाहर" दुख उठाकर अकेले मर गए।[16] प्रायश्चित के रूप में मसीह की मृत्यु का यह उत्तम चित्र है – उन्होंने हमारे पापों को उठा लिया। भजन के लेखक ने लिखा, "उदयाचल अस्ताचल से जितनी दूर है, उसने महारे अपराधों को हम से उतनी ही दूर कर दिया है।"[17]

मसीह हमारे लिए पाप बन गया

हमें यह बात अचम्भित क्योंकर न लगे कि एक कीड़ा, एक विषैला साँप, और एक बकरा मसीह के प्रतीक हों ?इस प्रकार के घृणित जीवों के साथ परमेश्वर के पुत्र की समानता दर्शाना निन्दाजनक होता यदि उनका उल्लेख स्वयं पुराने नियम से न आता, और यदि नये नियम के लेखकों ने उसकी पुष्टि न की होती, जिन्होंने और आगे बढ़कर उसकी पाप के लिए बलिदानात्मक मृत्यु का और अधिक अन्धकारमय चित्र प्रस्तुत किया है। पवित्र आत्मा की अगुवाई में, वे हमें बताते हैं कि मसीह जो पाप से अज्ञात था "पाप ठहराया गया" और जो पिता का प्रिय था वह उसके सामने "शाप बन गया।"[18]

हम सभों ने इन सत्यों को पहले सुना है, परन्तु क्या हम ने कभी उस पर पर्याप्त रूप से विचार किया है ताकि उन्हें वास्तव में समझ ले और उन से हम ह्रदय के टूटेपन को महसूस करें ?जिसे सेराफीम का गायकवृन्द "पवित्र, पवित्र, पवित्र" कहता था, वह क्रूस पर पाप "ठहराया गया।"[19] इस वाक्प्रयोग के अर्थ को समझने की यात्रा करना लगभग अत्यन्त जोखिम भरा है। हम प्रत्येक कदम पर ठिठकते हैं। जिसमें "ईश्वरत्व की सारी पूर्णता सदेह वास करती है" उसे पाप ठहराया गया इसका क्या अर्थ है ?[20] परमेश्वर के पुत्र की प्रतिष्ठा की रक्षा करने के प्रयास में हमें इस आपत्तिजनक सत्य की लिपापोती नहीं करनी चाहिए, और फिर भी हमें सावधान रहने की आवश्यकता है कि हम उसके

निर्दोष, निष्कलंक चरित्र के विरोध में भयावह बातें न कहे। वह कैसे पाप ठहराया गया ? पवित्र शास्त्र से हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि मसीह को उसी तरह पाप ठहराया गया जिस तरह विश्वासी उस में "परमेश्वर की धार्मिकता बन जाता है।"[21] करिन्थ की कलीसिया को अपनी दूसरी पत्री लिखते समय प्रेरित पौलुस लिखते है : "जो पाप से अज्ञात था, उसी को उसने हमारे लिए पाप ठहराया, कि हम उसमें होकर परमेश्वर की धार्मिकता बन जाएँ।"[22]

इस वर्तमान जीवन में, विश्वासी जन "परमेश्वर की धार्मिकता" है – उसके चरित्र पर किसी शुद्धिकरण के कार्य के कारण नहीं जिसके द्वारा वह पूर्ण रूप से धर्मी या पापरहित प्राणी बने, बल्कि उसके उस धार्मिकता के अध्यारोपन के कारण, जिसके द्वारा उसके लिए मसीह के किए गए कार्य के माध्यम से उसे परमेश्वर के सामने धर्मी ठहराया गया है। उसी तरह, मसीह उसके चरित्र में किसी नैतिक विकार के कारण इसलिए पाप नहीं ठहराया गया जिसके द्वारा वह पूर्ण रूप से वास्तव में भ्रष्ट या अधर्मी बन गया हो, परन्तु हमारे पापों के अध्यारोपन के परिणाम स्वरूप जिस कारण वह हमारे बदले में परमेश्वर के न्यायासन के सामने अपराधी ठहराया गया। क्रूस पर मसीह पापी नहीं बना; बल्कि हमारे पाप उस पर लादे गए थे, और परमेश्वर ने उसे हमारे अपराधों का दोषी ठहराया और उसे वह दण्ड दे दिया जिसके हम योग्य थे। वह हमारी भ्रष्टता का भागी होकर पाप नहीं बना, बल्कि हमारे अपराधों को उठाने के द्वारा वह पाप ठहराया गया। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जब उन्होंने हमारे पापों को उठा लिया, तब भी वह परमेश्वर का निर्दोष और निष्कलंक मेम्ना था, और उसका बलिदान पिता के निकट सुखदायक सुगन्ध था।[23]

हमें यह समझने के विषय में सचेत रहना चाहिए कि मसीह हमारे बदले में पाप ठहराया गया यह सत्य इसके भयावह स्वरूप को कम नहीं करता। यद्यपि यह अध्यारोपित दोष था, फिर भी वह दोष वास्तविक था, जिससे उसके प्राण को अवर्णनीय पीड़ा हुई। वह सचमुच हमारे बदले में खड़ा रहा, उसने हमारे पाप को उठा लिया, हमारे दोष को सह लिया, और हमारे पाप के योग्य परमेश्वर के क्रोध के पूर्ण परिमाण को अनुभव किया।

वह सचमुच जो था और जो वह "ठहराया गया" इसके बीच का बड़ा विरोधाभास, मसीह द्वारा अनुभव की गई पीड़ा को और अधिक प्रगट करता है। पापी व्यक्ति के लिए पाप के साथ आमना–सामना करना और अपने ही दोष का भार महसूस करना भयावह है। परन्तु "जो पाप से अज्ञात था" उसके लिए उस गन्दगी को उठा लेना जिससे वह पूर्ण रूप से अपरिचित था और असंख्य पापियों का दोष महसूस करना बिल्कुल दूसरी बात है। परमेश्वर के न्यायासन के समक्ष दोषी के रूप में बर्ताव किया जाना पापी के लिए अवर्णनीय भय की बात है, परन्तु जो "निष्पाप, निष्कलंक, पापियों

से अलग" है, उसके साथ ऐसा बर्ताव किया जाए यह बिल्कुल दूसरी बात है।[24] जिस पापी व्यक्ति के साथ परमेश्वर का कोई रिश्ता नहीं है और जिसके प्रति उसे कोई स्नेह नहीं है उसे परमेश्वर द्वारा दण्डित किया जाना एक बात है। परन्तु परमेश्वर के जिस प्रिय पुत्र के साथ सनातन काल से अतिनिकट सहभागिता रही और जिसके प्रति वह परिमाण और परिभाषा से परे प्रेम रखता है, उसका न्याय स्वयं पिता के द्वारा किया जाना और उसे दोषी ठहराया जाना बिल्कुल अलग बात है।

मसीह शाप बन गया

मसीह पाप ठहराया गया यह सत्य जितना अबोधगम्य है, उतना ही भयावह भी है, और फिर भी, जब हम यह सोचते हैं कि उसके विरोध में हम बुरे शब्दों का उपयोग नहीं कर सकते, प्रेरित पौलुस एक दीपक जलाते है और हमें मसीही के अपमान और परित्याग की अधिक गहरी खाई में ले जाते है। हम और अधिक गहरी खाई में प्रवेश करते हैं तो पाते है कि परमेश्वर का पुत्र अपने इस सबसे निंदनिय नाम के साथ वहाँ क्रूस पर टंगा हुआ है : "परमेश्वर द्वारा शापित"!

पवित्र शास्त्र घोषिणा करता है कि ईश्वरीय व्यवस्था के नियमों का उल्लंघन करने के कारण सारी मानवजाति परमेश्वर के शाप के अधिन थी। जैसा की प्रेरित पौलुस गलातियाँ की कलीसिया को लिखते है : "जो कोई व्यवस्था की पुस्तक में लिखी हुई सब बातों के करने में स्थिर नहीं रहता, वह शापित है।"[25] शापित यह शब्द ग्रीक भाषा के *katára* (कटारा) शब्द से आता है जो घृणा, अभिशाप और लानत को दर्शाता है। नए नियम में, यह परमेश्वर द्वारा नकारा गया या परित्यक्त (विनाश के लिए बहिष्कृत) को दर्शाता है जो न्याय और दण्ड की ओर ले जाता है। ईश्वरीय शाप ईश्वरीय आशीष का विपरीतार्थक शब्द है; इसलिए पहाड़ी उपदेश के धन्योद्गार को हमारे मानक के रूप में उपयोग कर, परमेश्वर के शाप के अधिन आने का क्या अर्थ है इस विषय में हम कुछ सीख सकते हैं।

> जो धन्य है उन्हें स्वर्ग का राज्य दिया जाता है। जो शापित है उन्हें प्रवेश नकारा जाता है।
>
> जो धन्य है वें परमेश्वर से शान्ति पाते हैं। जो शापित है वें परमेश्वर के क्रोध का विषय होते हैं।
>
> जो धन्य है वें पृथ्वि के अधिकारी होंगे। जो शापित है वें उससे दूर हटा दिए जाएंगे।
>
> जो धन्य है वें तृप्त हैं। जो शापित है वें दुखी और अभागे हैं।
>
> जो धन्य है उन पर दया की जाती है। जो शापित है वें बिना दया के दोषी ठहराए जाते हैं।
>
> जो धन्य है वें परमेश्वर को देखेंगे। जो शापित है वें उसकी उपस्थिति से निकाल दिए जाते हैं।

जो धन्य है वें परमेश्वर के बेटे और बेटियाँ हैं। जो शापित है उन्हें लज्जित कर अपनाने से नकारा जाता है।[26]

स्वर्गीय दृष्टिकोण से, जो परमेश्वर की व्यवस्था का उल्लंघन करते हैं वे दुष्ट हैं और सब प्रकार के तिरस्कार के योग्य हैं। वे अभागे हैं, और उचित ही ईश्वरीय प्रतिशोध के भागी हैं और उचित ही सनातन विनाश के लिए ठहराए गए हैं। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि शापित पापी मनुष्य नर्क में पहला कदम रखेगा, तब अन्तिम बात जो उसे अवश्य सुननी चाहिए और सुनेगा भी वह यह कि समस्त सृष्टि अपने कदमों पर खड़े होकर परमेश्वर की प्रशन्सा करेगी कि उसने पृथ्वी को उससे छुटकारा दिया। परमेश्वर की व्यवस्था का उल्लंघन करने वालों की दुष्टता ऐसी ही होगी, और पवित्र लोग अपवित्र लोगों की ऐसी ही अवहेलना करेंगे।

ऐसी भाषा संसार के लिए और बहुसंख्य समकालीन सुसमाचारीय समाज के लिए बड़ी ठोकर का कारण है। तौभि यह बाइबल की भाषा है और उसके विषय में बोलने की आवश्यकता है। यदि हम शिष्टाचार के कारण पवित्र शास्त्र की गुप्त बातों को समझाने और स्पष्ट करने से इन्कार करते हैं, तो परमेश्वर को पवित्र नहीं माना जाएगा, मनुष्य उनकी भयानक दुर्दशा को नहीं समझेंगे, और मसीह द्वारा जो कीमत चुकाई गई है उसका न तो कभी मूल्यांकन होगा और न ही प्रशन्सा। जब तक हम यह नहीं समझते कि परमेश्वर के क्रोध के अधिन होने का मनुष्य के लिए क्या अर्थ है, तब तक हम यह कभी नहीं समझ पाएँगे कि मसीह "हमारे लिए शापित ठहरा" इसका क्या अर्थ है। उस कांठ पर उसने हमारे लिए क्या किया इसकी भयानकता और सुन्दरता को हम कभी पूर्ण रूप से समझ नहीं पाएँगे! "मसीह जो हमारे लिए शापित ठहरा, उस ने हमें मोल लेकर व्यवस्था के शाप से छुड़ाया (क्योंकि लिखा है, जो कोई कांठ पर लटकाया जाता है, वह शापित है)।[27]

गलातियों 3:10 में जो सत्य व्यक्त किया गया है उसने यीशु मसीह और उसके सुसमाचार को पहली सदी के यहूदियों के लिए विक्षुब्धकारी बना दिया। वे पवित्र शास्त्र की इस भयावह सच्चाई के विषय में परिचित थे कि "जो वृक्ष पर लटकाया गया है वह परमेश्वर की ओर से शापित है।"[28] तो फिर, मसीह इस्राएल का छुड़ाने वाला और राजा हो कर भी ऐसे अपमानजनक और दोषी ठहरकर कैसे मर सकता है ? ऐसा विचार मन में लाना विक्षुब्धता से अधिक था – यह सरासर ईश्वरनिन्दा थी! फिर भी यहूदी नहीं देख पाए कि "वह हमारे बदले में शाप ठहरा" और मसीह के लिए आवश्यक था कि वह उनके समान बने तांकि जिसके वे योग्य थे, उस से उन्हें छुड़ाया जा सके।[29] वह कीड़ा बन गया और मनुष्य न रहा, साँप को जंगल में ऊँचा उठाया गया, पाप को उठाने वाले अजाजेल के बकरे को जिस पर परमेश्वर का शाप प्रगट हुआ, छावनी के बाहर खदेड़ दिया गया। और यह सब कुछ उसने

अपने लोगों के बदले में किया!

व्यवस्थाविवरण 27–28 में, परमेश्वर ने इस्राएल राष्ट्र को दो अलग अलग छावनियों में विभाजित किया, एक को गेरिज्जिम पर्वत पर खड़ा किया और दूसरे को एबाल पर्वत पर। जो गेरिज्जिम पर्वत पर खड़े किए गए थे उन्हें उन आशीषों की घोषणा करनी थी जो प्रभु परमेश्वर की आज्ञा पालन करने की चौकसी करने वालो पर उतर आने वाली थीं।[30] एबाल पर्वत पर खड़े रहने वालों को उन शापों की घोषणा करनी थी जो उन सभों पर प्रगट होने वाले थे जिन्होंने ऐसी आज्ञापालन करने की चौकसी से इन्कार किया।[31] यद्यपि मसीह को गेरिज्जिम पर्वत की प्रत्येक आशीष पाने का पूरा अधिकार था, फिर भी उसका अपना पिता एबाल पर्वत से उसके विरोध में गरज उठा जब वह कल्वरी के वृक्ष पर लटका था। स्वर्ग के बन्द दरवाजों के पीछे से, परमेश्वर ने अपने एकलौते पुत्र को उस हर आतंक के साथ कुचल दिया जो उन लोगों पर पड़ना था जिनके लिए वह मर गया। जब उसने परमेश्वर के मुख को देखने के लिए अपनी आँखें स्वर्ग की ओर उठाई तब उसके पिता ने मुंह फेर लिया। जब उसने पुकारा, "हे मेरे परमेश्वर, मेरे परमेश्वर, तू ने मुझे क्यों छोड़ दिया ?" तब उसके पिता ने न्यायाधीश के रूप में ऐसा उत्तर दिया कि मानों, "परमेश्वर, प्रभु तेरा परमेश्वर, तुझे शाप देता है।"[32] मसीह ने अपने लोगों के लिए व्यवस्थाविवरण 28 के शापों को उठा लिया।

> यहोवा तुझ पर तब तक शाप, घबराहट, और फटकार भेजेगा, जब तक तू नाश होकर शीघ्र मिट न जाए,[33]
>
> यहोवा तुझे पागल और अन्धा कर देगा, और तेरे मन को अत्यन्त घबरा देगा; और जैसे अन्धा अन्धियारे में टटोलता है वैसे ही तू दिन दुपहरी में टटोलता फिरेगा...... और तेरा कोई छुड़ानेवाला न होगा।[34]
>
> उसको तुम्हें नाश वरन सत्यानाश करने से हर्ष होगा; और जिस भूमि के अधिकारी होने को तुम जा रहे हो उस पर से तुम उखाड़े जाओगे।[35]
>
> अर्थात् शापित हो तू नगर में, शापित हो तू खेत में।[36]
>
> शापित हो तू भीतर आते समय, और शापित हो तू बाहर जाते समय।[37]
>
> और तेरे सिर के ऊपर आकाश पीतल का, और तेरे पाँव के तले भूमि लोहे की हो जाएगी।[38]
>
> और उन सब जातियों में जिनके मध्य में यहोवा तुझको पहुँचाएगा, वहाँ के लोगों के लिये तू चकित होने का, और दृष्टान्त और शाप का कारण समझा जाएगा।[39]

> तू जो अपने परमेश्वर यहोवा की दी हुई आज्ञाओं और विधियों के मानने को उसकी न सुनेगा, इस कारण ये सब शाप तुझ पर आ पड़ेंगे, और तेरे पीछे पड़े रहेंगे, और तुझ को पकडेंगे, और अन्त में तू नष्ट हो जाएगा।[40]

जब मसीह ने हमारे पाप को कल्वरी पर उठा लिया, तब वह ऐसे मनुष्य के रूप में शापित ठहरा जो मूर्ति खुदवाकर या ढ़लवाकर निराले स्थान में स्थापन करता है।[41] वह ऐसे मनुष्य के समान शापित ठहरा जो अपने माता–पिता को तुच्छ जानता है, जो अपने पड़ोसी की सीमा को हटाता है, या अन्धे व्यक्ति को मार्ग से भटकाता है।[42] उसे ऐसे शापित ठहराया गया था मानो उसने परदेशी, विधवा, या अनाथ का न्याय बिगाड़ा हो।[43] उसे ऐसे मनुष्य के रूप में शापित ठहराया गया था जो हर प्रकार की अनैतिकता और दोष का अपराधी हो, जो अपने पड़ोसी को छिपकर मारता है, या निर्दोष पर वार करने के लिए धन लेता है।[44] उसे ऐसे मनुष्य के रूप में शापित ठहराया गया था जो व्यवस्था के वचनों को मानकर पूरा न करे।[45] नीतिवचनों के बुद्धिमान ने लिखा, "जैसे गौरिया घूमते–घूमते और सूपाबेनी उड़ते–उड़ते नहीं बैठती, वैसे ही व्यर्थ शाप नहीं पड़ता।"[46] परन्तु, शाप डाली पर पड़ा, उसके चरित्र के किसी दोष या उसके कामों की किसी भूल के कारण नहीं, परन्तु इसलिए कि उसने अपने लोगों के पापों को उठा लिया और उनके अधर्म को परमेश्वर के न्यायपीठ के सामने ले गया।[47] वहाँ वह ईश्वरीय न्याय के प्रत्येक दुष्प्रभाव के अधिन अनावृत्त, असुरक्षित और निर्बल था। दाऊद ने पुकारकर कहा, "क्या ही धन्य है वह जिसका अपराध क्षमा किया गया, और जिसका पाप ढ़ाँपा गया हो। क्या ही धन्य है वह मनुष्य जिसके अधर्म का यहोवा लेखा न ले, और जिसकी आत्मा में कपट न हो।"[48] तो भी क्रूस पर, मसीह पर लादा गया पाप परमेश्वर के सामने और स्वर्ग की सेना के सामने उजागर था। लोगों के सामने उसका खुल्लमखुल्ला तमाशा बनाया गया और स्वर्गदूतों और दुष्टात्मा दोनों के सामने उसका तमाशा बन चुका था।[49] जिन अपराधों का भार उसने उठा लिया उनकी उसे क्षमा नहीं की गई थी, और जिन पापों को उसने उठाया उन्हें ढाँपा नहीं गया था। यदि किसी मनुष्य को अपराधी न ठहराए जाने के कारण उसे धन्य कहा जाता है, तो मसीह बेपरिमाण रूप से शापित ठहरा क्योंकि हमारे अधर्म का बोझ उस पर लाद दिया गया।[50] इस कारण, उसके साथ वाचा तोड़नेवाले के समान व्यवहार किया गया जिसके विषय में मवाब में मूसा की वाचा के नवीनीकरण के समय कहा गया :

> यहोवा उसका पाप क्षमा नहीं करेगा, वरन् यहोवा के कोप और जलन का धूआँ उसको छा लेगा, और जितने शाप इस पुस्तक में लिखें हैं वे सब उस पर आ पडेंगे, और यहोवा उसका नाम धरती पर से मिटा देगा। और व्यवस्था की इस पुस्तक में जिस वाचा की चर्चा है उसके सब शापों के अनुसार यहोवा उसको

इस्त्राएल के सब गोत्रों में से हानि के लिये अलग करेगा।[51]

कल्वरी पर मसीह को विपत्ति के लिए चुन लिया गया था, और व्यवस्था की पुस्तक में लिखा गया प्रत्येक शाप उस पर आ पड़ा। अब्राहम के इस वंश में, पृथ्वी की सारी जातियाँ आशीषित हैं, परन्तु केवल इसलिए क्योंकि इस पृथ्वी पर रहने वाले अन्य किसी भी मनुष्य से अधिक वह शापित ठहरा।[52] गिनती की पुस्तक में आशीष की अत्यन्त सुन्दर प्रतिज्ञाओं में से एक पाई जाती है जो परमेश्वर द्वारा मनुष्य को दी गई हैं। इसे याजकीय या हारून की आशीष कहा जाता है : "यहोवा तुझे आशीष दे और तेरी रक्षा करे; यहोवा तुझ पर अपने मुख का प्रकाश चमकाए, और तुझ पर अनुग्रह करे; यहोवा अपना मुख तेरी ओर करे, और तुझे शान्ति दे।"[53] यद्यपि यह अत्यन्त सुन्दर और कृपापूर्ण आशीष है, फिर भी वह हमारे समक्ष एक बड़ी धर्म सैद्धान्तिक और नैतिक समस्या खड़ी करती है। धर्मी परमेश्वर अपनी धार्मिकता के साथ समझौता किए बगैर कैसे पापी लोगों को ऐसी की आशीष दे सकता है ?फिर से, हम इसका उत्तर क्रूस पर पाते हैं। पापी व्यक्ति को केवल इसलिए आशीष दी जा सकती है क्योंकि वह परम पवित्र और धर्मी मनुष्य (यीशु) शाप ठहरा।[54] परमेश्वर की ओर से कोई भी और हर एक आशीष जो उसके लोगों को अब तक दी गई है वह केवल इसलिए क्योंकि, कांठ पर, इस याजकीय आशीष से बिल्कुल विपरीत मसीह ने पाया।[55] "यहोवा तुझे आशीष दे," यह हमारे विषय में केवल इसलिए कहा गया, क्योंकि उसे कहा गया, "यहोवा तुझे शाप दे, और तुझे विनाश के हाथ सौंप दे; प्रभु तुझ से अपनी उपस्थिति का प्रकाश हटा ले और तुझे दण्डित करे; प्रभु तुझ से मुंह फेर ले और तुझे दुख से भर दे।"

भजन के लेखक इस आशीषित मनुष्य का वर्णन उन लोगों के रूप में करते है जो परमेश्वर के सम्मुख हर्ष और आनन्द से भर दिए गए हैं, जो आनन्द की ललकार को पहिचानते है और जो उसके मुख के प्रकाश में चलते हैं।[56] हमारे लिए, मसीह को अपने पिता की अनुपस्थिति से दुखी कर दिया गया। उसने न्याय की तुरही का डरावना शब्द जान लिया, और वह परमेश्वर के असहनीय शिकन से भरे मुख के अन्धकार में लटका था। आदम के दुर्भाग्यपूर्ण चुनाव के कारण, भ्रष्टता और व्यर्थता ने सम्पूर्ण सृष्टि को अपना गुलाम बना लिया और वह शाप के अधीन कराहने लगी।[57] सृष्टि के छुटकारे के लिए अन्तिम आदम ने स्वयं ही अपने लोगों के पापों को उठा लिया और भयानक जुए के नीचे कराह उठा : "मसीह ने, जो हमारे लिए शापित बना, हमें मोल लेकर व्यवस्था के शाप से छुड़ाया।"[58]

यह सबसे बड़ी विड़ंबना है कि "क्रूस पर मसीह की पुकार" रूमानीयत की घिसी–पिटी उक्ति में खो जाती है। प्रचारक को यह प्रचार करते हुए सुनना असामान्य बात नहीं है कि पिता ने

अपने पुत्र से मुंह फेर लिया क्योंकि दुष्ट मनुष्यों द्वारा उस पर लादे गए क्लेश को देखना उसके लिए असहनीय हो गया था। जैसा कि हमने सीखा है, इस प्रकार की व्याख्या पवित्र शास्त्र के वचन का और क्रूस पर वास्तव में जो कुछ हुआ उसकी सत्यता को पूरी तरह से तोड़–मरोड कर पेश करना है। पिता ने अपने पुत्र से इसलिए मुंह नहीं फेर लिया क्योंकि उसके क्लेश को देखने का साहस उस में नहीं था, परन्तु इसलिए क्योंकि "जो पाप से अज्ञात था, उसी को उसने हमारे लिए पाप ठहराया कि हम उस में होकर परमेश्वर की धार्मिकता बन जाएँ।"[59] उसने हमारे पापों को उस पर रखा और मुंह फेर लिया, क्योंकि उसकी आँखें ऐसी शुद्ध हैं कि वह बुराई को सही नहीं ठहरा सकता और न उत्पात का पक्ष ले सकता है।[60]

यह निःसंदेह भला अभिप्राय है कि कई सुसमाचार के पर्चे पवित्र परमेश्वर और पापी मनुष्य के मध्य एक अथाह कुण्ड या अलगाव का चित्र प्रस्तुत करते हैं। ऐसे चित्रों के साथ पवित्र शास्त्र पूर्ण रूप से सहमत है। जैसा कि भविष्यद्वक्ता यशायाह ने पुकारा : "सुनो, यहोवा का हाथ ऐसा छोटा नहीं हो गया कि उद्धार न कर सके, न वह ऐसा बहिरा हो गया है कि सुन न सके।"[61] इस पद और अन्य कई पदों के अनुसार, सभी मनुष्यों को परमेश्वर की अनुकूल उपस्थिति से अलग होकर और ईश्वरीय क्रोध के अधीन जीना और मरना अवश्य है। इस कारण, परमेश्वर का पुत्र हमारे बदले में खड़ा हुआ, उसने हमारे पापों को उठा लिया, और "परमेश्वर द्वारा त्यागा गया।" इस दरार को मिटाने के लिए और संगति को फिर स्थापित करने के लिए, "क्या अवश्य न था कि मसीह ये दुख उठाकर अपनी महिमा में प्रवेश करे?"[62]

मसीह ने परमेश्वर के क्रोध को सह लिया

अपने लोगों का उद्धार प्राप्त करने के लिए, मसीह ने परमेश्वर के भयावह त्याग को सह लिया, परमेश्वर के क्रोध का कड़वा प्याला पी लिया, और अपने लोगों के बदले में खून से सनी मृत्यु मर गया। केवल तब ईश्वरीय न्याय सन्तुष्ट हो सका, परमेश्वर का क्रोध शान्त हो सका और मेलमिलाप सम्भव हो सका।

बाग में, मसीह ने तीन बार प्रार्थना की कि यह कटोरा उस से दूर हटा लिया जाए, परन्तु हर बार उसकी इच्छा पिता की इच्छा के अधीन हो गई।[63] हमें स्वयं से प्रश्न पूछना चाहिए कि उस कटोरे में क्या था जिस से वह इतने अनुरोध के साथ प्रार्थना करने विवश हुआ ? उसमें कौन सी भयावह चीज थी कि उसे इतनी पीड़ा हुई कि उसका पसीना लोहू के साथ मिलकर निकल आया ?[64]

अकसर कहा जाता है कि वह कटोरा निर्दयी रोमी क्रूस और उसके बाद आगे आने वाली

शारीरिक यातना का प्रतीक था – कि मसीह ने उसके पीठ पर पड़ने वाले कोड़ों की मार को, उसके माथे पर चुभने वाले काँटों के ताज को और उसके हाथों और पाँवों में ठोके जाने वाले उन प्राचीन कीलों को पहले से ही देख लिया। परन्तु, जो यह विश्वास करते हैं कि यह बातें उसकी पीड़ा का कारण थे, वे क्रूस को या वहाँ जो हुआ उसे नहीं समझते। यद्यपि मनुष्य के हाथों उस पर यातनाओ का अम्बार लादा गया, वे सभी परमेश्वर की उद्धार की योजना का भाग थी, इस के बावजूद उस से भी अधिक अनिष्ठ सूचक कोई बात थी जिस कारण वह छुटकारे की पुकार के लिए प्रवृत्त हुआ।

प्रारम्भिक कलीसिया की पहली सदी में, हजारों मसीही लोग क्रूस पर मर गए। कहा जाता है कि नीरो ने उन्हें उल्टा टांग दिया था, उन पर राल पोत दी थी, और रोम शहर की सड़कों को रौशनी देने के लिए उन्हें आग लगा दी थी। उस समय से कई युगों में, असंख्य मसीही लोगों ने अवर्णनीय यातनाओं का अनुभव किया है, और फिर भी मित्र और शत्रु दोनों की समान गवाही है कि उन में से कईयों ने बड़े साहस के साथ अपनी मृत्यु का सामना किया। क्या हमें इस पर विश्वास करना चाहिए कि मसीह के अनुयायियों ने इस प्रकार की दर्दनाक शारीरिक मृत्यु का सामना अवर्णनीय आनन्द के साथ किया जबकि उनके उद्धार का कप्तान उसी यातना से भयभीत होकर गतसमनी के बगीचे में दुबककर बैठा रहा ?[65] क्या परमेश्वर का मसीह कोड़ों की मार से और काँटों से, क्रूस और भालों से डर गया, या क्या वह कटोरा मनुष्य के सबसे अधिक क्रूरता के असीम आतंक का प्रतीक था ?

उस कटोरे में समाहित अनिष्ट सूचक बात को समझने के लिए, हमें पवित्र शास्त्र का सन्दर्भ लेना होगा। विशेषकर दो अनुच्छेद हैं जिनका हमें विचार करना चाहिए – एक है भजन की पुस्तक से और दूसरा है भविष्यद्वक्ताओं की पुस्तक से : "यहोवा के हाथ में एक कटोरा है, जिस में का दाखमधु झागवाला है; उस में मसाला मिला है, और वह उस में से उण्डेलता है, निश्चय उसकी तलछट तक पृथ्वी के सब दुष्ट लोग पी जाएँगे।"[66] और, "इस्राएल के परमेश्वर यहोवा ने मुझ से यों कहा, मेरे हाथ से इस जलजलाहट के दाखमधु का कटोरा लेकर उन सब जातियों को पिला दे जिनके पास मैं तुझे भेजता हूँ। वे उसे पीकर उस तलवार के कारण जो मैं उनके बीच में चलाऊँगा लड़खड़ाएँगे और बावले हो जाएँगे।"[67]

दुष्ट के अथक विद्रोह के परिणामस्वरूप, परमेश्वर के न्याय ने उनके विरोध में दण्ड की घोषणा की थी। वह उचित ही राष्ट्रों पर अपना क्रोध उण्डेलेगा। वह अपने क्रोध का दाखमधु उनके मुँह पर लगाएगा और उन्हें पूरा का पूरा पीने पर विवश करेगा।[68] संसार पर आने वाले इस प्रकार के अन्त का विचार करना भी पूर्ण रूप से भयावह है, तौभी सभों का यही अन्तिम परिणाम होता – यदि

परमेश्वर की करूणा ने लोगों के उद्धार की खोज न की होती, और परमेश्वर ने अपने ज्ञान से जगत की उत्पत्ति से पहले छुटकारे की योजना तैयार न की होती।[69] परमेश्वर का पुत्र मनुष्य बनने वाला था और परमेश्वर की व्यवस्था के पूर्ण आज्ञापालन में इस पृथ्वी पर जीवन बिताने वाला था। वह सब बातों में हमारे समान होने वाला था, हमारे समान सारी बातों में परखा जाने वाला था – फिर भी निष्पाप होता।[70] वह परमेश्वर की महिमा के लिए और अपने लोगों के लाभ के लिए सिद्ध धार्मिकता का जीवन बिताने वाला था। और फिर नियुक्त समय में, वह दुष्ट मनुष्यों के हाथों क्रूस पर चढ़ाया जाएगा, और क्रूस पर उसके लोगों के अपराध को उठा लेगा और उनके विरोध में परमेश्वर के क्रोध को सह लेगा। आदम का सच्चा पुत्र, जो परमेश्वर का सच्चा पुत्र भी था, परमेश्वर के हाथ से क्रोध का कड़वा प्याला लेगा और उसे तलछट तक पी लेगा। वह उसे तब तक पीएगा जब तक कि वह पूरा न हो जाए, और परमेश्वर का न्याय पूर्ण रूप से सन्तुष्ट न हो जाए।[71] जो ईश्वरीय क्रोध हम पर प्रकट होना चाहिए था, वह पुत्र पर उंडेला जाएगा, और उसके द्वारा वह शान्त होगा।

उस विशाल बान्ध की कल्पना कीजिए जो किनारों तक लबालब भरा हुआ है और उस पर होने वाले दबाव से पानी टपक रहा है। अचानक सुरक्षा की दीवार टूट जाती है और महाप्रलय की विनाशकारी शक्तिशाली सामर्थ मुक्त होती है। एक निश्चित विनाश छोटे से नजदीकी तराई के गाँव की ओर तेजी से आगे बढ़ता ही है कि अचानक उसके आगे जमीन खुल जाती है और जो उसे ~~बहाकर ले जाता उसे निगल लेती है।~~ उसी तरह, परमेश्वर का दण्ड भी उचित ही प्रत्येक मनुष्य की ओर आगे बढ़ रहा था। ऊँचे से ऊँचे पहाड़ पर भी बचने का रास्ता नहीं था और न गहरे गर्त में। अति शीघ्रगामी पाँव भी उसके आगे दौड़ नहीं सकते, न ही बलशाली तैराक उसकी धाराओं को सह पाता। बान्ध में दरार पड़ गई और कुछ भी उसके विनाशकारी खंडहर को सुधार नहीं सकता। परन्तु जब हर मानव आशा खत्म हो चुकी थी, तब नियुक्त समय में, परमेश्वर के पुत्र ने ईश्वरीय न्याय और उसके लोगों के बीच हस्तक्षेप किया। उसने क्रोध का वह कटोरा पी लिया जिसे स्वयं हम ने भडकाया था और उस दण्ड को सह लिया जिसके काबिल हम थे। जब वह मर गया, तब उस पुराने प्रलय की एक बूंद भी नहीं बची। उस ने हमारे लिए उसे पूरा पी लिया!

उन दो विशाल चक्की के पाटों की कल्पना करें जो एक दूसरे के ऊपर रखे हुए है। अब कल्पना करे कि उन दो पाटों के बीच गेहूँ का एक ही दाना है जो विशाल दबाव में दबा हुआ है। पहले तो, पत्थर उसका छिलका बिना कद्र किए पीसते हैं, उसके बाद अन्दर का हिस्सा उण्डेला जाता है और उनका चूरन बन जाता है। उनकी पुनःप्राप्ती या पुनर्रचना की कोई उम्मिद नहीं है। सब कुछ खो

चुका है और उसे दुरूस्त नहीं किया जा सकता। इस तरह, समान रूप से, प्रभु को यह भाया कि उसके एकलौते पुत्र को कुचले और उस पर अवर्णनीय दुख लाद दे।[72] इस प्रकार पुत्र को भाया कि वह स्वयं को उस पीड़ा के अधिन कर दे जिस से की परमेश्वर की महिमा हो और उसके लोगों को छुटकारा मिले।

हमें यह नहीं सोचना है कि पिता को अपने प्रिय पुत्र के क्लेश में कुछ आनन्दपूर्ण प्रसन्नता प्राप्त हुई, परन्तु उसकी मृत्यु के द्वारा, पिता की इच्छा पूरी हुई। और किसी साधन में पाप को दूर करने, ईश्वरीय न्याय को सन्तुष्ट करने, और हमारे विरोध में परमेश्वर के क्रोध को शान्त करने की सामर्थ नहीं थी। यदि वह ईश्वरीय गेहूँ का दाना जमीन में न गिरता और मर न जाता, तो वह लोगों के या दुल्हन के बगैर रह जाता।[73] क्लेश में कोई आनन्द नहीं था, परन्तु इस क्लेश के द्वारा जो पूरा होने वाला था, उस में आनन्द था : परमेश्वर उस महिमा में प्रगट होने वाला था जो अब तक मनुष्यों या स्वर्गदूतों के लिए अज्ञात थी, और एक प्रजा युगानुयुग के लिए परमेश्वर की संगति में लाई जाने वाली थी।

एक बार, एक प्रिय प्यूरिटन लेखक जॉन फ्लैवेल ने पतित मानवजाति के सम्बन्ध में और छुटकारा पाने के लिए आवश्यक बड़ी कीमत के सम्बन्ध में पिता और पुत्र के बीच संवाद लिखा। यह क्रूस की सच्ची पीड़ा और पिता और पुत्र का प्रेम जिसने उसे अपनाने के लिए पुत्र को प्रेरित किया उसे बड़ी सुन्दरता के साथ चित्रित करता है। फ्लैवेल लिखते हैं :

> यहाँ पर आप पिता को कहते हुए मान सकते हैं, जब वह तुम्हारे लिए मसीह के साथ सौदा करता है –
>
> पिता : मेरे बेटे, यहाँ पर कुछ दीन और अभागे लोगों का समूह है, जो अपने आप को विनाश की खाई में पहुँचा चुके है, और अब मेरे न्याय के पात्र है! न्याय उनके लिए सन्तुष्टि चाहता है, या उनके सार्वकालिक विनाश में खुद को सन्तुष्ट करेगा : इन आत्माओं के लिए क्या किया जा सकता है ?
>
> और प्रतिसाद में मसीह इस प्रकार उत्तर देता है।
>
> पुत्र : हे मेरे पिता, उनके लिए मेरा प्रेम और दया ऐसे हैं कि बजाए इसके कि युगानुयुग के लिए उनका नाश हो जाए, मैं जमानत के तौर पर उनके लिए जिम्मेदार रहूँगा; उनके कर्ज के सारे कागजात ले आ, कि मैं देख सकूँ कि वे तेरे कितने कर्जदार हैं; प्रभु वे सब मेरे पास ले आ, तांकि उनका बाद में हिसाब न रखा

जा सके; तू उनका लेखा मुझ से लेना। उन्हें वह क्रोध सहना पड़े, इसके बदले मैं वह क्रोध सहने का चुनाव करूँगा; मुझ पर मेरे पिता, मुझ पर उनका सारा कर्ज हो।

पिता : परन्तु, मेरे बेटे, यदि तू उनके लिए जिम्मेदारी उठाता है, तो तुझे अन्तिम पाई तक चुकनी होगी, किसी कर्ज के कम होने की अपेक्षा मत करना; यदि मैं उन्हें बचाऊँगा, तो मैं तुझे नहीं बचाऊँगा।

पुत्र : पिता, मैं इससे सन्तुष्ट हूँ। ऐसा ही होने दें; सारा अभियोग मेरे विरूद्ध लगा, मैं उसे चुकाने समर्थ हूँ और यह भले ही मेरे लिए एक तरह का विनाश साबित होता है, भले ही इससे मेरी सारी सम्पत्ति नष्ट हो जाती है, मेरा सारा खजाना खाली हो जाता है, तो भी मैं उसे स्वीकार करने से सन्तुष्ट हूँ![74]

लोग कभी कभी सोचते हैं और प्रचार भी करते हैं कि पिता ने स्वर्ग से देखा, मनुष्यों द्वारा उसके पुत्र पर लादे गए क्लेशों को देखा, और उनके पापों के दण्ड के रूप में उस क्लेश की गिनती की। यह सरासर झुठीं शिक्षा है। मसीह ने मनुष्यों के क्लेशों को सहकर न केवल ईश्वरीय न्याय को सन्तुष्ट किया, बल्कि परमेश्वर का क्रोध भी सह लिया। पाप का दण्ड चुकाने के लिए क्रूस, कीलों, काँटों के मुकुट, और भालें से अधिक किसी बात की आवश्यकता है। विश्वासी का उद्धार हो गया है – क्रूस पर मनुष्यों ने मसीह के साथ जो किया केवल उसके कारण नहीं, परन्तु परमेश्वर ने उसके साथ जो कुछ किया उस कारण : अर्थात् उस ने हमारे विरोध में भड़के अपने क्रोध की पूरी सामर्थ्य से उसे कूचल दिया।[75] हमारा सुसमाचार प्रचार इस सत्य को विरले ही पर्याप्त रूप से स्पष्ट करता है।

परमेश्वर प्रयोजन करेगा

पुराने नियम के अत्यन्त महत्वपूर्ण विवरणों में से एक में, परमेश्वर ने पूर्वज अब्राहम को यह आज्ञा दी कि वह अपने एकलौते पुत्र इसहाक को मोरिय्याह पर्वत पर ले जाकर वहाँ उसे बलिदान के रूप में चढ़ाए। और उसने कहा, "अपने पुत्र को अर्थात् अपने एकलौते पुत्र इसहाक को, जिससे तू प्रेम रखता है, संग लेकर मोरिय्याह देश में चला जा; और वहाँ उसको एक पहाड़ के ऊपर जो मैं तुझे बताऊँगा होमबलि करके चढ़ा।"[76]

अब्राहम कैसा बोझ लेकर चल रहा था! उस वृद्ध व्यक्ति के हृदय में कितना दुख होगा और हर कदम पर कैसे उसे पीड़ा होती होगी इसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। पवित्र शास्त्र बड़ी

सावधानी से हमें बताता है कि उसे आज्ञा दी गई थी कि वह "अपने पुत्र को अर्थात् अपने एकलौते पुत्र इसहाक को, जिससे तू प्रेम रखता है," बलिदान चढ़ाए। ऐसा प्रतित होता है कि इस भाषा की विशिष्टता हमारा ध्यान आकर्षण करने के लिए तैयार की गई है और हमें यह सोचने पर विवश करती है कि यहाँ पर छिपा हुआ और भी गहन अर्थ है जो पहली नजर में नहीं दिखाई देता। यह मनुष्य और उसका पुत्र, एक महान पिता की, एक महान पुत्र की और एक महान बलिदान की केवल छाया या प्रतीक हैं!

तीसरे दिन, दोनों नियुक्त स्थान पर पहुँच गए, पिता ने अपने प्रिय पुत्र को अपने हाथों से बान्ध दिया। अन्त में, जो कुछ भी किया जाना चाहिए था, उस के अनुसार उस ने अपना हाथ बेटे के माथे पर रखा और "उसे मारने के लिए छूरा उठाया।"[77] उसी क्षण, परमेश्वर की दया ने हस्तक्षेप किया और उस वृद्ध मनुष्य का हाथ रुक गया। परमेश्वर ने उसे स्वर्ग से पुकार कर कहा, "अब्राहम, हे अब्राहम....... उस लड़के की ओर हाथ न बढ़ा और न ही उसे कोई हानी पहुँचा। क्योंकि तूने मेरे लिए अपने पुत्र, अर्थात् अपने एकलौते पुत्र को भी नहीं रख छोड़ा; इस से मैं अब जान गया कि तू परमेश्वर से डरता है।"[78]

परमेश्वर की वाणी सुनकर अब्राहम ने अपनी आँखें उठाई और एक मेंढ़ा अपने सींगों से एक झाड़ी में फँसा हुआ पाया। उसने वह मेंढ़ा लिया और उसे अपने पुत्र के बदले में चढ़ाया।[79] फिर उसने उस स्थान का नाम यहोवा यिरे या "परमेश्वर प्रबंध करेगा" रखा। इस तरह, आज तक इस विश्वासयोग्य बात के विषय में कहा जाता है कि "यहोवा के पहाड़ पर उपाय किया जाएगा।"[80]

जैसे ही इतिहास के इस महत्वपूर्ण क्षण पर पर्दा गिरता है, वैसे ही न केवल अब्राहम, बल्कि वह प्रत्येक जिस ने यह विवरण पढ़ा हो, राहत की सांस लेता है कि वह लड़का बच गया। हम अपने आप में सोचते हैं, "यह कहानी का क्या ही प्यारा अन्त है", परन्तु यह अन्त नहीं था – यह मात्र विराम था!

दो हजार सालों बाद, पर्दा फिर खुल जाता है। पृष्ठभूमि अन्धकारमय और अमंगलसूचक है। परमेश्वर का पुत्र कल्वरी के पहाड़ पर बीच मंच में है। प्रेम पूर्ण आज्ञाकारिता उसे पिता की इच्छा से बान्ध देती है। वह वहाँ पर अपने लोगों के पाप उठाकर लटका हुआ है। वह शापित है – अपनी ही सृष्टि द्वारा धोखे से पकड़वाया गया और परमेश्वर का त्यागा हुआ।[81] फिर परमेश्वर के क्रोध की डरावनी गर्जन उस शान्ति को भंग करती है। फिर पिता छूरा निकालता है, अपना हाथ उठाता है और "अपने पुत्र, अपने एकलौते पुत्र, जिस से वह प्रेम करता है," का वध करता है, और यशायाह भविष्यद्वक्ता के शब्दों को पूरा करता है : "निश्चय उस ने हमारी पीड़ाओं को आप सह लिया और

हमारे दु:खों को उठा लिया; तौभी हम ने उसे परमेश्वर का मारा–कूटा और दुर्दशा में पड़ा हुआ समझा। परन्तु वह हमारे ही अपराधों के कारण घायल किया गया, वह हमारे अधर्म के कामों के लिए कुचला गया; हमारी ही शान्ति के लिये उस पर ताड़ना पड़ी, उसके कोड़े खाने से हम चंगे हुए....... तौभी यहोवा को यही भाया कि उसे कुचले; उसी ने उसको पिड़ित किया।"[82]

परमेश्वर के वध किए हुए पुत्र, क्रूस पर चढ़ाए गए मसीह पर पर्दा खींच दिया जाता है, ताकि नरक के योग्य पापियों के लिए स्वर्ग का द्वार खुल सके। इसहाक के वर्णन के विपरीत, उसके बदले में मरने के लिए कोई मेंढ़ा नहीं था। वह मेम्ना है जो जगत के पापों के लिए मर गया।[83] वह उस के लोगों के छुटकारे के लिए परमेश्वर का प्रयोजन है। इसहाक और मेंढ़ा जिस बात की छाया मात्र हैं, उसकी वह परिपूर्ती है। उस में, गुलगुता की उस भयानक पहाड़ी का नाम फिर से अब यहोवा यिरे या "परमेश्वर प्रबंध करेगा" रखा गया है। और आज तक यह विश्वासयोग्य बात बनी रहती है कि "यहोवा के पहाड़ पर उपाय किया जाएगा।"[84]

कल्वरी वह पहाड़ है और उद्धार वह प्रयोजन है। परमेश्वर ने अब्राहम को एक बार पुकार कर कहा, "हे अब्राहम, अब्राहम... तू ने जो मुझ से अपने पुत्र, वरन अपने एकलौते पुत्र को भी नहीं रख छोड़ा; इस से मैं अब जान गया कि तू परमेश्वर का भय मानता है।"[85] हम में से जो विश्वास करते हैं अब इन्हीं शब्दों के साथ पुकार उठते है : "हे परमेश्वर, मेरे परमेश्वर, तू ने जो मुझ से अपने पुत्र, वरन अपने एकलौते पुत्र को जिसे तू प्रेम करता है, नहीं रख छोड़ा; इस से मैं अब जान गया कि तू मुझ से प्रेम करता है।"[86]

मसीह अब मर चुका है, परन्तु अन्त अभी नहीं है। एक और दृश्य बाकी है...... पुनरूत्थान और बड़ा राज्याभिषेक!

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

* अजाजेल यह एक इब्रानी शब्द है जिसका अर्थ ''दूर करने वाला बकरा'' है

1. मरकूस 15:34
2. मरकूस 15:34
3. भजन संहिता 22:1
4. भजन संहिता 22:6
5. यशायाह 53:5–6
6. लूका 24:26
7. गिनती 21:5–9

8. मत्ती Henry, *Mathew Henry's Commentary on the Whole Bible* (Peabody, Mass.: Hendrickson, 1991), 1:665.
9. रोमियों 8:3; 2 कुरिन्थियों 5:21
10. 1 यूहन्ना 5:10–11
11. यशायाह 45:22 KJV
12. लैव्यव्यवस्था 16:5–10
13. लैव्यव्यवस्था 16:9, 15, 20
14. लैव्यव्यवस्था 16:10
15. लैव्यव्यवस्था 16:21
16. 1 पतरस 2:24; इब्रानियों 13:11–12
17. भजन संहिता 103:12
18. 2 कुरिन्थियों 5:21; गलातियों 3:13
19. यशायाह 6:2–3
20. कुलुस्सियों 2:9
21. I owe this thought to John Calvin and his commentary on 2 कुरिन्थियों 5:21.
22. 2 कुरिन्थियों 5:21
23. 1 पतरस 1:19; इफिसियों 5:2
24. इब्रानियों 7:26
25. गलातियों 3:10; व्यवस्थाविवरण 27:26
26. paraphrase of मत्ती 5:3–12
27. गलातियों 3:13
28. व्यवस्थाविवरण 21:23
29. Richard N. Longenecker, गलातियों, vol. 41 of Word Biblical Commentary (Waco, Tex.: Word Books, 1990), 122–23.
30. व्यवस्थाविवरण 28:1
31. व्यवस्थाविवरण 28:15
32. I owe this thought to R.C. Sproul and his sermon on गलातियों 3:13 preached at the 2008 Together for the Gospel Conference.
33. व्यवस्थाविवरण 28:20
34. व्यवस्थाविवरण 28:28–29
35. व्यवस्थाविवरण 28:63
36. व्यवस्थाविवरण 28:16
37. व्यवस्थाविवरण 28:19
38. व्यवस्थाविवरण 28:23
39. व्यवस्थाविवरण 28:37
40. व्यवस्थाविवरण 28:45
41. व्यवस्थाविवरण 27:15
42. व्यवस्थाविवरण 27:16–18
43. व्यवस्थाविवरण 27:19
44. व्यवस्थाविवरण 27:20–25
45. व्यवस्थाविवरण 27:26
46. नीतिवचन 26:2
47. यशायाह 11:1
48. भजन संहिता 32:1–2
49. रोमियों 3:25: “displayed publicly.”
50. यशायाह 53:6

51. व्यवस्थाविवरण 29:20–21
52. उत्पत्ति 12:3
53. गिनती 6:24–26
54. प्रेरितों के काम 3:14
55. गिनती 6:22–27. I owe this thought to R. C. Sproul and his sermon on गलातियों 3:13 preached at the 2008 Together for the Gospel Conference.
56. भजन संहिता 21:6; 89:15
57. रोमियों 8:20–22
58. गलातियों 3:13
59. 2 कुरिन्थियों 5:21
60. यशायाह 53:6; हबक्कूक 1:13
61. यशायाह 59:1
62. लूका 24:26
63. लूका 22:41–44
64. लूका 22:44
65. इब्रानियों 2:10
66. भजन संहिता 75:8
67. यिर्मयाह 25:15–16
68. तलछट (Dregs) मद्यपात्र में शेष बचा अवशेष (residue) या नीचे बचा पदार्थ है।
69. मत्ती 25:34; इफिसियों 1:4; 1 पतरस 1:20; प्रकाशित वाक्य 13:8; 17:8
70. इब्रानियों 2:17; 4:15
71. यूहन्ना 19:30
72. यशायाह 53:10
73. यूहन्ना 12:24
74. यूहन्ना Flavel, *The Fountain of Life: A Display of Christ in His Essential and Mediatorial Glory*, in *The Works of* यूहन्ना *Flavel* (London: Banner of Truth, 1968), 1:61.
75. यशायाह 53:10
76. उत्पत्ति 22:2, emphasis added
77. उत्पत्ति 22:10
78. उत्पत्ति 22:11–12
79. उत्पत्ति 22:13
80. उत्पत्ति 22:14
81. यूहन्ना 1:11; प्रेरितों के काम 3:14; मत्ती 27:46
82. यशायाह 53:4–5, 10
83. यूहन्ना 1:29
84. उत्पत्ति 22:14
85. उत्पत्ति 22:11–12
86. उत्पत्ति 22:12; रोमियों 8:32

अध्याय – 21

परमेश्वर की सच्चाई

उसी को परमेश्वर ने उसके लोहू में विश्वास के द्वारा प्रायश्चित ठहरा कर खुल्लमखुल्ला प्रदर्शित किया। यह उसकी धार्मिकता को प्रदर्शित करने के लिए हुआ, क्योंकि परमेश्वर ने अपनी सहनशीलता में, पहिले किए गए पापों को भूला दिया; यह उसने इसलिए किया कि वर्तमान समय में उसकी धार्मिकता प्रदर्शित हो कि वह स्वयं ही धर्मी ठहरे और उसका भी धर्मी ठहराने वाला हो जो यीशु पर विश्वास करता है। – रोमियों 3:25–26

रोमियों 3:25–26 के आरम्भ में ही हमें बताया गया है कि यह परमेश्वर की इच्छा थी कि वह अपने पुत्र को कल्वरी के क्रूस पर टांग दे, उसे खुल्लम–खुल्ला प्रकट करे, उसका प्रदर्शन करे। जैसा कि हम पहले ही कह चुके है, इतिहास के निर्धारित समय पर, परमेश्वर ने उसे विश्व के धार्मिक केन्द्र के चौराहे पर काठ पर ऊँचा उठाया ताकि सब उसे देख सके।[1] हमारे सन्दर्भपद के अनुसार, अपने पुत्र के बलिदान के लिए परमेश्वर ने यह सबसे सार्वजनिक स्थान इसलिए चुना ताकि वह सदा के लिए यह दिखा सके कि वह धर्मी परमेश्वर है, और उसके द्वारा वह अपनी सच्चाई प्रमाणित कर सके। फिर भी, हमें यह प्रश्न पूछने की आवश्यकता है, इस सच्चाई को प्रमाणित करना क्यों आवश्यक था?[2] उपर्युक्त वचन हमें इसका कारण बताता है : "क्योंकि परमेश्वर ने अपनी सहनशीलता में, पहिले किए गए पापों को भुला दिया।"[3]

प्रेरित पौलुस के अनुसार, यह आवश्यक था कि परमेश्वर अपनी सच्चाई प्रमाणित करे या अपनी धार्मिकता को साबित करे, क्योंकि अपनी सहनशीलता में उसने अपने लोगों के पापों को भुला दिया और उनका न्याय नहीं किया या वह दण्ड नहीं दिया जिसके वे योग्य थे। सम्पूर्ण मानव इतिहास में, उसने उन असंख्य लोगों को अनुग्रह दिखाया है और क्षमा प्रदान की है जिन्हें उसने संसार से बुलाया और अपनी प्रजा कहा। परन्तु, ऐसा करके, उसने स्वयं पर अन्याय के असंख्य दोषारोपन के लिए अवसर दिया : धर्मी परमेश्वर कैसे दुष्ट को क्षमा प्रदान कर सकता है, और कैसे सचमुच पवित्र परमेश्वर उन्हें अपनी संगति में बुला सकता है ?यदि परमेश्वर धर्मी है, तो उसने न्याय क्यों नहीं

किया ? किस आधार पर उसने पुराने नियम के सन्तों की उस बड़ी भीड़ के अपराध क्षमा किए ? पवित्र शास्त्र की यह स्पष्ट गवाही है कि बैलों और बकरों के प्राचीन रक्तरंजित बलिदानों में पाप को उठा लेने की सामर्थ नहीं थी।[4] फिर परमेश्वर उन्हें कैसे क्षमा कर सका ?क्या उन के पाप को भूला देना यह साबित करता है कि वह धर्मी नहीं है ? क्या यह इस बात को दर्शाता है कि वह बुराई के प्रति उदासीन है जिसकी वह अनदेखी करे या वह अपनी सनक में आकर क्षमा कर दे ?क्या स्वर्ग के परमेश्वर ने उन लोगों को क्षमा देकर अपने न्याय के साथ समझौता किया है जिन्हें उचित ही न्याय के अनुसार दण्ड दिया जाना चाहिए था ?[5] क्या समस्त पृथ्वी का न्यायी उचित न्याय नहीं करेगा ?[6]

कल्वरी का क्रूस इन सभी प्रश्नों के उत्तर देता है। वहाँ पर परमेश्वर ने अपने लोगों के पापों को अपने एकलौते पुत्र के सिर पर लाद दिया। वहाँ पर परमेश्वर का न्याय जो सब युगों के लोगों के लिए बाकी था – भूत, वर्तमान और भविष्य – नासरत के यीशु पर उण्डेला गया। पुराने नियम के समय में क्षमा किए गए पहिले मनुष्य से लेकर जगत के अन्त तक क्षमा किए गए अन्तिम मनुष्य तक, वे सभी इस सच्चाई के कारण कि मसीह उनके पापों के लिए मर गया, पापक्षमा के लिए कर्जदार हैं। क्रूस के माध्यम से मानो परमेश्वर ने अपने दोष लगाने वालों को घोषित किया :

> क्या तूम मुझ से इस बात पर सवाल करोंगे कि मैं महाप्रलय–पूर्व के उस अधर्मी युग के लोगों को भी बुलाकर उन्हें कैसे अपने लोग कह सका ? मैंने नूह को बचाया इसलिए क्या तूम मुझ से चाहते हो कि मैं तुम्हें उसका स्पष्टीकरण दू, जबकि वास्तव में उसे भी महाप्रलय में मर जाना चाहिए था ?मैंने मूर्तिपूजक अब्राम को उर के पापी नगर से बुलाकर उसे धर्मी ठहराया, और उसे मेरा मित्र कहा तो क्या तूम मुझ से इस बात का लेखा लोंगे? क्या तुम्हें इस बात पर आश्चर्य है कि मैंने इस्राएल राष्ट्र के बचे हुओं को उद्धार दिया और उन्हें मेरी विशेष मिरास के रूप में अपनाया जबकि मुझे उनके पापों के कारण उनका इन्कार करना चाहिए था ?क्या तूम यह जानने का प्रयास करते हो कि मैं किस प्रकार दाऊद के अनगिनत पापों को क्षमा कर सका और उसे मेरा पुत्र कह सका ?
>
> तुम्हारे आरोप काफी समय तक चलते रहे हैं। मैंने अब तुम्हें मेरे प्रिय पुत्र के क्रूस के द्वारा उत्तर दिया है, जो जगत की उत्पत्ति से पहले ही मेरे लोगों के पापों के लिए मरने ठहराया गया था। मेरी सहनशीलता के लम्बे वर्षों में, मेरी आँखें उस काठ पर लगी थीं जहाँ पर वह उनके लिए दुख उठाने वाला था। पूर्व काल में मैंने जो कुछ उनके लिए किया वह सब मेरे पुत्र ने आज उनके लिए जो किया है उस पर आधारित था। हाँ, मैंने

दुष्ट मनुष्यों की एक बड़ी भीड को सेंतमेंत क्षमा कर दिया है, उनके अधर्म के कामों को मैंने क्षमा किया, उनके पापों को मैंने ढ़ाप दिया, और उनके अपराधों का मैंने लेखा नहीं लिया, परन्तु यह इसलिए क्योंकि मेरे प्रिय पुत्र के प्रायश्चितकारी कार्य के द्वारा उनके विरोध में न्याय की प्रत्येक मांग को मैंने सन्तुष्ट करने का संकल्प किया था!

कल्वरी का क्रूस प्रत्येक मुँह को बन्द करता है और परमेश्वर के विरोध में उठने वाले प्रत्येक आरोप को झूठा साबित करता है। उस काठ पर, उसने सिद्ध न्याय के साथ अपनी प्रजा के पापों को दण्ड दिया और बेपरिमाण प्रेम के साथ उनके अपराधों के लिए प्रायश्चित किया। काठ की उस वेदी पर, "करूणा और सच्चाई आपस में मिल गई है, धार्मिकता और मेल ने एक दूसरे का चुंबन लिया है।"[7] परमेश्वर ने स्वयं की धार्मिकता की सच्चाई को प्रमाणित किया है। उसने सिद्ध किया है कि वह धर्मी है और जो यीशु मसीह पर विश्वास करते हैं उन्हें धर्मी ठहराने वाला दोनों ही है।[8] क्रुस उसकी धार्मिकता और पाप के प्रति उसकी असहनशीलता के विरोध में उठी किसी भी शंका को धराशायी कर देता है। क्रुस यह प्रमाणित करता है कि उसके प्रेम के विषय में कोई भी संदेह बेबुनियाद है और अब उसके लोागें के मनों में कोई संदेह नहीं पनपना चाहिए।

परमेश्वर ने पाप के प्रति अपनी घृणा को साबित किया है

पुराने और नए नियम में असंख्य अनुच्छेद हैं जो पाप के प्रति परमेश्वर की घृणा और दुष्ट के प्रति उसके क्रोध की वास्तविकता को दर्शाते हैं। परन्तु, परमेश्वर की घृणा और अधर्म के किसी भी स्वरूप के विरोध में उसके पवित्र आक्रोश का सबसे बड़ा प्रदर्शन उसके प्रिय पुत्र के क्रूस में पाया जाता है। परमेश्वर पाप से कितनी घृणा करता है, और उसके प्रति उसकी प्रतिक्रिया क्या होगी ?पाप के प्रति उसकी घृणा ऐसी है कि जब उसके अपने पुत्र ने पाप को उठा लिया, तब उसने उसे कुचल दिया और उसे बचाया नहीं, परन्तु अनुग्रहपूर्णता के साथ उसे त्याग दिया।

मसीह के क्रूस से सम्बन्धित सुसमाचारीय रोमांचकता के मध्य, हम इस बात को भूल गए हैं (यदि हम जानते भी हो तो) कि कलवरी एक भयावह दृष्य था! वह वर्णन से परे अकथनीय रूप से डरावना था। जिन कीलों ने उसके हाथ और पाँव को खम्बे पर लटकाया; काँटों से गुथा हुआ जो मुकुट उसकी भौंहों से खून चूस रहा था; वह बड़ा भद्दा भाला जो उसकी पसली में धंस गया; दुष्ट और तुच्छ मनुष्यों द्वारा उसके शरीर के साथ की गई बर्बर्ता – ये सारी बातें उस क्रूरता की शुरूवात भी नहीं थी जो गुलगुथा नामक पहाड़ी पर हुई।[9] बल्की, यह इस से भी अधिक बड़े आतंक की मात्र

पृष्ठभूमि थी। यह किसी मनुष्य की इच्छा से नहीं था कि सूर्य छिप गया और दिन डामर के समान अन्धकारमय हो गया।[10] ये रोमी सेना की सामर्थ नहीं थी जिस ने पृथ्वी को हिलाया और चट्टानों को मिट्टी के सूखे ढेलों के समान चूरचूर कर दिया।[11] यह सर्वशक्तिमान परमेश्वर का प्रकोप था जो अपनी पूरी सामर्थ के साथ उसके अपने एकलौते पुत्र पर प्रगट हुआ! मसीह पर उण्डेले गए ईश्वरीय प्रकोप के माप की तुलना में, नूह के दिनों में आया महाप्रलय भी घास की पांत पर टपकने वाले ओस की बून्द के समान था, और सदोम और गमोरा पर स्वर्ग से उतरने वाली आग उस हानिरहित चिंगारी के समान थी जो सूखे से सूखे वन को भी जला नहीं पाती थी। कलवरी का दिन क्रोध का दिन, विपत्ति और कष्ट का दिन, विनाश और उजाड़ का दिन, अन्धकार और उदासी का दिन था।[12] उस दिन, सर्वशक्तिमान परमेश्वर की भस्म करने वाली और कभी न बुझने वाली आग स्वर्ग से मसीह पर उतर आई।[13] उस काठ पर, परमेश्वर ने उस पर अपनी क्रोधाग्नि ऐसी भड़काई जो पहाड़ों को मोम की नाईं पिघला देती है और उस जल के समान उतर आया जिससे घाटियाँ फट जाती है।[14] इस कारण, मसीह पुकार उठा : "मैं जल की नाई बह गया, और मेरी सब हड्डियों के जोड़ उखड़ गए; मेरा हृदय मोम हो गया, वह मेरी देह के भीतर पिघल गया।"[15]

विशाल मानवजाति में से विपत्ति के लिए प्रभु यीशु मसीह को चुना गया, और व्यवस्था में लिखा गया प्रत्येक शाप उसी पर उतर आया था। जब वह क्रूस पर लटका हुआ था, तब परमेश्वर के लोगों के विरोध में, परमेश्वर का सारा क्रोध केवल उसी पर प्रकट हुआ, और परमेश्वर का क्रोध पूरी तरह से उस के विरोध में भडक उठा।[16]

परमेश्वर पाप से कितनी घृणा करता है ?जब उसके निज पुत्र ने हमारे पाप उठा लिए, तब परमेश्वर ने उसे कुचल दिया। इस भयानक सत्य के प्रकाश में, हमें इब्रानियों के लेखक की चेतावनियों पर ध्यान देने के विषय में सचेत रहना चाहिए, "तो हम ऐसे महान उद्धार की उपेक्षा कर के कैसे बच सकेंगे ?"[17] सुसमाचार के सत्य का ज्ञान प्राप्त करने के बाद भी यदि हम उसका इन्कार करते हैं, तो हमारे पापों के लिए कोई बलिदान नहीं शेष रहता। हम आकाश और पृथ्वी में तब तक ढूँढ़ते रह सकते हैं जब तक कि वे टल न जाएँ, परन्तु हमें अपने पाप के लिए दूसरा कोई उपाय दिखाई नहीं देगा, शुद्धता का दूसरा कोई माध्यम नजर नहीं आएगा, और दूसरा कोई नाम नहीं मिलेगा जिसके द्वारा हम उद्धार पा सके।[18] हम केवल न्याय की भयावह प्रतिक्षा और अग्नि–ज्वाला ही पाएँगे जो हमें विरोधियों के समान भस्म कर देगी। पवित्र शास्त्र चेतावनी देता है कि जो कोई मूसा की व्यवस्था का उल्लंघन करता है, वह बिना किसी दया के मरेगा। तो फिर मसीह और उसके बलिदान

की उपेक्षा करने पर मिलने वाला दण्ड कितना कठोर हो सकता है ?यद्यपि हम हमारी उदासीनता और अविश्वास को एक बड़े अपराध के रूप में नहीं देखते, किन्तु परमेश्वर उसे अलग नजरीए से देखता है। उसके मूल्यांकन के अनुसार, हम ने उसके पुत्र को अपने पाँवों तले रौंदा है, उसके द्वारा बहाए गए लोहू को अपवित्र समझा है, और इन बातों को प्रगट करने वाले अनुग्रह के आत्मा का अपमान किया है। इस कारण, वह चेतावनी देता है, "बदला लेना मेरा काम है", और "मैं ही बदला दूंगा।" इस कारण, हमें सुसमाचार को थामे रहना है और सब लोगों से अनुरोध करना है कि वे विलम्ब होने से पहले पश्चाताप करें और मसीह की ओर फिरें। क्योंकि, "जीवित परमेश्वर के हाथों में पड़ना भयंकर बात है।"[19]

परमेश्वर ने अपने लोगों के लिए अपने प्रेम को साबित किया है

यदि पापी मनुष्य परमेश्वर की धार्मिकता पर कभी सन्देह करता है, तो उसे केवल क्रूस की ओर देखने की आवश्यकता है। परन्तु, यह भी समान रूप से सच है कि यदि मसीही व्यक्ति कभी परमेश्वर के प्रेम पर सन्देह करता है, तो उसे केवल उसी काठ की ओर देखने की आवश्यकता है। वहाँ पर, हमारा उद्धार पूरा हुआ।[20] वही पर शत्रुता दूर कर दी गई और परमेश्वर के साथ मेल–मिलाप की स्थापना की गई।[21] वहाँ पर, परमेश्वर ने अपने लोगों के लिए अपने प्रेम को ऐसे प्रमाणित किया जो सन्देह का हमेशा के लिए अन्त कर देता है! इस कारण, प्रेरित यूहन्ना लिखते है : "जो प्रेम परमेश्वर हम से रखता है, वह इस से प्रगट हुआ कि परमेश्वर ने अपने एकलौते पुत्र को जगत में भेजा है, कि हम उसके द्वारा जीवन पाएँ। प्रेम इस में नहीं कि हम ने परमेश्वर से प्रेम किया; पर इस में है कि उस ने हम से प्रेम किया; और हमारे पापों के प्रायश्चित के लिए अपने पुत्र को भेजा।"[22]

यूहन्ना की कलम से, हम समझते हैं कि अपने लोगों के प्रति परमेश्वर के प्रेम का सबसे बड़ा प्रकटीकरण यह है कि उस ने उन के पापों के प्रायश्चित के लिए अपने पुत्र को भेजा।[23] यह अनोखा कार्य अभुतपूर्व तरीके से परमेश्वर का चरित्र और उस के प्रेम की महत्ता प्रगट करता है। क्रूस पर, पिता ने हमारे प्रति अपने प्रेम को इस प्रकार साबित किया कि उस ने हम सभों के अपराधों को अपने प्रिय पुत्र पर लाद दिया और उसे अपने ईश्वरीय क्रोध के नीचे, जो हम पर आना था, कुचल दिया।[24] क्रूस पर, आत्मा ने हमारे प्रति अपने प्रेम को इस तरह साबित किया कि उस के पुत्र को मारे जाने के लिए आवश्यक सारी बातों की उस ने योजना तयार की और उन्हें निर्देशित किया।[25] क्रूस पर, पुत्र ने इस बात में हमारे प्रति अपने प्रेम को साबित किया कि उस ने अपने मित्रों के लिए अपना प्राण

दिया।[26] क्योंकि यद्यपि वह धनवान था, फिर भी हमारे लिए वह निर्धन बन गया – ताकि उसकी निर्धनता से हम धनी हो सकें।[27] क्योंकि, यद्यपि वह परमेश्वर के स्वरूप में था, उस ने अपने आप को ऐसा शून्य कर दिया, और दास का स्वरूप धारण किया, और यहाँ तक आज्ञाकारी रहा कि मृत्यु, हाँ, क्रूस की मृत्यु भी सह ली।[28] क्योंकि, यद्यपि वह पाप से अज्ञात था, उस ने हमारे पापों का बोझ उठाया, और हमारे लिए शापित बना, क्योंकि लिखा है, जो कोई काठ पर लटकाया जाता है वह शापित है।[29]

एक असीम भले परमेश्वर ने हमारे पापों के लिए जो भयंकर कीमत चुकाई वह हमें विलाप के लिए और अपने हृदयों को फाड देने के लिए प्रेरित करने पाए। जैसा कि भविष्यद्वक्ता जकर्याह ने भविष्यद्वाणी की, हम उसकी ओर देखते हैं जिसको हम ने बेधा है, और उसके लिए विलाप करते हैं जैसे कि एकलौते पुत्र के लिए और हम जैसे पहिलौठे के लिए दुख के साथ रोते हैं, वैसे ही हम उसके लिए रोते हैं।[30] परन्तु इसके साथ–साथ, परमेश्वर क्रूस की काली रेखाओं को लेकर अपना सर्वाधिक सुन्दर चित्र बनाता है। कल्वरी पर, वह मनुष्यों और स्वर्गदूतों के प्रति अपना प्रेम इस तरह प्रगट करता है जो अन्य सभी प्रकाशनों को एक साथ जोड़कर उत्पन्न सुन्दरता और सामर्थ से श्रेष्ठ है। हमारा पाप और हमारे लिए मसीह का अबोधगम्य क्लेश उस घनघोर काली रात के समान प्रदर्शित होते हैं जिसके विरोध में परमेश्वर की दया और अनुग्रह के सितारे यथा सम्भव अत्यन्त महिमामय तरीके से चमकते हैं।

यदि किसी भेंट का मूल्य प्रेम को दर्शाता है, तो कल्वरी यह साबित करती है कि परमेश्वर के लोगों के लिए उसके प्रेम को आँका नहीं जा सकता। मसीह के मूल्य को कौन नाप सकता है ? आकाश के तारों को और समुद्र की बालू के प्रत्येक कण को गिनना आसान होगा। उसका मूल्य सारी सृष्टि को एक साथ जोड़कर भी अत्यन्त बड़ा है। पुत्र के लिए पिता के प्रेम को कौन नाप सकता है ? यद्यपि, संसार ने पुत्र की अवहेलना की है, और उसके अपने लोगों ने भी उसका उचित आदर नहीं किया, फिर भी वह परमेश्वर का चुना है और उसकी दृष्टि में अनमोल है।[31] मनुष्य और स्वर्गदूत उस मूल्य को नहीं समझ सकते जो पिता उसे देता है और जो आदर वह उसके लिए रखता है। पुत्र हमेशा पिता का प्रिय रहा है जिस से वह अति प्रसन्न था।[32] वह हमेशा उसके अत्यन्त आनन्द का कारण रहा।[33] इसलिए, जब पिता ने अपना पुत्र दिया, तब उस ने हमें अपना सर्वस्व दिया और कुछ भी न रख छोड़ा।

हमारे पापों के लिए प्रायश्चित के रूप में अपने पुत्र को देने में परमेश्वर का जो प्रेम प्रगट हुआ, वह उस समय और भी बढ़ जाता है जब हम यह जान लेते हैं कि हम इस प्रेम के लिए पूर्णतः

अयोग्य हैं। यह प्रेम परमेश्वर के गुण और उद्देश्य से प्रगट होता है और पूर्ण रूप से अपने लोगों के गुणों और सद्गुणों से स्वतंत्र है। वह हम जो है उस आधार पर हम से प्रेम नहीं करता बल्की हम जो है उसके बावजूद हम से प्रेम करता है। प्रेरित युहन्ना लिखते है : "प्रेम इस में नहीं कि हम ने परमेश्वर से प्रेम किया; पर इस में है कि उस ने हम से प्रेम किया; और हमारे पापों के प्रायश्चित के लिए अपने पुत्र को भेजा।"[34]

परमेश्वर का प्रेम हमारे प्रति कोई प्रतिसाद नहीं है, बल्कि जिस बात के हम पात्र (अर्थात क्रोध) हैं, उसके यह विपरीत है। यद्यपि ऐसा प्रेम कमाने के लिए या ऐसे प्रेम के लिए उसे विवश करने भले ही हमारे पास कोई गुण या योग्यता न हो, फिर भी वह हम से प्रेम करता है।[35] हम अपने मन और कर्मों से उस के शत्रु होते हुए भी वह हम से प्रेम करता है।[36] हम ने बिना किसी कारण उस से घृणा की है, फिर भी वह हम से प्रेम करता है![37]

परमेश्वर के प्रेम के इसी पहलू ने प्रेरित पौलुस के हृदय को अत्यन्त मुग्ध कर लिया था और हमारे हृदय को भी मुग्ध करने पाए। पौलुस ने स्वयं को सबसे बड़ा पापी, ईश्वर निन्दक और कलीसिया पर हिन्सात्मक आक्रमण करने वाला माना।[38] इसलिए, उसके बदले में मसीह की मृत्यु का एकमात्र कारण जो उसे दिखाई दिया, वह है परमेश्वर का प्रेम जिस के वह अयोग्य था। यह ऐसा प्रेम था जिस से वह स्वयं को छुड़ा नहीं सका। उस प्रेम ने उसे विवश किया, उसे कर्जदार बनाया, उसे प्रवृत्त किया, और चारों ओर से उस पर विजयी हुआ।[39] परमेश्वर के प्रेम का ऐसा स्वरूप जिस के वह योग्य नहीं था, उस के जीवन का बड़ा विषय बन गया था, और सब मनुष्यों को उसका प्रचार करने के महानतम उद्देश्य से उस ने परिश्रम किया। वह जानता था कि परमेश्वर के प्रेम को केवल उतना ही समझा और सराहा जा सकता है जितना हम यह समझ पाते हैं कि हम उस प्रेम के लिए कितने अयोग्य हैं। इसी कारण, उस ने रोम की कलीसिया को लिखा, "किसी धर्मी जन के लिए कोई मरे, यह तो दुर्लभ है, परन्तु क्या जाने किसी भले मनुष्य के लिए कोई मरने का भी हियाव करे। परन्तु परमेश्वर हम पर अपने प्रेम की भलाई इस रीति से प्रगट करता है, कि जब हम पापी ही थे तभी मसीह हमारे लिए मरा।"[40]

जब हम पुत्र के लिए पिता के प्रेम का और परमेश्वर के विरोध में हमारे पाप की विशालता का अधिक यथार्थ रूप से आंकलन करना सीखते हैं, तब हम हमारे लिए पिता के प्रेम के गूढ़ को समझने लगते हैं। जब हम उसके क्रोध के अलावा और किसी बात के योग्य नहीं थे, इस के बावजूद अगर उस ने अपने पुत्र को हमें दे दिया, तो वह प्रेम अवश्य अपार होना चाहिए। यदि पिता ने अनन्त काल के प्रत्येक दिन के लिए एक हजार सिद्ध संसार दिए होते, तौभी इन उपहारों का संयुक्त मूल्य

उस के पुत्र के एकमात्र वरदान की तुलना में कुछ भी नहीं था। वे उस प्रेम का एक अंश भी नहीं दर्शाते जो उस समय प्रगट हुआ जब उसने हमारे पापों के लिए प्रायश्चित के रूप में अपने पुत्र को दे दिया! यदि हम सोचते हैं कि यह बढ़ा–चढ़ाकर कही बात या अतिशयोक्तिपूर्ण कथन है, तो हम मसीह के प्रताप के विषय में अन्धे हैं और उसके मूल्य को नहीं समझते। जॉन फ्लैवेल के शब्दों में :

> मैं तुम्हें यह बताना चाहता हूँ कि पूरा विश्व भी इतना विशाल मंच नहीं है कि उस पर मसीह की महिमा दिखाई जा सके या उसमें छिपे हुए अगम्य धन का आधा हिस्सा प्रगट कर सके। इन बातों को मध्यान्ह के स्वर्गीय जीवों द्वारा स्वर्ग में बेहतर रीति से समझा जाएगा और उनके विषय में स्वर्ग में बोला जाएगा, जहाँ फौरन प्रकाशमान मण्डली वहाँ पर ऐसी लड़खड़ाती जीभ, या मेरे जैसी लिखावट लिखने वाली कलम के द्वारा, जो उन्हें बिगाड़ देती है, लिखने या कहने के बजाए फौरन प्रकाशित मण्डली उसके स्तुति के शब्दों को प्रचार करती है। मुझ पर हाय! मैं तो रात्री के प्रकाश के द्वारा उसकी स्तुति को लिखता हूँ; मैं आधी भी उसकी स्तुति नहीं कर सकता। सचमुच, और किसी की नहीं परन्तु उसकी ही जीभ (जैसा कि बेजिल के विषय में नाजियाजेन ने कहा) उस प्रशंसा को शब्दों में वर्णन करने के लिए पर्याप्त है। मैं मसीह के विषय में क्या कहूँ ?उस वस्तु की उत्कृष्ट महिमा सारे भय से परे है, सारी अभिव्यक्ति को हटा देती है। जिसमें सुन्दर गुणों की कोई श्रेष्ठता पाई जाती है ऐसे प्रत्येक जीव से जब हम रूपकों को उधार लेते हैं, जब तक कि हम पूरी सृष्टि से उसके सारे अलंकारों को न छीन लें, और उस सारी महिमा से मसीह को महिमान्वित करें, जब हमारी अपनी जीभें उसकी प्रशंसा करती हुई थक चुकी होंगी, हाय! फिर भी हमने सबकुछ पूरा होने पर भी, कुछ नहीं किया।[41]

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. गलातियों 4:4

2. वेबस्टर शब्दकोष के अनुसार (vindication) प्रमाणित करने का संबंध किसी बात की अभिरक्षा से है, किसी इंकार,

परिनिन्दा या आरोप या आपत्ति के विरूद्ध सही प्रमाणित करना – अर्थात् धार्मिकता सिद्ध करना।
3. रोमियों 3:25
4. इब्रानियों 10:4
5. नीतिवचन 17:15
6. उत्पत्ति 18:25
7. भजन संहिता 85:10
8. रोमियों 3:26
9. शब्द गोलगाथा (Golgotha) का उद्‌भव अरामी भाषा से है और उसका अनुवाद खोपड़ी (Skull) किया जाता है। यह स्थान यरूशलेम नगर के बाहर है जहाँ यीशु को क्रूस पर चढ़ाया गया था। उसे खोपड़ी नाम इस लिए दिया गया क्योंकि उस स्थान का आकार खोपड़ी के समान था।
10. लूका 23:44–45
11. मत्ती 27:51
12. सफन्याह 1:15
13. यशायाह 33:14
14. यहेजकेल 22:18–22; Micah 1:4; नहूम 1:4
15. भजन संहिता 22:14
16. व्यवस्थाविवरण 29:20–21
17. इब्रानियों 2:3
18. प्रेरितों के काम 4:12
19. This paragraph is adapted from इब्रानियों 10:26–31.
20. यूहन्ना 19:30
21. रोमियों 5:1
22. 1 यूहन्ना 4:9–10
23. यह ग्रीक भाषा की संज्ञा hilasmos का अनुवाद है जिसका अर्थ है संतुष्ट करना या प्रायश्चित्त करना; अर्थात् संतुष्टि करने या प्रायश्चित्त करने के साधन।
24. यशायाह 53:4–10
25. पवित्र आत्मा ने मसीह के गर्भ में आने (लूका 1:35; मत्ती 1:20) से लेकर अधर्मियों के हाथों से क्रूस पर चढ़ाये जाने (प्रेरितों के काम 2:23) तक वह सब जो हमारे छुटकारे लिये आवश्यक था, प्रगट किया है।
26. यूहन्ना 15:13
27. 2 कुरिन्थियों 8:9
28. फिलिप्पियों 2:6–8
29. गलातियों 3:13; 2 कुरिन्थियों 5:21; व्यवस्थाविवरण 21:23
30. जकर्याह 12:10
31. 1 पतरस 2:4
32. मत्ती 3:17; 17:5; मरकूस 1:11; 9:7; लूका 3:22
33. नीतिवचन 8:30
34. 1 यूहन्ना 4:10, emphasis added
35. यशायाह 64:6
36. रोमियों 8:7; कुलुस्सियों 1:21
37. रोमियों 1:30; यूहन्ना 15:25
38. 1 कुरिन्थियों 15:9; 1 तिमुथि 1:13–15
39. 2 कुरिन्थियों 5:14–15
40. रोमियों 5:7–8
41. Flavel, *The Fountain of Life Opened Up*, 1:xviii.

अध्याय –22

यीशु मसीह का पुनरुत्थान

तुम जीवित को मरे हुओं में क्यों ढुँढ़ती हो ? वह यहाँ नहीं है, पर जी उठा है। – लुका 24:5–6

पवित्रता के आत्मा के अनुसार मृतको में से जी उठने के द्वारा सामर्थ्य के साथ परमेश्वर का पुत्र घोषित हुआ।
– रोमियो 1:4

वह हमारे अपराधो के कारण पकडवाया गया और हमारे धर्मी ठहराए जाने के लिए जिलाया भी गया। – रोमियो 4:25

21 वें अध्याय में रोमी क्रूस पर परमेश्वर के पुत्र को चढ़ाए जाने के साथ ही परदा गिरा। उस ने अपने लोगों के पापों को उठा लिया था, परमेश्वर के क्रोध को सह लिया था, और अपना प्राण छोड़ दिया।[1] परन्तु यह अन्त नहीं था। हम पिछली सदियों के प्रारम्भिक मसीहियों के साथ मिलकर आनन्द और विश्वास से यह घोषणा करते है : "वह जी उठा है! वह सचमुच जी उठा है!"

यीशु मसीह का ऐतिहासिक पुनरुत्थान मसीही विश्वास के बड़े आधार स्तम्भों में से एक है। इस सत्य में विश्वास के बिना, कोई भी मनुष्य मसीही नहीं है। इस सत्य की घोषणा किए बगैर, सुसमाचार का प्रचार नहीं किया गया है। इसलिए, कोई भी प्रचारक, ईश्वरज्ञानी, शास्त्री, या तथाकथित भविष्यद्वक्ता जो अटलता के साथ यीशु के शारीरिक और ऐतिहासिक पुनरुत्थान पर विश्वास नहीं करता, उस के पास कलीसिया को कहने के लिए कुछ नहीं है। हमें उन से सीखने की, उन्हें समझने की या उन्हें संगति में लाने की कोई जरूरत नहीं है। वे मसीही नहीं हैं।

मसीहत में ऐसा स्वर्ण युग रहा होगा, जब मसीह के पुनरुत्थान के विषय में ऐसी कठोर चेतावनियाँ देने की कोई जरूरत नहीं पड़ी, परन्तु दुख की बात यह है कि अब ऐसी परिस्थिती नहीं रही। पुनरुत्थान का विषय सुसमाचार के युद्ध के मोर्चे पर खड़ा रहता है और शत्रु का भीषण आक्रमण उसी पर होता है। शैतान उचित ही इस बात को समझता है कि सम्पूर्ण मसीहत इसी एक सिद्धान्त पर

उठती और गिरती है।[2] इसलिए, पुनरूत्थान से इन्कार करना उसका प्राथमिक लक्ष्य है। यदि वह इस लक्ष्य को हासिल न कर पाए, तब शत्रु इस बात में आनन्दित होता है जब वे लोग जो अधिक सार्वभौम होने का प्रयास करते हैं, पुनरुत्थान को अनावश्यक समझते हैं, और वह यह भी देखना चाहता है कि जो सचमुच विश्वास करते हैं वे अपने सुसमाचार की घोषणा में पुनरुत्थान की उपेक्षा करें।

मसीहत के बड़े सिद्धान्तों पर हमेशा ही चारों ओर से आक्रमण होता रहा हैं और पुनरुत्थान अपवाद नहीं है। परन्तु हमारे युग की अद्वितीयता यह है कि अत्यन्त जोखिम भरे आक्रमण अब उन लोगों की ओर से आते हैं जो पूर्णतः मसीही और यहाँ तक कि सुसमाचारीय होने का दावा करते हैं। वे सीधे सीधे पुनरुत्थान का इन्कार नहीं करते और वे स्वयं के लिए दृढ़तापूर्वक उसकी पुष्टि भी करते हैं। परन्तु वे दूसरों से इस प्रकार के विश्वास की न तो अपेक्षा करते है और न ही मसीहत में प्रवेश करने के लिए उसे आवश्यक सिद्धान्त मानते है। उन्होंने सत्य से अधिक सहिष्णुता के एक झुठे स्वरूप को चुन लिया है और परमेश्वर के भय और पवित्र शास्त्र के प्रति विश्वासयोग्यता से अधिक मानवजाति के लिए विकृत करूणा का चुनाव किया है। यहूदा के समान, वे श्रद्धा के बहाने उद्धारकर्ता को चुमते हैं और फिर भी उस के साथ विश्वासघात करते हैं।[3]

मसीह के पुनरुत्थान का इन्कार करना – यहाँ तक कि उसे एक अनावश्यक सिद्धान्त के रूप में मानना – सच्ची मसीहत की हानि करना है। परन्तु, हम में से जो लोग इस सिद्धान्त पर विश्वास करते हैं और विश्वासयोग्यता के साथ यत्नपूर्वक सुसमाचार की घोषणा करते हैं, वें भी कुछ हद तक बुराई पर चलते हैं : वे पुनरुत्थान को हमारे प्रचार में उसका यथायोग्य स्थान देने की उपेक्षा करते हैं। यह महान सिद्धान्त ऐसा नहीं है जिसे हमें क्रूस के लम्बे चौड़े सन्देश के अन्त में मात्र जोड़ने की जरूरत है, परन्तु उसे क्रूस के साथ बराबरी का महत्व दिया जाना चाहिए। प्रेरितों के काम की पुस्तक में प्रेरितों के प्रचार के सम्पूर्ण सर्वेक्षण से यह प्रगट होगा कि यीशु मसीह का पुनरुत्थान उन के सुसमाचार का मुख्य विषय था। यह ऐसा सन्देश नहीं था जो ईस्टर के समय हर साल एक रविवार कोठरी में से निकाला जाए। यह प्रारम्भिक कलीसिया का निरंतर विजय गीत था!

यह स्मरण रखना महत्वपूर्ण है कि मसीहत और सुसमाचार के विषय में चल रहा विवाद यीशु मसीह की मृत्यु की ऐतिहासिकता नहीं है। केवल उत्तर–आधुनिक उन्माद से भरे हुए कृत्रिम बुद्धिजीवि, जो इतिहास की खोज–प्रणाली से बेखबर हैं, वे ही इस बात का इन्कार करते हैं कि नासरत का यीशु नामक एक व्यक्ति था जो पेलेस्टाईन में रहा और जो पन्तुस पिलातुस के सामराज्य में मर गया। यह विवाद पुनरुत्थान के सम्बन्ध में है। इस प्रकार, पुनरुत्थान भी क्रूस के समान ही विक्षोभकारी है और उसे उतनी ही सम्पूर्णता और प्रबलता के साथ प्रचार किया जाना चाहिए। यदि

हम पुनरुत्थान की घोषणा पर अधिक बल देंगे तो हमारे पास और अधिक बाइबल–सम्मत सुसमाचार होगा और हम सुसमाचार की सामर्थ का और बड़ा प्रदर्शन देंखेंगे।

बइबल–सम्मत विवरण

मसीह के पुनरूत्थान का सटीक अर्थ और उसके महत्व पर विचार करने से पहिले, कम से कम उस ऐतिहासिक विवरण की सामान्य समझ पाना सहायक होगा, जैसा कि पवित्र शास्त्र में हमें बताया गया है।

यह तीसरे दिन की भोर का समय है। स्त्रियाँ बड़े भय के साथ उस बगीचे के पास जाती हैं जहाँ पर मसीह की देह कब्र में रखी गई थी। उनका सन्देश आशा का नहीं परन्तु हमदर्दी का था। उनकी एकमात्र इच्छा थी कि उनके प्रिय यीशु की देह का उचित दफनविधि के साथ सम्मान किया जाए। उनका वार्तालाप सीमित है जो मामूली सांकेतिक शब्द बन जाता है : "'हमारे लिए कौन यह पत्थर हटाएगा ?'... क्योंकि वह बहुत विशाल था।"[4] पुनरूत्थान की कल्पना उनके मन से बहुत दूर थी।

परन्तु हमदर्दी, भय में बदल जाती है; भय अदम्य आशा में बदल जाता है; और आशा जो महिमा से परिपूर्ण है अवर्णनीय आनन्द में बदल जाती है। वे देखते हैं कि पत्थर हटा दिया गया है, द्वार खुला है, कब्र खाली है, और स्वर्गदूत इस सुसमाचार की घोषणा करता है : "तुम जीवित को मरे हुओं में क्यों ढूंढ़ती हो ?वह यहाँ नहीं, परन्तु जी उठा है! स्मरण करो कि उस ने गलील में रहते हुए तुम से कहा था, 'अवश्य है कि मनुष्य का पुत्र पापियों के हाथ में पकड़वाया जाए, और क्रूस पर चढ़ाया जाए, और तीसरे दिन जी उठे।'"[5]

वे स्त्रीया "भय और बड़े आनन्द के साथ" कब्र से शीघ्र लौट गई। वे उसके चेलों को समाचार देने के लिए दौड़ी आई, परन्तु उनकी गवाही उन लोगों को व्यर्थ बकवाद और मूर्खता लगती है जिन्हें उन पर विश्वास करना चाहिए था।[6] तब, आशा के विपरीत आशा करते हुए, पतरस और यूहन्ना खाली कब्र की ओर दौड़ पड़े। संक्षिप्त एवं उलझन भरी जाँच पड़ताल के बाद, वे बिना किसी पक्के यकीन के अन्य शिष्यों के पास लौटते हैं : "वे तो अब तक पवित्र शास्त्र की वह बात न समझते थे कि उसे मरे हुओं में से जी उठना होगा।"[7]

वे तुरन्त वहाँ से निकलते हुए, अपने पीछे रोती हुई मरियम मग्दालीनी को छोड़ जाते हैं जो पुनरुत्थित प्रभु को सबसे पहले देखती है। वह उसे आज्ञा देता है कि वह उसके पुनरुत्थान की एक और पुष्टी के साथ फिर एक बार विश्वास न करने वाले शिष्यों के पास लौट जाए।[8] उसके बाद यीशु

दूसरी बार कब्र से लौट रही स्त्रियों को दर्शन देते है, और उसके बाद, क्लोपास को और अन्य चेलों को इम्माऊस के मार्ग पर वह दर्शन देते है।[9] अन्त में, यीशु पतरस को दिखाई देते है और उसके बाद ग्यारहों को।[10] वह विश्वास न करने वाले अपने सौतेले भाई याकूब को भी एक ऐसी मुलाकात में दर्शन देते है जिस से याकूब इस तरह से बदल जाता है, जिस से वह प्रेरितों के झुण्ड का हिस्सा और यरूशलेम की कलीसिया का खम्भा बन जाता है।[11] अन्त में, वह दमिश्क के मार्ग पर तर्शिश के शाऊल को जो "मानो अधूरे दिनों का जन्मा था," दर्शन देता है।[12] इस आकस्मिक मुलाकात के विषय में या उसके परिणाम के विषय में लिखना आवश्यक नहीं है। जिस मनुष्य ने मसीहत का नाश करने का प्रण किया था, वही उसका अति उत्साही प्रचारक और प्रतिरक्षक बन जाता है।[13] सारांश रूप में, हमारे पास पवित्र शास्त्र का निश्चित शब्द है कि उसके स्वर्गारोहण से पहले, हमारे प्रभु ने बड़ी संख्या में गवाहों को और लोगों को दर्शन दिया और "एक ही समय में पाँच सौ से अधिक भाईयों को दिखाई दिया।"[14]

मसीह के पुनरूत्थान की अद्वितीयता

मनुष्य अक्सर ऐसे शब्दों का उपयोग करते हैं जिसे वे परिभाषित नहीं कर सकते और न उन्हें पूर्ण रीति से समझ सकते है। यह विशेष तौर पर उन मसीहियों के लिए बहुत जोखिम भरा है जिन्हें परमेश्वर की इच्छा के अनुसार, जो वचनों में उन पर प्रगट की गई है, जीवन जीने के लिए बुलाया गया है। यह मसीह के कार्य और पुनरूत्थान के सम्बन्ध में सत्य है। उसका वास्तविक अर्थ क्या है ?

पुनरूत्थान – *resurrection* यह अंग्रेजी शब्द *resurgere* (रिज्युर्जर), (*re*: again फिर से; *surgere*: to rise उठना) इस लैटिन शब्द से लिया गया है या उस से व्युत्पन्न है। नए नियम का शब्द ग्रीक *anástasis* (ॲनास्टॅसिस) इस संज्ञा (*ana*: up ऊपर, again फिर से; *stasis*: stand खड़े होना) से अनुवाद किया गया है। इस प्रकार, इस शब्द का अक्षरशः अर्थ खड़े होना या फिर से उठना है। प्राचीन और आधुनिक दोनों ही साहित्यों में, यह शब्द मृतक का फिर जीवित होना वर्णन करता है। परन्तु, मसीह को लागू करने पर, उस के लिए इस शब्द का अद्वितीय अर्थ लागू होता है।

यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम इस बात को पहचानें कि मसीह का पुनरुत्थान केवल पुनरूज्जीवन नहीं था। पुराने नियम में, सारपत की विधवा का बेटा और शुनेमी स्त्री का बेटा, एलिय्याह और एलिशा के द्वारा कार्य करने वाली परमेश्वर की सामर्थ से जिलाए गए थे।[15] नया नियम यह सिखाता है कि लाजर को, उसी तरह याईर की बेटी को, एक जवान लड़के को, तबीता को, और युतिखुस को मुर्दों में से जिलाया गया था।[16] परन्तु, यद्यपि वे मुर्दों में से सचमुच फिर जिलाए गए थे,

फिर भी वे मृत्यु के वश में थे। जैसा कि पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया को स्पष्ट शब्दों में लिखा था, उन के शरीर अब भी मरणहार और नाशमान थे।[17] वे फिर एक बार मरने वाले थे और कब्र के कलंक के पात्र थे।

मसीह का पुनरुत्थान इसलिए अद्वितीय था क्योंकि वह मृतको में से जिलाया जाकर फिर कभी मरने का नहीं। जैसा की उस ने पतमुस नाम टापू पर यूहन्ना से कहा : "मैं मर गया था, और देख, मैं युगानुयुग जीवित हूँ।"[18] रोम की कलीसिया को लिखी अपनी पत्री में, पौलुस और अधिक स्पष्टता के साथ इस सत्य को प्रस्तुत करते है : "यह जानते हुए कि मसीह मृतको में से जिलाया जाकर फिर कभी मरने का नहीं, न अब उस पर मृत्यु की प्रभुता है। क्योंकि जब वह मरा तो पाप के प्रति सदा के लिए मर गया; परन्तु अब जो जीवित है वह परमेश्वर के लिए जीवित है।"[19]

मसीह के पुनरुत्थान की अद्वितीयता को दर्शाने वाला ऐसा ही एक सामर्थी सत्य यह है कि वह अपने ही अधिकार और सामर्थ के द्वारा जिलाया गया। यद्यपि पवित्र शास्त्र यह सिखाता है कि पुनरुत्थान समान रूप से पिता और पवित्र आत्मा का कार्य था, फिर भी इसका श्रेय स्वयं मसीह को भी जाता है।[20] जब उस से यह साबित करने वाला चिन्ह मांगा गया कि वह किस अधिकार से मन्दिर को शुद्ध करता है तब यीशु ने उत्तर दिया, "इस मन्दिर को ढा दो, और मैं उसे तीन दिन में खड़ा कर दूंगा।"[21] उस ने फरीसियों से कहा, "मैं उसे आप ही देता हूँ। मुझे उस के देने का भी अधिकार है, और उसे फिर लेने का भी अधिकार है।"[22]

यीशु मसीह का पुनरुत्थान उस के लिए अद्वितीय था। यह केवल पुनरूज्जीवन नहीं था, जो मृत्यु की अगली बारी तक जीवन को केवल बढ़ा सकता था। बल्कि, उस ने मृत्यु, नरक, और कब्र पर विजय पाई है। वह फिर कभी न मरने के लिए जीवित है!

मसीह की सच्चाई के समर्थन में पुनरूत्थान

हम ने मसीह के पुनरूत्थान के ऐतिहासिक वर्णन का सर्वेक्षण किया है और उसकी अद्वितीयता पर विचार किया है। अब हम उसके महत्व की ओर अपना ध्यान लगाएंगे। भले ही यह विषय व्यापक है और इस पर कई ग्रंथ लिखे जा सकते हैं, फिर भी हम उसके केवल दो सबसे महत्वपूर्ण आशयों पर विचार करेंगे : पुनरूत्थान से मसीह की सच्चाई प्रमाणित हुई और हमारे विश्वास की पुष्टी हुई।

पिछले अध्यायों में हम ने सीखा कि मसीह की मृत्यु से परमेश्वर अन्यायों के उन अरोपों से निर्दोष प्रमाणित हुआ जो पहले के पापों की अपनी सहनशीलता में अनदेखी करने और अधर्मी को धर्मी

ठहराए जाने के कारण उस पर लगे।[23] अगले अध्याय में, हम खोज करेंगे कि परमेश्वर ने मसीह को मरे हुओं में से जिलाकर उसे भी धर्मी साबित किया। पुनरूत्थान के माध्यम से, परमेश्वर ने जाहीर रूप से और सामर्थ के साथ यीशु को परमेश्वर का पुत्र और इस्राएल का प्रतिज्ञात मसीह घोषित किया। खाली कब्र इस संसार के लिए यीशु के ईश्वरीय पुत्रत्व का चिन्ह था, और जो आज तक बना हुआ है। प्रेरित पौलुस ने रोम की कलीसिया को लिखा कि यीशु "पवित्रता की आत्मा के अनुसार मृतकों में से जी उठने के द्वारा सामर्थ्य के साथ परमेश्वर का पुत्र घोषित हुआ।"[24] घोषित यह शब्द ग्रीक शब्द *horízo* (होरिझो) से आता है, इस शब्द का अर्थ है निर्धारित करना, स्थापित करना, नियुक्त करना, ठहराना या अंकित करना। यह शब्द यह सूचित नहीं करता कि मसीह पुनरूत्थान के समय परमेश्वर का पुत्र बना या पहले नियुक्त किया गया, बल्कि इस अद्भुत घटना के द्वारा वह सार्वजनिक तौर पर और अटल रूप से परमेश्वर के पुत्र के रूप में अंकित किया गया।

यीशु ने पिता के नाम में जो आश्चर्यकर्म किए उनके द्वारा, उसके बपतिस्मे के समय स्वर्ग से आकाशवाणी के द्वारा, और पतरस, याकूब और यूहन्ना की उपस्थिति में रूपांतरण के द्वारा उसकी सेवकाई के पूरे काल में पिता ने उसके ईश्वरीय पुत्रत्व की पुष्टि की थी।[25] परन्तु, इन में से किसी की तुलना पुत्रत्व की उस महान और अन्तिम घोषणा से नहीं हो सकती जो उस समय हुई जब पिता ने अपने अत्यन्त प्रिय पुत्र को मृतकों में से जिलाया। खाली कब्र के माध्यम से वह "सामर्थी, प्रभावशाली एवं जयंवत" रूप से परमेश्वर का पुत्र घोषित हुआ।[26] *horízo* (होरिझो) शब्द के उपयोग और अर्थ के सम्बन्ध में, जॉन मैकऑर्थर लिखते हैं, "ग्रीक शब्द जिस से अंग्रेजी का "होराईजन" शब्द आता है, उसका अर्थ है, भिन्न रूप में प्रसिद्ध करना। जिस प्रकार क्षितिज स्पष्ट सीमांकन रेखा का कार्य करता है और पृथ्वी और आकाश को विभाजित करता है, उसी तरह यीशु मसीह का पुनरूत्थान स्पष्ट रूप से उसे बाकी मानवजाति से अलग करता है, और इस बात का अकाट्य प्रमाण देता है कि वह परमेश्वर का पुत्र है।[27]

मसीह के पुनरूत्थान को उसके पुत्रत्व और मसीह होने के बड़े प्रमाण या चिन्ह के रूप में देखना सुसमाचारों में पराया विषय नहीं है। जब अविश्वासी यहूदियों ने मन्दिर को शुद्ध करने के उसके अधिकार के विषय में चिन्ह या प्रमाण मांगा, तब उस ने भावी पुनरूत्थान की ओर संकेत किया : "इस मन्दिर को ढा दो, और मैं उसे तीन दिन में खड़ा कर दूंगा।"[28] जब शास्त्रीयों और फरीसियों ने उसके मसीह होने के और चिन्ह मांगे, तब उस ने मृत्यु पर उसके अधिकार की ओर फिर से संकेत किया : "क्योंकि जैसा योना तीन दिन और तीन रात विशाल मच्छ के पेट में रहा, उसी प्रकार मनुष्य का पुत्र भी तीन दिन और तीन रात पृथ्वी के गर्भ में रहेगा।"[29]

यीशु का पुनरूत्थान, वह जो है और उसने अपने लोगों के लिए प्राप्त किया है उसका एक बड़ा और अदम्य प्रमाण है। यह मसीह के शत्रुओं के सामने उसकी धार्मिकता और सच्चाई का बड़ा प्रमाण है। शास्त्रियों ने यीशु को ऐसा मनुष्य ठहराकर खारिज कर दिया जो पढ़ा–लिखा नहीं था, अधिकारीयों ने उसे गलील के एक अनुपयुक्त भविष्यद्वक्ता के रूप में धिक्कारा, और फरीसियों ने उसे बेलजबूब का साथी और पापियों का मित्र कहकर उसका उपहास किया।[30] परन्तु उनके सारे आक्रमण नाकाम हुए और उनके विवाद बिखर गए जब वह जिसे उन्होंने क्रूस पर चढ़ाया था, ''पवित्रता के आत्मा के अनुसार मृतको में से जी उठने के द्वारा सामर्थ के साथ परमेश्वर का पुत्र घोषित हुआ।''[31] सिपाहियों ने कल्वरी के मार्ग पर यह कहते हुए उसकी ठट्ठा कि, "हे यहूदियों के राजा, नमस्कार!"[32] परन्तु जब स्वर्गदूत ने कब्र के मुंह पर से पत्थर हटाया तब वे भय से कांप उठे और मृतक–से हो गए।[33] महायाजक, शास्त्री और प्राचीनों ने यह कहकर उसका अपमान किया कि, "इसने दूसरों को बचाया, पर अपने को नहीं बचा सकता।"[34] परन्तु जब पिन्तेकुस्त के दिन उसने तीन हजारों को बचाया, तब वे विस्मित रह गए।[35] उसके संकटमय समय में उन्होंने यह कहते हुए उसका उपहास किया कि, "यह तो 'इस्राएल का राजा है'। अब क्रूस पर से उतर आए, तो हम उस पर विश्वास करें।"[36] परन्तु उनके हृदय तब छिद गए जब प्रभु के पुनरूत्थान से सामर्थ पाकर मछुआरों ने उन्हें प्रचार किया – "इसलिए इस्राएल का सम्पुर्ण घराना निश्चय जान ले कि परमेश्वर ने उसे प्रभु और मसीह दोनों ही ठहराया – इसी यीशु को जिसे तुम ने क्रूस पर चढ़ाया।"[37]

हमारे विश्वास की पुष्टि के रूप में पुनरूत्थान

खाली कब्र संसार के सामने न केवल यीशु मसीह की सच्चाई का प्रमाण थी, बल्कि वह मसीही जन के विश्वास की पुष्टि भी थी। परमेश्वर ने उसे मरे हुओं में से जिलाया यह वास्तविकता इस बात का प्रमाण है कि परमेश्वर ने अपने लोगों के पापों के लिए उसके प्रायश्चितकारी बलिदान को स्वीकार कर लिया है। प्रेरित पौलुस ने रोम की कलीसिया के लिए इस बात का वर्णन किया : "वह हमारे अपराधों के लिए पकड़वाया गया, और हमारे धर्मी ठहरने के लिए जिलाया भी गया।"[38] इस शास्त्रपद को समझने की कुंजी ग्रीक पूर्वसर्ग *día* (डिया) की पुनरावृत्ती में पायी जाती है जिसका उचित अनुवाद है – "क्योंकि।" मसीह को मृत्यु के हाथ सौंपा गया क्योंकि उसने हमारे अपराधों को सह लिया, और परमेश्वर ने उसे मृतकों में से जिलाया क्योंकि उसने उसकी मृत्यु को हमारे पापों के लिए प्रायश्चितकारी बलिदान के रूप में स्वीकार किया। इसलिए, मसीह का पुनरूत्थान इस बात की पुष्टि

है कि उसके लोगों के पापों के लिए प्रायश्चित हो चुका है और उनका धर्मी ठहराया जाना सुरक्षित किया गया है। थॉमस श्रायनर लिखते हैं : "यीशु हमारे धर्मी ठहराए जाने के लिए जिलाया गया, यह कहने का अर्थ यह है कि उसका पुनरूत्थान, इस बात का सत्यकरण और पुष्टीकरण करता है कि हमारा धर्मी ठहराया जाना सुरक्षित कर लिया गया है। मसीह के पुनरूत्थान में इस बात का प्रमाण है कि हमारे लिए उसका कार्य पूरा हो चुका है।"[39]

इस बात पर गौर करना महत्वपूर्ण है कि मसीह इसलिए नहीं जिलाया गया ताकि हम सम्भवतः धर्मी ठहरें या क्योंकि प्रायश्चित क्रूस पर पूरा नहीं किया गया। मसीह के अपने शब्दों के अनुसार उसके लोगों के लिए उसका छुटकारे का कार्य उसकी मृत्यु के क्षण में "पूरा हो गया।"[40] और न ही हम मसीह के जी उठने के समय धर्मी ठहरे। पवित्र शास्त्र स्पष्ट रूप से सिखाता है कि धर्मी ठहराया जाना किसी भी मनुष्य को उस क्षण दिया जाता है जब वह विश्वास करता है – हम मसीह के व्यक्तित्व और कार्य में व्यक्तिगत विश्वास के द्वारा धर्मी ठहराए गए हैं।[41] यह शास्त्रपद सिखाता है कि मसीह इसलिए जिलाया गया क्योंकि वह सचमुच मसीह है और उसकी मृत्यु को परमेश्वर ने अपने लोगों के पापों के लिए दाम के रूप में स्वीकार किया। पुनरूत्थान में हमें यह ईश्वरीय प्रतिज्ञा दी गई है कि उसके बलिदान में विश्वास करने के द्वारा हम परमेश्वर के सामने धर्मी ठहराए गए हैं।

परमेश्वर ने नासरत के यीशु को मृतकों में से जिलाया क्योंकि वह वही था जो उसने कहा कि वह था, और उसकी मृत्यु के द्वारा उसने बिल्कुल वहीं पूरा किया जो उसने कहा कि वह करेगा। मसीह ने अपने पिता की सच्चाई प्रमाणित की जब वह क्रूस पर मर गया और यह साबित किया कि जो परमेश्वर अधर्मियों को धर्मी ठहराता है वह सारे दोषारोपण से मुक्त है। पिता ने अपने पुत्र की सच्चाई तब प्रमाणित की जब उसने उसे मरे हुओं में से जिलाया और यह प्रगट किया कि वह निःसंदेह परमेश्वर का पुत्र और संसार का उद्धारकर्ता था।

मसीह के क्रूस पर चढ़ाए जाने से पहले, शिष्यों को आशा थी कि "वही इस्राएल को छुड़ाने वाला व्यक्ति है।"[42] परन्तु, जब ऐसा प्रतित हुआ कि अन्त में मृत्यु की विजय हुई तब उनकी सारी आशाएँ कुचली गईं। नासरत का यीशु कैसे परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं की परिपूर्णता हो सकता है यदि वह उधार ली गई कब्र में मृतावस्था में पड़ा रहता है ?परन्तु तब इसहाक कैसे वह प्रतिज्ञा का पुत्र होता जिस के वंश से अब्राहम का नाम चलना था यदि वह उस वेदी पर अपने ही पिता के हाथों मारा जाता ?[43] क्या अब्राहम यह विश्वास करने का साहस कर सकता था कि परमेश्वर उसे मरे हुओं में से जिलाएगा ?[44] और यदि यूसुफ मिस्र के कैदखाने में पड़ा रहता, तो उसके स्वप्न कैसे सच होते ?[45] क्या

परमेश्वर उसे एक दिन में निकालकर सारे मिस्र देश पर अधिकारी नियुक्त करता ?[46] पवित्र शास्त्र हमारे सारे प्रश्नों का उत्तर एक ही प्रश्न के साथ देता है : "क्या मेरे लिए कोई काम कठिन है ?"[47]

इसहाक के हाथ–पांव खोल दिए गए और उसे वापस उसके पिता को दे दिया गया। यूसुफ को कैदखाने से मुक्त कर दिया गया और उसे फिरौन के दाहिनी ओर गौरवान्वित किया गया, वैसे ही मसीह को मृतकों में से जिलाकर परमेश्वर की दाहिनी ओर गौरवान्वित किया गया। वह इसलिए जिलाया गया क्योंकि वह परमेश्वर का पुत्र है, और उसके पिता ने उसकी मृत्यु को हमारे पापों के लिए प्रायश्चित के रूप में ग्रहण किया था।

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

2. 1 कुरिन्थियों 15:14
3. मत्ती 26:49–50
4. मरकुस 16:2–4
5. लूका 24:5–8
6. लूका 24:11
7. यूहन्ना 20:9
8. यूहन्ना 20:11–18
9. मत्ती 28:9–10; लूका 24:13–32
10. लूका 24:34–43
11. 1 कुरिन्थियों 15:7; प्रेरितों के काम 1:14; 15:13
12. 1 कुरिन्थियों 15:8; प्रेरितों के काम 9:3–19
13. प्रेरितों के काम 9:1–2; 1 कुरिन्थियों 15:10
14. 1 कुरिन्थियों 15:6
15. 1 राजा 17:17–24; 2 राजा 4:18–37
16. यूहन्ना 11:23–25, 43; मरकुस 5:41–42; लूका 7:14–15; प्रेरितों के काम 9:36–43; 20:7–12
17. 1 कुरिन्थियों 15:53
18. प्रकाशित वाक्य 1:18
19. रोमियों 6:9–10
20. रोमियों 6:4; गलातियों 1:1; रोमियों 1:4; 8:11
21. यूहन्ना 2:19
22. यूहन्ना 10:18

23. रोमियों 3:25–26
24. रोमियों 1:4
25. यूहन्ना 10:37–38; मत्ती 3:17; 17:5
26. Marvin Richardson Vincent, *Word Studies in the New Testament* (Peabody, Mass.:Hendrickson), 3:4.
27. *The MacArthur Study Bible: New King* यहुदा *Version* (Nashville: Word Bibles, 1997),1691.
28. यूहन्ना 2:19
29. मत्ती 12:40
30. यूहन्ना 7:15, 52; मरकूस 3:22; मत्ती 11:19; लूका 7:34
31. रोमियों 1:4
32. मत्ती 27:29
33. मत्ती 28:4
34. मत्ती 27:42
35. प्रेरितों के काम 2:41
36. मत्ती 27:42
37. प्रेरितों के काम 2:36
38. रोमियों 4:25
39. Thomas R. Schreiner, रोमियों *: Baker Exegetical Commentary on the New Testament* (Grand Rapids: Baker Books, 1998), 244.
40. यूहन्ना 19:30
41. रोमियों 5:1
42. लूका 24:21
43. उत्पत्ति 21:12; रोमियों 9:7
44. इब्रानियों 11:19
45. उत्पत्ति 37:5–10
46. उत्पत्ति 41:41
47. यिर्मयाह 32:27

अध्याय – 23

पुनरूत्थान में विश्वास की नींव

यह बात तुम लोगों को अविश्वसनिय क्यों लगती है कि परमेश्वर मृतकों को जीवित करता है। – प्रेरितों के काम 26:8

मसीहत के शत्रु उचित ही मसीह के ऐतिहासिक पुनरूत्थान पर आक्रमण करने में अपना ध्यान केंद्रित करते हैं, क्योंकि हमारा पूरा विश्वास उसी पर निर्भर है। क्योंकि यदि मसीह मृतकों में से नहीं जिलाया गया, तो हमारा विश्वास पूर्ण रूप से व्यर्थ है।[1] हम, जो विश्वासी हैं, अब भी अपने पापों में पड़े हैं, और जो मर गए वे हमेशा के लिए नाश हो गए हैं।[2] साथ ही, हम जो पुनरूत्थान का प्रचार करते हैं, परमेश्वर के झूठे गवाह ठहरते हैं क्योंकि हम यह गवाही देते हैं कि उस ने मसीह को मरे हुओं में से जिलाया, जबकि उस ने नहीं जिलाया।[3] अन्त में, यदि मसीह जी नहीं उठा है, तो हमारे जीवन दयनीय अवस्था में व्यर्थ ठहरेंगे। हम अकारण ही कठिनाई सहते हैं, और लोग एक ऐसे झूठे भविष्यद्वक्ता के कारण हम से घृणा करते हैं जिस में उद्धार देने की कोई सामर्थ नहीं है। जैसा कि प्रेरित पौलुस लिखते है, "यदि हम केवल इसी जीवन में मसीह से आशा रखते हैं, तो हम सब मनुष्यों से अधिक अभागे हैं।"[4]

हमारे अपने अंगीकार के अनुसार, पुनरूत्थान मसीही विश्वास के लिए सब कुछ है। यदि मसीह मरे हुओं में से जिलाया नहीं गया है, तो हमारा धर्म झूठा है। इसलिए अच्छा होगा कि हम स्वयं से यह अति महत्वपूर्ण प्रश्न पूछे : "वह जिलाया गया है यह हम कैसे जानते हैं ?" हम क्यों यह विश्वास करते हैं ? हम अगले कुछ पन्नों में दो अत्यन्त महत्वपूर्ण, परन्तु भिन्न माध्यमों पर विचार करेंगे जो पुनरूत्थान के सच्चाई की पुष्टि करते हैं और उसे जाहिर करते हैं। सर्वप्रथम, पवित्र आत्मा अपने नवजीवनकारी और प्रकाशनकारी कार्य के द्वारा इस सच्चाई को प्रगट करता है, और दूसरी बात, इस घटना से सम्बन्धित ऐतिहासिक और कानूनी प्रमाण स्वयं ही पुनरूत्थान की पुष्टि करते हैं। पहला माध्यम पूर्णतः मौलिक है। दूसरा माध्यम, मसीही विश्वास का दृढ़ प्रमाण देता है और

अविश्वासी संसार के साथ वार्तालाप का प्रभावी साधन है।

पवित्र आत्मा का कार्य

सुसमाचारीय कलीसिया अक्सर खाली कब्र की ओर संकेत कर, देह प्रस्तुत करने की मसीह के शत्रुओं की असमर्थता, शिष्यों का परिवर्तन और कई ऐतिहासिक एवं कानूनी प्रमाणों को देकर अक्सर पुनरूत्थान में अपने विश्वास को प्रमाणित करने का प्रयास करती है। परन्तु, यद्यपि इस प्रमाण के अंश यह दर्शाते हैं कि मसीही विश्वास तर्कहीन या इतिहास विरोधी नहीं है, तौभी वे मसीही विश्वास का आधार या नींव नहीं हैं। निम्नलिखित तथ्य इसका कारण बताते हैं।

सबसे पहले, प्रेरितों ने 'मसीहत की प्रतिरक्षा' (apologetic) के इस स्वरूप को अपने प्रचार में उपयोग नहीं किया।[5] उन्होंने पुनरूत्थान को साबित करने का प्रयास नहीं किया, परन्तु उसे घोषित किया।[6] उनका भरोसा उन के शक्तिशाली वाद–विवादों में नहीं था, परन्तु उद्धार करने की सुसमाचार की सामर्थ में था! कुरिन्थियों की कलीसिया को लिखे गए पौलुस के पत्र में यह स्पष्ट है :

> भाईयों, जब मैं तुम्हारे पास परमेश्वर के विषय में गवाही देता हुआ आया, तो शब्दों या ज्ञान की उत्तमता के साथ नहीं आया। क्योंकि मैंने यह ठान लिया था कि, तुम्हारे बीच यीशु मसीह, वरन् क्रूस पर चढ़ाए गए मसीह को छोड़ और किसी बात को न जानू। मैं निर्बलता और भय के साथ, थरथराता हुआ तुम्हारे साथ रहा, मेरा संदेश, और मेरा प्रचार ज्ञान के लुभाने वाले शब्दों में नहीं था, परन्तु आत्मा और सामर्थ्य के प्रमाण में था, जिस से कि तुम्हारा विश्वास मनुष्यों के ज्ञान पर नहीं, परन्तु परमेश्वर की सामर्थ्य पर आधारित हो।[7]

दूसरी बात, सम्पूर्ण कलीसिया के इतिहास में जो अधिकांश लोग मसीही विश्वास में आए हैं, जिस में महान बुद्धिवादी भी शामिल हैं, वे पुनरूत्थान का ऐतिहासिक और वैध प्रमाण देखकर विश्वास में नहीं आए, बल्कि सुसमाचार की घोषणा को सुनकर आए हैं। तीसरी बात, यदि पुनरूत्थान में हमारा विश्वास उस घटना के ऐतिहासिक और वैध प्रमाणों पर आधारित है, तो हम उन अनगिनत विश्वासियों के विश्वास का कैसे स्पष्टीकरण दे सकते हैं जो ऐसे प्रमाण की लेश मात्र जानकारी के बिना ही अपने विश्वास के लिए जिए और मरे ?हम उस आदिवासी मसीही के विश्वास की कैसे सफााई दे पाएंगे, जो शायद ही पढ़ सकता हैं और पुनरूत्थान के लिए एक ऐतिहासिक प्रमाण भी नहीं दे सकता ? जिस विश्वास का वह तर्कसंगत रूप से समर्थन नहीं कर सकता, उसका इन्कार करने के

बजाय, वह अत्यन्त जघन्य सताव सह लेगा, यहाँ तक कि शहीद भी हो जाएगा। इन सत्यों के प्रकाश में, हम अवश्य ही यह निष्कर्ष निकालते है कि भले ही पुनरूत्थान के ऐतिहासिक और वैध प्रमाण कई तरह से सहायक हैं, तौभी वें पुनरूत्थान में हमारे विश्वास की नींव नहीं हो सकते।

तो फिर, पुनरूत्थान में विश्वासी के विश्वास की नींव क्या है ?वह कैसे जानता है कि मसीह जी उठा है ?उत्तर पवित्र शास्त्र से स्पष्ट है। पुनरूत्थान के विषय में हमारा ज्ञान और उस में अटूट विश्वास पवित्र आत्मा के पुनरूज्जीवन देने वाले और प्रकाशनकारी कार्य की बदौलत है। नए जन्म के समय में, परमेश्वर यीशु मसीह के पुनरूत्थान की वास्तविकता और मसीही विश्वास की सत्यता के सम्बन्ध में हमें अलौकिक रूप से विश्वास प्रदान करता है।[8] हम जानते हैं कि मसीह मृतकों में से जी उठा है क्योंकि पवित्र आत्मा ने मसीह के विषय में गवाही देने वाले वचनों की सत्यता को हमारे मनों में प्रकाशित किया है।[9] परिणामस्वरूप, हम विश्वास इसलिए भी करते हैं क्योंकि आत्मा हमारे हृदयों को पुनरूज्जीवित करता है, हमें विश्वास देता है और मसीह के प्रति जो हम पर प्रगट किया गया है, नया स्नेह या लगाव प्रदान करता है। प्रेरित पौलुस आत्मा के अद्भुत कार्य का इस प्रकार वर्णन करते है : क्योंकि परमेश्वर, जिस ने कहा, ''अन्धकार में से ज्योति चमके,'' वही है जो हमारे हृदयों में चमका है कि हमें मसीह के चेहरे में परमेश्वर की महिमा के ज्ञान की ज्योति दे।[10]

जिन्होंने नया जन्म पाया है, वे जिस प्रकार अपने स्वयं के अस्तित्व का इन्कार नहीं कर सकते, वे यीशु मसीह के पुनरूत्थान का भी इन्कार नहीं कर सकते। परमेश्वर का संप्रभु संकल्प और पवित्र आत्मा की गवाही के द्वारा, यह उनके लिए एक निर्विवाद सच्चाई बन गई है।[11] जैसा की मसीहत को सताने वाले जल्द ही सीख जाते हैं कि, "यीशु के धर्म से संक्रमित लोगों के लिए कोई इलाज नहीं है।"[12]

जो सत्य हम ने सीखे हैं, वे चेतावनी भी हैं और निर्देश भी। यद्यपि मसीहत की प्रतिरक्षा (Apologetics) का अपना एक महत्व है, फिर भी परमेश्वर का राज्य सुसमाचार प्रचार की घोषणा से आगे बढ़ता है। लोग विश्वास में आएंगे – वक्तृत्व कुशलता से नहीं और न ही तर्कसंगत विवादों से, परन्तु यीशु मसीह के जीवन, मृत्यु और पुनरूत्थान के हमारे विश्वासयोग्य प्रचार के द्वारा। हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि हमारा मिशन–कार्य मुर्ख का संदेश है, और जब तक परमेश्वर का आत्मा हमारे श्रोताओं के मनों को प्रकाशित करने के लिए और उनके हृदयों को पनुर्जीवित करने के लिए कार्य नहीं करता है, तब तक हमारा परिश्रम समय की बर्बादी और हमारे प्रयास व्यर्थ ही हैं। इस कारण, हमें मनुष्य की बुद्धि और ज्ञान की टूटी हुई लाठी पर निर्भर रहने से इन्कार करना चाहिए, और

हमें इस सत्य से लिपटे रहने की आवश्यकता है कि केवल सुसमाचार ही विश्वास करने वाले सभों के लिए उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ है।[13]

ऐतिहासिक और वैध प्रमाण

मसीह में किसी मनुष्य का विश्वास मसीह के पुनरूत्थान के ऐतिहासिक या वैध प्रमाणों को वर्णन करने की उसकी योग्यता पर निर्भर नहीं है; और न ही उसका विश्वास मसीहत की प्रतिरक्षा (Apologetics) या उत्तम दलील के द्वारा उसका बचाव करने की उसकी योग्यता के अनुसार सफल या असफल होता है।[14] तथापि, यह जानना और घोषित करना महत्वपूर्ण है कि मसीही विश्वास इतिहास के या सर्वोच्च और अत्यन्त मौलिक तर्क के उपयोग के विरूद्ध नहीं है। संसार में किसी नैतिक भलाई को बढ़ावा देने के लिए सच्चा मसीही विश्वास किसी कल्पित कथा को उपयोगी वर्णन में बदलने का प्रयास करने में कोई धर्माचरण नहीं पाता। बल्कि मसीही विश्वास और यीशु मसीह के पुनरूत्थान की नींव इतिहास की वास्तविक घटनाओं पर आधारित है जिन्हें धर्मनिरपेक्ष इतिहासकारों द्वारा उपयोग किए गए एक जैसे प्रकार और स्वरूप के प्रमाणों द्वारा बहुतायत से सिद्ध किया जा सकता है।

जो लोग मसीहत की सत्यता के दावों को गैर–ऐतिहासिक या पौराणिक कथा कहकर इन्कार करते हैं, वे पक्षपातपूर्ण पूर्वधारणाओं के कारण ऐसा करते हैं जो प्रमाणों का अधिक स्पष्टिकरण देने की आवश्यकता नहीं समझते।[15] उनका तर्क जोखिम भरा है : उन्होंने पहले ही यह निर्णय लिया है कि पुनरूत्थान एक असम्भाव बात है; इसलिए उसके पक्ष में दिया जाने वाला हर एक प्रमाण दोषपूर्ण है, और हर एक दावा मूर्ख का अनुमान या नीमहकिम की खोज होनी चाहिए।

सुसमाचार के प्रति पापी मनुष्यों की शत्रुता इस बात को अधिक दृढ बना देती है कि परमेश्वर के अनुग्रह के बिना और पवित्र आत्मा के पुनरूज्जीवित करने वाले कार्य के बिना कोई भी मनुष्य मसीह के दावों को स्वीकार नहीं करेगा। मनुष्य उन दावों की उपेक्षा करेगा जिनकी वह उपेक्षा कर सकता है, जिन दावों की वह उपेक्षा नहीं कर सकता, उन्हें वह बिगाड़ देगा, और जिन्हें वह बिगाड़ नहीं सकता, उन दावों का वह विरोध करेगा। दूसरे शब्दों में, जितना बल वह सत्य के अधिन आने के लिए लगा सकता था उस से अधिक बल वह उसका इन्कार करने में लगा देता है। यद्यपि, मसीह के पुनरूत्थान को साबित करने वाले प्रमाणों के सभी हिस्सों को खोज निकालना हमारे विषय–क्षेत्र से बाहर है, फिर भी निम्नलिखित पन्नो में हम कुछ हिस्सों पर विचार करेंगे जो विश्वासी

के विश्वास और खोजी के प्रश्नों दोनों ही के लिए लाभकारी होंगे।

पूर्वकथित घटना

यीशु मसीह की मृत्यु और पुनरूत्थान अचानक होने वाली घटनाएँ नहीं थीं जिन से वह आश्चर्यचकित हुआ; प्रत्येक के विषय में परमेश्वर की इच्छा की आवश्यक परिपूर्णता के रूप में स्पष्ट भविष्यद्वाणी की गई थी। यीशु के पुनरूत्थान के बाद उसके सन्देह करने वाले शिष्यों को यीशु द्वारा दिए गए निर्देश में यह दिखाई देता है : "हे निर्बुद्धियों, और भविष्यद्वक्ताओं की सब बातों पर विश्वास करने में मन्दमतियों! क्या यह अवश्य न था कि मसीह ये दुख उठाकर अपनी महिमा में प्रवेश करे ?"[16]

उसके आगमन से सैंकड़ों वर्ष पूर्व, पुराने नियम की महत्वपूर्ण भविष्यद्वाणियों में मसीह के पुनरूत्थान को स्पष्ट शब्दों में प्रगट किया गया था। दाऊद ने यह भविष्यद्वाणी की थी कि परमेश्वर मसीह को अधोलोक में नहीं छोड़ेगा और न ही उसकी देह को सड़ने देगा।[17] भविष्यद्वक्ता यशायाह ने भविष्य में देखा कि अपने लोगों के पापों के लिए मृत्यु तक दुख उठाने के बाद, परमेश्वर मसीह को बड़ा प्रतिफल देगा।[18] स्वयं मसीह ने अपने क्रूस पर चढ़ाए जाने से बहुत पहले अपनी मृत्यु और पुनरूत्थान की भविष्यद्वाणी की थी। जब अविश्वासी यहूदियों ने उसे मन्दिर शुद्ध करने के उसके अधिकार के विषय में चिन्ह देने को कहा, तब उस ने घोषणा की, "इस मन्दिर को ढ़ा दो, और मैं उसे तीन दिन में खड़ा कर दूँगा।"[19] जब शास्त्री और फरीसियों ने उसे उसके मसीह होने का और प्रमाण मांगा, तब उसने उन्हें फटकारते हुए अपने भावी पुनरूत्थान की प्रतिज्ञा दी : "इस युग के बुरे और व्यभिचारी लोग चिन्ह ढूँढ़ते हैं, परन्तु योना भविष्यद्वक्ता के चिन्ह को छोड़ कोई और चिन्ह उनको न दिया जाएगा। योना तीन रात दिन जल–जन्तु (मच्छ) के पेट में रहा, वैसे ही मनुष्य का पुत्र तीन रात दिन पृथ्वी के भीतर रहेगा।"[20]

ये भविष्यद्वाणियाँ साबित करती हैं कि मसीह के शिष्यों ने मसीहा सम्बन्धित स्वप्न को जीवित रखने के अपने अटूट प्रयास में पुनरूत्थान का आविष्कार नहीं किया। मसीह ने इतने स्पष्ट रूप से और बार बार उसकी घोषणा की कि उसके शत्रू भी उसकी भविष्यद्वाणियों के विषय में जानते थे कि वह फिर जी उठेगा।[21] "दूसरे दिन, अर्थात तैयारी के दिन के एक दिन पश्चात्, मुख्य याजकों और फरीसियों ने पिलातुस के पास इकट्ठे होकर कहा, 'महोदय, हमें स्मरण है कि उस धोकेबाज ने अपने जीते जी कहा था, तीन दिन के बाद मैं फिर जी उठूंगा।'"[22]

खाली कब्र

यीशु की मृत्यु के बाद उसकी देह पर जो ध्यान दिया गया – न केवल शिष्यों द्वारा, बल्कि उसके शत्रुओं द्वारा भी – उसे देखा जाए तो खाली कब्र और अप्राप्त देह उसके पुनरूत्थान का मजबूत प्रमाण प्रस्तुत करती हैं। पहिले दिन से ही, मसीहत को नष्ट करने के लिए यदि किसी बात की आवश्यक थी, तो वह यह कि यीशु नामक उस मनुष्य की देह को सामने पेश किया जाए। जिन यहूदी अगुवों ने उसकी मृत्यु की मांग की और रोमी अधिकारी जिन्होंने उसे क्रूस पर चढ़ाया, वे कब्र का निश्चित स्थान जानते थे और कब्र से देह को खोदकर निकालने का उनके पास प्रर्याप्त अवसर था। एक निर्भीक कदम के साथ वे संसार के सामने साबित कर सकते थे कि ईस्टर का सन्देश एक धोखा है और प्रेरितों ने बड़ी चालाकी से झूठी कहानी रची है। मसीहत अपनी शिशु अवस्था में ही खत्म हो जाती। उसकी देह क्यो सामने पेश नहीं की गई ?

इस प्रश्न के उत्तर के रूप में संशयवादीयों ने तीन परिकल्पनाएँ (अनुमान पर आधारित सिद्धान्त) खोज निकाली हैं। सभी समान रूप से हास्यप्रद हैं। पहिला यह है कि यीशु उस रोमी क्रूस पर नहीं मरा; वह केवल अचेत हो गया था और अधिकारियों ने गलत तरीके से उसे मृत घोषित कर दिया।[23] बाद में, जब ठण्डी कब्र में उसे रखा गया, तब उसे होश आ गया और उसने वहा से पलायन किया। हम क्रूसीकरण के स्वरूप में ही इस प्रकार की परिकल्पना के विरोध में विवादों को पाते हैं – रोमी भाले से उसका पंजर बेधा गया था और विशेषज्ञों द्वारा पूर्ण परीक्षण के बाद मृत घोषित किया गया था।[24] यदि वह इस अग्नि परीक्षा से बच भी जाता, तो वह शायद ही उस भारी पत्थर को हटा पाता जो कब्र के द्वार पर लगाया गया था। इस के अलावा, यह पूर्ण रूप से असम्भव लगता है कि इस प्रकार का व्यक्तित्व पॅलेस्टाईन के अज्ञात क्षेत्र में भाग कर जाए और गुमनामी में अपना बाकी का जीवन बिताए।

दूसरी परिकल्पना यह है कि शिष्यों ने उसके शव को चुरा लिया और उसे किसी अज्ञात स्थान में फिर दफना दिया। इस परिकल्पना के विरोध में दलीलें दो स्रोतों से आती हैं। पहिला, रोमी पहरेदारों की भयावह ख्याति, जिनका चरित्र और कार्यकुशलता प्रसिद्ध है। दूसरा, नए नियम का वह विवरण है, जिस में मसीह की मृत्यु से पहले और मृत्यु के बाद शिष्यों के भय का वर्णन है। पवित्र शास्त्र हमें बताता है कि मसीह की मृत्यु के तुरन्त बाद, महायाजक व फरीसियों ने पिलातुस से कहा कि वे प्रशिक्षित पहरेदार लगाकर कब्र को पूरी तरह से सुरक्षित कर दें ताकि यीशु के शिष्य आकर उसकी देह को न चुरा लें और फिर झूठी कहानी गढ़ें कि मसीह जी उठा है।[25] यह बिल्कुल असम्भव है

कि घबराए हुए मुट्ठीभर चेले पूरे रोमी पहरेदारों को पराजित करके यीशु की देह को चुरा ले। क्रूसीकरण के समय मसीह को त्याग कर शिष्यों ने पहले ही अपने साहस की कमी दिखाई थी, और उनका अगुवा, शिमोन पतरस, जब एक दासी ने उसे मसीह के अनुयायियों में से एक कहकर पहचान लिया था, तब वह उसका सामना भी नहीं कर सका।[26] उसी तरह, सारे रोमी पहरेदारों का अपने काम पर एक ही समय में सो जाना उतना ही असम्भव है जैसा कि मुख्य याजक ने बताया था।[27] वस्तुतः, पुनरूत्थान को स्वीकार करने से अधिक इस परिकल्पना को मानने के लिए और अधिक विश्वास की आवश्यकता है!

तीसरी परिकल्पना यह है कि शिष्य अनजाने में गलत कब्र पर चले गए थे। इस सच्चाई के प्रकाश में कि वह कब्र यहुदी महासभा के सदस्य, अरिमतिया के यूसुफ की थी, यह बात और भी असम्भव प्रतीत होती है।[28] उसने और नीकुदेमुस ने जो कि "फरीसियों में एक और यहूदियों का सरदार" था, दफनविधी के लिए यीशु की देह को तैयार किया था और कब्र में रखा था।[29] इसके अलावा, पवित्र शास्त्र हमें बताता है कि गलील से यीशु के पीछे चलने वाली स्त्रियाँ भी कब्र का निश्चित स्थान जानती थी।[30] यदि शिष्य गलत कब्र पर गए होते, तो यह निश्चित है कि मित्र और शत्रू दोनों ही ने अपनी गलती सुधार कर सही कब्र पर जाकर, उसकी देह को खोलकर, यीशु का शव दिखाया होता।[31] फिर से, यह परिकल्पना अन्य परिकल्पनाओं की तरह ही हास्यप्रद है।

विश्वसनीय गवाह

किसी भी घटना की ऐतिहासिक या वास्तविकता के रूप में पुष्टी करने के लिए, तीन बातें आवश्यक हैं : प्रत्यक्षदर्शी गवाह होने चाहिए, उनकी संख्या पर्याप्त होनी चाहिए, और वे विश्वसयोग्य और ईमानदार हो।[32] यह महत्वपूर्ण है कि यीशु मसीह के पुनरूत्थान के सम्बन्ध में पवित्र शास्त्र की गवाही इन तीनों शर्तों को पूरा करती है।

पहली बात, मसीह की सेवकाई, पुनरूत्थान और स्वर्गारोहण के आँखों देखे वर्णन पवित्र शास्त्र की गवाही को आधार प्रदान करते हैं। नए नियम का प्रत्येक लेखक प्रेरित पतरस के साथ खड़े रहकर यह घोषणा करता है : "क्योंकि जब हम ने तुम्हें अपने प्रभु यीशु मसीह की सामर्थ का और आगमन का समाचार दिया था, तो वह चतुराई से गढ़ी हुई कहानियों का अनुकरण नहीं था, वरन् हम ने आप ही उसके प्रताप को देखा था।"[33] नए नियम के लेखक प्रत्यक्ष आँखोदेखी गवाही के महत्व को स्पष्ट रूप से पहचानते हैं। ग्यारह के साथ शामिल होने के लिए, मत्तियाह को यूहन्ना के बपतिस्मे के

समय से मसीह के जीवन और सेवकाई के, और पुनरूत्थान से लेकर उस दिन तक का गवाह बनना जरूरी था, जब मसीह स्वर्ग पर चढ़ गया।[34] अपना सुसमाचार लिखते हुए, लूका ने उस बात पर जोर देने के लिए बहुत कष्ट उठाया कि वह उन बातों को क्रमानुसार लिख रहा था, जो उसे "पहले ही से देखनेवालों ने" सौंपी थी।[35] प्रेरित यूहन्ना अपनी पहली पत्री का आरम्भ पुत्र के साथ अपने उस व्यक्तिगत रिश्ते की पुष्टि करते हुए सामर्थ्य और वाक्पटूता के साथ करता है जिसका अवसर सभी प्रेरितों को प्राप्त हुआ था, जिससे की उनकी शिक्षा और दूसरों को उसकी घोषणा का आधार भी प्राप्त हुआ :

> उस जीवन के वचन के सम्बन्ध में जो आदि से था, जिसे हम ने सुना, जिसे हम ने अपनी आँखों से देखा, वरन् जिसे ध्यानपूर्वक देखा, और हमारे हाथों ने स्पर्श किया – वह जीवन प्रगट हुआ; हम ने उसे देखा है, और उसकी साक्षी देते हैं, और तुम्हें उस अनन्त जीवन का समाचार सुनाते हैं जो पिता के साथ था, और हम पर प्रगट हुआ – जिसे हम ने देखा और सुना उसी का समाचार हम तुम्हें भी सुनाते हैं, कि तुम भी हमारे साथ सहभागिता रखो; वास्तव में हमारी यह सहभागिता पिता के और उसके पुत्र यीशु मसीह के साथ है। और ये बातें हम इसलिए लिखते हैं कि हमारा आनन्द पूरा हो जाए।[36]

किसी भी अपक्षपाती परीक्षक के सामने यह स्पष्ट होगा कि प्रेरितों के पास न केवल मसीह के जीवन, मृत्यु और पुनरूत्थान का व्यक्तिगत और प्रथमदर्शी ज्ञान था, बल्कि वे अपने इस ज्ञान के गुणतत्व को दृढतापूर्वक कहने के महत्व को भी समझते थे। वे चाहते थे कि जगत इस बात को जाने कि कहीसुनी हुई बातें जानकर उन्होंने धोखा नहीं खाया था, परन्तु उन्होंने पुनरूत्थित मसीह के हाथ, पाँव और पसली को छूआ था।[37] उन्होंने उसके साथ सहभागिता रखी थी और उस से शिक्षा पाई थी।[38] अन्त में, जब वह उनकी आँखे से ओझल हो गया, तब उन्होंने उसे दण्डवत किया था।[39]

दूसरी बात, किसी घटना के सत्य और ऐतिहासिक होने की पुष्टि हो इसलिए प्रत्यक्षदर्शियों की पर्याप्त संख्या होनी चाहिए। स्पष्ट शब्दों में, गवाहों की संख्या जितनी बड़ी होगी, उतनी ही बड़ी उस घटना की विश्वसनीयता होगी। यही सिद्धान्त पुराने नियम की व्यवस्था में और कलीसिया को नए नियम में दी गई आज्ञाओं में पाया जाता है, जहाँ पर कोई भी घटना दो या तीन गवाहों की साक्षी से दृढ़ की जा सकती है।[40]

मसीह का पुनरूत्थान इस आवश्यकता की भी पूर्ति करता है। पवित्र शास्त्र बताता है कि

वहाँ सैंकड़ों विश्वसनीय गवाह थे जिन्होंने विभिन्न स्थितियों में और परिस्थितियों में पुनरूत्थित मसीह को आमने–सामने देखा था। पुनरूत्थान के रविवार को उसने मरियम मगदलीनी को बाग में और उसके बाद कब्र से लौट रही स्त्रियों के छोटे समूह को दर्शन दिया था।[41] उसी दिन जब क्लोपा और अन्य शिष्य इम्माऊस के मार्ग से एक साथ होकर जा रहे थे, तब वह उन में शामिल हुआ।[42] दिन बीतने से पहले, उस ने पतरस को भी दर्शन दिया और फिर दस शिष्यों को ऊपरी कोठरी में दर्शन दिया।[43] अगले रविवार उस ने ग्यारहों को दर्शन दिया और सन्देही थोमा के साथ अपना विख्यात वार्तालाप किया।[44] उसके बाद, एक ही समय में उस ने पाँचसौं से अधिक गवाहों को और अपने सौतेले भाई याकूब को भी दर्शन दिया।[45] किसी और अज्ञात समय में उस ने पतरस, यूहन्ना और पाँच अन्य शिष्यों को दर्शन दिया जब वे गलील समुद्र पर मछली पकड़ रहे थे।[46] अन्त में, वह अपने शिष्यों की उपस्थिती में जैतून के पर्वत से स्वर्ग पर चढ़ गया।[47]

पवित्र शास्त्र की गवाही के मद्देनजर, मसीह के पुनरूत्थान के विवरण को किसी झूठी कल्पना के आधार पर कि उसके लिए आँखोंदेखें गवाहों की पर्याप्त संख्या नहीं थी, अविश्वसनीय साबित करना असम्भव है। महान अंग्रेज प्रचारक चार्ल्स स्पर्जन ने इस सत्य की वाक्चातुर्यता के साथ गवाही दी है :

> क्या तुम्हारे मन में यह विचार नहीं आता कि इतिहास में दर्ज की गई और जिन पर आम तौर पर विश्वास किया गया ऐसी कई महत्वपूर्ण घटनाओं की गवाही मसीह के पुनरूत्थान के गवाहों के दस प्रतिशत लोगों ने भी जिस तरह से वे हुईं, नहीं देखी होगी ? देश देश को प्रभावित करने वाले विख्यात समझौते पर हस्ताक्षर करना, राजपुत्रों का जन्म, मंत्रिमंडल के मंत्रियों की राय, षडयंत्रकारियों की परियोजनाएँ और हत्यारों के कार्य। इन में से सभी बातें इतिहास में परिवर्तनकारी सिद्ध हुए हैं, और उनकी सच्चाई को लेकर कभी सवाल नहीं किए गए, परन्तु फिर भी बहुत कम लोग उनके विषय में गवाही देने सामने आए... यदि इस सत्य का इन्कार किया जाना है, तो सभी गवाहियों का अन्त होगा, और हम ने जानबूझकर उस बात को कहा है जो दाऊद ने फुर्ती से कही : "सब मनुष्य झूठे हैं;" और आज से प्रत्येक मनुष्य अपने पड़ोसी के प्रति इतना संशयवादी बने कि वह ऐसी किसी भी बात पर विश्वास नहीं करेगा जो उसने स्वयं देखी न हो; अगला कदम अपने स्वयं के

इन्द्रियों के प्रमाण पर सन्देह करना होगा; आगे मनुष्य और कौन सी मूर्खता करेंगे, मैं उनका पूर्वकथन करने का साहस नहीं करूंगा।[48]

तीसरी और अन्तिम बात, किसी घटना के सत्य और ऐतिहासिक होने की पुष्टि हो इसलिए आँखोंदेखें गवाहों को अपनी खराई प्रगट करनी होगी। दूसरे शब्दों में, उन्हें स्वयं को विश्वसनीय साबित करना होगा। इस में रहस्य की कोई बात नहीं है कि मसीहत के सम्पूर्ण इतिहास में, अनगिनत संशयवादीयों ने नए नियम की गवाहियों को अविश्वसनीय साबित करने का भरपूर प्रयास किया है; परन्तु वे उसकी सत्यता का खंडन नहीं कर पाए हैं या उन्हें नैतिक या आचार सम्बन्धित आधारों पर अयोग्य साबित नहीं कर पाए हैं। इस से संशयवादी आत्म–भ्रान्ति और सामुहिक मतिभ्रम की सम्भावना पर आक्रमण करने पर अपना ध्यान केन्द्रित करने के लिए विवश होते हैं।

यह विवाद किया जाता है कि शिष्य और पहली सदी के कई यहूदी पुनरूत्थान में विश्वास करने हेतु पहले से ही प्रवृत्त थे, इसलिए उन्होंने केवल वही देखा जो वे देखना चाहते थे। सर्वप्रथम, यहूदी राष्ट्र रोमी साम्राज्य के असहनीय बोझ के तले संघर्ष कर रहा था। इस कारण, यीशु के दिनों के यहूदी मसीह के आगमन की इच्छा कर रहे थे और उन्हें आसानी से यकीन हो गया होता। यहूदियों में से कई पहले ही झूठे मसीहों के पीछे चल पड़े थे, जो लोगों के मध्य उठ खड़े हुए थे और उन्होंने यह साबित कर दिया था कि वे किसी भी बात पर विश्वास करने का मन रखते हैं।[49] दूसरी बात, यीशु ने अपने भविष्य के पुनरूत्थान के विषय में कई भविष्यद्वाणियाँ की थीं। अपने प्रिय शिक्षक के प्रति शिष्यों के अपरम्पार प्रेम के साथ जोड़ने पर, ऐसी भविष्यद्वाणियाँ आत्म–भ्रान्ति और सामुहिक उन्माद को पनपने के लिए उत्तम भूमि सिद्ध होती।

इन प्रचलित परिकल्पनाओं के विरोध में कुछ तथ्य उभरकर सामने आते है। पहला तथ्य, यहूदी राष्ट्र के बहुसंख्य लोगों ने नासरत के यीशु को मसीह के रूप में नकार दिया था। उसकी सांसांरिक सेवा और मृत्यु उनके लिए ठोकर का कारण थी।[50] पहले से ही विक्षोभकारी क्रूस के सन्देश के साथ पुनरुत्थान को जोड़ना यीशु के मसीह होने के दावे को यहूदियों के लिए अधिक आकर्षक नहीं बना पाता था। इसके अलावा, यह परिकल्पना इस सच्चाई को विचाराधीन नहीं लेती कि कुछ ही दशकों में बहुसंख्य विश्वासी अन्यजाति थे जिन्हें सुसमाचार के विषय में किसी प्रकार की पूर्वधारणा या अभिरूची नहीं थी। जैसा कि लेविस और डेमारेस्ट ने लिखा है, " उन्होनें (यहूदी) धर्मशास्त्रीय दृष्टि से जो उम्मीद की थी यह घटनाएँ उसके बिल्कुल विपरीत थी, और उस समय के धर्मनिरपेक्ष जगत के दृष्टिकोण के पूर्ण विरोध में थी। यहूदियों के लिए वह ठोकर का कारण और गैरयहूदियों

के लिए मूर्खता थी क्योंकि उनके धर्मशास्त्रीय और विश्व विज्ञान में प्रमाण के लिए कोपरनिकस क्रान्ति की आवश्यकता थी।"[51]

दूसरा तथ्य, यहूदी और यूनानी पुनरूत्थान में विश्वास करने की मानसिकता नहीं रखते थे, और यही बात शिष्यों के विषय में भी निश्चित रूप में कही जा सकती है। पुनरुत्थान के बाद मरियम मगदलीनी ने मसीह को सबसे पहले देखा और फिर भी जब पहले उसका सामना खाली कब्र से हुआ तब उसने माना कि किसी ने प्रभु की देह चुरा ली है और उसे किसी अज्ञात स्थान में ले जाकर रखा है।[52] मसीह के पुनरूत्थान का समाचार सुनाई देने लगा था, उसके बावजूद शिष्यों ने उस पर विश्वास नहीं किया। लूका लिखते है कि मसीह के पुनरूत्थान की बातें "उन्हें अर्थहीन लगी," और मरकुस लिखते है कि "उन्हें विश्वास ही नहीं हुआ।"[53] पुनरूत्थित मसीह से उनकी पहली मुलाकात के समय उन्होंने सोचा कि वह बागवान है, कोई भूत, या इम्माउस के मार्ग पर यात्रा करने वाला मात्र एक मुसाफिर है।[54] ये गलत, बल्कि हास्यप्रद भ्रान्तिपूर्ण व्याख्याएँ आगे मसीह के दर्शनों और व्यवस्था और भविष्यद्वक्ताओं की बातों को समझने पर हल हुई।[55] थोमा का सन्देह दूर होने से पहले, उसे मसीह के हाथों में कीलों के निशानों को देखना पड़ा, उसके घाव में अपनी उँगली डालनी पड़ी और उसकी पसलियों में अपना हाथ डालकर देखना पड़ा![56] इसी कारण, यीशु ने उन्हें उनके अविश्वास और हृदय की कठोरता के लिए फटकारा और मूर्ख मनुष्य कहकर उन्हें उलाहना दी जो इतने मन्दबुद्धि थे कि भविष्यद्वक्ताओं द्वारा कही गई बातों पर विश्वास न कर पाए।[57] ये तथ्य उस दावे को प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त नहीं है कि शिष्यों ने पुनरूत्थान पर विश्वास करने का पहले से मन बना लिया था!

तीसरा और अन्तिम तथ्य यह है, कि विशिष्ट भ्रान्ति या दृष्टिभ्रम एक ही व्यक्ति तक सीमित होता है। यह सोचना कि प्रत्यक्षदर्शी होने का दावा करने वाले सैंकड़ों लोग एक ही दृष्टिभ्रम के शिकार थे, अत्यन्त असम्भव और विचित्र है। इसके अलावा, सामुहिक उन्माद के लिए सामान्य तौर पर सामर्थी राजनीतिक या धार्मिक संस्थाओं की आवश्यकता होती है जो जनसाधारण पर अधिकार रखते हैं। परन्तु मसीह के पुनरूत्थान और सुसमाचार के सन्दर्भ में, उन दिनों की सामर्थी संस्थाओं ने उस सन्देश के विरोध में एकजूट होकर उसे अविश्वसनीय साबित करने का यथाशक्ति प्रयास किया। प्रचारक अक्सर अशिक्षित, अनपढ़ लोग होते थे जिन में अपने विचार सिद्धान्तों को आगे बढ़ाने के लिए कोई राजनीतिक, धार्मिक, या आर्थिक बल नहीं होता था।[58]

बिना मकसद के झूठ

पुनरूत्थान की ऐतिहासिक सच्चाई के लिए जिस अत्यन्त विश्वसनीय तर्क को अक्सर नजरअन्दाज किया जाता है, वह है प्रेरितों पर लादे गए क्लेश और हानि के बोझ के बावजूद सुसमाचार के प्रति उनका आजीवन समर्पण। यदि मसीह का पुनरूत्थान न हुआ होता और शिष्यों ने यह कहानी मन से गढ़ी होती, तो हमें उस धोखे का उद्देश्य क्या था यह खोजने में सक्षम होना आवश्यक है। इस झूठ को फैलाने से वे क्या हासिल करने की आशा रखते थे ?यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि प्रेरित और बड़ी संख्या में प्रारम्भिक शिष्य निर्धन, बदनाम, सताए हुए और घृणित अवस्था में मरे। जैसा कि प्रेरित पौलुस ने घोषित किया : "हम आज तक जगत के कूड़े और सब वस्तुओं की खुरचन की नाई ठहरे हैं", और "यदि हम ने केवल इसी जीवन में मसीह पर आशा रखी है तो हमारी दशा सब मनुष्यों से अधिक दैयनीय है।"[59]

यदि इन मनुष्यों ने केवल इस लाक्षणिक कारण से पुनरूत्थान की कहानी गढ़ी होती कि मनुष्य सामान्य तौर पर ऐसा झूठ कहते हैं और उसका प्रचार करते हैं – धन, नाम और सत्ता – तो जब उन्होंने देखा कि उनका मनचाहा लक्ष्य पूरा नहीं हो पा रहा है तो वे उस कहानी को रद्द कर देते या उस से मुकर जाते। तथापि, इतिहास यह प्रमाणित करता है कि उन में से अधिकतर लोगों ने सुसमाचार में या जिस पर सुसमाचार आधारित है उस पुनरूत्थान में अपने विश्वास का इन्कार करने के बजाय भयानक सताव सहते हुए शहीद के रूप में मृत्यु स्वीकार कर ली। ऐसे क्लेश और मृत्यु के सामने ऐसी अटलता और दृढ़ता का एकमात्र स्पष्टीकरण यह है कि पुनरूत्थान सच है – एक ऐतिहासिक वास्तविकता – और प्रेरित और अन्य मसीही केवल वही बता रहे थे कि जिस के वे स्वयं सचमुच गवाह थे। जैसे कि प्रेरित यूहन्ना ने लिखा, "जो कुछ हम ने देखा और सुना है उसका समाचार तुम्हें भी देते है।"[60] जेम्स मॉन्टगोमेरी बॉईज लिखते हैं, "मसीह के शिष्यों का पुनरूत्थान पर विश्वास रखने का क्या कारण था ?पुनरूत्थान के अलावा और कुछ नहीं। यदि हम इस प्रकार शिष्यों के विश्वास का कारण नहीं बता सकते, तो हमारे पास इतिहास की सबसे बड़ी समस्या हैं। यदि हम वास्तविक पुनरूत्थान और पुनरूथित प्रभु के वास्तविक दर्शनों को इस की वजह बताते हैं, तो मसीहत समझने योग्य है और सभी को निश्चित आशा देती है।"[61]

इस समिकरण में दूसरा महत्वपूर्ण कारक गवाहों के रूप में स्त्रियों का उपयोग हैं। ऐसे चालबाज मनुष्य जो उम्मिद के साथ अपने स्वार्थ के लिए झूठ फैलाते है उन्होंने कभी यह नहीं किया होता। नये नियम के समय और संस्कृति में, स्त्रियों को कानूनी कामकाज में कभी वैध गवाह नहीं

माना जाता था। परन्तु, सभी चारों सुसमाचारों में, स्त्रियों ने यीशु मसीह के पुनरूत्थान के पहले गवाहों के रूप में अहम भूमिका निभाई है।[62] पुनरूत्थान के बाद, मरियम मगदलीनी ने प्रभु को सबसे पहले देखा और दूसरों को उसके पुनरूत्थान की गवाही देने वालों में वह सर्वप्रथम है। वस्तुतः एक बहादूर स्त्री के रूप में उसका वर्णन किया गया है कि उसने प्रेरितों के अविश्वास के बावजूद विश्वास किया और आज्ञा मानी।[63] उसके बाद रविवार की सुबह जो स्त्रियाँ मरियम मगदलीनी के साथ कब्र पर आई थीं, उन्होंने यीशु को देखा और वह पहली थीं जिन्हें वास्तव में उसने दूसरों को यह समाचार सुनाने के लिए भेजा।[64] यदि नए नियम के लेखक धोखाधड़ी करने का प्रयास कर रहे थे, तो उन्होंने ऐसी स्त्रियों का अपने मुख्य गवाहों के रूप में उपयोग नहीं किया होता; बल्कि उन्होंने पुरुषों को चुना होता, जो दूसरों की नजरों में अधिक विश्वसनीय साक्ष्य होते।

शिष्यों का परिवर्तन

मसीह के पुनरूत्थान का इन्कार करने वाले संशयवादी को जिस सबसे बड़ी रुकावट पर जय पाना अवश्य है, वह है शिष्यों का प्रगट परिवर्तन। यदि पुनरूत्थान ऐतिहासिक वास्तविकता नहीं है या उससे बुरी बात कि वह एक छल है, तो प्रगट रूप से जो आश्चर्यजनक परिवर्तन प्रेरितों और अन्य प्रत्यक्षदर्शियों के चरित्र और कार्य में हुआ, वह स्पष्टिकरण से परे है।

पुनरूत्थान से पहले, शिष्य डरपोक, भयभित और आत्म–सुरक्षा के प्रयास में लगे हुए थे। उसके पकड़े जाने के समय में उन्होंने उसे छोड़ दिया, उसके मुकदमे के दौरान उसका इन्कार किया, और अविश्वास की वजह से छिप गए और उसकी मृत्यु के बाद तीन दिनों तक निराशा में डूबे रहे।[65] उनके मध्य जो स्त्रियाँ थीं, उन्होंने उन पुरुषों से जिन्हें मसीह ने व्यक्तिगत रीति से प्रेरित होने की जिम्मेदारी सौंपी थीं, कई गुना अधिक नैतिक धैर्य और आशा दिखाई। रविवार की सुबह कब्र पर जाने वालों में स्त्रियाँ ही थीं, जबकि पुरुष डर के मारे ऊपरी कोठरी में दुबक कर बैठे थे। और सब से पहले स्त्रियों ने ही विश्वास किया और पुनरूत्थान की घोषणा की जबकि पुरुष सन्देह के कारण मौन थे।

तथापि, पुनरूत्थान के बाद यही पुरुष और स्त्रियाँ विश्वास के साहसी और अदम्य प्रतिरक्षक बन गए। प्रेरितों के काम की पुस्तक से, हम सीखते है कि वे संसार के विरोध में खड़े रहे और उन्होंने सुसमाचार और पुनरूत्थान के सन्देश के द्वारा "संसार को उलट–पुलट कर दिया।"[66] जब यहूदियों और अन्य जातियों की अत्यन्त धार्मिक और राजनैतिक संस्थाओं ने उन्हें आज्ञा दी कि वे "यीशु का नाम लेकर न तो कोई चर्चा करे और न ही कोई शिक्षा दे", तब उन्होंने मसीह के व्यक्तित्व

और सन्देश के प्रति निर्भीक और अडिग समर्पण के साथ उनके अधिकार को चुनौती दी।[67] प्रेरित पतरस और यूहन्ना ने महासभा को अपनी घोषणा में इस बात को प्रकट किया हैं : "तुम ही न्याय करो : क्या परमेश्वर की दृष्टी में यह उचित है, कि हम परमेश्वर की आज्ञा से बढ़कर तुम्हारी बात मानें ? क्योंकि यह तो हम से हो नहीं सकता कि जो हमने देखा और सुना है, उसे न कहें।"[68]

भले ही उन्हें डराया गया, पीटा गया, कैद में डाला गया, और वे शहीद हो गए, फिर भी मसीह के शिष्यों ने जो कुछ उन्होंने "देखा और सुना था"[69] उसका प्रचार करना बन्द करने या रोकने से इन्कार किया। एक ही पीढ़ी के इन पुरुषों और स्त्रियों ने यीशु के पुनरूत्थान के सत्य से साहस पाकर सम्पूर्ण ज्ञात जगत में सुसमाचार सुनाया।[70] उनके पास किसी प्रकार की राजनैतिक, धार्मिक या आर्थिक शक्ति नहीं थी। उनके पास शैक्षणिक प्रमाणपत्र नहीं था, फिर भी उन्होंने इस हद तक संसार को बदल दिया जिसकी तुलना किसी राजनैतिक या फौजी यंत्रणा से नहीं की जा सकती। यदि मसीह जिलाया नहीं गया होता, तो उनके जीवनों में इस प्रकार के परिवर्तनों का कारण कैसे समझाया जा सकता, और उनके मिशन–कार्य की सफलता का कारण कैसे बताया जा सकता ? आर. ए. टॉरी लिखते हैं, "इस प्रकार के मौलिक और विस्मयकारी नैतिक परिवर्तन के लिए कुछ बड़ी घटना हुई होगी। पुनरूत्थान की सच्चाई और उनके द्वारा पुनरूत्थित प्रभु को देखा जाना ही, इसे स्पष्ट कर देता है।"[71]

शत्रुओं का परिवर्तन

डसके पुनरूत्थान के बाद यीशु मसीह के अनुयायियों का मौलिक परिवर्तन संशयवादीयों की एक मात्र कठिनाई नहीं है। उसे उन लोगों के आगामी परिवर्तन का भी स्पष्टीकरण देना होगा जिन्होंने यीशु का विरोध किया और उसके बाद आनेवाली क्रांति का अनुसरण करनेवालों को सताया। पुनरूत्थान के बिना, मसीहत ने किस प्रकार उसके कुछ प्रारम्भिक और सबसे बड़े शत्रुओं को प्रभावित किया – विशेषकर यीशु के सौतेले भाईयों और तर्शिश के कुख्यात शाऊल को ?

पवित्र शास्त्र स्पष्ट रूप से बताता है कि यीशु के जीवन और सेवकाई के दौरान, न तो याकूब ने और न ही यहूदा ने उस पर विश्वास किया था, परन्तु दोनों प्रगट रूप से उसके व्यक्तित्व और सेवकाई के प्रबल विरोधी थे।[72] वस्तुतः, एक बार यीशु का परिवार उसे अपने साथ ले जाने के लिए नासरत से कफरनहूम की यात्रा करता हुआ आया क्योंकि उन्होंने सोचा कि "उसका चित्त ठिकाने नहीं है।"[73] परन्तु पुनरूत्थान के बाद, दोनों भाईयों में बड़ा बदलाव आया और वे प्रारम्भिक

कलीसिया के अगुवे बन गए।[74] हम उनकी पत्रियों के परिचयों में मसीह के प्रति उनकी भक्ति और उसकी प्रभुता के प्रति उनकी अधीनता देखते हैं, जहाँ पर वे खुद को प्रभु यीशु मसीह का दास कहते हैं।[75] वे अविश्वासी विरोधियों से बदलकर विश्वासयोग्य बन्दिस्त दास बन गए जिन्होंने स्वेच्छा से उसकी प्रभुता के प्रति अपने जीवन को समर्पित किया। पवित्र शास्त्र की गवाही को स्वीकार किए बिना, ऐसा परिवर्तन कैसे सम्भव था ?उन्होंनें पुनरूत्थित मसीह को देखा था![76]

प्रारम्भिक कलीसिया का दूसरा शत्रु जिसका परिवर्तन प्रेरितों द्वारा की जाने वाली पुनरूत्थान की घोषणा को अधिक प्रभावशाली बनाता है, वह तर्शिश का शाऊल है। प्रेरितों के कामों की पुस्तक में और उसके अपने वर्णनों में, शाऊल प्रारम्भिक मसीहत का सबसे बड़ा और उग्र शत्रु के रूप में स्पष्ट दिखाई देता है। अपने अज्ञान और अविश्वास के कारण, उस ने नासरत के यीशु को पाखंडी और ईश्वर निन्दक के अलावा और कुछ नहीं समझा और उसे लगा कि उसका अनुसरण करने वाले सभी कैद और मृत्यु के योग्य हैं।[77] प्रेरितों के काम की पुस्तक सबसे पहले उसका परिचय हम से तब कराती है जब वह स्तेफनुस की शहादत को अपनी ह्रार्दिक सम्मति देता हैं।[78] बाद में, हम उसे महायाजक के पास जाते हुए देखते हैं जो "प्रभु के चेलों को धमकाने और घात करने की धुन में था" और उसे इस अभिप्राय से पत्र प्राप्त करते हुए देखते है कि "यदि उसे इस पंथ के अनुयायी मिले, वे चाहे स्त्री हो अथवा पुरुष, तो उन्हें बान्ध कर यरूशलेम ले आए।"[79] परन्तु, दमिष्क के मार्ग पर, शाऊल में एक मौलिक परिवर्तन हुआ। उसे दृढ़ विश्वास हो जाता है कि यीशु इस्राएल का मसीह है, वह उसके नाम में बपतिस्मा लेता है और तुरन्त आराधनालयों में यह कहकर यीशु का प्रचार करने लगता है कि, "वह परमेश्वर का पुत्र है।"[80] उसके साथी यहूदी अभिभूत होकर कहने लगते है, "क्या यह वह व्यक्ति नही हैं जो यरूशलेम में, उन्हें जो इस नाम को लेते थे, नाश करता था, और यहाँ भी इसी लिये आया था, कि उन्हें बान्ध कर महायाजकों के पास ले जाए ?[81]

तुरन्त ही यहूदिया की सारी कलीसियाओं में यह समाचार फैला कि जो पहले इस विश्वास का सताव करता था, अब उसी विश्वास का प्रचार कर रहा है, जिसे नष्ट करने का उसने पहले प्रयास किया था।[82] परन्तु पौलुस कलीसिया का ऐसा उग्र शत्रु था कि कोई भी विश्वासी उसके साथ संगति करने के लिए तैयार नहीं था। जब तक कि बरनबास उसे प्रेरितों के पास नहीं ले आया और उन्होंने उसकी गवाही की पुष्टी नहीं की, तब तक वे सब उससे डरते थे।[83] इस प्रकार, मसीही विश्वास का सबसे बड़ा शत्रु, तर्शिश का शाऊल उसका सबसे बड़ा प्रतिरक्षक और प्रचारक बन गया। विलियम नील लिखते है : "ऐतिहासिक दृष्टि से जो बात संदेह से परे है वह यह, कि नासरियों का धर्मान्द

अत्याचारी, जो "धमकियाँ देता हुआ और हत्या पर उतारू" होकर यरूशलेम छोड़कर गया, वह मानसिक रूप से बेचैन होकर और शारीरिक रूप से अंधा होकर दमिष्क में आया और चंगा होने पर उस विश्वास का प्रमुख प्रचारक बन गया जिसे वह जड़ से नाश करने के लिए चल पड़ा था।"[84] चुंकि संशयवादी मनुष्य शाऊल के परिवर्तन और मौलिक रूप से बदले हुए जीवन की ऐतिहासिक वास्तविकताओं से इन्कार नहीं कर सकता, इसलिए वह उसका उचित स्पष्टीकरण देने के लिए कर्जदार है। दो हजार वर्षों बाद, कलीसिया आज भी (ऐसे स्पष्टीकरण के लिए) प्रतीक्षा कर रही है!

सर्वत्र इतिहास में लोगों की भीड़

मसीहत के पहले वर्ष में, प्रतिष्ठित शिक्षक और फरीसी गमलिएल ने यीशु के अनुयायियों के सम्बन्ध में महासभा को बड़ी बुद्धिमानी के साथ सम्बोधित किया। इस व्याख्यान को यहाँ पर विस्तृत रूप से उद्धृत करना उचित होगा :

> "हे इस्राएलियो, तुम जो कुछ इन मनुष्यों से करना चाहते हो, सोच समझ के करना। क्योंकि कुछ समय पहले थियूदास यह दावा कहते हुए उठ खडा हुआ था, कि मैं भी कुछ हूँ; और लगभग चार सौ मनुष्य उसके पीछे चल पड़े, परन्तु वह मार डाला गया; तथा उसके सब अनुयायी तित्तर बित्तर हुए और उनसे कुछ न बन पड़ा। उस व्यक्ति के बाद जनगणना के दिनों में गलील निवासी यहूदा उठ खडा हुआ, और उसने कुछ लोगों को अपनी ओर कर लिया। वह भी मिट गया, और उसके सब अनुयायी तित्तर बित्तर हो गए। अतः इस मामले में मैं भी तुम से कहता हूँ, कि इन मनुष्यों से दूर रहो और इन से कोई मतलब न रखो; क्योंकि यदि यह योजना या कार्य मनुष्यों की ओर से हो तो मिट जाएगा; परन्तु यदि यह परमेश्वर की ओर से है, तो तुम उन्हें मिटा न सकोगे। कहीं ऐसा न हो, कि तुम परमेश्वर से भी लड़नेवाले ठहरो।"[85]

यीशु मसीह के आगमन से पहले दो झूठे मसीही इस्राएल राष्ट्र में प्रगट हुए थे। दोनों के पीछे लोग चल पड़े थे, परन्तु दोनों की मृत्यु के बाद, उनके अनुयायी तुरन्त तित्तर बित्तर हो गए और उनकी गतिविधि के विषय में फिर कभी सुनने में नहीं आया। इसलिए, गमलिएल ने बुद्धिमानी से यह दलील की कि यदि नासरत का यीशु मात्र मनुष्य है और उसका पुनरूत्थान एक धोखा है, तो उसके अनुयायियों की भी यही दुर्दशा होगी। परन्तु गमलिएल ने बुध्दिमानी के साथ यह तर्क किया कि यदि

पुनरूत्थान की कहानी सच है, तो यीशु वह मसीहा था, क्रांति चलती रहेगी और उसका विरोध करनेवाले परमेश्वर के विरोध में लड़ने वाले ठहरेंगे। पिछले दो हजार वर्षों का इतिहास गमलिएल की दलील का समर्थन करते हुए दिखाई देता है।

यीशु मसीह के पुनरूम्थान के बड़े प्रमाणों में से एक है इतिहास काल में और संसार के राष्ट्रों और जातियों और लोंगों में विश्वास का निरन्तर विस्तार होना। वर्तमान समय में, बेहिसाब लाखों–करोड़ों लोग रहे हैं जो यीशु मसीह के साथ व्यक्तिगत रिश्ते की गवाही देते है और जो यह दावा करते है कि उसने उनके जीवन के मार्गों को प्रभावशाली रीति से बदल दिया। यह ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि ये लोग किसी वांशिक, राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षणिक उपसमुदाय के नहीं है, परन्तु उन में हर वंश, आर्थिक स्तर और शैक्षणिक स्तर के लोग शामिल है। प्रारम्भिक कलासिया ऐसे मनुष्यों से बनी थी जो अन्य किसी भी परिस्थितियों में इकट्ठा नहीं हो सकते थे। इस में यूनानी और यहूदी, खतना और खतनारहित, बर्बर और स्कुती, दास और स्वतंत्र सभी थे, केवल मसीह सबकुछ और सब में था।[86] आज की मसीहत के विषय में भी यही बात कही जा सकती है।

इस में यह ध्यान देना भी महत्पवूर्ण है कि मसीह का अनुसरण करने वाले अनगिनत पुरूषों, स्त्रियों और बच्चों ने यह बड़ा व्यक्तिगत त्याग करके किया है। कुछ संख्या शास्त्रीयों ने यह आकलन किया है कि शहीदों की संख्या पांच करोड़ विश्वासियों से अधिक है। इसके बावजूद, कुछ लोग दावा करते है कि यह संख्या और भी अधिक है। ये सारी बातें उस एक ही अटल प्रश्न की ओर ले जाती है : ऐसी भक्ति और त्याग के पीछे क्या औचित्य है, और ऐसे शत्रुओं के मध्य जिन्होंने उसे नाश करने की शपथ खायी हो, कलीसिया का नित्य बने रहने का क्या स्पष्टीकरण दिया जा सकता है ? यह सब हमें इस बात पर भरोसा करने हेतु विवश करता है कि उस रविवार की सुबह जब स्त्रियों ने पाया कि पत्थर हटाया गया है, तब वहाँ सचमुच कुछ हुआ था!

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. 1 कुरिन्थियों 15:14, 17
2. 1 कुरिन्थियों 15:17–18
3. 1 कुरिन्थियों 15:15
4. 1 कुरिन्थियों 15:19

5. अपोलोजेटिक्स (apologetics) एक मसीही विश्वास का वह शिक्षण क्षेत्र है जिसमें तर्कपूर्ण या विवेकशील तर्कों के

द्वारा विश्वास का पक्ष रखा जाता है, और तर्क–वितर्क द्वारा उन की त्रुटियों को दर्शाया जाता है जो विश्वास के विरोध में है।

6. प्रेरितों के काम 4:2, 33; 17:18; 24:21

7. 1 कुरिन्थियों 2:1–5. See also रोमियों 1:16 and 1 कुरिन्थियों 1:18–24

8. यूहन्ना 3:3

9. यूहन्ना 5:39; 1 यूहन्ना 5:6–10

10. 2 कुरिन्थियों 4:6

11. मत्ति 11:25 – "उसी समय यीशु ने कहा, 'हे पिता, स्वर्ग और पृथ्वी के प्रभु मैं तेरी स्तुती करता हूं कि तू ने ये बातें ज्ञानियों और बुद्धिमानों से छिपाकर रखी और बच्चों पर प्रकट की है।"

12. कहा जाता है कि यह उन सोवियत सिपाहियों की साक्षी है जो मसीहियों को जीवते मसीह पर विश्वास करने से भटकाना चाहते थे।

13. यशायाह 36:6; रोमियों 1:16

14. I owe this insight to Pastor Charles Leiter.

15. रॉबर्ट रेयमण्ड लिखते हैं जो मसीहत के दावों को इतिहास के विपरीत और पौराणिक मानते हैं, और इन्कार करते हैं – "वे अत्याधिक आपत्तिजनक, अलोचनात्मक और दार्शनिक आधार पर ऐसा करते हैं, उसका आसान सा कारण यह है कि वे दार्शनिकता और धर्म के स्तर पर अधिक सहज है।" (ए न्यू सिस्टैमैटिक थियोलॉजी ऑफ द क्रिश्चियन फेथ 581)

16. लूका 24:25–26

17. भजन संहिता 16:8–11

18. यशायाह 53:12

19. यूहन्ना 2:19

20. मत्ती 12:39–40

21. मत्ती 16:21

22. मत्ती 27:62–63

23. कुछ स्पष्ट कारणों की वजह से अकसर इसका उल्लेख "Swoon Theory – अचेत परिकल्पनाएँ" के रूप में किया जाता है।

24. यूहन्ना 19:31–34

25. मत्ती 27:64

26. मरकूस 14:27; मत्ती 26:56; लूका 22:55–62

27. मत्ती 28:11–15

28. मत्ती 27:57–61; मरकूस 15:42–47; लूका 23:50–56; यूहन्ना 19:38–42

29. यूहन्ना 3:1; लूका 23:50–53; यूहन्ना 19:38–42

30. मत्ती 27:61, मरकूस 15:47; लूका 23:55

31. Reymond, *A New Systematic Theology*, 566.

32. Henry Thiessen, *Introductory Lectures in Systematic Theology* (Grand Rapids: Eerdmans,1961), 246.

33. 2 पतरस 1:16

34. प्रेरितों के काम 1:21–26
35. लूका 1:1–4
36. 1 यूहन्ना 1:1–4
37. लूका 24:39; यूहन्ना 20:27
38. लूका 24:13–32, 41–49; यूहन्ना 21:12–14
39. प्रेरितों के काम 1:9–11
40. व्यवस्थाविवरण 17:6; 19:15; मत्ती 18:16
41. मरकूस 16:9–11; यूहन्ना 20:11–19; मत्ती 28:9–10
42. मरकूस 16:12–13; लूका 24:13–32
43. लूका 24:34–43; यूहन्ना 20:19–25
44. मरकूस 16:14; यूहन्ना 20:26–31; 1 कुरिन्थियों 15:5
45. 1 कुरिन्थियों 15:6–7
46. यूहन्ना 21:1–23
47. लूका 24:44–49; प्रेरितों के काम 1:3–8
48. Spurgeon, *The Metropolitan Tabernacle Pulpit*, 8:218–19.
49. प्रेरितों के काम 5:36–37
50. 1 कुरिन्थियों 1:23
51. ब्रूस डेमारेस्ट और गॉर्डन लेविस, इंटिग्रेटिव थियोलॉजी (ग्रैण्डरेपिड्स : बेकर एकेडेमिक्स 1990) 2:466, निकोलास कोपरनिकस (1473–1543) हेलियोसेन्ट्रिक कॉस्मॉलाजी का विचार लाने वाले प्रथम व्यक्ति थे – यह सोलर सिस्टम का वह प्रदर्श था, जिसमें पृथ्वी के स्थान पर सूर्य को ग्रहों (Planets) के केन्द्र में रखा गया था। उस का सिद्धांत यथास्थिति (Status quo) को तत्व रूप में भंग करने वाला और आधुनिक विज्ञान के इतिहास में मील का पत्थर था, जिसे अब 'कोपरनिकन रेवोल्यूशन' के नाम से जाना जाता है। इस कारण, तत्व रूप में भिन्न किसी ऐसे सिद्धान्त को अकसर ''कोपरनिकन रेवोल्यूशन'' का नाम दिया जाता है।
52. यूहन्ना 20:2, 13, 15
53. लूका 24:9–11; मरकूस 16:11
54. यूहन्ना 20:15; लूका 24:13–31, 37
55. लूका 24:25, 44–46
56. यूहन्ना 20:24–29
57. लूका 16:14; 24:25–26
58. प्रेरितों के काम 4:13
59. 1 कुरिन्थियों 4:13; 15:19
60. 1 यूहन्ना 1:3
61. यहुदा Montgomery Boice, *Foundations of the Christian Faith: A Comprehensible and Readable Theology* (Downers Grove, Ill.: InterVarsity Press, 1986), 358.
62. मत्ती 28:1–10; मरकूस 16:1–8; लूका 24:1–12; यूहन्ना 20:1–18

63. मरकूस 16:9–11; यूहन्ना 20:11–18
64. मत्ती 28:8–9
65. मत्ती 26:56, 69–75; मरकूस 16:14; यूहन्ना 20:19; लूका 24:17
66. प्रेरितों के काम 17:6
67. प्रेरितों के काम 4:18
68. प्रेरितों के काम 4:19–20
69. 1 यूहन्ना 1:1, 3
70. कुलुस्सियों 1:5–6
71. R. A. Torrey, *The Bible and Its Christ* (Old Tappan, N.J.: Fleming H. Revell, n.d.), 92.
72. यूहन्ना 7:3–4
73. मरकूस 3:21
74. यहुदा: प्रेरितों के काम 1:14; 12:17; 15:13; 1 कुरिन्थियों 9:5; 15:7; गलातियों 1:19; 2:9; यहुदा 1:1; and Jude: Jude v. 1; प्रेरितों के काम 1:14; 1 कुरिन्थियों 9:5
75. यहुदा 1:1; Jude 1:1
76. 1 कुरिन्थियों 15:7
77. 1 तिमुथि 1:13; 2 कुरिन्थियों 5:16
78. प्रेरितों के काम 7:58; 8:1
79. प्रेरितों के काम 9:1–2
80. प्रेरितों के काम 9:18–20
81. प्रेरितों के काम 9:21
82. गलातियों 1:22–23
83. प्रेरितों के काम 9:26–27
84. William Neil, *The* प्रेरितों के काम (London: Oliphants, 1973), 128.
85. प्रेरितों के काम 5:35–39
86. कुलुस्सियों 3:11

अध्याय – 24

उसके लोंगो के महायाजक के रूप में मसीह का स्वर्गारोहण

हे फाटकों अपने सिर ऊंचे करो! हे सनातन द्वारों, ऊंचे हो जाओ कि प्रतापी राजा प्रवेश करे! यह प्रतापी राजा कौन है?यहोवा, जो सामर्थी और शक्तिशाली है, यहोवा, जो युद्ध में पराक्रमी है। हे फाटकों अपने सिर ऊंचे करो! हे सनातन द्वारों, तुम भी ऊंचे करो, कि प्रतापी राजा प्रवेश करे! यह प्रतापी राजा कौन है ?सेनाओं का यहोवा, वही प्रतापी राजा है।

– भजन संहिता 24:7–10

जबकि हमारा ऐसा बड़ा महायाजक है जो स्वर्गों में से होकर गया, अर्थात् परमेश्वर का पुत्र यीशु, तो आओं, हम अपने अंगीकार को दृढ़ता से थामें रहे। क्योंकि हमारा ऐसा महायाजक नहीं जो हमारी निर्बलताओं में हम से सहानुभूती न रख सके। वह तो सब बातों में हमारे ही समान परखा गया, फिर भी निष्पाप निकला।

– इब्रानीयो 4:14–15

पुनरूत्थान के चालीस दिनों बाद, पवित्र शास्त्र इस बात की पुष्टि करता है कि मसीह अपने शिष्यों की बड़ी भीड़ की उपस्थिति में स्वर्ग पर चढ़ गया। प्रेरितों के काम की पुस्तक में हम पढ़ते है, "वह उनके देखते–देखते ऊपर उठा लिया गया, और बादल ने उसे उनकी आँखों से ओझल कर दिया।"[1] लूका का सुसमाचार इस बात की गवाही देता है कि "जब कि वह उन्हें आशिष दे रहा था तो वह उन से अलग हो गया और स्वर्ग पर उठा लिया गया।"[2] मरकुस घोषित करते है कि "वह स्वर्ग में उठा लिया गया और परमेश्वर की दाहिनी ओर बैठ गया।"[3] प्रेरित पौलुस ने इस घटना का इस प्रकार वर्णन किया है : "वह (परमेश्वर) जो शरीर में होकर प्रगट हुआ, आत्मा द्वारा धर्मी प्रमाणित हुआ, स्वर्गदूतों को दिखाई दिया, गैरयहूदियों में उसका प्रचार हुआ, जगत में उस पर विश्वास किया गया, और महिमा में ऊपर उठा लिया गया।"[4]

मसीह का पुनरूत्थान और उसका स्वर्गारोहण परमेश्वर की दाहिनी ओर उसके

विराजमान होने और उसके राजाभिषेक के अग्रगामी और प्रमाण थे। पवित्र शास्त्र के अनुसार पिता ने अपने साथ पुत्र की महिमा उस महिमा से की जो जगत की नींव रखे जाने के पहल उसकी थी।[5] परन्तु, जो महिमा फिर से प्राप्त की गई है वह उस महिमा से बढ़कर है जो उसने तब हटाकर रखी थी जब वह इस संसार में आया था।[6] क्योंकि अब वह पिता की दाहिनी ओर न केवल ईश्वरत्व की परिपूर्णता के रूप में विराजमान है, परन्तु महिमान्वित मनुष्य के रूप में भी उसने गौरव पाया है; केवल अधिकारी के रूप में नहीं, परन्तु उद्धारकर्ता और महायाजक के रूप में भी। वह परमेश्वर जो पुत्र और दूसरा आदम है; वह पराक्रमी राजा और वह मेम्ना है जो वध किया गया था; वह समस्त पृथ्वी का न्यायाधीश और महान महायाजक है, जिसने अपने लोगों के पापों के लिए अपने आप को प्रायश्चित के रूप में दे दिया।

मसीह का स्वर्गारोहण

स्वर्गारोहण के इस तेजस्वी विषय का आरम्भ करते हुए हम सबसे पहले अपना ध्यान पुराने नियम के वचनों की ओर देंगे। दाऊद का भजन 24 जुलूस के रूप में की जाने वाली आराधना विधि है जो सियोन में प्रभु के प्रवेश का उत्सव मनाती है। लम्बे समय से कलीसिया ने इस भजन का अर्थ स्वर्गीय यरूशलेम में मसीह के स्वर्गारोहण और "उस बड़े और सिद्ध तम्बू में जो हाथ का बनाया हुआ नहीं",[7] उसके प्रवेश का उत्सव बताया है। यद्यपि इस भजन को मसीह के लिए कहाँ तक लागू किया जाए इस विषय में हाल ही के वर्षों में विवाद हुआ है, फिर भी कलीसियाई इतिहास में सुधारवादीयों, प्युरिटनस् और कुछ महान ईश्वर विज्ञानीयों और खोजकर्ताओं ने मसीह के सिद्धान्त (christologically) के रूप में उसका अर्थ समझाया है। यहाँ पर हम उनकी अगुवाई का अनुसरण करेंगे और इस भजन में मसीह की उस महिमा को देखेंगे जब वह परमेश्वर की दाहिने ओर स्वर्ग पर चढ़ गया।

भजन 24 के पहले छः पद एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न को सम्बोधित करते हैं : प्रभु की उपस्थिति में कौन प्रवेश करेगा ? जैसा कि हम देखेंगे, इसकी शर्तें कठोर एव अटल हैं : "यहोवा के पर्वत पर कौन चढ़ सकता है ? और उसके पवित्र स्थान में कौन खड़ा हो सकता है ?जिसके काम निर्दोष और हृदय शुद्ध हैं, जिसने अपने मन को व्यर्थ बातों की ओर नहीं लगाया, और न कपट से शपथ खाई है।"[8] इन वचनों को पढ़कर हमें तुरन्त यह पहचान लेना चाहिए कि हम प्रभु के पर्वत पर चढ़ने या उसके पवित्र स्थान में खड़े रहने योग्य नहीं हैं। हमारे कर्म अशुद्ध हैं, और हमारे हृदय

अपवित्र हैं, और हमारे प्राण मूर्तिपूजा से भरे हुए हैं, और हमारे होंठ छल से दूषित हैं। हमारे पापों ने परमेश्वर के और हमारे बीच एक दरार उत्पन्न की है और स्वर्ग के प्रवेश को यरिहो की दिवार के समान दृढता से बन्द कर रखा है, ताकि कोई बाहर भीतर आने जाने न पाए।[9] हमारे विरोध में लिया गया फैसला न्यायपूर्ण है : कोई धर्मी नहीं है, एक भी नहीं।[10] यदि हमें अपने हाल पर छोड़ दिया जाए तो हमारे पास अपने मुंह बन्द रखकर अपने दण्ड का इन्तजार करने के अलावा दूसरा कोई उपाय नहीं है।[11] यद्यपि, हम खुद को बर्फ से धो लें और अपने कर्मों को सज्जीदार पानी से साफ करें, फिर भी हमारे अपराध का कलंक उसके सामने है।[12] हम न तो भीतर प्रवेश कर सकते हैं और न उसके निकट आ सकते हैं।

मानवजाति हर प्रकार से पूर्ण रूप से अयोग्य है, और फिर भी हमारे वंश में एक मनुष्य है जो स्वर्गों से होकर गया है और अपने लोगों के लिए परमेश्वर के सम्मुख मध्यस्थ के रूप में खड़ा है – धर्मी प्रभु यीशु मसीह।[13] वह आदम का वंश है और इसलिए सचमुच हमारे वंश का है। उसकी संसारिक यात्रा के दौरान, वह हर तरह से हमारे समान था, परन्तु पापरहित था।[14] उसने अपने प्रत्येक विचार, शब्द, और कार्य में परमेश्वर की महिमा की, और उसने अपने सम्पूर्ण हृदय, प्राण, और मन और बल से प्रभु अपने परमेश्वर से प्रेम किया।[15] एक निरंतर और निर्विघ्न आज्ञाकारिता उसके जीवन के सम्पूर्ण मार्ग की विशेषता थी।[16] वह व्यवस्था के विषय में निर्दोष और प्रत्येक अन्धकार को प्रगट करने वाली परमेश्वर की पवित्रता के उज्वल श्वेत प्रकाश में दोषरहित और निष्कलंक खड़ा रहा। पवित्र शास्त्र घोषणा करता है कि परमेश्वर अपने स्वर्गदूतों को भी गलतीयों का दोष लगाता है, परन्तु यीशु में वह सिद्ध पवित्रता और धार्मिकता का असीम संचय देखता है।[17] वह पवित्र, निष्पाप, निष्कलंक और पापियों से अलग किया हुआ था – आदम के वंश का एकमात्र सदस्य – जो अपने ही सद्‌गुणों की योग्यता से परमेश्वर के समक्ष स्विकृत ठहरा।[18] केवल उसी के विषय में परमेश्वर ने गवाही दी है, "यह मेरा प्रिय पुत्र है, जिससे मैं अति प्रसन्न हूँ।"[19]

भजन 24:7 में, हम इस नासरत के यीशु को, जो पाप करने में असमर्थ है, ऊपर चढ़ते हुए और स्वर्ग के फाटकों के सम्मुख खड़ा देखते हैं। वहाँ वह अपनी आवाज उठाकर पुकारता है, "हे फाटकों, अपने सिर ऊँचे करो। हे सनातन के द्वारों, तुम भी खुल जाओ! क्योंकि प्रतापी राजा प्रवेश करेगा!"[20] यहाँ पर वास्तव में जो हो रहा है इसकी हमें झलक भी मिल जाती, तो यीशु मसीह के प्रति हमारी श्रद्धा कितनी बढ़ जाएगी! उसकी अपनी योग्यता के द्वारा, वह स्वर्ग के फाटकों के सामने खड़ा है और उन्हें अपने लिए खुलने की आज्ञा देता है। उसकी वाणी से उसके स्वर्गदूत मोर्चे की

चहारदीवारी के पास दौड़कर आते हैं और उसकी झलक पाने के लिए दीवार से झांककर देखते हैं।[21] वे पूछते हैं, "वह प्रतापी राजा कौन है जिसके लिए स्वर्ग के द्वारों को भी खुलना आवश्यक है ? यह मनुष्य कौन है जो अपने ही नाम से आकर अपनी ही योग्यता के गुणों से प्रवेश की मांग करता है ?" महान सेराफिम भी अपने सिरों को झुकाते हैं और परमेश्वर की उपस्थिति में खुद को इसलिए छिपाते हैं ताकि यह अंगीकार करे कि उनकी अपनी कोई धार्मिकता नहीं है, यह दिखाने के लिए कि उनकी योग्यता और महिमा परमेश्वर से आती हैं और उसके अनुग्रह का फल हैं।[22] वें किसी योग्यता पर घमण्ड नहीं करते और न ही अपने नाम से किसी बात का दावा करते है। परन्तु, यह मनुष्य न केवल स्वर्ग पर परन्तु साक्षात परमेश्वर के सिंहासन पर भी दावा करता है! सो यह प्रतापमय राजा कौन है ?इस प्रश्न के उत्तर में, मसीह दूसरी बार अपनी आवाज ऊंची उठाकर पुकारता है, "परमेश्वर जो सामर्थी और पराक्रमी है, परमेश्वर जो युद्ध में पराक्रमी है! हे फाटको, अपने सिर ऊंचे करो। हे सनातन के द्वारो तुम भी खुल जाओ! क्योंकि प्रतापी राजा प्रवेश करेगा!"[23]

यह दूसरी आज्ञा आगे उठने वाले सभी प्रश्नों को खामोश कर देती है। उसके स्वंर का बल उसकी पहचान को प्रगट करता है। वह देहधारी वचन, मनुष्य का पुत्र है, जो वहाँ पर चढ़ जाता है जहाँ वह पहले था।[24] बिना किसी विलम्ब के, प्राचीन चटखनियां खुल जाती हैं, शहतीर कांप उठते हैं, और नासरत के यीशु के लिए फाटक खुल जाते हैं :

परमेश्वर का पुत्र,[25]
    आदम का पुत्र;[26]
पवित्र आत्मा से जो गर्भ में आया,[27]
    दाऊद के राजवंश में पैदा हुआ;[28]
जिसमें परमेंश्वरत्व की समस्त परिपूर्ण,
    वास करती है।[29]
यहूदा वंश का सिंह,[30]
    वह मेम्ना जो जगत के पापों को हर लेता है![31]
परमेश्वर के सिंहासन के सामने हियावपूर्ण,[32]
    जो हमें भाई कहने से नहीं लजाता।[33]
जीवतों और मृतकों का न्यायाधीश,[34]
    अपने लोगों का मध्यस्थ।[35]

स्वर्गदूत उस क्षण की महिमा का युगानुयुग बयान करेंगे। विजयी पुत्र उन घावों को लेकर लौटता है जो उसकी विजय को प्रमाणित करते हैं। उसके लोगों के विरोध में निर्णित कर्ज का जो प्रमाणपत्र था उसे उसने रद्द कर दिया और उसे क्रूस पर कीलों से जड़ दिया।[36] उसने शैतान को निहत्था कर दिया और उसका सबके सामने खुल्लमखुल्ला तमाशा बनाया, जिसने लोगों को मृत्यु के दण्ड के अधीन कैद कर लिया था।[37] उसने परमेश्वर की धार्मिकता को प्रमाणित किया है, जो दुष्ट को धर्मी ठहराता है।[38] इस कारण, सारा का सारा स्वर्ग उसे देखता है जिसे बेधा गया था और वे ऊंचे शब्द से कहते है कि : "वध किया हुआ मेम्ना ही सामर्थ, और धन, और ज्ञान, और शक्ति, और आदर, और महिमा, और धन्यवाद के योग्य है!"[39]

जब विजयी मसीह सनातन फाटकों से प्रवेश करता है, तब पिता उसे संकेत करता है कि वह सिंहासन पर विराजमान हो और उसकी दाहिनी ओर अपना अधिकार युक्त स्थान ग्रहण करे। वहाँ पर वह सब प्रकार की प्रधानता, और अधिकार, और सामर्थ, और प्रभुता के, और हर एक नाम के ऊपर, जो न केवल इस युग में, पर आनेवाले युग में भी लिया जाएगा, बैठ गया ताकि वे पुत्र का भी वैसे ही आदर करें, जैसे वे पिता का आदर करते हैं।[40] इस प्रकार, दाऊद की भविष्यद्वाणी अन्त में और पूर्ण रूप से पूरी हुई : "यहोवा ने मेरे प्रभु से कहा, 'मेरे दाहिने बैठ।'"[41]

हमारा भाई नासरत का यीशु, महिमा का राजा है। वह कोई नवोदय देवता या हाल ही में उभरकर सामने आया हुआ कोई अच्छा प्राणी नहीं है। वह परमेश्वर का सनातन पुत्र है, जिसने परमेश्वर के स्वरूप में होकर भी परमेश्वर के तुल्य होने को अपने वश में रखने की वस्तु न समझा, परन्तु अपनी महिमा को हटाकर रख दिया, देह धारण किया, और अपने लोगों के पापों का प्रायश्चित करने के लिए मर गया।[42] तीसरे दिन, वह फिर मरे हुओं में से जी उठा, और कई विश्वसनीय और दृढ़ प्रमाणों के साथ खुद को जीवित साबित करने के बाद, वह स्वर्ग पर चढ़ गया और वह ऊंचे स्थान पर प्रतापमय परमेश्वर की दाहिनी ओर बैठ गया।[43] वहाँ वह महायाजक और अपने लोगों के अगुवे के रूप में और सबके प्रभु और न्यायाधीश के रूप में सिंहासन पर विराजमान है।

मध्यस्थ के रूप में मसीह

जब मनुष्य यीशु मसीह परमेश्वर की दाहिनी ओर जा बैठा, तब उसने परमेश्वर और सृष्टि के बीच सारी वस्तुओं के मध्यस्थ की जिम्मेदारी धारण की। जब उसे यह पद प्रदान करने में पिता का उद्देश्य बहुआयामी है, और हर एक पहलु पुत्र के आधिपत्य को और उसके प्रति पिता के अपरम्पार प्रेम को

दर्शाता है। मध्यस्थ के रूप में मसीह की भूमिका समय और सृष्टि में पिता और पुत्र के उस रिश्ते का प्रगटीकरण है जो सनातनकाल से विद्यमान थी। आरम्भ में, हमें यह समझना आवश्यक है कि पिता का हमेशा यह उद्देश्य और सुइच्छा रही है कि पुत्र को सभी बातों में प्रधानता मिले और उसके बिना कुछ भी न किया जाए।[44] इस कारण, परमेश्वर हमेशा अपने पुत्र की मध्यस्थी के द्वारा अपनी सृष्टि के साथ व्यवहार करने से प्रसन्न होता रहा है। उसने अपने पुत्र के द्वारा जगत की उत्पत्ति की और उसी के द्वारा उसे सम्भालता है। वह अपने पुत्र के द्वारा खुद को जगत पर प्रगट करता है और वह अपने पुत्र के द्वारा ही जगत को छुटकारा देता है।[45] एक दिन वह अपने पुत्र के द्वारा जगत का न्याय करेगा।[46]

दूसरी बात, हमें यह भी समझने की आवश्यकता है कि कलवरी पर पुत्र का मध्यस्थी का कार्य हमेशा अपनी सृष्टि के प्रति परमेश्वर के प्रकाशन का केन्द्र स्थान रहेगा। उसकी केन्द्रियता और प्रधानता सनातनकाल के अन्तहीन युगों में कम नहीं होगी, बल्कि जैसे जैसे छुटकारा प्राप्त सृष्टि सुसमाचार की अनन्त महिमाओं को खोजने के लिए अपनी अन्तहीन प्रतिज्ञा जारी रखती है, वैसे वैसे वह बढ़ती ही जाएगी।

तीसरी बात, हमें हमेशा यह ध्यान में रखना है और इस सच्चाई में घमण्ड करना है कि प्रत्येक उत्तम और सिद्ध वरदान उस परमेश्वर की ओर से है जिसने हमेशा अपने पुत्र के द्वारा और अपने पुत्र के निमित्त सृष्टि को अनुग्रह से भर दिया है।[47] जो परमेश्वर की आराधना करते है और जो उसे कोसते है, दोनों ही उस प्रत्येक उत्तम वस्तु के लिए जो उन्होंने अब तक पायी है, पुत्र की मध्यस्थी के प्रति कर्जदार हैं।[48] परमेश्वर के समक्ष कलीसिया का सही स्थान और उस पर उण्डेले गए वरदान पुत्र के कारण और पुत्र के निमित्त है।[49] अधर्मीयों पर पड़ने वाली वर्षा और उनके मुख को गर्माहट पहुँचाने वाला सूरज, उसी के द्वारा दिया गया है!

चौथी बात, हमें यह समझना आवश्यक है कि मसीह के देह धारण से पुत्र के मध्यस्थी के कार्य को एक नया और अद्‌भुत पहलू प्राप्त हुआ। मनुष्य मसीह यीशु, परमेश्वर का सनातन पुत्र और आदम का सच्चा पुत्र, अब विश्व को सम्भालता है, उस पर शासन करता है, और उसके लिए मध्यस्थी करता है, और यह सबकुछ उसके देह धारण और अन्तिम रूप में उसकी देह को महिमा प्राप्त होने के द्वारा है। इस सत्य में निहित अर्थ विलक्षण हैं। सृष्टि के लिए परमेश्वर के उद्देश्य का शिखर नासरत के यीशु के द्वारा और उसके माध्यम से प्राप्त किया गया है।

मसीह हमारा अग्रदूत

उत्पत्ति की किताब में सृष्टी का विवरण हमें यह समझाता है कि परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप में सृजा और उसका उद्देश्य था कि वह समस्त सृष्टि पर उसके प्रतिनिधि के रूप में अधिकारी बने।[50] परमेश्वर ने मात्र मिट्टी से बने अपने किसी जीव को ऐसी अधिकारपूर्ण उपाधी प्रदान की, इससे प्रेरित होकर भजन का लेखक अभिभूत होकर बोल उठता है : "जब मैं आकाश को, जो तेरे हाथों का कार्य है, और चंद्रमा और तारागण को जो तू ने नियुक्त किए हैं, देखता हूँ; तो फिर मनुष्य क्या है कि तू उसका स्मरण रखे। और आदमी क्या है कि तू उसकी सुधि ले क्योंकि तू ने उसे परमेश्वर (स्वर्गदूतों) से थोड़ा ही कम बनाया है, और महिमा और प्रताप का मुकुट उसके सिर पर रखा है। तू ने उसे अपने हाथों के कार्यो पर प्रभुता दी है; तू ने उसके पांव तले सब कुछ कर दिया है।"[51] परमेश्वर ने सबकुछ हमारे पिता आदम के पांव तले कर दिया। परमेश्वर ने उसे सृष्टि का मुकुट बनाया, अपने वंश का प्रधान बनाया, और परमेश्वर के सभी हाथ के कामों पर अधिकारी बनाया। परन्तु, वह तुरन्त ही सांप के छल में फंस गया और उसके विद्रोह में भागी हुआ।[52] परिणामस्वरूप, मनुष्य ने अपना ऊंचा स्थान खो दिया, और समस्त सृष्टि को घोर अव्यवस्था, उलझन, व्यर्थता, और भ्रष्टता की गुलामी में झोंक दिया।[53] इसके अलावा, मनुष्य को परमेश्वर की उपस्थिति छोड़कर ईश्वरीय न्याय के वश में होना पड़ा, जिसका परिणाम मृत्यु में हुआ।[54]

मनुष्य की नजर से, सुखलोक खो गया और उसे फिर प्राप्त करना पूरी तरह से एक असम्भव हो गया। फिर भी परमेश्वर के रहस्यमय प्रयोजन और दूरदर्शिता से, जगत की उत्पत्ति से पहले जिस महान कार्य का प्रारूप तयार किया गया वह प्रगट होने वाला था![55] जब समय पूरा हुआ, परमेश्वर ने अपने पुत्र को आदम के पतित वंश का भागी होने के लिए भेज दिया, ताकि परमेश्वर के लिए एक प्रजा को छुड़ा सके, और उन्हें वापस उस महिमा में ला सके जो उस महिमा से अत्यन्त श्रेष्ठ होगी, जो खो गई थी![56] यह इब्रानियों की पुस्तक के दूसरे अध्याय का सबसे बड़ा तर्क है :

> उसने उस आनेवाले जगत की जिस की चर्चा हम कर रहे है स्वर्गदूतों के अधिन न किया। वरन् किसी ने कही यह गवाही दी है, मनुष्य क्या है कि तू उसकी सुधी लेता है ?या मनुष्य का पुत्र क्या है कि तू उसकी चिन्ता करता है ?तू ने उसे स्वर्गदूतों से कुछ ही कम किया; तू ने उस पर महिमा और आदर का मुकुट रखा और उसे अपने हाथों के कार्यों पर अधिकार दिया। तू ने सबकुछ उसके पांवों के नीचे कर दिया। इसलिए जब कि उस ने सबकुछ उसके अधीन कर दिया, तो

> उसने कुछ भी रख न छोड़ा जो उसके अधीन न हो। पर हम अब तक सबकुछ उसके अधीन नहीं देखते। पर हम यीशु को जो स्वर्गदूतों से कुछ ही कम किया गया था, मृत्यु का दुख उठाने के कारण महिमा और आदर का मुकुट पहिने हुए देखते है ताकि परमेश्वर के अनुग्रह से वह हर एक मनुष्य के लिए मृत्यु का स्वाद चखे।[57]

इब्रानियों के लेखक को दिए गए ज्ञान के अनुसार, परमेश्वर के पास नई सृष्टि के लिए योजना है, ऐसे जगत के लिए जो आने वाला है।[58] यह नया जगत स्वर्गदूतों की अधिनता में नहीं किया जाएगा, परन्तु उन लोगों की अधीन किया जाएगा जो आदम के पतित वंश से छुड़ाए गए हैं। इस कारण, परमेश्वर का सनातन पुत्र थोड़े समय के लिए स्वर्गदूतों से थोड़ा ही कम किया गया ताकि वह अपनी प्रजा के हर एक मनुष्य के लिए मृत्यु का स्वाद चख सके, उन्हें मृत्यु के दण्ड से छुड़ा सके, और उन्हें वापस उस महिमा में ला सके जो परमेश्वर ने उनके लिए नियुक्त की है।

आज सबके सामने यह स्पष्ट है कि परमेश्वर की यह योजना अपनी समग्रता में अभी पूरी होना बाकी है, क्योंकि अब तक हम सारी बातें परमेश्वर के छुड़ाए हुए लोंगो के अधीनता में नहीं देखते।[59] हालांकि, हम यीशु को मरे हुओं में से जिलाया गया, परमप्रधान की दाहिनी ओर विराजमान, महिमा और आदर का मुकुट पहना हुआ देखते हैं।[60] वह अपने लोंगो के उध्दार का कर्ता बनकर उन से पहले गया है।[61] वह वर्तमान आशा की प्रतिज्ञा और अग्रदूत है जो कई पुत्रों को महिमा में लाएगा! पवित्र शास्त्र घोषणा करता है कि सृष्टि बड़ी आशा भरी दृष्टि से परमेश्वर के पुत्रों के प्रगट होने की प्रतिक्षा कर रही है और आप ही विनाश के दासत्व से छुटकारा पाकर, परमेश्वर की सन्तानों की महिमा की स्वतंत्रता प्राप्त करेगी, जिस के लिए वह कराहती है। इस एक मनुष्य यीशु के कारण सृष्टि निराश नही होगी, और न ही हम निराश होंगे!

मसीह हमारा महायाजक

सम्पूर्ण इतिहास में, एक मध्यस्थ की जरूरत पतित मनुष्य की बड़ी समस्या रही है जो समान स्तर पर परमेश्वर के साथ व्यवहार कर सके और मनुष्य के साथ भी उसकी पतित और अभागी अवस्था में व्यवहार कर सके। परमेश्वर और मनुष्य के बीच मध्यस्थ के रूप में योग्य बनने के लिए, यह आवश्यक था कि इस मध्यस्थ के इश्वरीय और मानव दोनों स्वभाव "अभिन्न रूप से एक ही व्यक्ति में बिना रूपांतरण, संयोजन, या भ्रम के एक साथ जोड़े गए हों।"[62] परमेश्वर के स्वरूप में होने पर और

परमेश्वर के तुल्य होने पर, ऐसा व्यक्ति परमेश्वर के साथ व्यवहार कर पाएगा।[63] सच्चा मनुष्य होने के कारण और सब बातों में परीक्षा होने पर भी पापरहित बने रहने के कारण, वह मनुष्य की कमजोरी में सहानुभूति रख पाएगा और उसके लिए मध्यस्थी कर सकेगा।[64] ये गुण मध्यस्थ में होना आवश्यक है और परमेश्वर की महिमा के लिए और हमारी आत्माओं की सांत्वना के लिए ये सारे गुण बल्की उससे अधिक नासरत के यीशु में पाए जाते हैं। वह अक्षरशः परमेश्वर है और उस में परमेश्वरत्व के सभी गुण, महिमा की बातें और प्रशंसा समान रूप में विद्यमान है।[65]

उसी प्रकार वह पूर्ण रूप से मनुष्य है।[66] देहधारण में वह सारी बातों में अपने भाईयों के समान बना और सब बातों में उसने परीक्षा को सह लिया, तौभी निष्पाप रहा।[67] इस कारण, वह विश्वासयोग्य और दयालू महायाजक है जो अज्ञान और गुमराह लोगों के साथ व्यवहार करने में समर्थ है और उनकी कमजोरियों के साथ सहानुभूति रख सके।[68] अपने सदाचार और योग्यता के द्वारा, वह स्वर्ग पर चढ़ गया ताकि परमेश्वर के सिंहासन कक्ष में हमारे लिए मध्यस्थी कर सके।[69] वह परमेश्वर के समक्ष हियाव के साथ खड़ा रहता है और फिर भी हमें अपने भाई कहने से नहीं लजाता।[70] महिमामण्डित शरीर से सज्जित होकर, वह ऐसा मनुष्य बन गया है जिस ने "हम से पहले" महिमा में प्रवेश किया और ऐसा मनुष्य जो "हमारे लिए" परमेश्वर के सिंहासन के सामने जा खड़ा हुआ। वहाँ पर वह अपने लोगों के प्रतिनिधि के रूप में विराजमान है, और उनके लिए मध्यस्थी करने वह युगानुयुग जीवित है।[71]

हमारा पुरखा अय्यूब ऐसी मध्यस्थता के लिए तरसा था जिस में परमेश्वर और मनुष्य दोनों ही के व्यवहार करने की अद्वितिय योग्यता हो।[72] जिस मध्यस्थ के लिए अय्यूब तरसा था, वह अब परमेश्वर की दाहिनी ओर दृढ़ता से विराजमान है। युगों के अन्त में, वह अपने उस बलिदान के द्वारा, जो उसने पूरा किया, पाप को पूर्ण रूप से दूर कर देगा, और उस ने अपने लोगों के लिए परमेश्वर की उपस्थिति में प्रगट होने के लिए स्वर्ग में प्रवेश किया है।[73] उसके द्वारा, हमारे प्राण के लिए लंगर है, ऐसी आशा जो निश्चित और दृढ़ है और जो परदे के भितर तक पहुँचती है।[74] वह हमारा ''पूरा पूरा'' उद्धार करने में समर्थ है, क्योंकि वह हमारे लिए निवेदन करने को सर्वदा जीवित है।[75]

यद्यपि मसीह ने कल्वरी पर हमारे प्रायश्चित को पूरा किया और हमारे धर्मी ठहराए जाने की हर आवश्यकता और मांग को पूरा किया, फिर भी पवित्र शास्त्र हमें सिखाता है कि मसीह अपने लोगों के लिए निरंतर निवेदन करता है।[76] पवित्र शास्त्र की यह सबसे सुन्दर शिक्षाओं में से एक है और फिर भी उसे अक्सर गलत समझा जाता है। सुविख्यात बाइबल विद्वान चार्ल्स हॉज ने लिखा,

"मसीह की मध्यस्थी के गुणधर्म के विषय में बहुत कम कहा जा सकता है। पवित्र शास्त्र के अभिवेदन पर बहुत अधिक बल देना भूल है। और उन्हें समझाकर उसके महत्व को कम करना गलत है।"[77] और जॉन म्यूरे ने इस प्रकार लिखा :

> हमारे प्रभु की मध्यस्थता की भूमिका को कभी कभी आम मसीही विचार में गलत रूप से पेश किया जाता है। उसे ऐसा नहीं समझा जाना चाहिए कि वह पिता के सामने निरंतर बाहें फैलाकर खड़ा है, जैसा कि हम कब्रों के तहखाने के पच्चीकारी में बनी आकृतियों को देखते हैं, और गिडगिड़ाते हुए और आँसु बहाते हुए विमुख परमेश्वर की उपस्थिति में हमारे निमित्त बिनती करता है; परन्तु उसे हमें सिंहासन पर विराजमान याजक और राजा के रूप में देखना है, जो वह चाहता है, पिता से मांगता है, जो हमेशा उसकी बिनती सुनता है और पूरी करता है। स्वर्ग में हमारे प्रभु का जीवन उसकी प्रार्थना है। उसका एक बार स्वयं को देना पूर्ण रूप से ग्रहण योग्य है और प्रभावकारी है; पिता के साथ उसका वार्तालाप तुरन्त और अटूट है; उसके लोगों के लिए उसकी याजकीय सेवकाई कभी खत्म न होनेवाली है, और इसलिए जो उध्दार वह उनके लिए पाता है वह सम्पूर्ण है।[78]

ऐसे सुविख्यात विद्वानों से प्राप्त इन चेतावनियों के प्रकाश में, हमें स्वयं से यह पूछना चाहिए, "मसीह हमारा महायाजक है जो हमारे लिए मध्यस्थी करने के लिए सर्वदा जीवित है, इस बात का क्या अर्थ है ?"[79] आगे हम, चार सम्बन्धित सच्चाईयों पर विचार करेंगे।

यीशु ने अपने लोगों के लिए प्रयश्चित किया

सबसे पहली सच्चाई, मसीह की मध्यस्थी में हमारे लिए हमारे पापों के बलिदान के रूप में सदा के लिए और एक ही बार परमेश्वर के सामने प्रगट होना शामिल है। हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि मसीह की निरंतर चल रही मध्यस्थी प्रायश्चित में रह गई किसी कमी को पूरा करने के लिए या परमेश्वर के लोगों के पापों के लिए क्षमा प्राप्त करने के लिए है। पवित्र शास्त्र स्पष्ट बताता है कि हमारा अनन्त छुटकारा प्राप्त करने के लिए युग के अन्त में वह एक ही बार प्रगट हुआ है, ताकि अपने ही बलिदान के द्वारा पाप को मिटा दे।[80] इब्रानियों के लेखक इस प्रकार लिखते है, "हर एक याजक तो खड़े होकर प्रतिदिन सेवा करता है, और एक ही प्रकार के बलिदान को जो पापों को कभी भी दूर नहीं कर सकते; बार बार चढ़ाता है। परन्तु यह व्यक्ति तो पापों के बदले एक ही बलिदान सर्वदा के लिए चढ़ाकर परमेश्वर के दाहिने जा बैठा। और उसी समय से इसकी बाट जोह रहा है, कि उसके बैरी

उसके पांवों के नीचे की पीढ़ी बनें। क्योंकि उसने एक ही चढ़ावे के द्वारा उन्हें जो पवित्र किए जाते हैं, सर्वदा के लिए सिध्द कर दिया है।"[81]

मसीह की मृत्यु सदा के लिए विश्वासी के भूत, वर्तमान और भविष्य के पापों के सारे मसले सुलझाती है। इस कारण, हमें मसीह के विषय में ऐसा विचार नहीं करना चाहिए कि वह उसके लोंगो के निरंतर होनेवाले पापों के लिए पिता से क्षमा याचना करता हुआ उसके समक्ष खड़ा है या गिड़गिड़ाता है। परमेश्वर पिता की दाहिनी ओर उसका यह सत्र इस बात का महान और सनातन स्मरणपत्र है कि प्रायश्चित पूरा हो चुका है।[82] यह एक चिरस्थायी स्मारक है जिसे कभी भूलाया नहीं जाएगा।

यीशु अपने लोंगों के लिए प्रार्थना करता है

दूसरी सच्चाई, यीशु मसीह की मध्यस्थ की भूमिका केवल प्रतिनिधि के रूप में नहीं है, परतु उस में वास्तविक मध्यस्थी या अपने लोंगो के लिए परमेश्वर से प्रार्थनाए और निवेदन भी शामिल है। इसे प्रामाणित करने के लिए हम संक्षिप्त रूप में तीन वचनों पर विचार करेंगे :

> फिर कौन है जो दण्ड की आज्ञा देगा ?मसीह ही है जो मर गया, वरन् मुर्दों में से जी भी उठा, और परमेश्वर की दाहिनी ओर है, और हमारे लिए निवेदन भी करता है।[83]
>
> इसी लिए जो उसके द्वारा परमेश्वर के पास आते हैं, वह उनका पूरा पूरा उद्धार कर सकता है, क्योंकि वह उनके लिए बिनती करने को सर्वदा जीवित है।[84]
>
> इस कारण मैं उसे महान लोगों के संग भाग दूंगा, और वह सामर्थियों के संग लूट बांट लेगा; क्योंकि उसने अपना प्राण मृत्यु के लिये उण्डेल दिया, वह अपराधियों के संग गिना गया; तौभी उसने बहुतों के पाप का बोझ उठा लिया, और, अपराधियों के लिये बिनती करता है।[85]

जब प्रेरित पौलुस और इब्रानियों का लेखक मसीह की मध्यस्थता की सेवकाई का उल्लेख करते हैं, तब वे एक ही ग्रीक शब्द *entugchano* का उपयोग करते है, जो स्पष्ट रूप से प्रार्थना का कार्य, बिनती या मध्यस्थी को व्यक्त करता है।[86] मसीह की भावी मध्यस्थी की सेवकाई के सम्बन्ध में अपनी भविष्यद्ववाणी में यशायाह इब्रानी क्रियापद paga का उपयोग करता है जिसका अर्थ बिनती करना या हस्तक्षेप (मध्यस्थी) करना है।[87] इसलिए, इन संज्ञाओं के मूल अर्थ और सन्दर्भ के प्रति यथार्थ रहने के लिए, हमें इस निष्कर्ष पर जाना होगा कि मसीह की मध्यस्थी में अपने लोगों के

लिए परमेश्वर से उसकी बिनतीयाँ भी शामिल है।

इसी मध्यस्थी की सेवकाई में मसीह के दोहरे स्वभाव का सामर्थ और प्रताप चमक उठता है। सर्वज्ञ परमेश्वर के रूप में, वह प्रत्येक परीक्षा, कसौटी और अपने लोगों की जरूरत को जानता है – तुरन्त, सहजता से, एक ही समय और सुविस्तृत रूप से।[88] ऐसे मनुष्य के रूप में जिसकी सब बातों में परीक्षा हुई, वह अपने लोगों के साथ सहानूभुति रखने में समर्थ है और उनकी आवश्यकता के समय उनकी सहायता करने आता है।[89] परमेश्वर–मानव होने के नाते, वह परमेश्वर के सिंहासन कक्ष में सीधे प्रवेश कर सकता है और अपने लोगों के लिए उनकी आवश्यकताओं के पूरे ज्ञान के साथ, उनके प्रति पूर्ण सहानूभुति रखते हुए, और परमेश्वर की इच्छा की सिद्ध समझ के साथ उनके लिए मध्यस्थी कर सकता है।

यद्यपि हम उसके लोगों के लिए मसीह की स्वर्गीय मध्यस्थी के यथार्थ स्वरूप का और विस्तृत वर्णन देखने की इच्छा करे, फिर भी हमें इस विषयवस्तु की ओर बड़ी सावधानी के साथ जाना होगा। पवित्र शास्त्र इस विषय में लगभग मौन है। परन्तु, मसीह की संसारिक सेवकाई के दौरान उसकी मध्यस्थी के स्वरूप पर विचार करने के द्वारा हमें कुछ अंतर्दृष्टि प्राप्त हो सकती है। जॉन म्यूरे लिखते हैं :

> पृथ्वी पर यीशु की शिक्षा और कार्य से उसके शिष्यों को उस में अपने महाविजयी मध्यस्थ को पहचानने हेतु प्रोत्साहन मिला होगा। अन्तिम भोज के समय उसने शिमौन पतरस से कहा, 'मैंने तेरे लिए बिनती की है कि तेरा विश्वास जाता न रहे; और जब तू फिरे, तो अपने भाईयों को स्थिर करना' (लूका 22:32)। यदि यह पूछा जाए कि उसकी स्वर्गीय मध्यस्थी का क्या स्वरूप है, तो इस से कौन सा बेहतर उत्तर दिया जा सकता है कि जो कुछ उसने पृथ्वी पर रहते हुए पतरस के लिए किया, वही वह आज भी अपने लोगों के लिए परमेश्वर की दाहिनी ओर करता है ?और यूहन्ना 17 में लिखी हुई प्रार्थना को, जो उसी रात उसने की थी, जब उसे पकड़वाया गया था, उचित ही महायाजकीय प्रार्थना कहा जाता है, और उसका सावधानी के साथ अध्ययन करने पर यह समझने में हमारी काफी सहायता होगी कि हमारे प्रभु का यह वर्णन कि वह उसके द्वारा परमेश्वर के पास आने वाले लोगों के लिए मध्यस्थी करता है, उसका क्या तात्पर्य है।[90]

यीशु अपने लोगों को शैतान से बचाता है

तीसरी सच्चाई, मसीह की मध्यस्थी में शैतान के दोषारोंपों के विरोध में और उस दोषारोपण में उसका साथ देने वाले किसी भी व्यक्ति के दोषारोपण के विरोध में प्रतिरक्षा शामिल है। पवित्र शास्त्र में शैतान का वर्णन भाईयों को दोष लगाने वाले के रूप में किया गया है जो रात और दिन परमेश्वर के सामने उन पर दोष लगाता है।[91] वस्तव में शैतान यह नाम ग्रीक शब्द *diábolos* (दियाबलस) से अनुवादित किया गया है, जो दोष लगाने वाले या आरोप और निन्दा की प्रवृत्ति रखने वाले को दर्शाता है। इस जीवन में, शैतान निरंतर मसीही व्यक्ति को बदनाम करता और दोष लगाता रहता है, परन्तु मसीह परमेश्वर के सिंहासन के सामने विश्वासी का पक्ष लेता है। यह ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि यह प्रतिरक्षा विश्वासी की निष्पापता, योग्यता, या शैतान के दोषारोपण की खराई पर निर्भर नहीं है। यदि ऐसा होता, तो वह असफल होता, क्योंकि हम अक्सर दोषी होते हैं और शैतान अक्सर अपने अभियोग में सही होता है। इसके बदले, हमारा बचाव विश्वासी के लिए मसीह के सिद्ध और अटल कार्य पर निर्भर है। उसने पूर्ण रूप से उस प्रत्येक अपराध का जो हम ने किया है, दाम चुकाया है और इस प्रकार शैतान हमारे विरोध में जो उचित दोषारोप लगाता है, उस प्रत्येक को वह रद्द करता है। इसी विश्वास ने पौलुस को यह लिखने हेतु प्रेरित किया : "फिर कौन है जो दण्ड की आज्ञा देगा ? मसीह वह है जो मर गया, वरन् मुर्दों में से जी भी उठा, और परमेश्वर की दाहिनी ओर है, और हमारे लिए निवेदन भी करता है।"[92] निसन्देह प्रेरित पौलुस का प्रश्न अलंकारिक और वाक्पटुतापूर्ण है। वह जानता है कि दोषी ठहराने का अधिकार केवल उसी को है जो विश्वासी को सारी दण्डाज्ञा से छुड़ाने के लिए मर गया। शैतान के आरोप मसीह के लोहू की बराबरी नहीं कर सकते। मेम्ने के लोहू के कारण परमेश्वर के लोगों में जो सबसे कमजोर है वह भी बड़ी से बड़ी दुष्टात्माओं पर जय पाएगा।[93] इसके अलावा, यह बताना भी महत्वपूर्ण है कि शैतान के आरोपों के विरोध में मसीह न केवल अपने लोगों के लिए निवेदन करता है, बल्कि वह उन पर शैतान के आक्रमण के मध्य भी उन के लिए निवेदन करता है। क्रूस पर चढ़ाए जाने से पहिले उस रात, यीशु ने पतरस से कहा कि शैतान ने उसे गेहूं की नाई फटकने की अनुमति मांगी है, परन्तु यीशु ने प्रतिज्ञा की कि उसने प्रार्थना की थी कि पतरस का विश्वास न डगमगाए।[94] उसने कलीसिया के दो हजार वर्षों के संपूर्ण इतिहास काल में असंख्य विश्वासियों के लिए यही किया है और युग के अन्त तक यही करता रहेगा।

यीशु अपने लोगों को सांत्वना देता है

चौथी और अन्तिम सच्चाई, मसीह की मध्यस्थता उसके सब लोगों के लिए सबसे बड़ी सांत्वना देने

वाली बात है। विश्वासी को प्रायश्चित के माध्यम से परमेश्वर के सन्मुख खड़े रहने का अटल अधिकार है। इसके अलावा, पवित्र आत्मा का नया जन्म देने वाला कार्य और मन में विद्यमान उसकी उपस्थिती उसे पाप पर नया अधिकार देता है। परन्तु विश्वासी को उसकी कई कमियों का और बार बार होने वाली गलतियों का दर्द भरा एहसास रहता है। ये उसे उदास और आशारहित कर देती यदि स्वर्ग में उसका दयालू महायाजक न होता, जो अज्ञानी और मार्ग से भटके मनुष्य के साथ सौम्यता का आचरण करने में समर्थ है।[95]

इब्रानियों की पुस्तक के चौथे और पाँचवे अध्यायों में इस सत्य को स्पष्ट रूप से दिखाया गया है। यहाँ पर हम सीखते हैं कि प्रत्येक विश्वासी के जीवन में दो सामर्थी सत्य कार्यरत हैं। पहले सत्य का सम्बन्ध परमेश्वर के वचन की सामर्थ से है जो विश्वासी के जीवन में सबसे ज्यादा छिपे हुए विचारों और कामों को भी उजागर करता है। परमेश्वर का वचन "जीवित, प्रबल, और हर एक दोधारी तलवार से भी बहुत चोखा है, और जीव, और आत्मा को, और गांठ गांठ, और गूदे गूदे को अलग करके, आर पार छेदता है; और मन की भावनाओं और विचारों को जांचता है।"[96] दूसरे सत्य का सम्बन्ध परमेश्वर की सर्वज्ञता से है। वह विश्वासी के प्रत्येक विचार, शब्द और कामों को जानता है – "जिसको हमें लेखा देना है उसकी दृष्टी में कोई भी प्राणी छिपा नहीं है। उसकी आखों के सामने सब कुछ खुला और नग्न हैं।"[97]

हमारे पाप को प्रगट करने की परमेश्वर के वचन की सामर्थ और परमेश्वर की सर्वव्यापिता जिससे कोई मनुष्य नहीं छिप सकता ये दोनों सच्चाइयाँ विश्वासी को निर्बल करने के लिए और उसे अनिश्चितता और सन्देह के समुद्र में डाल देने के लिए पर्याप्त हैं। परन्तु ऐसा नहीं है, क्योंकि विश्वासी यीशु में एक दयालू और विश्वासयोग्य महायाजक पाता है जो उसकी निर्बलता के साथ सहानुभूति रखता है, क्योंकि सब बातों में उसकी परीक्षा हुई, फिर भी वह निष्पाप निकला।[98] इस कारण, सन्देह और भय विश्वासियों को दूर नहीं हटाते, परन्तु हमें अनुग्रह के सिंहासन के निकट आने का हियाव है ताकि हमें आवश्यकता के समय में दया और अनुग्रह प्राप्त हो।[99] चॅरिटी एल. बैनक्रॉफ्ट द्वारा निम्नलिखित गीत सामर्थी रूप से इस महिमामय सत्य को चित्रित करता है :

ऊंचे स्थान पर परमेश्वर का जो सिंहासन है,
उसके समक्ष मेरा एक दृढ़ और परिपूर्ण निवेदन है।
एक महायाजक जिसका नाम प्रेम है
जो मेरे लिए सर्वदा जीवित रहकर मध्यस्थी करता है।

मेरा नाम उसके हाथों पर खोदकर लिखा है।
मैं जानता हूँ कि जब तक वह स्वर्ग में खड़ा है,
कोई भी जीभ मुझे वहाँ से जाने की आज्ञा नहीं दे सकती।
जब शैतान मुझे निराश कर देता है
और मुझे मेरे अन्दर का दोष बताता है,
तब मैं अपनी आँखे ऊपर उठाता हूँ और उसे वहा देखता हूँ
जिसने मेरे सारे पापों का अन्त कर दिया।
निष्पाप उद्धारकर्ता मर गया इस कारण,
मेरा पापमय प्राण स्वतंत्र ठहरा है।
क्योंकि न्यायी परमेश्वर सन्तुष्ट है कि
इसे देखे और मुझे क्षमा करे।
देखो वहाँ पुनरूत्थित मेम्ना है,
जो मेरी सिद्ध निष्कलंक धार्मिकता है।
महान, न बदलने वाला मैं हूँ,
महिमा और अनुग्रह का राजा,
वही है जिस में मैं नहीं मर सकता।
मेरा प्राण उसके लोहू से मोल लिया गया,
मेरा जीवन मसीह में छिपा हुआ है,
मेरे उद्धारकर्ता और मेरे परमेश्वर के साथ![100]

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. प्रेरितों के काम 1:9
2. लूका 24:51
3. मरकूस 16:19
4. 1 तिमुथि 3:16

5. यूहन्ना17:5
6. फिलिप्पियों 2:6–8
7. इब्रानियों 9:11, 24
8. भजन संहिता 24:3–4
9. यशायाह 59:2; Joshua 6:1
10. रोमियों 3:10
11. रोमियों 3:19
12. अय्यूब 9:30–31; यिर्मयाह 2:22
13. इब्रानियों 4:14; 1 यूहन्ना2:1
14. इब्रानियों 4:15
15. 1 कुरिन्थियों10:31; मत्ती 22:37; मरकूस 12:30; लूका 10:27
16. यूहन्ना8:29
17. अय्यूब 4:18
18. इब्रानियों 7:26
19. मत्ती 3:17; 17:5; मरकूस 1:11; 9:7; लूका 3:22
20. भजन संहिता 24:7
21. यह विचार भजन संहिता 24 पर, चर्ल्स स्पर्जन (द ट्रेजरी ऑफ डेविड ग्रैण्ड रेपिड्स : जोंडरवन, 1950, 1:377) की टिप्पणियों से उद्धृत है।
22. यशायाह 6:1–2
23. भजन संहिता 24:8–9
24. यूहन्ना 1:1, 14; 6:62
25. यूहन्ना 1:34
26. लूका 3:23–38; 1 कुरिन्थियों15:45
27. मत्ती 1:20
28. रोमियों 1:3
29. कुलुस्सियों 2:9
30. प्रकाशित वाक्य 5:5
31. यूहन्ना 1:29
32. इब्रानियों 9:24
33. इब्रानियों 2:11
34. प्रेरितों के काम 10:42; 2 तिमुथि 4:1
35. 1 यूहन्ना 2:1. Poem composed by author.
36. कुलुस्सियों 2:14
37. कुलुस्सियों 2:15; इब्रानियों 2:14–15
38. रोमियों 3:25–26
39. प्रकाशित वाक्य 5:12
40. इफिसियों 1:21; यूहन्ना 5:23
41. भजन संहिता 110:1
42. फिलिप्पियों 2:6–9; रोमियों 3:25; 1 यूहन्ना 2:1–2
43. प्रेरितों के काम 1:3; इब्रानियों 1:3
44. कुलुस्सियों 1:18; यूहन्ना 1:3

45. यूहन्ना1:3; कुलुस्सियों 1:16; इब्रानियों 1:3; यूहन्ना 1:1, 14, 18; 3:17; 12:41; यशायाह 61:1–3; प्रेरितों के काम 4:12
46. यूहन्ना 5:22; प्रेरितों के काम 10:42; 17:31; रोमियों 2:16
47. याकूब 1:17
48. यूहन्ना 1:3–4
49. इफिसियों 1:7–8
50. उत्पत्ति 1:26
51. भजन संहिता 8:3–6
52. उत्पत्ति 3:1–7
53. उत्पत्ति 3:14–19; रोमियों 8:20–22
54. उत्पत्ति 3:24; 2:16–17; रोमियों 6:23
55. 1 पतरस 1:20; यशायाह 46:9–10
56. गलातियों 4:4
57. इब्रानियों 2:5–9
58. इब्रानियों 2:5
59. इब्रानियों 2:8
60. इब्रानियों 2:9; 1:3
61. इब्रानियों 2:10. “Captain of their salvation” (NKJV); “Author of their salvation” (NASB); “Founder of their salvation” (ESV).
62. 1689 London Baptist Confession, chapter 8.2.
63. कुलुस्सियों 2:9; फिलिप्पियों 2:6
64. इब्रानियों 4:15
65. यूहन्ना 1:1, 14; फिलिप्पियों 2:6
66. 1 तिमुथि 2:5
67. यूहन्ना 1:1, 14; इब्रानियों 2:14–18; 4:15; 2 कुरिन्थियों 5:21
68. इब्रानियों 2:17; 4:15; 5:1–4
69. इब्रानियों 4:14–15; 9:11–12
70. इब्रानियों 2:11
71. इब्रानियों 7:25
72. अय्यूब 9:28–35
73. इब्रानियों 9:24–26
74. इब्रानियों 6:19
75. इब्रानियों 7:25
76. यूहन्ना 19:30; रोमियों 4:25
77. Charles Hodge, *Systematic Theology* (New York: Scribner, Armstrong, and Co., 1871–1872), 2:593.
78. जॉन मुरै, द इपिस्टल टू द रोमन्स, नये नियम पर इंटरनेशनल कॉमेन्टरी, 155, अपेक्षाकृत बड़े उद्धरण में उपयोग किया गया पाठ एच.बी. स्वेटे की ''द एसेन्डेड क्राइस्ट'' (लंदन 1912) 95 से लिया गया है।
79. इब्रानियों 7:25
80. इब्रानियों 9:12, 26–28. (See also इब्रानियों 7:27; 10:10; 1 पतरस 3:18.)
81. इब्रानियों 10:11–14

82. शब्द सत्र (session) को अकसर धर्मविज्ञानीयों द्वारा मसीह के परमेश्वर की दाहिनी ओर बैठने के संबंध में उपयोग किया जाता हैं।
83. रोमियों 8:34
84. इब्रानियों 7:25
85. यशायाह 53:12
86. रोमियों 8:34; इब्रानियों 7:25. See Wayne A. Grudem, *Systematic Theology* (Grand Rapids: Zondervan, 1994), 62728.
87. यशायाह 53:12
88. Paul David Washer, *The One True God* (Hannibal, Miss.: Granted Ministries Press,
2009), 40.
89. इब्रानियों 4:15; 2:16–18
90. Murray, *The Epistle to the* रोमियों, 154–55.
91. प्रकाशित वाक्य 12:10
92. रोमियों 8:34
93. प्रकाशित वाक्य 12:11
94. लूका 22:31–32
95. इब्रानियों 5:1–2
96. इब्रानियों 4:12
97. इब्रानियों 4:13
98. इब्रानियों 2:16, 18; 4:14–15
99. इब्रानियों 4:16
100. Charitie L. Bancroft, "Before the Throne of God Above," 1863.

अध्याय – 25

सब के प्रभु के रूप में मसीह का स्वर्गारोहण

इस कारण परमेश्वर ने उसको अति महान् भी किया, और उसको वह नाम दिया जो सब नामों में श्रेष्ठ है, कि जो स्वर्ग में और पृथ्वी पर और पृथ्वी के नीचे हैं, वे सब यीशु के नाम पर घुटना टेकें; और परमेश्वर पिता की महिमा के लिए हर एक जीभ अंगीकार कर ले कि यीशु मसीह ही प्रभु है।

– फिलिप्पियो 2:9–11

जिसे उसने मसीह में पूरा किया जब उसने उसे मरे हुओं में से जिलाकर अपनी दाहिनी ओर स्वर्गीय स्थानों में, अर्थात सब प्रकार की प्रधानता, अधिकार, सामर्थ्य और प्रभुता के, तथा प्रत्येक नाम के उपर, जो न केवल इस युग में परन्तु आने वाले युग में भी लिया जाएगा, बैठाया। उसने सबकुछ उसके पैरों तले कर दिया और उसे सब वस्तुओं पर शिरोमणि ठहराकर कलीसिया को दे दिया।

– इफिसियो 1:20–22

यीशु मसीह का स्वर्गारोहण हमें न केवल इस बात की प्रतिती देता है कि कलीसिया का एक मध्यस्थ है, परन्तु इस बात की भी प्रतिती देता है कि विश्व का एक प्रभु और न्यायाधीश है। भजन 24 स्वर्गारोहित मसीह का उल्लेख महिमा के राजा के रूप में करता है जिसकी अधीनता में स्वर्ग के फाटक भी हैं।[1] चुकि वह सृष्टि के सभी प्रधान राज्यो के ऊपर संप्रभु और सार्वभौम है, हम इस बात को समझ कर चल सकते हैं कि वह निम्न राज्यो पर भी शासन करता है और अधोलोक के फाटक भी उसकी अधीनता में है।[2]

मसीह की प्रभुता का विषय मसीह से सम्बन्धित पुराने नियम की भविष्यद्वाणियों और प्रेरितों द्वारा नए नियम में की गई घोषणाओं दोनों ही में विद्यमान है। यीशु न केवल इस जगत का उद्धारकर्ता है, बल्कि वह उस पर परमप्रधान भी है। इसलिए, हम मसीह या उसके सुसमाचार के नए नियम में प्रस्तुत परिचय के प्रति विश्वासयोग्य नहीं हो सकते यदि हम दूसरे पद की तुलना में पहले पद को

अधिक महत्व देते हैं। मसीह की प्रभुता की वास्तविकता सच्चे सुसमाचार की घोषणा के लिए उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी कि उद्धारकर्ता के रूप में मसीह के पद की अद्वितीयता। यह संयोग की बात नहीं है कि पिन्तेकुस्त के दिन पतरस ने अपने पहले सार्वजनिक सुसमाचार की घोषणा यीशु की प्रभुता की घोषणा के साथ समाप्त की : "क्योंकि दाऊद तो स्वर्ग पर नहीं चढ़ा; परन्तु वह आप कहता है, कि प्रभु ने मेरे प्रभु से कहा, मेरे दाहिने बैठ, जब तक कि मैं तेरे बैरियों को तेरे पांवों तले की चौकी न कर दूं। अतः अब इस्राएल का सारा घराना निश्चित रूप से जान ले कि परमेश्वर ने उसी यीशु को जिसे तुमने क्रूस पर चढ़ाया, प्रभु भी ठहराया और मसीह भी।"[3]

प्रभु के रूप में मसीह के स्वर्गारोहण और उसे महान किए जाने को एक साधारण शिक्षा नहीं समझनी चाहिए, जिसे क्रूस पर आधारित लम्बे–चौड़े सन्देश के अन्त में जोड़ा जाए, न ही किसी ऐसी संस्कृति को, जिसे सार्वभौम राजा को अपने विश्व दर्शन में उपयुक्त होने में कठिनाई होती हो, दुख पहुँचाने के डर से उसके महत्व को कम किया जाना चाहिए। इसके बदले, उसे सुसमाचार के अत्यन्त आवश्यक और प्रमुख सिद्धान्तों में स्थान दिया जाना चाहिए। पुनरूत्थान के साथ, पिता की दाहिनी ओर मसीह का सर्वोच्च पद प्रेरितों और प्रारम्भिक कलीसिया की घोषणा में एक प्रधान विषय था। इसलिए, आज हम जो सुसमाचार सुनाते हैं उसमें भी वह प्रधान विषय होना चाहिए। हमें उद्धारकर्ता के रूप में मसीह का प्रचार करने की आवश्यकता है जो थके–मांदे और बोझ से दबे लोगों को बिना किसी शर्त के अपने पास आने का न्योता देता है।[4] हमें प्रभु के रूप में मसीह का ऐसे प्रचार करना है, जो सारे राष्ट्रों से निष्ठा की मांग करता है और उन पर लोहे के राजदंड से राज्य करता है![5] यद्यपि हम मसीह की प्रभुता पर कई ग्रंथ लिख सकते हैं, तौभी हम इस शिक्षा से सम्बन्धित कुछ सच्चाईयों को सम्बोधित करने का प्रयास करेंगे जो सुसमाचार की हमारी समझ और घोषणा से सर्वाधिक सम्बन्ध रखते हैं।

मसीह की प्रभुता की नींव

जिस प्रश्न का हमें सबसे पहले परिक्षण करना है वह है : "मसीह की प्रभुता का आधार, या नींव क्या है ? उसकी नियुक्ति किस से या किसके द्वारा हुई ?" पवित्र शास्त्र के अनुसार, यह ईश्वरीय निर्णय से हुई। पिन्तेकुस्त के दिन, पतरस ने यह घोषणा की कि परमेश्वर ने इस क्रूस पर चढ़ाए गए यीशु को मसीह और प्रभु दोनों ठहराया।[6] दूसरे शब्दों में, जिस परमेश्वर ने उसके विषय में कहा, "तू मिलिकिसिदक की रीति पर युगानुयुग याजक है," उसी ने उसे सबका प्रभु

और परमप्रधान बनाया है।[7]

अपने शिष्यों से कहे उसके अन्तिम शब्दों में, मसीह ने घोषित किया, "स्वर्ग और पृथ्वी का सारा अधिकार मुझे दिया गया है।"[8] इससे हम समझते हैं कि एकमात्र संप्रभु के रूप में उसका यह पद उसने स्वयं ही धारण नहीं किया, बल्कि परमेश्वर पिता ने उसे वह पद प्रदान किया।

पवित्र आत्मा की प्रेरणा से लिखते हुए दाऊद ने इस सत्य के विषय में भविष्यद्वाणी की : "यहोवा ने मेरे प्रभु से कहा, मेरे दाहिने बैठ, जब तक कि मैं तेरे शत्रुओं को तेरे चरणों की चौकी न बना दूं।"[9] फरीसियों और सदुकियों का सामना करते समय यीशु ने इस वचन का सन्दर्भ लिया ताकि उन्हें यह बता सके कि मसीह मनुष्य से बढ़कर होगा और उसकी संप्रभुता का विस्तार इस पृथ्वि की सीमाओं से परे या बाहर होगा।[10] पवित्र शास्त्र के अनुसार, परमेश्वर ने दाऊद को इस्राएलियों के सबसे प्रधान और सामर्थी राजाओं में से एक बनाया, और फिर भी दाऊद ने आत्मा में इस भावी मसीह–पुत्र को अपने प्रभु के रूप में उल्लेख किया जो परमेश्वर के दाहिने विराजमान होगा। प्रेरित पौलुस ने अपनी कुछ पत्रियों में इस भविष्यद्वाणी की पुष्टी की। उन्होंने फिलिप्पियों की कलीसिया को लिखा कि परमेश्वर ने यीशु को अति महान किया, और उसको "वह नाम दिया जो सब नामों में श्रेष्ठ है।"[11] इफिसुस की कलीसिया को उन्होंने यह समझाया कि परमेश्वर ने यीशु को स्वर्गीय स्थानों में अपनी दाहिनी ओर, सब प्रकार की प्रधानता, और अधिकार, और सामर्थ, और प्रभुता के ऊपर बैठाया।[12]

इस बात पर ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि हमारे द्वारा उद्धृत प्रत्येक वचन एक सिद्ध घटना के रूप में पिता द्वारा पुत्र को अधिकार प्रदान करना प्रस्तुत करता है। यद्यपि मसीह की विश्वव्यापी सच्चाई का प्रमाणिकरण और उसकी प्रभुता का अंगिकार भविष्य की घटना के रूप में बाकी है, फिर भी यह एक वर्तमान सच्चाई, और इस बात की पूर्ण निश्चितता है जिसके विषय में लोगों को बताने की आवश्यकता और जिस पर लोगों का भरोसा रखने की आवश्यकता है। वह जो है उस कारण और जो कुछ उसने हासिल किया उसके प्रतिफल के रूप में, यीशु मसीह ने पिता की ओर से सृष्टि के प्रत्येक क्षेत्र में सारा अधिकार प्राप्त किया है। यहूदी यीशु को बलपूर्वक पकड़ना चाहते थे और उसे इस्राएल का राजा बनाना चाहते थे।[13] शैतान ने उसे इस संसार के सारे राज्य देने का अवसर दिया, यदि वह केवल नीचे गिरकर उसकी आराधना करता।[14] परन्तु, मसीह ने इन सारी परिक्षाओं पर जय पाई और स्वयं को केवल उसी एकमात्र परमेश्वर की सेवा में समर्पित किया जिस में सचमुच इस प्रकार का अधिकार देने की सामर्थ थी। इस कारण, पिता ने उसको अति महान भी किया। प्रेरित पौलुस इसे इस

प्रकार समझाते है :

> और मनुष्य के रूप में प्रगट होकर अपने आप को दीन किया, और यहाँ तक आज्ञाकारी रहा कि मृत्यु, हाँ, क्रूस की मृत्यु भी सह ली। इस कारण परमेश्वर ने उसको अति महान भी किया, और उसको वह नाम दिया जो सब नामों में श्रेष्ठ है, कि जो स्वर्ग में और पृथ्वी पर और जो पृथ्वी के नीचे हैं, वे सब यीशु के नाम पर घुटना टेकें। और परमेश्वर पिता की महिमा के लिए हर एक जीभ अंगीकार कर ले कि यीशु मसीह ही प्रभु है।[15]

मसीह के प्रभुत्व की निर्विवादिता (अकाट्यता)

यीशु की विश्वव्यापी प्रभुता ईश्वरीय विधान पर आधारित है इस सत्य के कई आशय हैं, परन्तु सबसे महत्वपूर्ण आशय यह है कि वह इस बात का आश्वासन देता है कि उसकी प्रभुता अपरिवर्तनीय और निर्विवादित है। भजन 2 सामर्थी रूप से इस सत्य को दिखाता है और यहूदी और मसीही दोनों ने उस की राजवंशीय भजन के रूप में व्याख्या की है जो मसीह के राज्य का वर्णन करता है :

> "जाति जाति के लोग क्यों हुल्लड़ मचाते हैं, और देश देश के लोग व्यर्थ बातें क्यों सोच रहे हैं। यहोवा के और उसके अभिषिक्त के विरूद्ध पृथ्वी के राजा मिलकर, और हाकिम आपस में सम्मति करके कहते हैं, कि आओ, हम उनके बन्धन तोड़ डालें, और उनकी रस्सियों को अपने ऊपर से उतार फेंके। वह जो स्वर्ग में विराजमान है, हंसेगा; प्रभु उनको ठट्ठों में उड़ाएगा। तब वह उनसे क्रोध में बातें करेगा, और क्रोध में कहकर उन्हें घबरा देगा, मैं तो अपने ठहराए हुए राजा को अपने पवित्र पर्वत सिय्योन की राजगद्दी पर बैठा चुका हूँ।"[16]

इस भजन में हम दाऊद वंशीय राजा के विषय में पढ़ते हैं जिसके आधिपत्य में पूर्ण अधिकार और असीम अधिकार–क्षेत्र होगा। इसके अलावा, हम यह जानते हैं कि विश्व के सिंहासन पर उस राजा का अभिषेक परमेश्वर का कार्य होगा। यह निर्णय उसका ईश्वरीय परमाधिकार होगा और सृष्टि के हस्तक्षेप के बिना स्वतंत्र रूप में लिया जाएगा। उसके लिए मनुष्यों या स्वर्गदूतों की सम्मति आवश्यक न होगी, और उसकी अखण्डता उनकी सहायता पर निर्भर न होगा। वस्तुतः, यदि स्वर्ग, पृथ्वी और अधोलोक का प्रत्येक प्राणी परमेश्वर के राजा के विरोध में लड़ने के लिए एक हो जाते हैं, तो उनका प्रभाव उतना ही होगा जितना कि उनमें से सबसे कमजोर उसके विरोध में

उठने वाले अकेले प्राणी का होगा। उनका विद्रोह उतना ही तुच्छ और हास्यपूर्ण होगा जितना कि चट्टान पर घुन का सिर पटकना! इस शाही भजन पर अंशमात्र विचार करने पर ही यह अत्यन्त स्पष्ट हो जाता है!

इस भजन के पहले तीन पदों में, हम मसीह और उसके राज्य के उत्कर्ष के विरोध में संसार की शत्रूता देखते हैं। हम उस सर्प के घातक बीज और स्त्री के बीज के मध्य चल रही प्राचीन लड़ाई से आंतरिक तौर पर परिचित हैं।[17] एक उग्र और शत्रूतापूर्ण मानवजाति के जनसमुदाय ने अपने आप को परमेश्वर के और उसके राजा के विरोध में तैनात किया है। मनुष्य मसीह के धर्मी राज्य और इच्छा को उनकी दुष्टता के लिए बाधक समझते हैं। वे इन बेड़ियों को तोड़ कर फेंक देना चाहते हैं, और जब तक वे बुराई करने के लिए स्वतंत्र न हो तब तक दुखी रहते हैं। इस कारण राष्ट्र कोहराम मचा रहे हैं। वे युद्ध के उफनते घोड़े के समान हैं जो परमेश्वर के नियुक्त परमप्रधान के विरोध में बड़े क्रोधावेश के साथ धावा बोलते हैं। उनके महानतम अगुवे भी इस विद्रोह में शामिल हैं। पृथ्वी के राजा भी परमेश्वर और उसके अभिषिक्त के विरोध में खड़े होते हैं, और अधिपति भी उनके विरोध में आपस में सम्मति करते हैं। परन्तु उनके षड़यंत्र और युक्तियों के बावजूद, उनकी उत्तम योजनाएँ व्यर्थ हैं, और उनके बड़े से बड़े प्रयास कुछ हासिल नहीं कर पाते। वे एक छोटी सी मकड़ी के समान हैं जो आक्रमक सिंह को पकड़ने की आशा में जाल बुनती है। उनकी सारी शत्रूता, सम्मति और युद्ध की आक्रमकता व्यर्थ है। वे इस बात को भूल गए हैं कि प्रभु के विरोध में कोई बुद्धि, कोई ज्ञान, और कोई सम्मति नहीं चलती।[18] वे इस बात को नहीं पहचान पाते हैं कि वे बालटी की एक बूंद तथा पलड़ों पर की धूल के एक कण के सदृष्य ठहरे हैं। उनकी सामुहिक सामर्थ और महिमा में, वे परमेश्वर के सामने कुछ भी नहीं हैं, और वह उन्हें अस्तित्वहीन और अर्थहीन के रूप में देखता है।[19] अपने अहंकार के कारण, उन्होंने दाऊद के बुद्धिमानीपूर्ण परामर्श का इन्कार किया, जिसने सभी राष्ट्रों को और सब जगह के लोगों को यह चेतावनी दी : "सारी पृथ्वी के लोग यहोवा से डरें, जगत के सब निवासी उसका भय मानें! क्योंकि जब उस ने कहा, तब हो गया; जब उस ने आज्ञा दी, तब वास्तव में वैसा ही हो गया। यहोवा जाति जाति की युक्ति को व्यर्थ कर देता है; वह देश देश के लोगों की कल्पनाओं को निष्फल करता है। यहोवा की युक्ति सर्वदा स्थिर रहेगी, उसके मन की कल्पनाएं पीढ़ी से पीढ़ी तक बनी रहेंगी।"[20]

परमेश्वर ने नासरत के यीशु को अपना राजा बनाया है, और उसका विरोध करने वाले लोगों का मिलाजुला विरोध महत्वहीन, हास्यजनक, और ईश्वरीय उपहास के लायक है। पवित्र आत्मा

की प्रेरणा से लिखते हुए, दाऊद हमें बताते है कि जो स्वर्ग में विराजमान है वह अपने विरोधियों पर हंसता है और उनका उपहास करता है। उनके निरंतर षड़यंत्र और प्रचुर युक्तियां उसका मनोरंजन करती हैं; वह उनके अहंकार और धमकियों का मजाक उड़ाता है; वह उनके बड़े से बड़े आक्रमणों पर हंसता है और शब्द मात्र ही से उन्हें लौटा देता है। चार्ल्स स्पर्जन लिखते हैं : "सर्वशक्तिमान की गंभीर महिमा पर ध्यान दें, और उस तिरस्कार पर जो वह राजाओं और उनके प्रबल लोगों पर उण्डेलता है। उसने उठने का कष्ट नहीं किया और न उनके साथ लड़ता है – वह उन्हें तुच्छ जानता है, वह जानता है कि उसके विरोध में उनके प्रयास कितने हास्यप्रद, कितने अवास्तव, और कितने व्यर्थ हैं – इसलिए वह उन पर हंसता है।"[21] जॉन कॅल्विन ने भी टिप्पणी की है, "इस कारण, आओ हम स्वयं को भरोसा दिलाए कि यदि परमेश्वर अधर्मी के विरोध में तुरन्त अपना हाथ आगे नहीं बढ़ाता है, तो अब यह उसके हंसने का समय है।"[22]

परमेश्वर और विद्रोही राष्ट्रों के बीच का अन्तर इतना विशाल है कि उसे अपने सिंहासन पर से उठने की या सतर्कता से बैठने की आवश्यकता नहीं है। जब उनके युद्धरत होने से उसका मनोरंजन पूरा हो जाता है, तब वह अपने क्रोध के न्यूनतम प्रगटीकरण के साथ उनसे बाते करता है, और वे भय से कंपित हो जाते हैं। अपने पुत्र के सम्बन्ध में वह उन पर अपने अपरिवर्तनीय निर्णय की घोषणा करता है। मानो वह उनसे कहता है : "जाति जाति के लोगों को हुल्लड़ मचाने दो, और देश देश के लोगों को व्यर्थ बातें सोचने दो। मैंने तो अपने राजा को अपने पवित्र पर्वत सिय्योन की राजगद्दी पर बैठा चुका हूँ। सब कुछ मैं कर चूका हूँ, और सारा विरोध व्यर्थ है। उसका राज्य आएगा और उसकी इच्छा पूरी होगी!"

यीशु मसीह वह पत्थर है जिसे भविष्यद्वक्ता दानिय्येल ने देखा।[23] बिना मनुष्य की युक्ति, बल या सहायता के ईश्वरीय निर्णय से यह पत्थर पहाड़ में से काटा गया; यह पत्थर पृथ्वी के युद्धरत राज्यों को कुचल देता है और उनका अन्त करता है; यह पत्थर एक विशाल पर्वत बन गया और उसने सारी पृथ्वी को भर दिया; इस पत्थर का राज्य सदा काल तक बना रहेगा और दूसरे लोगों के हाथों में नहीं दिया जाए। इस कारण देश देश क्रोधित हैं। वे क्रोध से पागल हो रहे हैं। परमेश्वर अपने राजा को और अपनी व्यवस्था को उन पर लादने का साहस कैसे कर सकता है! तौभी उनके रवैये और उनके कार्यों में परमेश्वर के निर्णय के विरोध में कोई बल नहीं है। उस सिंहासन से कभी पदत्याग नहीं होगा, वह पद कभी पुनर्निर्वाचन के लिए खुला नहीं रहेगा, पहरेदार कभी नहीं बदले जाएंगे, और विद्रोह की कोई संभावना नहीं है। पवित्र शास्त्र का परमेश्वर पूर्णतः सार्वभौम परमेश्वर है, और उसने

अपने पुत्र को अटल और निर्विवाद सिंहासन दिया है।

हम ऐसे युग और संस्कृति में रहते हैं जो मानव की स्वायत्तता को परमेश्वर की संप्रभुता के ऊपर उठाती है और मनुष्य की अभिव्यक्ति की आजादी को परमेश्वर की व्यवस्था से अधिक महत्ता प्रदान करती है। वास्तव में, मनुष्य की स्वायत्तता और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता आधुनिक मनुष्य की दो पवित्र गाये (sacred cows) हैं।[24] परन्तु इन वचनों पर विचार करें : "परन्तु वह एक ही बात पर अड़ा रहता है, और कौन उसको उससे फिरा सकता है ?जो कुछ उसका जी चाहता है वही वह करता है।"[25] "पृथ्वी के सब रहनेवाले उसके सामने तुच्छ गिने जाते हैं, और वह स्वर्ग की सेना और पृथ्वी के रहनेवालों के बीच अपनी ही इच्छा के अनुसार काम करता है; और कोई उसको रोककर उस से नहीं कह सकता है, तू ने यह क्या किया है ?"[26] ये बाइबल सम्मत सच्चाईयाँ बहुसंख्य मनुष्यों को क्रोधित करती हैं। परन्तु, वे सुसमाचार का आवश्यक अंग हैं और औचित्य या सुसमाचार को निरापद करने की इच्छा से उसे छिपाया या घटाया नहीं जाना चाहिए।

परमेश्वर ने इस यीशु को जिसे हमने क्रूस पर चढ़ाया, प्रभु और मसीह दोनों ही ठहराया है।[27] वही पत्थर जिसे राजमिस्त्रियों ने ठूकरा दिया था, वही कोने का पत्थर बना।[28] परमेश्वर की नियुक्ति से, मसीह के पास अब विश्व का सिंहासन है। उसके राज्याभिषेक के विषय में हम आलोचना या वाद–विवाद नहीं कर सके। वह हमेशा प्रभु और न्यायाधीश रहेगा जिसे प्रत्येक मनुष्य को लेखा देना है। प्रचारक ने इस महान सत्य को लोग समुदाय से छिपाना नहीं चाहिए, बल्की उसे बिना किसी शर्त के सबको सुनाने की आवश्यकता है। हालांकि, हमें यह स्मरण रखना है कि हम मनुष्यों से यह अनुरोध नहीं कर रहे हैं कि वे यीशु को अपने जीवनों का प्रभु बनाए। बल्कि हम उनसे यह अनुरोध करते हैं कि वे उस प्रभु को जिसे परमेश्वर ने ठहराया है, स्वीकार करें और उसकी अधीनता में आए![29]

मसीह की प्रभुता का विस्तार

मसीह के अधिकार की बुनियाद और निर्विवादिता पर विचार करने के बाद, अब हम अपना ध्यान उसके अधिकार के विस्तार या अधिकार–क्षेत्र की ओर लगाएंगे। पवित्र शास्त्र के अनुसार, यह विश्वव्यापी और निरपेक्ष (बिना शर्त) दोनों ही है। अपने शिष्यों से कहे उसके अन्तिम शब्दों में, यीशु ने घोषित किया, "स्वर्ग और पृथ्वी का सारा अधिकार मुझे दिया गया है।"[30] हमें उसके कथन की संक्षिप्तता के कारण उसके महत्व पर संदेह नहीं होना चाहिए। यह यीशु ने किए सबसे चौंका देनेवाले दावों में से एक है। अधिकार यह शब्द ग्रीक भाषा की संज्ञा exousia (एक्सोसिया) से लिया गया

है जो अधिकार, हक और सामर्थ को दर्शाता है। स्वर्गारोहण के सन्दर्भ में, मसीह को हर अधिकार–क्षेत्र में या सृष्टि के सब स्थानों में, अमर्यादीत रूप से या बिना किसी अपवाद के अधिकार दिया गया है। स्वर्ग और पृथ्वी का उल्लेख उस हर एक असम्भवता को साबित करता है जो उसके अधिकार और सामर्थ से परे है। पुराने नियम की भविष्यद्वाणियाँ और नये नियम की पत्रियों की शिक्षाएं दोनों ही इस बात की पुष्टी भी करती हैं। पुराने नियम से :

> मैंने रात में स्वप्न में देखा, और देखो, मनुष्य के सन्तान सा कोई आकाश के बादलों समेत आ रहा था, और वह उस अति प्राचीन के पास पहुंचा, और उसको वे उसके समीप लाए। तब उसको ऐसी प्रभुता, महिमा और राज्य दिया गया, कि देश–देश और जाति–जाति के लोग और भिन्न–भिन्न भाषा बोलनेवाले सब उसके अधीन हों; उसकी प्रभुता सदा तक अटल, और उसका राज्य अविनाशी ठहरा।[31]

और नए नियम में, "जो उसने मसीह के विषय में किया, कि उसको मरे हुओं में से जिलाकर स्वर्गीय स्थानों में अपनी दाहिनी ओर, सब प्रकार की प्रधानता, और अधिकार, और सामर्थ, और प्रभुता के, और हर एक नाम के ऊपर, जो न केवल इस लोक में, पर आनेवाले लोक में भी लिया जाएगा, बैठाया। और सब कुछ उसके पांवों तले कर दिया, और उसे सब वस्तुओं पर शिरोमणि ठहराकर कलीसिया को दे दिया।"[32]

"इस कारण परमेश्वर ने उसको अति महान भी किया, और उसको वह नाम दिया जो सब नामों में श्रेष्ठ है, कि जो स्वर्ग में और पृथ्वी पर और जो पृथ्वी के नीचे हैं, वे सब यीशु के नाम पर घुटना टेकें। और परमेश्वर पिता की महिमा के लिए हर एक जीभ अंगीकार कर ले कि यीशु मसीह ही प्रभु है।"[33]

मूसा लिखते है कि फिरौन ने किस प्रकार यूसुफ को बुलवा भेजा और बंदिगृह से बाहर निकाला गया और फिरौन के सामने लाया गया।[34] इसी तरह मसीह को कब्र से बाहर लाया गया और उस अनादिकाल के प्राचीन के सामने लाया गया।[35] साथ ही, मूसा लिखते है कि फिरौन ने यूसुफ से कहा, "सारे मिस्र देश में कोई भी तेरी आज्ञा के बिना हाथ पांव नहीं हिलाएगा।"[36] उसी तरह परमेश्वर पिता ने महिमान्वित मसीह से कहा, "सारे स्वर्ग में या पृथ्वी पर तेरी आज्ञा के बिना कोई भी अपना हाथ या पांव नहीं हिलाएगा।" इतिहास में दानिय्यल ने अपने समय से दूर भविष्य में अवलोकन किया और महिमान्वित मसीह की उस प्रतिज्ञा को देखा जब उसे अनादिकाल के प्राचीन के सम्मुख लाया गया

और उसे प्रभुता, महिमा और राज्य दिया गया कि देश–देश और जाति–जाति के लोग और भिन्न–भिन्न भाषा बोलने वाले सब उसके अधीन हों।

इतिहास में पौलुस ने अपने समय से, मसीह के गौरव की ओर पीछे मुड़कर एक संपादित तथ्य के रूप में और वर्तमान वास्तविकता के रूप में देखा। वह हमें भरोसा देता है कि अब मसीह सब प्रकार की प्रधानता, अधिकार, और सामर्थ, और प्रभुता के ऊपर परमेश्वर की दाहिनी ओर बैठा है। भजन के रचयिता ने जब यह लिखा कि जाति जाति के लोगों को उसकी संम्पत्ति होने के लिए, और दूर दूर के देशों को उसकी मिरास बनने के लिए दे दी जाएगी ताकि वह उन से जो चाहे कर सके, तब उसने मसीह की महिमा की केवल बाहरी सतह को देखा।[37] प्रेरित पौलुस हमारी दृष्टि का विस्तार करते हुए उसमें न केवल पृथ्वी और उसके निवासीयों को, बल्कि सम्पूर्ण विश्व को भी शामिल करते है। उसी में सारी वस्तुओं की सृष्टि हुई, क्या सिंहासन, क्या प्रभुताएं, क्या प्रधानताएं, क्या अधिकार, सारी वस्तुएं, उसी के द्वारा और उसी के लिए सृजी गई हैं और उसके अधीनता में हैं।[38] विश्व की अक्ष–रेखा से लेकर उसके सबसे अधिक दूर के विस्तार तक, नासरत का यीशु ही प्रभु है! अत्यन्त आदिम जीव की एकमात्र कोशिका से लेकर अकल्पनीय जटिलता और सामर्थ के सेराफीम तक, नासरत का यीशु ही प्रभु है। उसके अत्यन्त श्रद्धालू अनुयायी से लेकर उसके अत्याधिक प्रबल शत्रु तक, नासरत का यीशु ही प्रभु है! स्वर्ग की ऊंचाई से लेकर अधोलोक की गहराई तक, नासरत का यीशु ही प्रभु है! उसकी असीम और अखण्ड संप्रभुता को हम बढ़ाचढ़ाकर नहीं बता सकते!

मसीह की प्रभुता और मनुष्य की निष्ठा

सभी नैतिक जीवों, मानव और स्वर्गदूत, मसीह के मित्र और शत्रु, सभी का यही एक अन्तिम भविष्य है – वे सब अपने घुटने टेकेंगे और जीभ से अंगिकार करेंगे कि यीशु ही प्रभु है।[39] इस सत्य के प्रकाश में, और मसीह की प्रभुता के स्वरूप और विस्तार के प्रकाश में, सभी बुद्धिमान प्राणियों को यह स्पष्ट होना चाहिए कि उसके प्रति उनकी व्यक्तिगत प्रतिक्रिया अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जब कि परमेश्वर ने इस मसीह को प्रभु और विश्व का न्यायाधीश दोनों ही ठहराया है, इसलिए तुलनात्मक दृष्टि से मनुष्य के लिए प्रत्येक दूसरी बात दूसरे दर्जे की, यहाँ तक कि निम्न स्तर की है। इस विश्व के एकमात्र संप्रभु परमेश्वर के सम्मुख धर्ममय स्थिती में खड़े रहना प्रत्येक मनुष्य की सबसे बड़ी चिंता होनी चाहिए।

यह पवित्र शास्त्र का दृढ़ संकल्प और घोषणा है कि सभी मनुष्य बिना किसी अपवाद के, मसीह के प्रति अपनी पूर्ण निष्ठा के ऋणी है, और उसका इन्कार करने वाले सभी लोगों को इसके

भयानक परिणाम भुगतने पड़ेंगे।[40] आज के मनुष्य के लिए यह विचार विक्षोभकारिता से भी बढ़कर है; यह अपमानजनक, चोटिल, असहनीय, और अपराधिक भी है। इसलिए, उस पर मसीह के अधिकार की हर सम्भव वैधता का थोड़ा भी विचार किए बिना ही, मनुष्य क्रोधित होकर उस परमेश्वर के विरोध में जो उसकी निष्ठा की मांग करता है, अपना तिरस्कार प्रकट करने के लिए प्रश्नों की बौछार लगा देता है, और यहाँ तक सुझाव देता है कि वह पूर्ण रूप से स्वतंत्र प्राणी नहीं है। परन्तु इस प्रकार का हल्ला मचाकर दोषारोपन करना कोई नई बात नहीं है; इसे पवित्र शास्त्र में सार्वभौम परमेश्वर के आदेशों के प्रति विद्रोही मनुष्यों की आम प्रतिक्रिया कहा गया है :

"किसने तुझे हम लोगें पर शासक और न्यायी ठहराया है ?"[41]

"यहोवा कौन है कि मैं उसका वचन मानू ?"[42]

"सर्वशक्तिमान कौन है कि हम उसकी सेवा करें ?"[43]

मसीह के प्रताप के प्रकाश में, प्रेरित पौलुस ने बहुत पहले एकमात्र उत्तर दिया जो इन आपत्तियों के लिए उचित ही उत्तर हैं : "हे मनुष्य, तू कौन है, जो परमेश्वर से प्रतिवाद करता है ?"[44] पवित्र शास्त्र सिखाता है कि परमेश्वर ने नासरत के यीशु को प्रभु और मसीह दोनों ही ठहराया है।[45] फिर मनुष्य कौन है जो विरोध करें या स्पष्टीकरण मांगे ?हम अय्यूब से सीखते हैं कि जो परमेश्वर से सवाल करते है वें नासमझी की बातें के द्वारा परामर्श पर परदा डालते है, वे मूर्खता का नकाब पहनते है और खतरनाक सीमाओं को लांघते है और उन स्थानों में प्रवेश करने की जल्दबाजी करते है जहाँ पर कदम रखने से स्वर्गदूत भी डरते हैं।[46] तथापि, मनुष्य की गुस्ताखी के बावजूद परमेश्वर ने करूणामय और अनुग्रहकारी के रूप में, विलंब से क्रोध करने वाले और करूणा से युक्त ऐसे परमेश्वर के रूप में स्वयं को प्रगट किया है।[47] इसलिए वह अक्सर ऐसे प्रश्नों के प्रति विनम्र होकर अत्यन्त विद्रोही मनुष्यों को इस विषय में निर्देश देता है कि उन्हें क्यों उसके निर्देश का पालन करना है और उसके आदेशो के अधीन होना हैं। हम निम्नलिखित पन्नों में मसीह का आदर करने के कुछ कारणों पर विचार करेगें।

मसीह हमारा सिरजनहार और पालनहार

पहले तो, मनुष्यों को पुत्र का आदर करना चाहिए क्योंकि वह उनका सिरजनहार और पालनहार है, अर्थात उन्हें सम्भालता है। यूहन्ना के प्रस्तावना से हम यह जानते हैं, "सब कुछ उसी के द्वारा उत्पन्न हुआ और जो कुछ उत्पन्न हुआ है, उसमें से कोई भी वस्तु उसके बिना उत्पन्न न हुई।"[48] इब्रानियों का लेखक और प्रेरित पौलुस भी इस बात की पुष्टि करते है कि जिसे पुत्र ने उत्पन्न की है, उसे वह

सम्भालता भी है : "सब वस्तुओं को अपनी सामर्थ के वचन से सम्भालता है," और "सब वस्तुएं उसी में स्थिर रहती हैं।"[49] इन सच्चाईयों से, हम यह कह सकते हैं कि स्वर्ग में और पृथ्वी पर प्रत्येक प्राणी का आरम्भ और उनका चिरस्थाई अस्तित्व परमेश्वर के पुत्र के कारण है। जिसने उसे जीवन दिया है और उसकी हर सांस को सम्भालता है, उसके प्रति निष्ठा का इन्कार करना उस मनुष्य का सबसे बड़ा अहंकार है; क्योंकि जिस पर उसका सम्पूर्ण अस्तित्व निर्भर है उस परमप्रधान के विरोध में लड़ना मूर्खता है; उसके पाप के बावजूद, उसे आशीष देने वाले को उसका उपहास करना अकृतज्ञता का साक्षात प्रतीक है।

परमेश्वर के प्रति अपनी उपेक्षा का समर्थन करने के प्रयास में, पतित मनुष्य अक्सर यह पूछता है, "यदि परमेश्वर भला है, तो वह अच्छे लोगों के साथ बुरी बातें क्यों होने देता है ?" परन्तु और भी उचित प्रश्न यह होना चाहिए, "वह बुरे लोगों के साथ अच्छी बातें क्यों होने देता है ?" या "अच्छी बातें होती ही क्यों हैं ?" हम पतित और नैतिक रूप से भ्रष्ट जाति हैं जो परमेश्वर के सत्य को अधर्म से दबाते है और स्पष्ट रूप से उसके शासन को नकारते है। इस कारण, हम क्रोध और मृत्यु के अलावा किसी और बात के योग्य नहीं है। सम्पूर्ण संसार फलहीन और जीवनरहित होना चाहिए। मानव अस्तित्व के क्षेत्र में कोई भलाई, सुन्दरता, आनन्द, प्रेम या उद्देश्य है इसे पापी मनुष्यों के प्रति परमेश्वर के पुत्र के अनुग्रह और परोपकार के प्रकाश में समझाया जाना चाहिए। हम उसी में जीवित रहते, और चलते–फिरते, और अस्तीत्व रखते हैं।[50] वह जीवन, श्वास और सब कुछ देता है।[51] वह बूरे लोगों पर सूर्य उदय करता है, और अधर्मीयों पर मेह बरसाता है।[52] जो उससे घृणा करते हैं उनके हृदयों को वह भोजन और आनन्द से तृप्त करता है।[53] यह सब इस बात को प्रमाणित करती है कि हम उसकी निष्ठा के बड़े कर्जदार हैं।

मसीह हमारा छुड़ाने वाला

दूसरी बात, सभी मनुष्यों को कल्वरी के क्रूस पर उसके द्वारा किए गए छुटकारे के कार्य के कारण पुत्र का आदर करना चाहिए। यद्यपि, छुटकारे में परमेश्वर के प्रयोजन और दूरदर्शिता की गहराई को नापना यहाँ पर हमारे लिए असम्भव है, फिर भी हम बिना किसी संदेह के यह घोषित कर सकते हैं कि मसीह के प्रायश्चितकारी कार्य का समस्त विश्व को लाभ हुआ है, यहाँ तक कि जो उसके उद्धार के अवसर का इन्कार करते हैं, उन्होंने पहले ही उसका लाभ पाया है, जिसका वर्णन शब्दों से परे है। परमेश्वर ने अपना पुत्र दिया, और उसके पुत्र ने स्व–इच्छा से पाप के लिए प्रायश्चित करने हेतु अपना

जीवन दिया ताकि जो उस पर विश्वास करे, उनका नाश न हो, परन्तु उन्हें अनन्त जीवन प्राप्त हो।[54]

यद्यपि, कल्वरी की आशीषें असीम हैं, फिर भी दो लाभकारी बातें हमारी वर्तमान चर्चा के लिए अत्यन्त लागू है। पहली है, पापों की क्षमा, परमेश्वर के साथ मेल, और अनन्त जीवन की आशा का विश्वव्यापी अवसर। सुसमाचार में सब जगह के सभी मनुष्यों के लिए एक विश्वव्यापी बुलाहट दी जाती है कि वे अपने मनों में विश्वास करे और अपने मुंख से अंगीकार करे कि यीशु मसीह ही प्रभु है।[55] उस में विश्वव्यापी प्रतिज्ञा भी प्रदान की गई है कि जो कोई उसके पास आएगा उन में से किसी को भी निकाला नहीं जाएगा।[56] यह सभी मनुष्यों की निष्ठा पाने के लिए पर्याप्त है। हमारे हृदय अत्यन्त दुष्ट थे, हमारे पाप हमारे सिरों पर थे, और हमारा दण्ड न्यायोचित था। और तौभी जिसे हमें केवल दण्ड की आज्ञा देने का अधिकार था, उस प्रभु ने, स्वेच्छा से हमारे उद्धार के लिए स्वयं को मृत्यु के हाथ सौंप दिया। यह बेपरिमाण रूप से अभिभूत करने वाली बात है! पवित्र शास्त्र हमें स्मरण दिलाता है कि धर्मी व्यक्ति के लिए शायद ही कोई मरे, परन्तु जब हम पापी ही थे, तब मसीह हमारे लिए मर गया।[57] हमारे प्रति मसीह का यही प्रेम हमारे हृदयों को जीत लेता है और उस पर हमारी पूर्ण श्रद्धा रखने के लिए प्रवृत्त करता है। इस कारण हमें इस निर्ष्कष पर पहुँचना चाहिए कि चुंकि वह सबके लिए मर गया, इसलिए सब अब अपने लिए न जिएँ, परन्तु जो उनके लिए मर गया और फिर जी उठा, उसके लिए जिएँ![58] न्याय के दिन उनके चेहरे शर्म से झुक जाएंगे, जिन्होंने ऐसे अनुग्रहकारी प्रभु के प्रति निष्ठा रखने से इन्कार किया! उनके पास इस बात पर मंथन करने के लिए अनन्त काल होगा कि : "हमने ऐसे महान प्रेम को कैसे ठुकरा दिया ? हम ने ऐसे महान उद्धार की कैसे उपेक्षा की होगी ?"

कल्वरी का दूसरा विश्वव्यापी लाभ विभिन्न स्वरूप की आशीषों से युक्त हैं, जो उससे बहकर विश्व के हर कोने तक पहुँची है : शारीरिक, भौतिक, आर्थिक, राजनीतिक, और सांस्कृतिक आशीषें उनमें से कुछ हैं। सभी मनुष्यों ने, यहाँ तक कि जो उसके विरोध में लगातार विद्रोह करते रहते है उन्हें भी, और उनकी संस्कृति को भी सुसमाचार के प्रभावों का लाभ प्राप्त हुआ है। यद्यपि, अपने आप को गलत रूप से मसीही कहलाने वालों के घृणित कामों के कारण मसीह के नाम की बहुत निन्दा हुई है, तौभी सच्चा सुसमाचार वह चमकने वाली ज्योति है जिसने संसार को पूर्ण अंधकार से बचाकर रखा है और वह नमक है जिसने संसार को नैतिक अवसाद से बचाया है।[59] यद्यपि, धर्म निरपेक्ष सोच इस दावे का उपहास करती हो, न्याय के दिन इसकी सच्चाई पूर्ण रूप से प्रमाणित होगा। उस दिन, वास्तविक इतिहास के पन्ने खोले जाएंगे, और सभी देखेंगे कि हर भली चीज जिससे उन्होंने मानव अस्तित्व के प्रत्येक क्षेत्र में लाभ पाया, कल्वरी पर मसीह के कार्य से, उसके सुसमाचार

की घोषणा से, और उसके राज्य की बढ़ोतरी से जुड़ी हुई थी। यह प्रमाणिकरण परमेश्वर के लोगों के लिए बड़े आनन्द का कारण होगा क्योंकि वे अपने प्रभु को आदर पाते हुए देखेंगे जो उसके योग्य है। परन्तु, यह उन सब लोगों के लिए बड़ी लज्जा का दिन होगा जिन्हें मसीह में कोई लाभ नहीं दिखाई दिया और फिर भी उन्होंने, उसके प्रकाशन और मृत्यु और उसके निरंतर ईश्वरीय प्रयोजन से लाभ की फसल काटी।

मसीह हमारा चुना हुआ राजा

तीसरी बात, सब मनुष्यों को पुत्र का आदर करते हुए उसके प्रति उनकी निष्ठा होनी चाहिए क्योंकि परमेश्वर ने ऐसा ठहराया है। परमेश्वर ने ठहराया है कि सभी मनुष्य पुत्र को वैसा ही आदर दें जैसा वे पिता को आदर देते हैं। जो पुत्र को आदर नहीं देता, वह पिता को आदर नहीं देता, और उसका उचित न्याय होगा।[60] संक्षिप्त में, जो लोग यीशु मसीह की आज्ञा को मानते हैं और उस पर विश्वास करते हैं, उनको असीम लाभ प्राप्त होगा। परन्तु जो लोग उसका इन्कार करते हैं, उन्हें भयावह परिणामों का सामना करना होगा। इसी कारण, दाऊद देश देश को निम्नलिखित गम्भीर चेतावनी देते है : "इसलिए अब, हे राजाओ, बुध्दिमान बनो; हे पृथ्वी के न्यायियो, यह उपदेश ग्रहण करो। डरते हुए यहोवा की उपासना करो, और कांपते हुए मगन हो। पुत्र को चूमो ऐसा न हो कि वह क्रोध करे, और तुम मार्ग ही में नाश हो जाओ; क्योंकि क्षण भर में उसका क्रोध भड़कने को है। धन्य हैं वे जिनका भरोसा उस पर है।"[61] इन पदों में, हम तीन वाक्प्रयोग पाते हैं जो एक ही आवाज में सब मनुष्यों को उस बात की घोषणा करते हैं जो परमेश्वर अपने पुत्र के विषय में इस जगत से चाहता है। पहला, सभी मानवजाति के लिए यह आज्ञा है कि वे पूरे आदर के साथ परमेश्वर की आराधना करें। इस वाक्प्रयोग का अनुवाद इस प्रकार भी किया जाता है : "डरते हुए प्रभु की सेवा करो।" आराधना और सेवा एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, एक के बगैर दूसरे का अस्तित्व नहीं है। परमेश्वर मनुष्यों की सहनशीलता के लिए विनय नहीं करता, और न ही अपने पुत्र के लिए उनकी सहानुभूतियों की याचना करता है। बल्कि, वह मांग करता है कि सभी मनुष्य बड़े आदर के साथ उसकी आराधना और सेवा करें।

दूसरा, सारी मानवजाति को यह आज्ञा दी गई है कि वे पुत्र के सामने थरथराते हुए मग्न हो। इन दो विपरीत भावनाओं का मिलन – मग्न होना और भय मानना – आज के मनुष्य को पराया लगता है, परन्तु वे अक्सर पवित्र शास्त्र में पाई जाती हैं।[62] मग्न होना उन लोगों पर मसीह के अनुग्रह

और दयाओं का परिणाम है जो उसके प्रभुत्व की शरण में आते हैं। भय उसके प्रताप और सामर्थ का परिणाम है। उसके लोग इसलिए मग्न होते हैं क्योंकि वह उन्हें भाई कहने से नहीं लजाता, और फिर भी वह उनके मध्य उसकी सर्वोच्चता और श्रेष्ठता के कारण उसके प्रति अत्यन्त भययुक्त आदर प्रगट करते हैं।[63] केवल उसे वह नाम दिया गया है जो सब नामों से श्रेष्ठ है।[64]

तीसरा, सभी मानवजाति को यह आज्ञा दी गई है कि वे पुत्र को श्रद्धा अर्पण करे। इस वाक्यखंड का शब्दशः अनुवाद किया गया है, "पुत्र को चूमो ऐसा न हो कि वह क्रोध करे, और तुम नाश हो जाओ।" ये शब्द हमारे समकालीन कानों को सनने में कठोर लग सकते हैं, तौभी वे सच हैं। प्रत्येक मनुष्य के समाने दो अन्तिम भविष्य रखे गए हैं : एक हैं असीम परमानन्द और दूसरा है असीम आतंक। इन दोनों के बीच जो निर्धारक तत्व है, वह है नासरत के यीशु के प्रति हमारी प्रतिक्रिया। परमेश्वर ने उसे इस विश्व का प्रभु करके ठहराया है और यह आज्ञा दी है कि सभी नैतिक प्राणी, स्वर्गदूत और मनुष्य, आनन्द, धन्यवाद, और भययुक्त आदर के साथ उसके राज्य के अधीन हों। परमेश्वर ने मनुष्यों के सामने मसीह का नाम पुनर्विचार करने और विवाद करने के लिए विकल्प के रूप में नहीं रखा। उसने यह अनुरोध नहीं किया है कि वें उसके मूल्य को तौलें और अपनी राय दें। परमेश्वर ने मसीह के मूल्य को तौला है और उसके विषय में स्वयं ही अपनी राय दी है। पृथ्वी पर, उसने सार्वजनिक तौर पर मसीह को मृतकों में से जिलाकर उसकी धार्मिकता प्रमाणित की है। स्वर्ग में, मसीह को अपनी दाहिनी ओर बिठाकर उसके प्रति अपना आदर प्रकट किया है। अब समस्त सृष्टि के लिए जो कर्तव्य बचा है, वह यह कि वे परमेश्वर की आज्ञा मानकर उसके पुत्र को सारा धन्यवाद, आदर, महिमा और प्रभुता युगानुयुग देते रहे।[65]

उचित चेतावनी

परमेश्वर ने इसी यीशु को सब का प्रभु और मसीह दोनों ही ठहराया जिसे देश–देश के लोगों ने क्रूस पर चढ़ाया था।[66] जिस पत्थर को जगत ने ठूकरा दिया था उसी को लेकर परमेश्वर ने अपने सभी कामों पर कोने का शिरोमणी पत्थर बनाया।[67] यह एक अकाट्य निर्णय है। इस कारण, नासरत का यीशु सर्वदा सार्वभौम अधिपति रहेगा जिसका मनुष्यों को सामना करना होगा।

पवित्र शास्त्र की शिक्षा है कि यीशु दयालू और विश्वसयोग्य महायाजक है जो उसकी आज्ञा पालन करने वाले सभों के लिए अनन्त उद्धार का स्रोत बन गया है।[68] परन्तु, जो उसका इन्कार करते हैं, उनके लिए वह ठेस लगने का पत्थर और ठोकर खाने की चट्टान है।[69] जो कोई मसीह में

अविश्वास के कारण ठोकर खाता है वह चकनाचूर हो जाएगा, और जिस पर मसीह न्याय के दिन गिरेगा वह पिसकर धूल बन जाएगा।[70] यीशु मसीह एकमात्र उद्धारकर्ता है, परन्तु वह एकमात्र प्रभु भी है। इन में से किसी भी सच्चाई को दूसरे से अधिक ऊंचा स्थान नहीं दिया जाना चाहिए, परन्तु बाइबल के आधार पर दोनों बातों में संतुलन बनाए रखना आवश्यक है। इब्रानियों का लेखक प्रभावी रूप से इसका उदाहरण प्रस्तुत करता है : "परन्तु यह याजक तो पापों के बदले सदा के लिए एक ही बलिदान चढाकर परमेश्वर के दाहिने जा बैठा, और उसी समय से वह प्रतिक्षा कर रहा है, कि उसके शत्रु उसके चरणों की चौकी बन जाए।"[71]

पवित्र शास्त्र मसीह को उद्धारकर्ता ठहराता है जिसने अपने शत्रुओं के पापों को दूर करने के लिए अपने आप को बलिदान करके चढाया, पर तौभी वह प्रभु भी है जो अपने शत्रुओं को पराजित करेगा, जो विद्रोह करते रहते हैं और उन्हें अपने चरणों की चौकी बनाएगा। ये दोनों ही कथन समान रूप से चरम हैं, परन्तु वे उतने ही सच भी हैं। पुत्र के सम्बन्ध में कुछ विशेष रूपकों को अपनाकर जबकि बाकी का इन्कार कर मनुष्यों ने अपने आप को धोखे में नहीं रखना चाहिए। यह सच है कि मसीह मेम्ना है जो जगत के पाप हर लेता है, परन्तु वह ऐसा मेम्ना भी है जिससे पृथ्वी के सबसे सामर्थी और महान लोग उसके प्रगट होने के दिन अपने आप को छिपाएंगे।[72] मसीह के चेहरे पर कोई दया न देखकर, वे चट्टानों और पहाड़ों से दया की याचना करेंगे, "हम पर गिर पड़ो; और हमें उसकी दृष्टि से जो सिंहासन पर बैठा है, तथा मेम्ने के प्रकोप से छिपा लो।"[73] प्रेरित यूहन्ना यह समाचार देते है :

> फिर मैंने स्वर्ग को खुला हुआ देखा; और देखता हूं कि एक श्वेत घोड़ा है; और उस पर एक सवार है, जो विश्वास योग्य, और सत्य कहलाता है; और वह धर्म के साथ न्याय और लड़ाई करता है। उसकी आंखें आग की ज्वाला हैं, और उसके सिर पर बहुत से राजमुकुट हैं; और उसका एक नाम लिखा है, जिसे उसको छोड़ और कोई नहीं जानता। और वह लहू से छिड़का हुआ वस्त्र पहने है; और उसका नाम परमेश्वर का वचन है। स्वर्ग की सेना श्वेत घोड़ों पर सवार और श्वेत और शुद्ध मलमल पहने हुए उसके पीछे पीछे है। जाति जाति को मारने के लिए उसके मुंह से एक चोखी तलवार निकलती है, और वह लोहे का राजदण्ड लिए हुए उन पर राज्य करेगा, और वह सर्वशक्तिमान परमेश्वर के भयानक प्रकोप की जलजलाहट की मदिरा के कुंड में दाख रौंदेगा। उसके वस्त्र और जांघ पर यह नाम लिखा है, राजाओं का राजा और प्रभुओं का प्रभु।[74]

यीशु मसीह की प्रभुता कुछ लोगों के लिए धन्य आशा है और अन्य लोगों के लिए भयावह अनुभव। परन्तु, हमारी प्रतिक्रिया चाहे जो हो, यह एक न बदलने वाली सच्चाई है। परमेश्वर के विषय में, पुरखा अय्यूब ने घोषणा की : "वह बुद्धिमान और अति सामर्थी है : उसके विरोध में हठ करके कौन कभी प्रबल हुआ है ?"[75] बिना किसी अतिशयोक्ति के मसीह के विषय में भी यही कहा जा सकता है। वह प्रभु और उन सबका न्यायाधीश है, और सर्वदा रहेगा, जिसे प्रत्येक मनुष्य को लेखा देना होगा। हमें या तो चरवाहे की लाठी चला सकती है या लोहे का राजदण्ड।[76] दोनों बातों में, मसीह अगुवाई करेगा और हम उसके पीछे चलेंगे। इस कारण, दाऊद के परामर्श पर चलना और पुत्र का सम्मान करना हमारे लिए बुद्धिमानी होगी ताकि वह क्रोधित न हो और हम मार्ग में नाश न हो जाएं। क्षणभर में उसका क्रोध भड़कने को है, फिर भी धन्य हैं वे जो उसकी शरण में आते है।[77]

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. भजन संहिता 24:7
2. मत्ती 16:18; प्रकाशित वाक्य 1:18
3. प्रेरितों के काम 2:34–36
4. मत्ती 11:28
5. भजन संहिता 2:9–12
6. प्रेरितों के काम 2:36
7. भजन संहिता 110:4; इब्रानियों 5:6; 7:17, 21
8. मत्ती 28:18, emphasis added
9. मत्ती 22:44; प्रेरितों के काम 2:34–35; भजन संहिता 110:1
10. मत्ती 22:43–45
11. फिलिप्पियों 2:9
12. इफिसियों 1:20–22
13. यूहन्ना6:15
14. मत्ती 4:8–9
15. फिलिप्पियों 2:8–11
16. भजन संहिता 2:1–6
17. उत्पत्ति 3:15
18. नीतिवचन 21:30
19. यशायाह 40:15–17
20. भजन संहिता 33:8–11
21. Spurgeon, *Treasury of David*, 1:11.
22. John Calvin, *Commentary on the Book of* भजन संहिता *s*, vol. 4 of Calvin's Commentaries (Grand Rapids: Baker, 1996), 4:14.

23. दानिय्यल 2:34–35, 44–45
24. "पवित्र गाय" इस वाक्यांश का संदर्भ हिन्दु धर्म से लिया जाता है जिस में गायों को पवित्र या अलौकिक माना जाता है। यह कहना कि कोई विचार, परम्परा, या रीति–रिवाज "पवित्र गाय" है, यह अर्थ देता है कि उसे किसी भी संदेह और आलोचना से परे, अकसर अतार्किक रूप में माना जाता है।
25. अय्यूब 23:13
26. दानिय्यल 4:35
27. प्रेरितों के काम 2:36
28. भजन संहिता 118:22; मत्ती 21:42; मरकूस 12:10; लूका 20:17; प्रेरितों के काम 4:11; 1 पतरस 2:7
29. प्रेरितों के काम 2:36
30. मत्ती 28:18, emphasis added
31. दानिय्यल 7:13–14
32. इफिसियों 1:20–22
33. फिलिप्पियों 2:9–11
34. उत्पत्ति 41:14
35. दानिय्यल 7:13
36. उत्पत्ति41:44
37. अय्यूब 26:14: "Indeed these are the mere edges of His ways, and how small a whisper we hear of Him! But the thunder of His power who can understand?" Also, भजन संहिता 2:8–9.
38. कुलुस्सियों 1:16
39. फिलिप्पियों 2:9–11
40. भजन संहिता 2:10–12
41. निर्गमन 2:14; प्रेरितों के काम 7:27, 35
42. निर्गमन 5:2
43. अय्यूब 21:15
44. रोमियों 9:20
45. प्रेरितों के काम 2:36
46. अय्यूब 38:2
47. निर्गमन 34:6; नहेम्याह 9:17; भजन संहिताs 86:15; 103:8; 145:8; योएल 2:13; योना 4:2
48. यूहन्ना 1:3
49. इब्रानियों 1:3; कुलुस्सियों 1:17
50. प्रेरितों के काम 17:28
51. प्रेरितों के काम 17:25
52. मत्ती 5:45
53. प्रेरितों के काम 14:17
54. यूहन्ना 3:16
55. प्रेरितों के काम 17:30; रोमियों 10:9–10
56. यूहन्ना 6:37
57. रोमियों 5:7–8
58. 2 कुरिन्थियों 5:14–15
59. रोमियों 2:24. सुधार और छुटकारे के सम्पूर्ण इतिहास के दौरान यह एक आम बुराई रही है, उन लोगों के कारण, जो

मसीह और उसके लोगों में गलत रूप में शामिल हो गये, और उनके आचरण से सत्य का मार्ग कलंकित हुआ (देखें, यशायाह 52:5; यहेजकेल 36:20; 2 पतरस 2:2)। ज्योति के संदर्भ पद यूहन्ना 1:4–5, 9; मत्ती 4:16; 5:14 नमक अति प्राचीनकाल से भोजन का संरक्षण करने और क्षरण से बचाने में उपयोग किया जाता है (देखें, मत्ती 5:13)।
60. यूहन्ना 5:23
61. भजन संहिता 2:10–12
62. इन वचनों को पढ़ें – भजन संहिता 22:23, 40:3; यिर्मया 33:9; फिलिप्पियों 2:12–13; प्रकाशित वाक्य 19:5.
63. इब्रानियों 2:11; कुलुस्सियों 1:18
64. इफिसियों 1:20–23; फिलिप्पियों 2:9
65. प्रकाशित वाक्य 5:13
66. भजन संहिता 2:1; प्रेरितों के काम 4:25–27; 2:36
67. मत्ती 21:42; लूका 20:17
68. इब्रानियों 2:17; 5:9
69. रोमियों 9:32–33; 1 पतरस 2:8
70. मत्ती 21:44, लूका 20:18 – "जो कोई इस पत्थर पर गिरेगा वह चूर–चूर हो जाएगा परन्तु जिस किसी पर यह गिरेगा उसे पीसकर धूल बना डालेगा।" इस वचन का अर्थ यह है कि जो कोई मसीह के विषय में ठोकर खाकर उसकी सर्वोच्च अधिकार को मानने से इन्कार करता है वह परमेश्वर के न्याय के द्वारा नाश किया जाएगा।
71. इब्रानियों 10:12–13
72. यूहन्ना1:29
73. प्रकाशित वाक्य 6:16
74. प्रकाशित वाक्य 19:11–16
75. अय्यूब 9:4 KJV. The NASB reads: "Wise in heart and mighty in strength, who has defied Him without harm?"
76. भजन संहिता 23:1–4; यूहन्ना 10:9–11; भजन संहिता 2:9
77. भजन संहिता 2:12

अध्याय – 26

सबके न्यायाधीश के रूप में मसीह का स्वर्गारोहण

इसलिए अज्ञानता के समयों की उपेक्षा करके परमेश्वर अब हर जगह के सब मनुष्यों को आज्ञा देता है कि पश्चाताप करे। क्योंकि उसने एक दिन निश्चित किया है, जिसमें एक मनुष्य के द्वारा जिसको उसने नियुक्त किया है, वह धार्मिकता से संसार का न्याय करेगा; और उसने मृतकों में से उसे जिला कर इस बात को सब मनुष्यों पर प्रमाणित कर दिया है।

– प्रेरितों के काम 17:30–31

पर जब मनुष्य का पुत्र अपनी महिमा में आएगा और सब स्वर्गदूत उसके साथ आएंगे तो वह अपने महिमामय सिंहासन पर विराजमान होगा। और सब जातियां उसके सम्मुख एकत्रित की जाएंगी; और उन्हें एक दूसरे से अलग करेगा, जैसे चरवाहा भेंडों को बकरीयों से अलग करता है।

– मती 25:31–32

यीशु मसीह की प्रभुता के सबसे बड़े आशयों में से एक यह है कि वह संसार का न्याय करेगा। उन यहूदी अगुवों का कठोर सामना करते हुए, जो उसे मारने का प्रयास कर रहे थे, यीशु ने घोषित किया कि पिता ने उसे पृथ्वी पर न्याय करने का सारा अधिकार सौंप दिया है।[1] प्रेरितों के प्रचार और लेखों में इस मौलिक दावे को बार बार दोहराया गया है। कैसरिया के अन्यजातियों के सामने दिए गए प्रथम उपदेश में पतरस ने घोषणा की : "परमेश्वर ने उसे तीसरे दिन जिला उठाकर, प्रगट भी होने दिया, सब लोगों पर नहीं, वरन् उन गवाहों पर जिन्हें परमेश्वर ने पहले से चुन लिया था, अर्थात् हम पर जिन्होंने मृतको में से उस के जी उठने के पश्चात् उसके साथ खाया पीया। उसने हमें आज्ञा दी कि लोगों में प्रचार करे और दृढतापूर्वक साक्षी दें कि यह वही है जिसे परमेश्वर ने जीवतों और मृतकों का न्यायी नियुक्त किया है।"[2]

पतरस का सन्देश तीन सत्यों को प्रगट करता है जो न्यायाधीश के पद पर मसीह की

पदोन्नति पर हमारी चर्चा की रूपरेखा तैयार करेंगे। पहला सत्य जिस से सभी मनुष्यों को स्वीकार करने की आवश्यकता है, वह यह कि जगत का विनाश होगा और न्याय का एक अन्तिम दिन होगा। दूसरा सत्य यह है कि उस दिन यीशु मसीह सबका प्रभु और न्यायी के रूप में कर्ता–धर्ता होगा। तीसरा और अन्तिम सत्य जिस की ओर हमें ध्यान देने की आवश्यकता है, वह यह कि परमेश्वर ने कलीसिया को न केवल सुसमाचार के लाभों की घोषणा करने की आज्ञा दी है बल्कि लोगों को संसार पर आने वाले महान और अटल न्याय के विषय में चेतावनी देने की भी आज्ञा दी है।

न्याय की निश्चितता और निष्पक्षता

विश्व का प्रमुख भौतिकतावादी दृष्टिकोण अवश्य ही मनुष्य के अस्तित्व को एक संयोग मात्र बात से बढ़कर और कुछ नहीं कहेगा, उसके इतिहास को निरूद्देश्य घटनाओं का क्रम कहेगा, और उसके भविष्य को केवल एक भ्रान्ति कहेगा जिसके अन्त का कोई उद्देश्य नहीं है। इसके विपरीत, पवित्र शास्त्र मनुष्य के अस्तित्व को एक सार्वभौम और नैतिक परमेश्वर के उद्देश्यपूर्ण और रचनात्मक हस्तकृति की दृष्टि से देखता है जिस ने स्वयं को अपनी सृष्टि के द्वारा, अपनी दूरदर्शिता और प्रबंधन कार्यों के द्वारा, अपने लिखित वचन के द्वारा, और अन्त में एवंम पूर्ण रूप से उसके पुत्र के देह धारण के द्वारा प्रगट किया। इसके अलावा, पवित्र शास्त्र सिखाता है कि अन्तिम न्याय के समय जब सभी वस्तूओं का अन्त होगा, वह सभी मनुष्यों से लेखा लेगा। उस दिन, परमेश्वर सभी मनुष्यों का न्याय उस प्रकाशन के प्रति उनकी प्रतिक्रिया के अनुसार करेगा, जो उन्हें प्राप्त हुआ है।

इन सत्यों के प्रकाश में, मसीही व्यक्ति स्वीकार करता है कि मानव इतिहास निरूद्देश्य नहीं है, और न ही चक्रीय है बल्की पंक्तिरूप है। जिस ने उसे अस्तित्व में लाया, उस सार्वभौम परमेश्वर के अटल निर्णय के अनुसार, उसका एक आरम्भ था और अन्त भी होगा। स्पष्ट शब्दों में कहा जाए तो मानव इतिहास, अति शीघ्रता से अपनी अंतिम समाप्ति की ओर बढ़ रहा है जब प्रत्येक मनुष्य का न्याय होगा और जो कुछ भी उसने किया है या नहीं किया है उसके अनुसार उसे बदला दिया जाएगा! प्रेरित पौलुस कहते है : "वह (परमेश्वर) हर एक को उसके कामों के अनुसार बदला देगा। जो सुकर्म में स्थिर रहकर महिमा, और आदर और अमरता की खोज में है, उन्हें वह अनन्त जीवन देगा। पर जो विवादी हैं, और सत्य को नहीं मानते, वरन् अधर्म को मानते हैं, उन पर क्रोध और कोप पड़ेगा।"[3]

जो मनुष्य या सभ्यता अपने ही मानकों से स्वयं का न्याय करते है उन्हे पौलुस द्वारा की गई यह विश्वव्यापी न्याय की घोषणा आशाजनक लग सकती है। यह मनुष्यों की सामूहिक भूल है कि

वे अपनी ही दृष्टि में स्वयं को धर्मी समझते है। परन्तु, जो आज भी अपने विवेक की आवाज सुन सकते हैं, और विशेषकर वे लोग जो पवित्र शास्त्र जानते हैं, उनके लिए ये शब्द अत्यन्त विक्षुब्ध करने वाले हैं। क्योंकि यह पवित्र शास्त्र और विवेक दोनों की गवाही है कि सब ने पाप किया है और परमेश्वर की महिमा से रहित हैं।[4] किसी ने भी भलाई नहीं की और किसी ने परमेश्वर की ओर से आनेवाली महिमा, आदर और अमरता की खोज नहीं की।[5] बल्कि सभी मनुष्य स्वार्थी अभिलाषा से प्रेरित हैं, और सभी मनुष्यों ने अधर्म से सत्य को दबा दिया है।[6] परिणामस्वरूप सभी पवित्र और धर्मी परमेश्वर के क्रोध और प्रकोप के पात्र हैं।[7] इसी कारण, परमेश्वर ने हस्तक्षेप किया और मनुष्य के पापों के लिए प्रायश्चित करने अपने पुत्र को भेजा। उसकी मृत्यु ने परमेश्वर के न्याय को सन्तुष्ट किया और उसके क्रोध को शान्त किया। अब वे सब जो पुत्र की सुनते हैं और उस पर विश्वास करते हैं उनका उद्धार होगा। परन्तु जो पुत्र की सुनने से इन्कार करते हैं, उनका वह न्याय करेगा।[8]

सार्वत्रिक न्याय की इस घोषणा के परिणामस्वरूप परमेश्वर की निष्पक्षता पर सवाल खड़ा किया जाता है। परमेश्वर कैसे उन लोगों का न्याय कर सकता है जिन्होंने कभी सुसमाचार का प्रचार नहीं सुना और न ही उन तक कभी पवित्र शास्त्र पहुँच पाया है ?इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए हमें सबसे पहिले परमेश्वर की धार्मिकता के सम्बन्ध में पवित्र शास्त्र की गवाही को आधार बनाना होगा। यद्यपि, हम इस घटना से सारे रहस्य को नहीं हटा सकते, परन्तु हम परमेश्वर के चरित्र को जानते हैं और वह जो है उस पर निर्भर रह सकते हैं। जैसे कि मूसा ने गवाही दी है, जो कुछ भी वह करता है, योग्य ही होगा : "उसका काम सिद्ध है; उसके सब मार्ग तो न्यायपूर्ण है। वह विश्वासयोग्य परमेश्वर है, उस में कुटिलता नहीं, वह धर्मी और खरा है।"[9]

जगत का न्याय करते समय परमेश्वर की निष्पक्षता के सम्बन्ध में विचार करने योग्य दूसरा सत्य यह है कि संसार के अत्यन्त दूरवर्ती क्षेत्र में रहनेवाले अत्याधिक एकांतप्रिय व्यक्ति ने कुछ अंश में परमेश्वर का प्रकाशन पाया है और न्याय के दिन वह निरूत्तर होगा।[10] प्रत्येक मनुष्य परमेश्वर के स्वरूप में सृजा गया है, इस कारण उसमें परमेश्वर का अन्तर्निहित ज्ञान है।[11] तीन निर्विवाद सच्चाईयाँ इस ज्ञान की और अधिक पुष्टि करती हैं। पहली, परमेश्वर की सृष्टि उसके अस्तित्व, उसके अदृश्य गुण, उसकी सनातन सामर्थ, और ईश्वरीय स्वभाव की गवाही देती है।[12] दूसरी, परमेश्वर ने अपनी दूरदर्शिता के अनुसार सभी राष्ट्रों और मनुष्यों के लिए समय तथा उनके निवास की सीमाएं निर्धारित कर दीं हैं कि वे परमेश्वर को ढूँढ़े और उसे टटोलकर पाएं, यद्यपि वह हम में से किसी से दूर नहीं।[13] तीसरी सच्चाई, प्रत्येक मनुष्य के हृदय पर परमेश्वर की व्यवस्था लिखी हुई है

और वह इस सत्य की नैतिक मार्गदर्शक और गवाह है कि परमेश्वर धर्मी परमेश्वर है जो मनुष्यों का न्याय उनके कामों के अनुसार करेगा।[14]

जगत का न्याय करते समय परमेश्वर की निष्पक्षता के सम्बन्ध में विचार करने योग्य एक और सत्य, पवित्र शास्त्र की यह गवाही है कि लोगों ने जो प्रकाशन पाया उसके प्रति उन्होंने उचित प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। दूसरे शब्दों में, वे पिड़ीत नहीं हैं कि उन पर दया की जाए, बल्कि वे निंदा के योग्य विद्रोही हैं। उन्होंने अधर्म से सत्य को दबा दिया।[15] यद्यपि, वे परमेश्वर को जानते हैं, तौभी उन्होंने परमेश्वर कहकर उसे आदर नहीं दिया या उसे धन्यवाद नहीं दिया।[16] उन्होंने परमेश्वर की महिमा और सत्य को अपनी ही मूरत और स्वयं से भी अधिक निम्नस्तर के जीवों की आराधना में बदल ड़ाला।[17] उन्हें परमेश्वर को पहिचानना या उसकी आज्ञा का पालन करना उचित नहीं लगा, परन्तु उन्होंने स्वयं को हर प्रकार के अधर्म के कामों और नैतिक पतन के लिए दे दिया।[18] परमेश्वर उचित ही सब जगह के सभी लोगों का न्याय कर सकता है क्योंकि वे सचमुच दोषी हैं। यद्यपि उन्होंने विभिन्न अंशों में प्रकाशन पाया है, तौभी उन्होंने उस प्रकाशन के विरोध में जो उन्होंने पाया, विद्रोह किया है।

जगत का न्याय करते समय परमेश्वर की निष्पक्षता के सम्बन्ध में जिस अन्तिम सत्य पर हमें विचार करना है, वह है पवित्र शास्त्र की यह गवाही कि सभी मनुष्यों का उन्हें प्राप्त हुए प्रकाशन के अनुसार न्याय किया जाएगा। यह पवित्र शास्त्र का विश्वसनिय सिद्धांत है कि जिसे बहुत सौंपा गया है, उस से और भी अधिक मांगा जाएगा।[19] वें सब जिन्होंने उस प्रकाशन के विरोध में पाप किया जो उन्होंने सृष्टि और विवेक के द्वारा पाया था, उनकी इस प्रकाशन के प्रति अनाज्ञाकारिता के लिए उन्हें दण्ड दिया जाएगा। जितनों ने पवित्र शास्त्र के द्वारा और सुसमाचार के द्वारा दिए गए प्रकाशन के विरोध में पाप किया है, उन सभों का उनके पापों के लिए न्याय किया जाएगा।[20] परन्तु इन में जो दुसरे है उनका न्याय, जो पहिले है उनसे अधिक कठोरता से होगा, क्योंकि उन्होंने बहुतायत से सत्य को प्राप्त किया है। चाहे जो हो, हम यह निश्चित जानते हैं कि उस अन्तिम दिन, परमेश्वर की धार्मिकता न्याय में प्रमाणित होगी। जैसे कि भजन के लेखक ने गवाही दी है : "परन्तु यहोवा सर्वदा सिंहासन पर विराजमान है, उसने अपना सिंहासन न्याय के लिए सिद्ध किया है; और वह आप ही जगत का न्याय धर्म से करेगा, वह देश देश के लोगों का मुकद्दमा खराई से निपटाएगा।"[21]

सबका प्रभु सबका न्यायी है

दूसरा महान सत्य जो हम पतरस के उपदेश से बिनते हैं वह यह है कि परमेश्वर ने यीशु मसीह को

जीवितों और मृतकों का न्यायाधीश ठहराया है।[22] पवित्र शास्त्र में यही एकमात्र दावा नहीं है, परन्तु सुसमाचारों में, प्रेरितों के कामों की पुस्तक में, पत्रियों में और प्रकाशित वाक्य में यह विषय बार बार आया है। मार्स के पहाड़ पर, एथेनवासियों को अपने उपदेश में, प्रेरित पौलुस ने यह घोषित किया : "क्योंकि उसने (परमेश्वर ने) एक दिन निश्चित किया है, जिस में एक मनुष्य के द्वारा जिसको उसने नियुक्त किया है, वह धार्मिकता से संसार का न्याय करेगा; और उसने मृतकों में से उसे जिला कर इस बात को सब मनुष्यों पर प्रमाणित कर दिया है।"[23]

पवित्र शास्त्र और मसीही कलीसिया इस बात की गवाही देते है कि प्रत्येक मनुष्य, बिना किसी अपवाद के न्याय के लिए मसीह के सम्मुख खड़ा होगा, और प्रत्येक मनुष्य के अन्तिम भवितव्य को वह निर्धारित करेगा। यह पूर्ण रूप से विस्मयकारी सत्य है कि परमेश्वर और मनुष्यों के बीच में एक मध्यस्थ है, मसीह यीशु, जो मनुष्य है और परमेश्वर और मनुष्यों के बीच में एक न्यायाधीश है, मसीह यीशु, जो मनुष्य है।[24]

यह भी मसीह के राज्य की विश्वव्यापिता का एक और प्रमाण है। वह सीमित क्षेत्र पर सीमित अधिकार रखनेवाला कोई स्थानीय देवता नहीं है। वह किसी ऐसे सामुदायिक परिषद का सदस्य नहीं है जो विश्व पर शासन चलाती हो, और न ही वह किसी ऐसे संयुक्त न्यायालय का सदस्य है जो न्याय के दिन न्यायालयीन कार्यवाही करेगा। केवल वही राजा, प्रभु और सब का न्यायाधीश है। उसे स्वर्ग और पृथ्वी का सारा अधिकार दिया गया है।[25] केवल उसे ही पिता की दाहिनी ओर सब प्रकार की प्रधानता, और अधिकार, और सामर्थ, और प्रभुता, और हर एक नाम के ऊपर, जो न केवल इस युग में, पर आनेवाले युग में भी लिया जाएगा, बैठाया।[26] नासरत का यीशु, जो मनुष्य है, और जिसे पन्तुस पीलातुस के समय में क्रूस पर चढ़ाया गया, वह न केवल इस पृथ्वी पर आए हुए प्रत्येक मनुष्य का अन्तिम भवितव्य निर्धारित करेगा, परन्तु वह स्वर्गदूतों और दुष्टात्माओं, सब प्रकार की प्रधानताओं, और अधिकार, और सामर्थ, और प्रभुता जो स्वर्ग में और पृथ्वी पर है, दृश्य और अदृश्य, सब का न्याय करेगा।[27] इस के अलावा, वह संसार के सारे धर्मों के संस्थापकों का न्याय करेगा जिन्होंने या तो उसका स्थान लेने की कोशिश की है या उसकी महिमा का ह्रास किया है। वे सभी बड़ी शर्म और भय के साथ स्वयं उसकी उपस्थिती में आएंगे।

इस जगत का व्यवस्था देनेवाला और न्यायी एक ही है जो बचाने और नाश करने में समर्थ है।[28] उसके दूसरे आगमन पर, वह अन्धकार की गुप्त बातों को प्रकाश में लाएगा और मनुष्यों की मनोभावनाओं को प्रगट करेगा।[29] तब वह हर एक को उसने जो जो किया है उसके अनुसार बदला

देगा और प्रत्येक मनुष्य को उसके कामों के अनुसार प्रतिफल देगा।[30] आत्म–धर्मी मनुष्य को यह चेतावनीपूर्ण नहीं लगता। परन्तु बुद्धिमान मनुष्य के लिए जिसने प्राचीन तत्वज्ञानी के इस परामर्श को माना है, "अपने आप को जान," प्रत्येक विचार, शब्द, और कार्य को धर्मी और सर्वज्ञानी न्यायाधीश द्वारा परखा जाना अत्यन्त डरावना विचार है जिसकी हम कल्पना कर सकते हैं।[31] इस कारण, प्रेरित पौलुस ने लिखा : "क्योंकि हम सब को मसीह के न्याय–आसन के समक्ष उपस्थित होना अवश्य है कि प्रत्येक को अपने भले या बुरे कामों का बदला मिले जो उसने देह के द्वारा किए। अतः हम प्रभु का भय मानते हुए लोगों को समझाते हैं।"[32]

मनुष्य ने स्वयं को पूरी रीति से तबाह कर दिया है और परमेश्वर के समक्ष धर्मी ठहरने योग्य नहीं है, इस बात को बार बार साबित करने के बाद मनुष्य के लिए यह सबसे बड़ी सहानुभुती की बात है कि जो सभी मनुष्यों का न्याय करने वाला है, वही है जो अपने लोगों के पापों के लिए मरा।[33] यदि प्रभु हमारे अधर्म के कामों का लेखा ले, तो न्याय में कोई भी उसके सामने ठहर नहीं सकेगा, परन्तु आज भी मसीह के व्यक्तित्व और कार्य में क्षमा पाई जा सकती है।[34] बहुत विलंब होने से पहले हमें उसकी ओर फिरना अवश्य है। हमारे पाप की सच्चाई, न्याय का भय, और मसीह की हमें बचाने की इच्छा, हमें बिना किसी विलंब के उसकी ओर लाने और पूरी मजबूती से उस से लिपट जाने विवश करे यह अवश्य है। आज भी, मसीह आज्ञा न माननेवाले और हठीले लोगों की ओर सारा दिन अपनी बाँहे पसारे रहता है।[35] परन्तु हमें उसके धीरज का अनुचित लाभ नहीं उठाना चाहिए। पवित्र शास्त्र हमें पूर्व चेतावनी देता है कि पुत्र का क्रोध जल्द ही भड़कने पर है, और जीवित परमेश्वर के हाथों में पड़ना यह एक भयावह बात है।[36] इसलिए अधिक विलंब होने से पहले हम उसकी शरण में आए।[37] जब तक कि हम मार्ग ही में हैं, हम अपने मुद्दई के साथ मित्रता कर लें, ताकि हमारा न्याय न हो और हमें सनातन बंदीगृह में न डाल दिया जाए। क्योंकि जब तक हम पैसा पैसा चुका न दे, तब तक वहाँ से छुटने न पाएंगे![38]

कलीसिया का आदेश–पत्र

तीसरा और अन्तिम सत्य जिस पर हमें ध्यान देना अवश्य है, वह यह कि कलीसिया को न केवल सुसमाचार के लाभों की घोषणा करने की आज्ञा दी गई है, बल्कि मनुष्यों को संसार पर आने वाले बड़े और अटल न्याय की चेतावनी देने की भी आज्ञा दी गई है। कुरनेलियुस के घर में एकत्रित आए अन्यजातियों को पतरस ने घोषित किया : "और उसने (मसीह ने) हमें आज्ञा दी कि लोगों में प्रचार

करो और गवाही दो, कि यह वही है जिसे परमेश्वर ने जीवतों और मरे हुओं का न्यायी ठहराया है।"[39]

आज्ञा दी यह शब्द ग्रीक भाषा के शब्द *paraggéllo* (पॅराग्लो) से आता है जिसका अनुवाद "आदेश देना" या "कार्यभार सौपना" भी किया जा सकता है। इस में हम एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सत्य पाते हैं : न्यायाधीश के रूप में मसीह की घोषणा, प्रेरितों के सुसमाचार में एक आवश्यक तत्व था। प्रारम्भिक कलीसिया का सुसमाचार प्रचार मसीह की घोषणा केवल उद्धारकर्ता और प्रभु तक सीमित नहीं था, परन्तु उसमें सब मनुष्यों के, जीवतों और मरे हुओं के न्यायी के रूप में उसका पद भी शामिल था। असामान्य साहस के साथ उन्होंने पापियों और महायाजकों, गुलामों और कैसरों के समक्ष उसके विषय में यह कहकर घोषणा की कि वह उनका न्याय करेगा और उनके अनन्त भवितव्य को तय करेगा। फटकारे और तिरस्कृत किए गए छोटे समूह के लोगों द्वारा एक यहूदी के विषय में जिसे पैलेस्टाईन में क्रूस पर चढ़ाया गया था, ऐसा दावा करना गम्भीरतापूर्वक दुःसाहस लगा होगा। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि कुछ लोगों ने उपहास किया, अन्य लोग विस्मित रह गए, और कुछ तो डर के कारण पीछे हट गए।[40]

रोम की कलीसिया को लिखी हुई अपनी पत्री में, प्रेरित पौलुस उस दिन का वर्णन करते है, "जिस दिन परमेश्वर मेरे सुसमाचार के अनुसार यीशु मसीह के द्वारा मनुष्यों की गुप्त बातों का न्याय करेगा।"[41] पतरस की उपर्युक्त घोषणा के समान, यह एक असाधारण कथन है। पौलुस बता रहे है कि मसीह यीशु जो मनुष्य, उसके द्वारा मानवजाति का विश्वव्यापी न्याय सुसमाचार का आवश्यक, बुनियादी सत्य था जिसकी उन्होंने घोषणा की। यह सुसमाचार के वर्तमान प्रचारकों के लिए एक महत्वपूर्ण शब्द है जो सुसमाचार के इस कम रूचिकर सत्य को नजरअंदाज करने की परीक्षा में पड़ सकते है ताकि उससे उत्पन्न संघर्ष को रोक सकें। यह सत्य उन सेवकों के लिए भी है जो यह विश्वास करते हैं कि परमेश्वर ने उन्हें केवल सुसमाचार के सकारात्मक तत्वों का प्रचार करने के लिए बुलाया है, "कठिन बातों" का नहीं।[42] पौलुस और पतरस के अनुसार, यदि हमारे प्रचार में परमेश्वर के उस न्याय की घोषणा, जो वह मसीह के द्वारा करेगा, नहीं है या विरले ही की जाती है, तो हम सुसमाचार के विश्वासयोग्य प्रचारक नहीं बन सकते। यदि हमें कलीसिया के इतिहास के महान सुसमाचार प्रचारकों की बड़ी कतार में खड़े रहना हो, तो हमें मसीह का प्रचार न केवल उद्धारक के रूप में करना है, बल्कि हमें न्यायाधीश के रूप में भी उसकी घोषणा करनी आवश्यक है और सब मुनष्यों को अवश्य चिताना है कि वे अपने परमेश्वर के सामने आने के लिए तैयार रहे![43]

यह एक महान सत्य है कि परमेश्वर ने अपने पुत्र को इस जगत में इसलिए नहीं भेजा की जगत का न्याय करे, परन्तु इसलिए कि जगत उसके द्वारा उद्धार पाए।[44] परन्तु उसने एक दिन निश्चित किया है जिसमें एक मनुष्य के द्वारा जिसको उसने नियुक्त किया है, संसार का न्याय करेगा, और उसे मृतकों में से जिलाकर सब मनुष्यों को इस बात का प्रमाण दिया है।[45] जब पुत्र दुबारा लौट आएगा, तब वह न्याय का जामा ओढेगा और सब मनुष्यों का भवितव्य तय करेगा। पतरस हमें चेतावनी देते है कि मसीह जीवितों और मरे हुओं का न्याय करने के लिए तैयार है।[46] याकूब घोषणा करते है कि न्यायी द्वार पर ही खड़ा है, वह फिर से मानव के इतिहास में प्रवेश करने के लिए तैयार है।[47] यीशु ने इस चेतावनी के साथ यूहन्ना को दिए गए अपने प्रकाशन का अन्त किया, "देख, मैं शीघ्र आनेवाला हूँ; और हर एक के काम के अनुसार बदला देने के लिए प्रतिफल मेरे पास है।"[48] इन चेतावनियों के कारण, हमें मसीह के दूसरे आगमन और अन्तिम न्याय के निकट होने की घोषणा करना अवश्य है।[49]

सर्वअधिपति परमेश्वर के द्वारा इतिहास की निर्धारित समाप्ति और प्रत्येक नैतिक प्राणि का अन्तिम न्याय यह कल्पना आधुनिक मनुष्य को पौराणिक लगती है। परन्तु, हमें उसकी घोषणा करने से पीछे नहीं हटना है। हमारे युग का संशयवाद नया नहीं है। प्रेरित पतरस भी निम्नलिखित बातों को लिखते समय इसी ठट्ठापूर्ण दोषदर्शिता का सामना कर रहे थे : और यह पहले जान लो कि अन्तिम दिनों में हंसी ठट्ठा करने वाले आएंगे, जो अपनी ही अभिलाषाओं के अनुसार चलेंगे। और कहेंगे, "उसके आने की प्रतिज्ञा कहाँ गई ?क्योंकि जब से बापदादे सो गए हैं, सब कुछ वैसा ही है, जैसा सृष्टि के आरम्भ से था।"[50]

पवित्र आत्मा के कार्य के बिना, पतित मनुष्य हमेशा ही सुसमाचार के प्रचार के प्रति नकारात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त करेगा, विशेष कर तब जब वह प्रचार "धार्मिकता, आत्म–संयम, और आनेवाले न्याय" की चर्चा से युक्त हो।[51] वे परमेश्वर के वचन से अपने आप को चाहे कितने ही सम्पूर्ण रूप से स्वतंत्र करने का प्रयास क्यों न करें, उन्हें हमेशा यह सच्चाई परेशान करती रहेगी कि वह है, और उसने अपनी इच्छा उन पर प्रगट की है, और वह उन्हें उनके कामों के लिए जिम्मेदार ठहराएगा। वे सत्य को दबाने के प्रयास में थक जाएंगे और अपने विवेक के आरोपों को शान्त करने के लिए किसी भी हद तक जाएंगे।[52] इसके अलावा, वे ऐसे किसी भी प्रचारक के विरोध में लड़ेंगे जो उन्हें उन बातों का स्मरण

दिलाता है जिन्हें वे भूल जाना पसंद करते हैं या उन में वह भय उत्तेजित करते हैं जिसे वे छिपाने का प्रयास करते हैं। वे उसके न्याय की चेतावनियों को धर्मोन्मत की भ्रान्तियाँ या नीमहाकीम की युक्तियाँ कहकर उपहास करेंगे।[53] परन्तु, उससे यह तथ्य नहीं बदल जाता है कि युग के अन्त में, सभी मनुष्यों को निर्णय की तराई में एकत्रित किया जाएगा।[54] उनका न्याय होगा और उनके सनातन भवितव्य का फैसला किया जाएगा। पतमुस नाम टापू पर, प्रेरित यूहन्ना ने उस दिन निम्नलिखित बातों को देखा और यह भविष्यद्वाणी की :

> "फिर मैंने एक बड़ा श्वेत सिंहासन और उसको जो उस पर बैठा हुआ है, देखा, उसके सामने से पृथ्वी और आकाश भाग गए, और उनके लिए जगह न मिली। फिर मैंने छोटे बड़े सब मरे हुओं को सिहांसन के सामने खड़े हुए देखा, और पुस्तकें खोली गईं; और फिर एक और पुस्तक खोली गई, अर्थात् जीवन की पुस्तक; और जैसे उन पुस्तकों में लिखा हुआ था, उनके कामों के अनुसार मरे हुओं का न्याय किया गया ....और जिस किसी का नाम जीवन की पुस्तक में लिखा हुआ न मिला वह आग की झील में ड़ाला गया।"[55]

हमारे सुसमाचार की घोषणा में, न केवल उद्धार के सार्वत्रिक अवसर का संदेश होना चाहिए बल्कि यीशु मसीह की सार्वत्रिक प्रभुता का संदेश भी होना चाहिए। इसके अलावा, हमें न केवल मसीह में विश्वास और उसकी आज्ञाकारिता के लाभों का प्रचार करने की आवश्यकता है, बल्कि हमें शत्रूता के कारण या मात्र उपेक्षा के कारण उसका इन्कार करने के भयानक परिणामों की चेतावनी भी देने की आवश्यकता है। परिणामस्वरूप, हमें इस कल्पना का त्याग करना भी अवश्य है कि बिना विक्षोभ या विरोध का सामना किए सुसमाचार प्रचार करने का कोई मार्ग है। हमें यह भी ध्यान में रखना अवश्य है कि हम संसार के साथ युद्धविराम की खोज नहीं कर रहे हैं, बल्कि हम मसीह के प्रति संसार की निष्ठा की मांग करते हैं। हम संसार की मान्यता के लिए याचना नहीं कर रहे हैं, बल्कि हम उसे अन्तिम चेतावनी दे रहे हैं : "इसलिए अब, हे राजाओ, बुध्दिमान बनो; हे पृथ्वी के न्यायियो, यह उपदेश ग्रहण करो। डरते हुए यहोवा की उपासना करो, और कांपते हुए मगन हो। पुत्र को चूमो, ऐसा न हो कि वह क्रोध करे, और तुम मार्ग ही में नाश हो जाओ; क्योंकि क्षण भर में उसका क्रोध भड़कने को है। धन्य हैं वे जिनका भरोसा उस पर है।"[56]

यदि हम इस प्रकार से सुसमाचार प्रचार करेंगे, तो हम अपने लोगों के मध्य विभाजन का चिन्ह बन जाएंगे। प्रेरित पौलुस के समान हम उद्धार पाने वालों और नाश होने वालों दोनों के लिए मसीह की सुगंध है; एक के निमित्त हम जीवन की सुगंध बनेंगे और दूसरों के निमित्त मृत्यु की गंध बनेंगे।[57] कुछ लोगों के निमित्त हम सुसमाचार के उद्घोषक और जीवन के दूतों के रूप में आदर के पात्र ठहरेंगे, परन्तु दुसरों के लिए हम व्यर्थ बड़बड़ करने वाले, जगत के कूड़े और सब वस्तुओं की खुरचन, ससांर को उलटपुलट करने वाले उपद्रवी और ऐसे मनुष्यों के समान तुच्छ ठहरेंगे जिन्हें जीने का कोई हक नहीं होना चाहिए।[58]

इस कारण, सुसमाचार के प्रचारक ने अपने आप को बड़े विरोध के लिए तैयार करना अवश्य है। परन्तु, हमारे राजा का बल जानकर, हमें राष्ट्रों के संयुक्त बल का अब भय नहीं रखना चाहिए। हमें उन पर तरस खाना चाहिए और उनके लिए बिनती करना चाहिए कि वे मेल कर लें। चार्ल्स स्पर्जन लिखते हैं :

> "जिस प्रकार यीशु राजाओं का राजा है, और न्यायिओं का न्यायी है, उसी प्रकार सुसमाचार सबसे महान और सबसे बुद्धिमानों का शिक्षक है। यदि ऐसा कोई महान है जो उसकी चितवनीयों को ठुकरा देता है, तो परमेश्वर उसे तुच्छ समझेगा; और यदि वे इतने बुद्धिमान हैं कि सुसमाचार की शिक्षाओं को तुच्छ समझें, तो उनकी कल्पित बुद्धि उन्हें मूर्ख ठहराएगी। सुसमाचार पृथ्वी के अधिपतियों के सामने ऊंचा स्थान लेता है, और जो उसका प्रचार करते हैं, उन्हें नॉक्स और मेलविल के समान राजाओं की उपस्थिति में भी साहसपूर्ण उलाहनाओं और पुरूषोचित कथनों के साथ अपने पद की गरिमा बढ़ानी चाहिए। एक खुशामदी याजक शैतान की रसोई में टहलुआ बनने के ही काबिल है।"[59]

परमेश्वर ने आज्ञा दी है कि सब जगह के सब मनुष्य पश्चाताप करें, और पुत्र पर विश्वास करे, "क्योंकि उसने एक दिन ठहराया है, जिसमें वह उस मनुष्य के द्वारा धर्म से जगत का न्याय करेगा।"[60] "परमेश्वर एक ही है, और परमेश्वर और मनुष्यों के बीच एक ही मध्यस्थ है, अर्थात मसीह यीशु जो मनुष्य है।"[61] "और किसी दूसरे के द्वारा उद्धार नहीं; क्योंकि स्वर्ग के नीचे मनुष्यों में और कोई दूसरा नाम नहीं दिया गया, जिसके द्वारा हम

उद्धार पा सकें।"[62] सम्पूर्ण मानवजाति का सनातन भवितव्य उसके सुसमाचार के उचित ज्ञान पर निर्भर है, जिसमें एकमात्र, सार्वभौम, प्रभु यीशु मसीह के द्वारा उस बड़े न्याय का जो आने वाला है, समावेश है। ये प्रभावशाली बातें हैं, और वे जितनी गंभीर है उतनी ही आग्रहपूर्ण भी हैं। सुसमाचार को छोटी मोटी बातों से कोई सरोकार नहीं है, बल्कि उसे उन बातों से सरोकार है जो मानव अस्तित्व के क्षेत्र में असल में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं : अनन्त काल का जीवन और अनन्त काल की मृत्यु। इसलिए हमें प्रेरित पौलुस के जीवन, सेवकाई और प्रचार से अपने लिए दिशानिर्देश प्राप्त करना चाहिए, जिन्होंने लिखा, "इसलिए हमारी अभिलाषा यह है, चाहे साथ रहें, या अलग रहें, हम उसे प्रिय लगते रहें। क्योंकि हम सब को मसीह के न्याय–आसन के समक्ष उपस्थित होना अवश्य है कि प्रत्येक को अपने भले या बुरे कामों का बदला मिले, जो उसने देह के द्वारा किए। अतः हम प्रभु का भय मानते हुए लोगों को समझाते हैं परन्तु हमारी दशा परमेश्वर के सामने खुली है; और मैं आशा करता हूँ कि हमारी दशा तुम्हारे विवेक में भी खुली है।"[63]

हमारे अपने संबंध में कहे तो, हमारी एक मात्र महत्वकांक्षा होनी चाहिए जो अन्य सभी मनोभावों से ऊपर उठती है अर्थात – हम अपने जीवन के प्रत्येक पहलू में परमेश्वर को प्रसन्न करने वाले बने। यद्यपि, हमारी सबसे बड़ी प्रेरणा परमेश्वर का प्रेम हो, परन्तु वह हमारी एकमात्र प्रेरणा नहीं होनी चाहिए।[64] प्रेरित पौलुस केवल मसीह में परमेश्वर की परोपकारीता से विवश नहीं था, बल्कि वह इस गंभीर सत्य से भी प्रेरित था कि एक दिन उसे मसीह के न्याय–आसन के समक्ष उपस्थित होना होगा और उसको उसके प्रत्येक भले और बुरे कामों का बदला मिलेगा।[65] दूसरों के संबंध मे कहे तो, हमें मनुष्यों को न केवल सुसमाचार की घोषणा करनी है, बल्कि उन्हें यह समझाने के लिए अपने सारे बाइबल–सम्मत साधनों का उपयोग करने की आवश्यकता है कि वे मसीह के द्वारा परमेश्वर के साथ मेल कर लें और डरते और कांपते हुए अपना जीवन बिताएं।[66] वास्तव में, मसीह के राजदूत होने के नाते, कि मानो परमेश्वर हमारे द्वारा बिनती कर रहा हो, हमें मसीह की ओर से मनुष्यों से निवेदन करना चाहिए कि वे परमेश्वर के साथ मेल–मिलाप कर लें।

शास्त्र–संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. यूहन्ना 5:22, 26
2. प्रेरितों के काम 10:40–42
3. रोमियों 2:6–8
4. रोमियों 3:23
5. रोमियों 3:12
6. रोमियों 1:18
7. रोमियों 2:8
8. यूहन्ना 3:18, 36
9. व्यवस्थाविवरण 32:4
10. रोमियों 1:20. प्रत्येक मनुष्य को सृष्टि, ईश्वरीय दूरदर्शिता एवं प्रयोजन और विवेक के द्वारा दिया गया प्रकाशन अकसर सार्वजनिक प्रकाशन कहा जाता है, यह उस विशेष प्रकाशन से भिन्न है जो पवित्र शास्त्र से और सुसमाचार के प्रचार को सुनने से आता है।
11. रोमियों 1:19
12. रोमियों 1:20
13. प्रेरितों के काम 17:26–27
14. रोमियों 2:14–15
15. रोमियों 1:18
16. रोमियों 1:21
17. रोमियों 1:23, 25
18. रोमियों 1:28–29, 32
19. पढ़ें लूका 12:47–48.
20. पढ़ें रोमियों 2:12.
21. भजन संहिता 9:7–8
22. प्रेरितों के काम 10:40–42
23. प्रेरितों के काम 17:31
24. 1 तिमुथि 2:5
25. मत्ती 28:18
26. इफिसियों 1:21
27. कुलुस्सियों 1:16
28. याकूब 4:12
29. 1 कुरिन्थियों4:5
30. प्रकाशित वाक्य 22:12; मत्ती 16:27
31. "अपने आप को जान" know thyself (gnothi seauton) यह वाक्यांश एक लोकप्रिय ग्रीक सूक्ति या कहावत है, ऐसा माना जाता है कि डेल्फी में अपोलो के मन्दिर के अग्रप्रांगण में यह सूक्ति खुदवाकर लिखवाई गयी थी। लैटिन भाषा में यह nosce te ipsum लिखा जाता है।
32. 2 कुरिन्थियों5:10–11
33. रोमियों 5:6
34. भजन संहिता 130:3–4

35. रोमियों 10:21
36. इब्रानियों 10:31
37. भजन संहिता 2:12
38. मत्ती 5:25–26
39. प्रेरितों के काम 10:42
40. पढ़ें 2 पतरस 3:3–4; प्रेरितों के काम 4:13, 24:25.
41. रोमियों 2:16
42. यूहन्ना 6:60
43. आमोस 4:12
44. यूहन्ना 3:17
45. प्रेरितों के काम 17:30–31; इब्रानियों 9:27
46. 1 पतरस 4:5
47. याकूब 5:9
48. प्रकाशित वाक्य 22:12
49. मसीह का निकट आगमन मसीही विश्वास का एक आवश्यक भाग है। इसके अनुसार मसीह का आगमन निकट है या किसी भी समय पर सम्भावित है। इस कारणवश सुसमाचार की बुलाहट सदैव आग्रहपूर्ण है।
50. 2 पतरस 3:3–4
51. प्रेरितों के काम 24:25
52. रोमियों 1:18; 2:14–15
53. प्रेरितों के काम 26:24
54. पढ़ें योएल 3:11–14.
55. प्रकाशित वाक्य 20:11–12, 15
56. भजन संहिता 2:10–12
57. 2 कुरिन्थियों 2:15–16
58. प्रेरितों के काम 17:18; 1 कुरिन्थियों 4:13; प्रेरितों के काम 17:6; 22:22
59. स्पर्जन ट्रेजरी ऑफ डेविड, 1:18, चापलूस वह व्यक्ति है जो खुशामदी या दासों जैसी मीठी बातें करता है जो दूसरों की प्रशंसा या स्वीकृति पाने की फिराक में होता है। तुच्छ दास (scullion) वह दास है जिसे रसोईघर के सबसे तुच्छ काम दिये जाते हैं। एक याजकीय चापलूस सबसे निकृष्टतम व्यक्तियों में से है क्योंकि वह न केवल मीठी बातें और खुशामदी, चापलूसी करता है परन्तु लोगों की प्रशंसा या स्वीकृति पाने के लिए मसीह का इन्कार भी करता है।
60. प्रेरितों के काम 17:30–31
61. 1 तिमुथि 2:5
62. प्रेरितों के काम 4:12
63. 2 कुरिन्थियों 5:9–11
64. 2 कुरिन्थियों 5:14
65. 2 कुरिन्थियों 5:10
66. फिलिप्पियों 2:12–13
67. 2 कुरिन्थियों 5:20

सुसमाचार की पुनःस्थापना
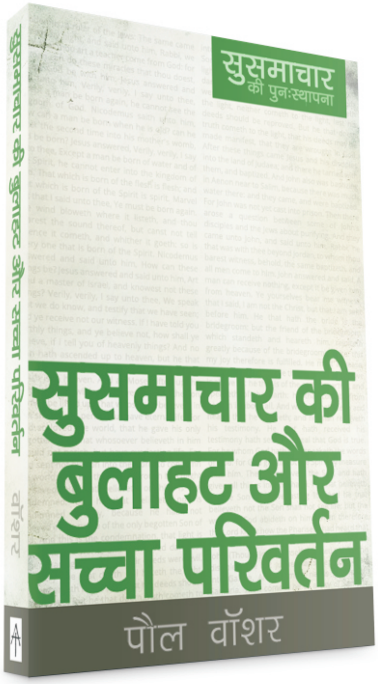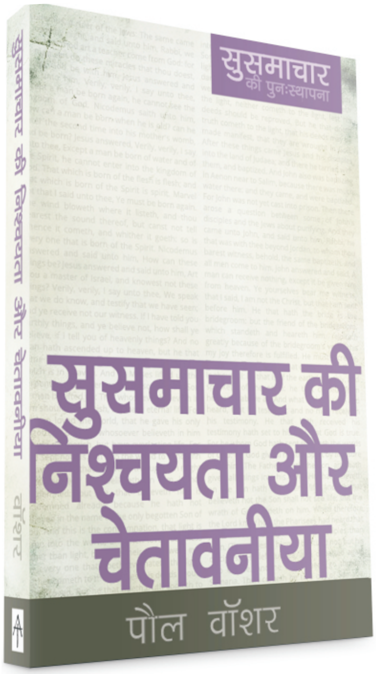
इस श्रृखंला कि अगली पुस्तके